

प्रकाशक
श्रीरीशंकर शर्मा
अध्यक्ष एच. चन्द एण्ड कम्पनी
फर्रुखाबाद दिल्ली ।

एस० चन्द एण्ड कम्पनी
फर्रुखाबाद दिल्ली
अपहिन्द मिनेमा डिस्ट्रिबुटर्स
मार्केट डीरागट अरुबाबाद

मूल्य ६॥)

Hindi translation of Parliamentary Govt. in England by H. J. Laaki,
published by S. Chand & Co. Delhi by arrangements with
M/s George Allen & Unwin Ltd., London.

मुद्रक
शुभेन्द्र प्रिन्टर्स लि
टिप्टीगंज दिल्ली ।

प्रस्तावना

प्रस्तुत पुस्तक स्वर्णोप श्री हेरल्ड जे तास्की की सुप्रसिद्ध कृति Parliamentary Government in England का हिन्दी रूपान्तर है। राजनीति-शास्त्र के मध्येताओं के लिये श्री तास्की का नाम चिर-परिचित है। वे बीसवीं शताब्दी के प्रमुखतम राजनीतिक विचारका में से एक थे। उनका व्यक्तिगत अध्ययन विद्यार्थी और बहुमुखी था। वे उच्चशक्ति के विद्वान् और सामाजिक लेखक और पत्रकार बन्ता और राजनेता शिक्षक और दूरवासी। जिस समय उनका मृत्यु (४ मार्च १९५५) हुई थी अखिलभारत विश्वविद्यालय ने एक आचार्य ने उन्हें श्रद्धाञ्जलि समर्पित करने हुए कहा था कि '... के इंग्लैण्ड की विचारधारा पर तास्की का "तना प्रबल प्रभाव था कि उस का एक ही नाम "तास्की का पद कहा जा सकता है।' तास्की का प्रभाव केवल इंग्लैण्ड तक ही सीमित नहीं रहा। उनको पुस्तकें मारे मराने में पड़ी जानी थी और पड़ी जानी है। उनके छात्र समाज के सभी देशों में विद्यमान हैं और वे अपने महान् आचार्य की शक्ति के प्रीतिपत्र स्मारक हैं। तास्की ने राजनीति-शास्त्र की भाषासूत्र समझना का जिस सृष्टमता एक सम्पीयता में विवेचन किया है वह भाषा विद्वान् के बहुधा अल्प विद्यार्थियों में दिखाई देती है। तास्की की कठिना एक साम्यता का महत्त्व का कारण और वह जाता है कि वे कबल एक आदर्शवादी विचारक माने जाते हैं। उनका व्यावहारिक राजनीति में प्रतिष्ठित प्रबल रहना था और वे मार्क्स के इस सिद्धान्त का स्वीकार करने से कि आधुनिक शारीरिक का कार्य समाज की व्याख्या करना नहीं है। उनका सामाजिक कार्य समाज में परिवर्तन आना है।

तास्की ने Parliamentary Government in England में इंग्लैण्ड की शासन-प्रणाली का सामाजिक विश्लेषण किया है। यह पुस्तक देना कि उत्कृष्ट अंग्रेजी संस्कृत की मूलिका में स्वर लिखा है '... इंग्लैण्ड में समाजशास्त्र शासन के मन्त्रालय का उपचारिक वर्तन तथा अपनी प्रकृत अवस्था केवल कतिपय पहलुओं की टीका तक ही सीमित है।' इस पुस्तक में उन्होंने इंग्लैण्ड के संसदीय शासन के लेखक इन्हीं कुछ महत्त्वपूर्ण अर्थों का विवेचन के लिये बना है जिसका "हमारे युग की उन्नत समझना का प्रभाव संबंध है।

आधुनिक युग में संसदीय शासन प्रणाली वाली शक्तिशाली नहीं है। इंग्लैण्ड संसदीय शासन का सर्वप्रथम उदाहरण माना जाता है। इसका क्या कारण है? तास्की ने इस प्रश्न का उत्तर ईश्वरों के हाथों में दिया है। ईश्वरों के विचार में उसकी पहली धारणा है कि देश के नागरिक समुदाय का सामाजिक क्रिया-कलापों के प्रबल उद्देश्यों के मन्त्र में एकत्रित होना चाहिए। इसका अर्थ है कि वह परिवर्तन आने के लिये सर्वप्रथम की

कल्पना तकन करे। इसको दूसरी बातें यह है कि समाज के किसी भी बंध को स्थायी
घाति ने बंधित न रहना चाहिए। अतः प्रतिनिधिक शासन की सफलता के लिए
यह भी आवश्यक है कि राष्ट्र के अन्दर सहिष्णुता की व्यापक भावना हो।

क्या आज इंग्लैंड में ये बातें उपस्थित हैं? धार्य नहीं। जब तक देश का अधिका
वर्ग निष्पक्ष वा समर्रीय नासन-प्रणाली सफलतापूर्वक न-वास्तव होती रही। लेकिन
अब उदा-र्यों अधिका वर्ग में चेतना आनी आनी है समाज-रचना के मूलाधारों को
बुननी मिलने लगी है। नास्की ने प्रस्तुत पुस्तक में इसी समस्या को अपने सम्मुख
रखा है कि क्या इंग्लैंड का समर्रीय शासन इस बगौठी का सफलतापूर्वक सामना
कर सकता है? वर्ग-सर्प की बहनी हुई लार्ड ने इंग्लैंड की समर्रीय सम्प्रादा में
अनेक अन्तविरोध उत्पन्न कर दिए हैं। क्या इंग्लैंड के लिए यह समय है कि वह
इस अन्तविरोध को दमन कर सके? यदि हाँ तो किस प्रकार?

भारतीय जनता के लिए इस पुस्तक का महत्व इस कारण और भी बढ़ जाना
है क्योंकि हमने भी इंग्लैंड के आदर्श पर ही समर्रीय शासन की स्थापना की है।
आज ब्रिटिश समर्रीय शासन का सम्मुख जो समस्याएँ हैं वे हमारे सम्मुख भी हैं
और यदि आज नहीं वे तो कल आ सकती हैं। वर्तमान काल में जब कि हम
भावी भारत के अधिका स्वप्न को साकार करने में सफल हैं हमारे लिए यह
उपादेय है कि हम अपने देश की भावी समाज-रचना के मूलाधारों के सम्बन्ध में स्पष्ट
रहें। प्रस्तुत पुस्तक इन विषयों में चिन्तन की प्रवृत्त नामची दे सकती है।

मुझे राजनीति-शास्त्र के 'व्यावहारिक के अन्वेषण और उनके द्वितीय-अनुवाद की
प्रेरणा अपने पुत्र अध्यापक प्रो० के आर० बम्बाल (पी ई एम यू पी) से
मिली है। इस पुस्तक के लिये होने में भी उनका बड़ा हाथ है। मैं उनके प्रति
विशेष आभार प्रकट करता हूँ। मैं अपने प्रकाशक श्री व्यामनाथ की मूल्य वा भी
हृदय में अनन्त आभार हैं कि उन्होंने पुस्तक को इतने मनोबोध में प्रकाशित किया है।

—विश्व प्रकाश

विषय-सूची

१	विषय-प्रवेश	१
२	दस-पद्यति	३८
३	सौर्ध-ममा	६६
४	कर्मण-ममा	८१
५	मभि मङ्गल	१३३
६	मिबिल मदिम	१९१
७	ममद् और न्यायपामिषा	२४
८	राजतन	४३

कल्पना करना। इसकी दूसरी बात यह है कि समाज के किसी भी वर्ग को स्वामी शक्ति में संश्लिष्ट न रहना चाहिए। अतः प्रतिनिधिक शासन की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि राष्ट्र के अन्दर सहिष्णुता की स्थापना हो।

क्या आज इंग्लैंड में वर्गों उपस्थित हैं? सामर नहीं। जब तक वेतन का अधिक वर्ग मिनिमम का समर्रीय मासल प्रभावी सफलतापूर्वक न-वालिष्ठ होती रही। क्विन जब ज्यो-ज्यो अधिक वर्ग में चेतना आनी जानी है समाज-रचना क मुलाघारो को कुनीसी मिलने लयी है। मास्की ने प्रख्युष पुस्तक में इनी समस्या को अपने सम्मुख रक्खा है कि क्या इंग्लैंड का समर्रीय मासल हम कनीसी वा सफलतापूर्वक सामना कर सकता है? वर्ग-सर्घ की बढ़नी कई कई ने इंग्लैंड की समर्रीय सस्थाओ में अनेक अन्तविरोध उत्पन्न कर दिए हैं। क्या इंग्लैंड के लिए यह संभव है कि वह इन अन्तविरोधो का समन कर सके? यदि हाँ तो किस प्रकार?

सामर्रीय बनता के लिए इस पुस्तक का महत्व इस कारण और भी बढ़ जाता है क्योंकि हमने श्री इंग्लैंड के बाहरी पर ही समर्रीय शासन की स्थापना की है। आज ब्रिडिस समर्रीय शासन क सम्मुख को समस्याएँ हैं वे हमारे सम्मुख भी हैं और यदि आज नहीं हैं तो बन जा सकनी हैं। वर्तमान काल में जब कि हम भावी भारत के स्वचिन्म स्वयं को साकार करने में सक्कन हैं हमारे लिए यह उपादेय है कि हम अपने देश की भावी समाज-रचना के मुलाघारी के सम्बन्ध में गण्य रहें। प्रस्तुत पुस्तक इन विद्या में चिन्तन की प्रथम सामग्री के सदनी है।

मुझे राजनीति-शास्त्र के 'कलात्मक क अलसीतन और उनके द्विनी-अपवाद की प्रस्था अपने पुम्न अध्यापन प्रो के भार सम्बन्ध (पी ई एन यू पी) से मिली है। इस पुम्न के सम्बन्ध होने में भी उनका बड़ा हाथ है। मैं उनके प्रति बिनम आभार प्रकट करता हूँ। मैं अपने प्रकाशक श्री स्यामलाल श्री कृष्ण वा श्री इरव में अन्तर्वीण हूँ कि उनीने पुम्न को अपने कनीवीण में प्रकाशिल किया है।

—विश्व प्रकाश

विषय-सूची

१	विषय प्रवेश	१
२	दस-पद्धति	३८
३	कॉर्डि-समा	६४
४	कॉमिन-समा	११
५	मपि मद्रस	१३३
६	मिजिल मरिम	१९१
७	ससद् और म्यायपाकिता	२४
८	राजपत्र	४१

विषय-प्रवेष्टा

इंग्लैंड की प्रतिनिधिक शासन-प्रणाली का इतिहास अपूर्व है। अविच्छिन्नता अथवा सततता की दृष्टि से अन्य कोई शासन-प्रणाली उसकी तुलना में गूढ़ा टिक सकती। उसका जन्म एक ऐसी शक्ति से हुआ था जिसके सिद्धे कहा जा सकता है कि वह वास्तव में प्रायः पूरे पचास वर्षों तक बहती रही थी। यद्यपि यह एक क्रूर गृहयुद्ध का परिणाम था तथापि उसमें बाद के २५ वर्षों में होत बाले समस्त आभारमूल परिवर्तन छातिपूर्ण समझौते के द्वारा सम्पन्न हुए हैं। उसमें वा विचलनका क तनाव को सहा है और वह स्वयं को उस स्थिति के अनुकूल ढालने में समर्थ हुई है जिसमें उसकी राजनीतिक संस्था का रूप उसका अर्थ व्यवस्था की वास्तविकता के अनुसार सतततापूर्वक संशोधित कर लिया गया है। काम को सरकार अपने आपुनिक इतिहास को बड़े सताब्दी में तीन हिस्सों में बाँट कर प्रस्तुत की गई है और अमरीका के संविधान को अपने विधान के आगे मार्ग में ही गृहयुद्ध के चार वर्षों द्वारा चुनौती मिली। यदि हम अपनी और इटली में प्रतिनिधिक शासन का इतिहास १८७७ न मानें तो एक १३ वर्ष तक चला तथा दूसरा ५२ वर्ष तक।

यदि इस दृष्टि से देखा जाय यह अठार बिलक्षण है। सामान्यतः हम इसका ध्येय अर्थों के कुछ विविष्ट जातीय गुणों को स्वशासन की कठिन कला में उनकी वैयक्तिक प्रवीणता को दे सकते हैं। लेकिन यह व्याख्या सतोपमत्र नहीं है क्योंकि स्पष्टतः यह इतिहास का एक निष्कर्ष है कि इस पर प्रकाश डालने वाला एक सिद्धांत। सच तो यह है कि राजशासन के कुछ प्रश्न इतने गूढ़ होते हैं कि उनकी सरलता से व्याख्या ही नहीं की जा सकती। विविध शासन की सरलता जैसे जटिल प्रश्न को तो किसी एक सिद्धांत की भाषा में समझना असंभवप्राय ही है। वे व्याख्याएँ जिनका आधार राष्ट्रीय चरित्र का कोई माना हुआ गुण हो व्याख्याताओं के अतिरिक्त धारक ही अन्य किसी व्यक्ति को छत्र सकें। यह कोई भी व्यक्ति जो अपने द्वारा जमय सत्रहवीं और अठारहवीं सताब्दियाँ में घासीसिया के ऊपर डाले गए प्रभाव की तुलना करता है, तुरन्त ही यह समझ लेगा कि राष्ट्रीय व्यवहार के निर्णय मूल्य भयंकर हुआ करते हैं। उनमें एकता और वस्तुतः लोगों की प्राणकल्पना होती है जो स्वयं तप्या क साथ मुश्किल से ही मेल खाती है।

बैंग्लैंड के राष्ट्रीय में सफल प्रतिनिधिक शासन की 'आवश्यकताएँ' वस्तुतः बहुमुखी थीं और जटिल भी। केवल गुण और विवेक से ही उसका काम नहीं चल सकता। उसे इनमें कुछ अधिक बातों की आवश्यकता है। सफल प्रतिनिधिक शासन के सिद्धे एक ऐसे नागरिक-समुदाय की आवश्यकता है जो शासनिक क्रिया-कलापों के समस्त प्रमुख उद्देश्यों के सम्बन्ध में एकमत हो, इतना एकमत कि परिवर्तन के साधन-रूप में तर्पण का विचार राष्ट्र के एक अखण्ड अंश को छोड़कर अन्य लोगों के मन में ही न आ सके। प्रतिनिधिक

शासन की सफलता के लिये दूसरी छर्त राज्य के अन्दर इस भाव की कि समाज का कोई भी महत्वपूर्ण बग स्थायी रूप से उत्पन्न हो न सके भ्रष्टाचार है। यह बात अर्थों के मन्त्र में भी अन्य जातियों की अपेक्षा कम स्पष्ट नहीं है कि समाज का दीर्घकाल तक स्थायित्व प्राप्त करना होता है और अपने चलकर समाज से निष्कासन का कार्य निरवगत साम से भी निष्कासन होने समता है। अतिजात वर्ग के शासन का अतिप्राय मर्दान ही समाजक अतिजात वर्ग के हित में सामन रहा है। व्यापारी वर्ग के शासन ने कुचको और निधनी के हितों की सर्वत्र अपेक्षा की है। जब तक कोई व्यक्ति-समूह बसने कि उसकी जनसंख्या काफी बड़ी हो यह अनुभव नहीं करता कि समाज में उसकी स्थिति इतनी दृढ़ है कि या तो उसकी बात को ध्यान से सुना जायेगा या उसकी अस्वीकृति पर समाजक व्यक्तियों की स्थिति को थोड़ा पहुँचेगी तब तक वह सामाजिक छाति के सकारण में यदि अन्तर्गत प्रकृत उसके विचार से पर्याप्त महत्व का हुआ सुपमता से सहयोग नहीं देगा।

सफल प्रतिनिधिक शासन की तीसरी छर्त राज्यव्यापी सहिष्णुता की भावना है। उन मनुष्यों को जिन्हें छातिपूर्णक साथ-साथ रहना है, छातिपूर्वक साथ-साथ विचार विनिमय करने में समर्थ होना चाहिए। उन्हें चाहिए कि वे वर्तमान मनुष्यों की आलोचना का समन करने के लिये कमार न करें प्रत्यत आचरणकता परक पर उसके परीक्षण की जामबित करन के लिये प्रस्तुत रहे। उन्हें महत्वपूर्ण अस्पमत्त के उपर विचार के से निदान विनये उसे सोच उत्पन्न हो आगेपित करने से बचना चाहिए। इस सहिष्णुता के बिना समाज में समझौते की कोई सम्भावना नहीं है और इस दशा में मन्त्रेय का प्रत्येक विषय विषयन का राज्यायें बन जाता है।

मेरा विचार है कि ऐतिहासिक दृष्टि से यह स्पष्ट है कि सहिष्णुता की आवत सुख्या की भावना से उत्पन्न होती है। हमने मेरा आशय है कि समाज के सदस्यों को यह विचारना होता चाहिए कि जब से हम आधिक शास में उनकी समस्त सुख आयाएँ पूरी होनी। सहिष्णुता एक ऐसी मनोबला के अन्तर्गत पर निर्भर है जिसमें ध्यनित धृतिवगल विचार-विनिमय के लिये सम्मत् हों और इस मनोबला का सबसे प्रबल धनु अस्पमत्त निरव क्रम के विशेष से उत्पन्न मय है। इतनेके म राजनीतिक सुधार जैसे वाति से उत्पन्न जात्रक के कारण पाणीय बर्षों तक टकना रहा था और एक साथ वह भी आमा था जब माग जाने मगा था कि १८३२ का समझौता दायद छातिपूर्ण रीति में सम्पन्न हो सकेगा। मन्त्र्य अपने मन्त्रेय को उन समय जबकि उनके जीवन मय में प्रकृत हों विवेक छात्र नहीं सुनना मरते। यह मय युद्ध में पराक्रम का परिणाम हो सकता है। यह असाध (currency) के पुनः जला-भस्त हो जान से उत्पन्न हो सकता है। यह किसी एने आचार अथवा अविचार पर भी जनता को विमय प्रिय हो मुद्राचपात से भी उत्पन्न हो सकता है। कारण चाहे कुछ भी हो मुद्रा का वातावरण जिनका कम होया जलनी ही अविचर हम जान की संभावना छोड़ी कि प्रतिनिधिक शासन सफल नहीं हो सकेगा।

मात्र से मन्त्र वर्ग पूरक अत्र बीजहोण न अत्रही अविचारन का अत्रता प्रविष्ट विरमेयक विद्या था उनसे प्रतिनिधिक शासन की सफलता के लिए हो गये और आचरणक दृष्टाई से उनके विचार से यह आचरणक था कि जन-समूह विनयणीय हो। अत्रहोण 'नृपतव'

(monarchy) को एक एमी 'गल्प' (myth) मानता था जो अपन सामंत्वार्थिक प्रमाण व जनता को अपन स 'बड़ों' का सामन स्वीकार करने के लिए राजी कर देती थी। उसन सिखा था 'भाग सोचने ठी यह है कि हम एक मनुष्यविक साभ्रात्री द्वारा उन मायात्री द्वारा त्रिस पर ईश्वर की हुया है, प्रामित होने है जबकि वास्तविकता यह है कि वे संविमदक और ससह हाय अपन द्वारा निर्वाचित अपन जैसे व्यक्तिवों द्वारा धामित हुये है। उच्चकोटि का मौरव भक्ति की भावना जमा देना है और इसके कारण बहुधा बड़ मौरवहीन मनुष्य शासन करन का अवसर पा भेन है।

हमें राष्ट्र की भावना को एकान्वित करन में सम्राट क व्यक्तित्व का प्रभाव अस्वी-कार करन की आवश्यकता नहीं है। लेकिन यह विस्फुल स्पष्ट है कि ईश्वरहीत की 'गल्प' से यथार्थ में बहुत कम काम निकक पाता है। कारण यह है कि ऐतिहासिक दृष्टि से हम प्रकार की गल्पें जमी समय तक सफल होती है जब तक कि उनकी छवछाया में संविधान का 'प्रवीण' भाव अपने काम को सफलतापूर्वक करन में समर्थ होता है और यह पासन प्रणाली की इस योग्यता पर कि वह नागरिकों की उचित आशाओं को जहाँ तक पूरा कर सकती है निर्भर है। जहाँ यह नहीं हो पाता जैसा कि साम्य प्रथम जबका सुई सार्वभौम अवका निकोल्सन द्वितीय क साथ हुआ था गल्प की विश्वासपादन की योग्यता बड़ी पीप्रता ने गल्प हा जाती है। गल्प को सफलता नहीं मिलती है जहाँ कि सामन सुदृढ़ हाता है जहाँ पासन अस्त-व्यस्त हुआ उसे भी बुलप्यादी हाल बेर नहीं लयती।

ईश्वरहीत ने संविधान के 'पीरनपूर्व' भाग क महत्व पर जा बल दिया है उसके मूल में एक और महान विचार है जो अधिक महत्वपूर्ण है और जिसे पूनरुप से स्पष्ट नहीं किया गया है। वह स्मृतम्प है कि ईश्वरहीत न धार्मिक सत्ता की परिपक्वता तथा १८७७ क विद्या-अधिनियम क जनसख्या क ऊपर कुछ प्रभाव डालने के पूर्व लिखा था। उसे इस बाल में सहेह था कि प्रतिनिधिक शासन सार्वभौम मताधिकार के साथ निम सजता है। वह जनता क अज्ञान से डरता था। उसको भय था कि बड़ी निम्नवर्गों का मेल 'बड़ों' को अधिक न अधिक न कर दे और इस कारण से बचने क लिय उसने अनिश्चितता तथा अनिश्चय क गडबन्धन का प्रतिपादन किया था। यह स्पष्ट है कि उनक मन में चार्टरवादी आन्दोलन अपना १८४८ की फ्रेंच क्रांति की सी स्थिति थी जिसमें जनसाधारण ने अपनी राजशाक्ति का प्रयोग सम्पत्ति का आहर बटान के लिये किया था। उसे एक एमी स्थिति से विभय भय था जिसमें कि सुधिक्षित और बलिक व्यक्ति दोनों ही 'जनता क विधाय का मानन के लिये निरन्तर प्रस्तुत हों तथा उसे कार्यन्वित करन क पर क लिये संघर्ष करें। यदि जनता की आकांक्षा का व्यवहारिक रूप यह हुआ तो वह मैदान की आकांक्षा होगी। जमने लिखा था "निम्न वर्गों का अल्पे उर्ध्वगो की प्राप्ति क लिये इस प्रकार का राजनीतिक गठबंधन एक बल बड़ी बुवाई है। यदि वह उनमें से अधिकांश का मताधिकार प्राप्त है इसलिये उनका म्यादी गठबंधन उन्हें देश में सर्वोच्च बना देगा और वनमान स्थिति में उनकी सर्वो-च्चता का अर्थ विद्या के ऊपर अधिता का और शास के ऊपर मर्यादा का स्थापित्य है।"

मर्यादा के बहर बल का भय उन पीढ़ी की जिसमें ईश्वरहीत ने लिखा था एक विधायता है। पिछ मेल और लेकी इन सभी की रचनाएँ विभिन्न माताओं में इसके प्रभाव ने इस्त

है। जब यह स्पष्ट है कि कुछ दृष्टियों से उनका भव काफी बतिरखित था। उन्होंने विद्या की मनुष्यों को दूरदर्शी बनाने की ध्वनि को कम समझा था। उन्होंने प्रचार के प्रभाव की इस ध्वनि को कि वह प्राचीन विचार-प्रवृत्तियों को बनाए रख सकती है कम जाका था। लेकिन कम से कम एक दृष्टि से सामंतीय मताधिकार पर आधारित उनका मोठठक विपदाक तब से यह विशेषता है और इस कारण उनकी रचनाओं का अर्थ महत्व है।

यह निश्चित है कि उस समय में जहाँ स्त्री और पुरुष सामंतीय मताधिकार का उपमान करते ह। इस बात की अनवरत माय रहेगी कि उनकी राजनीतिक ध्वनि उनकी नीतिक दशा का उल्लेख करने में लगे। जब तक आर्थिक व्यवस्था उनकी मांगों को तयतार और शांतभूत माथा में पूरा करती रहती है वे उन मूलाधारों का अर्थका परीक्षण करने के मतानुसार लक्ष्य ही भयावह होता है विशेषतः करने के निम्ने विषय उल्लेख नहीं होते। वे सुरक्षा अधिच वेतन काम के कम घट अन्तर्गत अपने लक्ष्यों के निम्ने अधिच व्यापक शिक्षा और अवस्था की माय करने। जहाँ तक लक्ष्य-व्यवस्था उन्हें ब वस्तु प्रदान कर सकती है तब कुछ टीक रहेगा। ईंग्लैंड ने स्वयं भी कहा था "जबतक उच्च वय न कबल प्रत्येक सामाजिक शिक्षण ही प्रत्युत प्रत्येक सामाज्य शिक्षण ही दूर कर सकते हैं वे उस प्रत्येक काम को स्वीकार करने जिसे वे सुरक्षा से कर सकते हैं।" लेकिन प्रतिनिधिक मोनरतन की मूलभूत और वैश्विक समस्या यह प्रश्न है कि उस समय उच्च वर्ग क्या करेंगे जिसे समय उनके सम्मुख कोई एता थावा अवस्थित किया जाता है जिसे वे अपने विचार से सुरक्षापूर्वक स्वीकार नहीं कर सकते। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ईंग्लैंड के लिए 'सुरक्षा' का विचार एक वस्तुपत्नी (objective) विचार था वह सावद कुछ ऐसी वस्तु था जिसे उस राजनीतिक लक्ष्य-व्यवस्था के आधारों से जिसका वह इतना भय प्रतियादक था वृत्तित निसृण किया जा सकता है। लेकिन यह स्पष्ट है कि वे आधार वास्तव में उच्च वर्ग के अर्थ-वेतन आहू वे और उमन उन्हें यों ही बना रक्ता था। उच्चवर्ग में 'सुरक्षा' विपदाक अपन विचारी का निर्माण इस आधार पर इतकि किया जा क्योंकि उसे अन्त कोई लक्ष्य आधार ही न मूळ पड़ने से।

सामाजिक समस्या वह भी जिसका हम मध्य में उधार विचारकों में टोकियावेली ने और ललाजवाही विचारकों में मास्न और उमके टिप्पणों में लामना किया था। समस्या थी कि यदि वही विभिन्न राजनीतिक दलों ने रियायतों के अनुदान में सुरक्षा की धारणा को एक दूसरे में मिश्र या प्रतिदुल दृष्टिकोणों से देखा तो क्या स्थिति उत्पन्न होगी? उस स्थिति में व्यक्ति उन्नी मूलाधारों के सम्बन्ध में उनके विषय में एकता का बने रहता ईंग्लैंड के विचार से प्रतिनिधिक मोनरतन ब तपल धारण के सिद्ध आवश्यक था मिश्र बन होगे। कई अन्धोर ने किया है कि "हमारा सम्पूर्ण राजनीतिक तब पढ़के से ही इतने मर्त्य की जनता का अन्तिम माय कर बनता है कि वह पारस्परिक विचार-वेद को सुगमता में मह मजता है। उसे अपनी सहिष्णुता के विषय में इतना प्रबल विरास है कि वह राजनीतिक लक्ष्य के अन्तन कोलाहल से सभी अधिच सम्भ नहीं होता। वह एक मजता का ही फल है कि 'मजेंड' के राजनीतिक इतिहास और उनके महाश्रीय पक्षी विषयों के राजनीतिक इतिहास में दलता विद्ययप अन्तर रहा है।

यह एकता आर्थिक सङ्गठना युद्ध की सफलता और सामाज्य-निर्माण की सफलता में उत्पन्न एकता है। उस सफलता के परिणामस्वरूप अर्थात् धनराशि हाथ में आने के कारण गियावनों की यह नीति विमर्श की ईजर्शन से निरन्तर प्रयोग करने के लिए विद्यारिण की भी कार्यान्विता होती रही। आन्धवादी आन्दोलन के से कतरे के अन्त में आनिपूर्वक वार कर किये गए क्यारि इतने से प्रत्येक के समजातीय ही देश की विपुल आर्थिक उत्पत्ति हुई और जनजातारण को प्रचुर भौतिक लाभ पहुँचे। इस क्रम से क्रम से क्रम युद्ध (प्रथम युद्ध) की समाप्ति तक उच्च वर्गों के विद्वान्मिहारी अथवा मुरगा को किसी भी प्रकार खतरा नहीं पहुँचाया। और तो और १९८ तक में एक प्रमुख अमेरिकन लेखक का मत था कि इयमर में आर्थिक दल का विधाय इसके कि यह उदारवादी दल (Liberal Party) का छोटा भागो बन जाय अथवा कोई प्रविध्य नहीं है। प्रथम विश्वयुद्ध के प्रारम्भ होने तक यह समझा जाता था कि समाज की पुत्रीवादी युगियावा को कोई विरोध संकट महा है। लोगों का विरवास था कि समाजोद्धार मूलन उदारवाद न विमर्श पायद ही एव हीन सर्वश्रेष्ठ प्रतिपादक का राज्य-हस्तक्षेप के एक ऐसे वर्ग का निर्माण कर लिया है जो विद्योगिया-युग के समन्वय की क्रम से क्रम म्यूल विपन्नताओं को तो सर्वत्र समग रगगा ही। विभिन्न समाजवादिनों का मुख्य भाग स्वयं भी इन वृत्तिकोष की रचना के ऊपर सायद ही सन्देह करता हो। उनके ऊपर पेरियन विचारवाच का प्रत्यक्ष गहरा प्रभाव पना था और वे राज्य-मन्त्रि को एक एसी नैतिक मन्त्रि मानने से जो निर्वाचनीय बहुमत की इच्छा पूरा करने का स्वतः ही ध्यान रकनी थी। उन्हें इन बात में रचनाय भी सन्देह नहीं था कि विवेक हमारे साथ है। वे यह मान बैठे थे कि राज्य की मन्त्रि आर्थिक सम्पत्तियों के समाजवादी कायावस्था के निमित्त प्रयुक्त करने के लिए सन्त लेखक यही करता है कि वे बहुमत को अपने कार्य के आधिक्य के विषय में राखी कर लें।

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यह सन्त विद्वान् अब भी इस देश का प्रधान वृत्तिकोष है यद्यपि हाल के वर्षों में इसे कुछ गहरे आघात पड़े हैं। आन्धव में इसकी स्वीकृति बहुत ही ऐसी प्राक्कल्पनाओं के ऊपर आधारित है जिनमें न किनी एक का भी टुक में परीक्षण नहीं हुआ है। यह एक ऐसे अनुपपन्न विवेक के अस्तित्व में विरवास रखता है जो व्यक्तिगों को अपने निम्नर्प आनिपूर्वक स्वीकार करने के लिए बाध्य करता है फिर चाहे उनका प्रयोग में उनका कोई भी हिण हो। यह लोकतन्त्र को मरने वाली बच्चाई मानता है और उस पुत्रीवादी व्यवस्था में जिनमें उनका गनता मनिष्ठ मन्त्रन्त्र है लोकतन्त्र के माध रण की बन्धना सम्बोकार करता है। यह महादीपीय वर्गों के अनुभव और इंग्लैड के अनुभव में मेह मानता है इन आकार पर कि हमारा राष्ट्रीय चरित्र और ऐतिहासिक परम्पराएँ हम देश में निश्चिन्ता भिन्न सम्भावनाएँ उत्पन्न कर देनी हैं। इन चरित्र और इन परम्पराओं का देखने हुए यह मान लिया जाता है कि विभिन्न पुत्रीवादी करने विद्या-पितारों के लिए सचट उत्पन्न होत पर महादीपीय पुत्रीपतिवों की मानि आचरण नहीं करेंगे। पुनरुक्त यह राजनीतिक क्रिया-कलाप का विद्युत् वृत्तियाणी निर्बंधन है। यह इन बात को प्रायः मूल का जना है कि राजनीति में विवेक बहुत कम काम करता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हमने प्रायः आर्थिक मन्त्रि और राजनीतिक मन्त्रि के सम्बन्ध

का उस सीमा का जहां तक राज्य की शक्ति अपनी आर्थिक बुनियादों के ऊपर आश्रित रहती है, कभी सम्मीरणापुनक परीक्षण नहीं किया है।

वैसा कि बीजहॉल और उसकी पीढी के अधिकांश विचारकों का मत था स्थिति इससे नहीं अलग बटित है। वैधानिक सिद्धांत और प्रशासिका सांख्यिक एक-वितर्क के शृंग में नहीं बसती। वे तो कठिपय उद्देश्यों को प्राप्त करते क लिए साधन-मात्र हैं। उनका बटन ही कुछ इस प्रकार होता है जिससे वे अपने उद्देश्यों को मभी मानि हस्तगत कर सकें। मत वा सौ पचास वर्षों का लघुबी राज्य उस उदारवाद (liberalism) की सम्भावत अधिभक्ति है जिसका प्रथम उत्कृष्ट प्रतिपादन लॉक की रचनाओं में मिलता है। इस उदारवाद ने सम्पत्ति के स्वामी के इस अधिकार को मान लिया था कि यदि कोई व्यक्ति उससे सम्पत्ति के उपयोग में मतमाना हस्तक्षेप करे, तो राज्य सम्पत्ति के स्वामी की रक्षा करेगा। राज्य का मुख्य प्रयोजन यह है कि वह ऐसी परिस्थितिमा उत्पन्न करे जिसमें कि सम्पत्ति का स्वामी अपने सम्पत्ति विषयक अधिकार का अधिकतम उपयोग कर सके। राज्य को कार्यक्षेत्र की यह बाधा कितनी सखीन थी एहम स्थिति ने इसे निरन्त मोक्ष स्वीकार किया था। उसकी राय में स्वाम का मुख्य प्रयोजन सम्पत्ति का रक्षण था। उन्होंने निम्न या बतिको वा ऐश्वर्य निर्बन्तो के रोप को बडका रेटा है और वे बहना अपनी आनन्दमत्ता से प्रेरित तथा ईर्ष्या से उद्दिग्ध होकर बतिका की सम्पत्ति पर आक्रमण कर पने हैं। इस बहुमूल्य सम्पत्ति का स्वामी जिसने अपनी सम्पत्ति को कई वर्षों अथवा घायर बर्ष पीढियों के अन्त से उपाशित किया हो केवल छासक की सजडावा में ही रण को सुरक्षा में छो सकता है। बर्ष का नौ मही मत था कि राज्य का मुख्य उद्देश सम्पत्ति की रक्षा करना है। उनका बहना था "शासन में यह साम्य नहीं है कि वह हमारी आनन्दमत्ताओं को बुरा कर सके। यदि राजनेता यह सोचते हैं कि हम ऐसा कर सकते हैं तो यह उनकी बहुमत्ता है। हा! शासन में यह सक्ति अथवा है कि वह बहुमत्ता बरदाई को रोक है। यह इस बात में था अन्य किसी बात में टोस भलाई का नाम बहुत बल कर सकता है। इस बुद्धिकोष का बन्धुमूत सिद्धांत घायर स्पष्टतम रूप से आर्ष बंध में व्यक्त किया था। उनमें १८७१ में लिखा था "मूर्ख को छोड़कर अन्य प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि निम्नवर्गों को निर्बन्त रचना चाहिए नहीं तो वे कदापि परिश्रमी नहीं होंगे।

यन गणाधी का अदेवी उदारवाद बाह्यरूप में इन बुद्धिकोष ने बहुत दूर हट गया है। उनसे एक ऐसे राज्य-सिद्धांत का निर्माण किया है जिसमें मापक और समुदाय की स्वतन्त्रता विधि (Law) के समक समानता सांख्यिक मनाधिकार अधिभार्य विद्या और आर्थिक स्वतन्त्रता आदि की व्यनस्वा को प्रति मभी रक्षा के अन्त में निष्ठा है। अथवा प्रारम्भिक अधीनवी गणाधी के पुलिस-राज्य वा स्वात भीमवी मताली के सांख्यिक सेवा राज्य में से लिया है। राज्य ने एक ऐसे परिमाण में जिसकी बीजहॉल बलना भी नहीं कर सकता था अपने बल हस्तक्षेप के द्वारा आर्थिक अनमानता के कुछ निष्ठा परिचामों को अन्तर्गत कर दिगने के लिये अपनी सर्वोच्च शक्त-प्रवर्ती रता वा प्रयोग किया है। सार्वजनिक स्वास्थ और शिक्षा मनात और मनाग्रन की बुद्धिवाओं में बजहॉल के मन्त्र से सर्वोत्त मुधार हुए हैं। अधिभार राजनीतिमा की धारणा है कि इस अधिभ को उस समय तक बंध

करने का कोई कारण नहीं है जबतक कि कोई असाधित आपत्ति ही न दूट पड़े। "समें कोई सबूत नहीं कि सामाजिक उत्पत्ति में उत्पन्न और पतन होते ही रहे थे उदाहरणार्थ अभी हम नाबिन्ध्य-वक्त में अन्तर्गत परिणामों के स्वामी नहीं हैं। लेकिन यदि हममें इच्छा और ईर्ष्य हो तो यह मानने का कोई कारण नहीं है कि हमारी वैधानिक पद्धति इतनी सुपरिदर्शनशील नहीं है कि वह ऐसे किसी सामाजिक परिष्कार का, जिसका लिए निर्वाचक-मंडल कृत-अक्षर्य हो घातिपूर्वक सम्पन्न न कर सके।

मेरे विचार से उक्त विस्वास में एक छुट्टि रह जाती है जिसकी ओर सन साइमन न सकल विचार था। उक्त सिद्धांत था "बहु विधि जो सामन की धर्मिया या स्वरूप निरिधन करती है उस विधि की अपेक्षा जो सम्पत्ति से सम्बन्ध रखती है तथा उसका प्रयोग की व्यवस्था देती है, कम महत्त्वपूर्ण है और राष्ट्रीय क ऊपर कम प्रभाव रखती है।" हमारी राज-पीठिक पद्धति उत्पादन के साधनों के व्यक्तिगत स्वामित्व को स्वीकार करती है इस स्वीकृति का विधि की राश-रय पर प्रभाव पड़ता है। हमारे न्याय-शास्त्र (Jurisprudence) की समस्त शाखाएं व्यक्तिवाद की परम्पराओं से अनुप्राणित हैं। व सम्पत्ति-विषयक अधिकारों की रक्षा का जोरदार समर्थन करती है। वे कीसरी धनाधीन की समूहकारी और सामुदायिक पद्धतियों पर नहीं प्रत्युत सत्रहवीं शताब्दी से असीसवीं शताब्दी तक निर्मित हुए बर्हि उदाहरणों कायिक सिद्धांतों पर आधारित हैं। इनके निर्माण के व्यक्ति व जिनका विस्वास था कि व्यवसायी व्यक्ति की विजय के साथ ही साथ जातिवारी परिवर्तन की आवश्यकता पर एक प्रतिबन्ध लग गया था क्योंकि उनकी दृष्टि में उसकी विजय ने जाति बंध और विचारधारा की बंधनदों की उस धर्मि को जो उसे समाज में अपना उचित स्थान प्राप्त करने से रोक्ती समाप्त कर दिया था। सच्ची स्व-संज्ञा नहीं थी जो उस भिन्न गई थी—सम्पत्ति को प्राप्त करने और उसे बनाए रखने की स्वतंत्रता। यही वह वस्तुस्थिति थी जिसने उत्पादन के सम्बन्धों और उत्पादन की धर्मियों में सामंजस्य का विधा था। जमे मीनि राजसंज्ञा सभी ने इसके उदासीकरण में योग दिया। वह 'नैतिक स्वतंत्रता को सरल पद्धति' ही की विरत गुण-गुणों उपरान अनुप्य को अपन स्वर्ण-राज्य में प्रवेश करने की सामर्थ्य थी।

इस दृष्टिकोण के कम से कम सात का बाद के परिवर्तनों ने स्पष्ट नहीं किया। वे विचारधारा जिनकी बेबहुति ने विचारधारा की थी थी गई लेकिन जगहों अक्षरी समाज के बंध सम्बन्धों के ऊपर कोई प्रभाव नहीं डाला है। मुक्त वह बंध थी धर्मियों और निर्धनों के जो राष्ट्रों के बीच विभाजित हैं। मुक्त उसकी परिधि में अक्षरों की समानता का भी कोई धर्मिण्य नहीं है। मुक्त पुनश्च उत्पादन का प्रेरक मंत्र समाज की आवश्यकता नहीं प्रत्युत उत्पादन के साधनों के नियंत्रणों की अपन पुरपाके द्वारा रक्षा पत्रा करत की सामर्थ्य है। इतना कम यह हुआ है कि हमारा समाज जैसा कि श्री कौन्स न लिखा है "अपरिण-एवना और आवश्यकता भावना से शून्य पुनश्च अधार्मिक तथा स्वामित्वों व स्वामित्व के विषय प्रयत्नशील व्यक्तिता का एक सर्व-स्वतन्त्र मान बन कर रह गया है। इसके द्वारा निर्मित राजनीतिक विधान का स्वरूप कुछ ऐसा है कि वह सरकारी बंध उस बंध या बंधों की इच्छा के ऊपर छाड़ देता है जिनका नाम-गमा (House of Commons)

में बहुमत होता है। लेकिन यह भी इष्टव्य है कि म्यामपात्रिका विधिक सचिव सेना और पुलिस इन सबमें महत्वपूर्ण स्थानों पर सत्ताकण्ड बग के आदमियों का ही अधिकार रहता है। उनके विधवस्तु नियम और व्यवहार से होते हैं जिनसे उनके द्वारा नियंत्रित समाज व्यवस्था में कोई बिम्ब नहीं उठता। अन्य स्थानों की तरह यहाँ भी सार्वजनिक धर्म में सही और गलत विवेक और अविवेक उस प्रभाव के समसार ही होता है जो वे विधवाय समाज-व्यवस्था के ऊपर डालते हैं। प्रश्न यह उठ सकता है कि क्या हमारा सामाजिक शासन इतना सचीला है कि वह उन परिवर्तनों को जो उसको समूह बदलना चाहें सहन कर सकेगा।

आज परिवर्तन की प्रवृत्ति और गति दोनों ही पिछले दो सौ पचास वर्षों की प्रवृत्ति और गति से भिन्न हैं। दमस्त धासन आज भी ब्रैजहॉल के समय की भाँति प्रतिनिधिक शासन का महत्वपूर्ण सिद्धांत है। लेकिन एक-ठाठन के मूल सिद्धांतों और शिष्टों सेना में क्रांतिकारी परिवर्तन हो गया है। एक ओर तो यह बल है जो अत्याचन के सामने के व्यक्तिगत स्वामित्व में विश्वास रखता है और दूसरी ओर यह बल है जिसका विश्वास है कि व्यक्तिगत स्वामित्व की व्यवस्था चूर चूर हो चकी है और इन सामना का समाजीकरण राष्ट्रीय कल्याण की दृष्टि से अत्यन्त आवश्यक है। यह सही है कि पहला बल उस सीमा तक विधायकों की नीति को बाध रखने के लिये तैयार है जहाँ तक कि राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में किसी नगरीय इष्ट-पुष्ट की आवश्यकता न हो और यह भी सही है कि उसके विरोधी बलमान शिष्टों को कम से कम हानि पहुँचाते हुए समाजीकरण की नीति को कार्यान्वित करने के लिये उत्सुक है। दोनों ही अधिक से अधिक सामान्य भूमि को जोड़ने के लिये प्रयत्न हैं क्योंकि उनमें से कोई भी एसी नीति पर चपलता नहीं चाहता जिसे कि दूसरा लोचन के लिये एक चुनौती समझे। लेकिन उनमें से किसी न भी इन प्रश्न का कि क्या पूँजीवाद के पतन काक में पूँजीवाद और लोकतंत्र का वैयक्त विवाह सम्भव है नगरीयतापूर्वक सामना नहीं किया है। जब तक अपरिष्कृतवादी बल सत्ताकण्ड रहता है उनका प्रतिशही बल उन पर निरन्तर आक्षेप करता रहता है और निर्वाचनों से कहता है कि यदि आप निर्वाचना में हूँ सफलता विला में तो हम आपको मिया यह यह करेंगे। इससे ही जमी बल-पद्धति है, उसको बेचने हुए यह निश्चित है कि विरोधी बल एक दिन अपनी सरकार बनाएगा और जब वह उन परिवर्तन को करमा चाहेगा या ब्रैजहॉल के शब्दों में सम्पत्तिवादी बल 'सुरक्षापूर्वक' स्वीकार नहीं करेगा तब विधम स्थिति उत्पन्न हो जायगी। यह स्थिति व्यवस्थामो व्यक्तिगतों में विश्वास का ऐसा अभाव उत्पन्न कर मरगी है जिसमें १ ३१ का ना आर्बिज संरण तक उत्पन्न हो सकता है। क्या उन बला में जबकि एक राजनीतिक बल अपनी नीतियों में समाज की गिरता को लक्ष्य रखा करद प्रतिनिधिक शासन बल बनना है?

ऊपर जो कुछ कहा गया है जगमे यह स्पष्ट है कि भारतीय समाज में समाजान शोचनी है यह है कि क्या हमारी जनता में एकमुख एकरी एकता है। क्या नि मार्न केम्पेरे ने कहा था कि वह "विचारधारा की मुगमता से मरुण कर से? यह बत मरीटी है जिस पर कि संसदीय पद्धति की बुचबाल में नहीं बना सका है। यह सुरक्षा की सामान्य आवश्यकता को भय पहुँचाती है और इन प्रकार विवेक की मनुष्यों के मन पर अपना

प्रमुख बनाए रखने की शक्ति को कुचक करती है। पूरा युग की महती विरोधता यह रही है कि प्रत्येक दल ने अपने पक्षधरों के विनाश को बिना किसी विरोध कटिनाई के स्वीकार किया है क्योंकि इससे राज्य की नींव यथापूर्व सुन्दर रही है। अब भविष्य का जो रूप हमारे सामने आता है, उसमें यह विरोधता कटिनाता से ही गूँ सजनी है। हमारी कटिनाइयों के न तो निरास में ही और न उपचार में ही दोनों दलों के बीच कोई आधारभूत समझौता है। समाजवादी जिन मित्राणों का समर्थन करते हैं, उनका लक्ष्य राज्य के स्वल्प को किन्तु बचक देना है। यही नहीं समाजवादियों का यह भी आग्रह है कि परिवर्तन की प्रक्रिया के साथ ही सुधार भी आवश्यक है। पूँजीवादी समाज के दुष्प्रकोप से इन सुधारों को कीमत मँहसी होती है और १९३१ के समान इन नीति का परिणाम यह हो सकता है कि सम्पूर्ण व्यापार अल्प-व्यस्त हो जाय तथा देश की अर्थ-व्यवस्था हिक ठठे। क्या ऐसे कर्मकर्म के मनोवैमानिक तथा अर्थ-व्यापक प्रतिनिधिक कोषतन के लिए भागी नहीं है? यदि इन प्रश्न का उत्तर 'हाँ' है तो यह सिद्ध हो जाता है कि विभिन्न मन्त्रिमाल उद्योग में जिसमें कि हम उसे जानते हैं आधिक मन्त्रियों के एक विरोध समानांतर बहुभुज (parallelogram) की गणनीतिक घटावकी में अतिव्यक्ति-मात्र है। यदि प्रश्न का उत्तर 'नहीं' है तो विभिन्न मन्त्रिमाल यह प्रथम मन्त्रिमाल होता जिसके कारण समाज के अल्प-व्यस्त में बिना किसी हिमा के परिवर्तन सम्भव हो सकता है। प्रथमोक्त स्थिति में समशीय शासन को उसके परम्परागत रूप में अधिक समय तक बनाए रखना उचित नहीं रहे जाता। ऐसी स्थिति में प्रतिनिधिक शासन पमा प्राप्त हो जाता है जो पूँजीवाद के विनाश-आह्वान में तो उपयुक्त रहता है परन्तु पूँजीवाद के पतन-आह्वान में अनुपयुक्त प्रमाणित होता है। इन समस्या विवेचन में यह सभी प्रकार सिद्ध हो जाता है कि शासन की प्रशासिका कुछ विभिन्न आधिक मित्राणों पर निर्भर रहती है और जैसे ही वे आधिक मित्राण भूतन युग की आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाते शासन-प्रशासिका भी निरोगित हो जाती है।

हम यह स्मरण रखना चाहिए कि हम इंग्लैंड में जिन परिवर्तनों को देख रहे हैं वे तात्कालिक हैं। ये परिवर्तन सभी सम्भावनाओं की दृष्टि में सामंतवाद में पूँजीवाद के संक्रमण की शक्ति ही महत्त्वपूर्ण है। विदेशों में इन परिवर्तनों के परिणाम मन्त्र ही सघटायन और नयी नयी ता समशीय पद्धति के लिये प्राथमिक रहे हैं। स्वयं युद्धोत्तर इंग्लैंड में भी इन परिवर्तनों के युद्धोत्तरी परिणाम दिखाई देने हैं। इन परिवर्तनों के अन्तर्गत उदार दल (Liberal Party) अल्प हुआ है और उनका यह अल्प होना स्वाधी ही प्रतीत होता है। उदार दल के महत्त्व यह जान गए हैं कि यदि पूँजीवाद की रक्षा और समाजवाद की स्वीकृति के बीच किसी एक को चुनना का समाप्त है तो उनका उनका ही नहीं सम्पूर्ण राज्य का लिए पद्धत के साथ है। इतना ही नहीं अधिकतर उदारवादियों ने अनुहार दल की जो नीति अपनाई है उनका परिणाम राष्ट्रीय सरकार का निर्माण हुआ है। यह राष्ट्रीय सरकार विराय की परम्परागत पद्धति

को अपन पुरुबलिया की अपेक्षा भिन्न दृष्टि से देखती है। युद्ध के पूरा हो यह विचार कि विरोधी दल का कर्तव्य ही विरोध करना है समस्यीय पद्धति का सारतत्त्व समझा जाता था लेकिन अब बारम्बार यह कहा जाता है कि इस प्रकार का विरोध विस्फुल्ल व्यर्थ है। आजकल प्रकृति तो यह मान्य पड़ती है कि दलगत मन्त्र का सम्पूर्ण सिद्धांत ही इस भाषा पर कि इससे राष्ट्रीय एकता का अर्थ पड़ती है ठिरसूत्र किया जाय। वास्तव में यह आलोचना मस्त उस आलोचना से भिन्न नहीं है जो अक्सिस संसदीय पद्धति के संबंध में करते हैं। उनका कहना है कि यह राष्ट्र जो जीवन-मरण के संघर्ष से जूझ रहा है, यह सहन नहीं कर सकता कि उसकी शासन-शक्ति में ऊपर कोई अकुल लगे।

इतन में ही इति नहीं हो जाती। यह ध्यान देना योग्य है कि हमारे समय में अमिक मन्त्र के विरुद्ध सबसे पहला विधान बना है। हमारे समय में लॉर्ड-सभा (House of Lords) के पुनर्गठन के लिये एक शक्तिशाली आन्दोलन उठ खड़ा हुआ है। इस आन्दोलन का कारण बसल यही नहीं है कि विधान-मंडल के रूप में यह सभा अधिक कारगर नहीं है प्रत्युत यह भी है कि इस सभा को समाजवादी शासन की सफलता के विरुद्ध एक उपलब्ध रक्षा-मन्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जाय। वर्तमान समय में न केवल राजतन्त्र के गौरव को पुनर्जीवित करने तथा ब्रिटेन का ही प्रमत्त हुआ है प्रत्यत इस विद्यालय की भी पुनर्प्रतिष्ठित किया गया है कि सम्राट सविधान का अतिरिक्त है। इस विद्यालय का मिश्रण यह है कि सत्र के काल में सम्राट ही दलों के बीच निर्णायक है। कई कारणावस जिनको मैं आगे पसकर ग्यालया करगा सम्राट के अस्तित्व से साम सभाने की श्रेष्ठ अत्यधिक महत्व की है। यह न केवल १६८८ की शक्ति व परचाद दो अठारहियों में स्थापित 'विद्य-सिद्धांत' (Whig doctrine) का ही पूरा विषय है प्रत्यत यह इस सिद्धांत की भी स्वीकारात्मक है कि माओ राजनीतिक सभानों में सम्राट की प्रतिष्ठा विशेष ब्रह्मर्षि के शासन के नीरवपूर्व भाग का नाम दिया था विपुल महत्व की है। यह निश्चित है कि सम्राट का सम्पूर्ण समर्थन अपरिचलितवादियों को प्राप्त है। इस प्रसंग में यह भी अप्रामाणिक नहीं है कि एक प्रबन्ध मंत्री ने अमिक दल को उस कठोर के प्रति शासकान कर दिया है जिनका उसे यहि नहीं समने शासनवद होने पर पूजीवादी नीतियों के ऊपर नीचा आक्रमण करने की नीति अपनाई सामना करना पड़या। लॉर्ड बाल्फोरिन के मन में इगल्लेड में लोशनगल्लयक शासन की सुरक्षा का अब यही मान्य पड़ता है कि अमिक दल भी पुनः मान्य पर ही सामाजिक सुधार की दशा में प्रयुक्त हो। आसय यह है कि यदि गतावीन अमिकदल पूजीवाद की नीतियों पर आक्रमण करता है चाहे उसके गीठ निर्वाचनीय अमन को न हो तो इनमें यही प्रकट होता है कि अमिक दल उन विद्यालयों को नहीं समझना जिनके ऊपर इगल्लेड की शासन-प्रणाली निर्भर है। इस प्रकार,

१ "मन्द व दलित्वा म १६८८ की शक्ति रक्तहीन शक्ति (Bloodless Revolution) या नीरवपूर शक्ति (Glorious Revolution) के नाम से प्रख्यात है।
 २ "म शक्ति है शैवादिन या अर्वादिन राजतन्त्र के विद्यालय को अमन दिया था।

३ उदाहरण का पूर्वजातीय नाम।

एक बार फिर हम एसी वस्तुओं के पास आ जाते हैं जिन्हें 'सुरक्षापूर्वक' नहीं माना जा सकता। वस्तुतः हमें चेतावनी दी जाती है कि संसदीय शासन का जीवन साधारण हट्टि से बिजली बल्ब के इस निषेध के ऊपर निर्भर है कि वह उत्पादन के छावनों के व्यक्तिगत स्वामित्व को माता है या नहीं। लेकिन यह तो ऐसी बिजली के सम्पूर्ण प्रयोग को ही मिट्टी में मिखा देना होगा।

बीजहॉट ने कहा था "मनुष्य की कुल-वृत्ति इतनी बसवती होगी है कि वह एक ऐसी सड़क में जिनमें उसकी पराजय निश्चित है। विस्तृत म लड़न की अपेक्षा लड़ना पसन्द करेगा। लेकिन यह नहीं कहा जा सकता कि बसानिक छत्रों में केवल मन्था का बस इतना निर्णायक होता है जितना बीजहॉट ने मान रखा था। बुनौती के यम में सम्पत्तिवादी दल के तन्त्र यह प्रकामन कि वह अपने विरोधियों से छुटकारा पाने के तन्त्र अपने सम्पूर्ण प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रभाव का उपयोग करे, काफी आरंभार मान्य पकटा है। यह भी दिखाई देता है कि जहाँ उसमें एकता है उमक वस्तुओं में मतभेद है। इसके अनिश्चित आधुनिक प्रमाणन की पद्धति उसे उपक्रम की ओ मक्ति देती है उसका मूल्यांकन करना बर्तित है। लोकमन की शक्तिओं पर जितना उमका नियन्त्रण है उमके आलोचका का नहीं है। उसे जब वह सत्ताम्क हो यह महत्त्वपूर्ण काम प्राप्त है कि वह बसानिक प्रकाशियों के छत्रशेप में प्रतिनिधिक शासन की भावना नष्ट कर सकता है। हितकर के धरित प्रान्त करने का यह एक महत्त्वपूर्ण पहलू था। मरे कवन का यह रचनाय भी अनिश्चित नहीं है कि अनुहार दल संविधान को उसक ऐतिहासिक स्वरूप में नष्ट करना चाहता है। मैं कबल बही कह रहा हूँ कि मनुष्य शासन की प्रकाशियों को जो महत्त्व देते हैं वह जितना इसलिये होता है कि वे क्या हैं, कम से कम अपना ही इसलिये भी होता है कि वे क्या करनी हैं। शासन की प्रकाशिया रिज-अनिश्चित के अपने व्यावहारिक रूप में जिन परिणामों को सामने करती हैं, उनके आचार पर ही मनुष्य उनके प्रति निष्ठावान बनते हैं। मनुष्य चार्म्य प्रथम के अतीत केवल राजकीय परमाधिकार (royal prerogative) के प्रति कान्तिर विरक्ति से कारण ही मुक्त प्रवृत्त नहीं हुए थे। यह तो इत परमाधिकार का व्यापारियों तथा प्रचलित ईसाई मन के विरोधिया (non-conformists) के ऊपर पड़ने वाला प्रभाव था जिनका उन्हें रक्षक में सेवा। एसी प्रकार मनुष्य विटिस संविधान का आदर उनी समय तक करेये जब तक कि वे उम काम का आदर करते हैं जो विटिस संविधान करता है। संविधान के प्रति उनका यह आदर-सम्मान संविधान की हम मोस्यता पर निर्भर है कि वह उमकी आमात्रों का नहीं तक पूरा करता है। जहाँ यह हममें तनिक असफल हुआ मनुष्य का उसके प्रति आदर सम्मान का पायेगा।

बीजहॉट ने अपने धर्म में आ जनावनी दी थी उमका यही वास्तविक अर्थ है। वह अताधिकार के विस्तार के प्रति हमन्त्रिय मन्थन या क्याकि वह विस्तृत मनाधिकार के निष्कर्षों को पसन्द नहीं करना था। वह अनमत्तावादी नहीं था और उसका विरधाम था कि राजनीतिक धरित की बुनियादें जिनकी अधिक विस्तृत हूमी उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना रहेगी कि अज्ञान विवेक के ऊपर प्रभुत्व पा लेगा। बीजहॉट के विचार से

बुद्धि तो केवल धार्मिक वर्गों की ही विरासत की राजनीतिक बर्ष-व्यवस्था के रहस्यमय नियमों को तो दिन पर राट्ट का नस्याय निर्मर वा केवल वही व्यक्ति जिनका बंध में बसा रहता वा समझ सकते थे। यही कारण था कि उसने अधिष्ठित जन-समूह को सत्ता प्राप्त करने से रोक्ने के लिये धार्मिक वर्गों को यत्नवन्त का प्रतिपादन किया था।

बैंगहॉट में उस पीढ़ी में किया था जो १८४८ के आठकों से जन्म थी। जैसे ही वे ज्ञानक समाप्त हुए, लीन लोचनभारमक समाज क विचार के अधिक अनुकूल हो गए। उनमें जो विरासत का वह धार्मिक क मिररर बढते हुए परिणाम से उत्पन्न हुआ था। उन्होंने देखा कि धार्मिक वर्गों का वर्तमान समाज की बनिबादों के साथ बिना किसी विधीय कल्पने के निर्वाह हो सकता है। धारक उन्नीसवीं शताब्दी के अठ तक अन्य किसी व्यक्ति ने उन सकारों को जिहे बैंगहॉट ने उठाना वा बुझाया प्रकट नहीं किया। १९ ९ के पश्चात् जैसे जैसे धार्मिक वर्गों की मानें बढती गई, वे सकारें पुनः सामने आईं। १९ ९ से १९१४ तक का समय ऐसा है जिसमें मान्य पड़ता था कि सचरवासीय वर्गों क बाधक भी उदारवादी दल तथा धार्मिक दल की अतिरिक्त धार्मिक दल को सुचित रूप से मनुष्य में बनाए रखेगी। १ ११ म थी रैमजे मैकडोनाल्ड थी लार्ड आर्जे के साथ संयुक्त सरकार बनाने की सभावनाओं पर बातचीत कर रहे थे। लेकिन अब जब हम उन पिछले वर्गों पर दृष्टि डालते हैं, तब वह स्पष्ट है कि १९११ की औद्योगिक असाति ककल सत्तही सचरवासी नष्टी की प्रकृत वह धार्मिकों क उस गौह असतोप की अधिव्यक्ति थी जो वे अपनी नीतिक दशा की हीनता के कारण अनुभव कर रहे थे। उस समय एक नया धार्मिक संवसार उदित हुआ था जो उद्योग तथा बुद्धता में उन धार्मिकों के समानता रखता था जिसने १८८९ की बुद्धता क उपागत स्वतंत्र धार्मिक दल (Independent Labour Party) का जन्म दिया था। इस अध्याति ने धार्मिक दल तथा उदारवादी दल के बीच किसी भी स्वाधी समझौते को असंभव कर दिया। उस साल में उदारवादी दल उन कटौतिक कडि-नाश्या में भी उलझा हुआ था जिनका परिणाम १९१४ का महायुद्ध हुआ। महायुद्ध ने एक युव की इति की—क्योंकि इसके दल ने जिसे कस की शक्ति ने और भी पनीभूत कर दिया था धार्मिक दल में यह संकल्प उत्पन्न कर दिया कि वह राज्य में अपनी एक स्वतंत्र स्थिति क लिये प्रयत्नशील हो। जहा धार्मिक दल न एक बार वह संकल्प किया उचक तथा पुनः दल के बीच एक आई पैदा हो गई। ऐसी स्थिति में १८९२ के पश्चात् पहली बार यह प्रत्य मान्य आया कि क्या अधिष्ठान इन आई को बिना किसी हितक उचक-मुचक क सफलता-पुत्रक प्राप्त करेगा है। जैसा विचार है कि यह किसी भी प्रकार क विरलेयम से स्पष्ट है। १८३० क बाद से धार्मिकों को अपने स्वामिनों की ओर से इतनी अधिक विरायतें अन्य किसी भी युव में नहीं मिली हैं लेकिन साथ ही इन रियायतों के प्रति धार्मिकों की प्रतिक्रिया किसी युव में इतनी अनन्यप्रद नहीं रही है। समाजवाद जो युव की पूर्व सम्मेलनों द्वारा प्राप्त बिना नम बहिष्क प्रस्तावा तक ही सीमित था, धार्मिक के पश्चात् लड़ाई का एक अति धार्मिक उपभोग बन गया है। ऐसा मान्य पड़ता है कि धार्मिकों की अस्तित्वा मानवाते जिन्को और कदम के पूर्वी भाग क धर अनुदार दल क हाथ ने लई के लिये निरक गए हैं। बेरोजगारी की एक शता को जो अग्रे लान के बम कभी नहीं उठी है और अधिष्क

संघटन के समय में तीस काम से भी अधिक हो गई है। रत्ने की आवश्यकता न सम्बन्धित और घर की समस्याओं को एक नए संदर्भ में उपस्थित कर दिया है। आर्थिक राष्ट्रवाद के विकास में अग्रणी नियंत्रण व्यवस्था के आधार पर कठोर प्रहार किया। उसने इंग्लैंड में ऐसी कई विधेय कानूननों का सुझाव कर दिया है जिन्हें कोई भी सरकार अभी तक सम्पीछापूर्वक सुनाने में समर्थ नहीं हो सकी है। क्योंकि प्रत्येक पक्ष पर ही पूंजीवाद के स्वतंत्र स्वार्थ उल्टा रोक लेने हैं। यह मन्त्रालय काम की समस्त प्रभाव आर्थिक और सामाजिक समस्याओं—मजदूर विद्रोह कपास कोमलता बाहर इत्यादि और कृषि—के विषये सही है। इन सबमें अधिको की भावों तथा सम्बन्धित सरकारी काम के बीच व्यापक अन्तर रहा है। यदि अनुदार दल सत्ताग्रह रहा है तो इस अन्तर का कारण तो यह विश्वास रहा है कि अधिको की भावों पक्ष में या अनुदार मन्त्रि-मंडल की यह समझना रही है कि वह अपने समर्थकों के विरोध को पार नहीं कर सका है। यदि अधिक दल सत्ताग्रह रहा है तो उसमें इस शक्ति का और कुछ सीमा तक इस संकल्प का भी कि समाजानु को अस्वीकार कर दें वह सब संभाव्य रहा है। फलतः इन समस्त वर्षों में बहुत आर्थिक और सामाजिक परिवर्तन काफ़ी बड़े पैमाने पर हुए हैं, हमारी वैचारिक पद्धति ने एकाग्र अपवाद को छोड़कर हमारे राष्ट्रीय जीवन के क्षण में किमी विद्यालय नवनिर्माण का परिचय नहीं दिया है।

ये विचार हैं कि इसका कई दृष्टियों से सम्पूर्ण परिचय रहा है। पहली बात तो यह है कि इसका अन्तर्गत की भावों में संसदीय पद्धति का मुख्य बटा दिया है। अब संसद् के सदस्यों का कुछ अपवादों को छोड़ कर अधिको तक का अन्तर्गत के ऊपर मुख्य से पहलू के समय की अपेक्षा कम प्रभाव रख गया है। स्वयं बाह-विचारों को भी लोकमत को प्रभावित करने की शक्ति अभाव हो गई है। वे समाचार-पत्रों में पहले की अपेक्षा कम प्रकाशित होते हैं। कुछ समाचार-पत्र ही ऐसे हैं जो उन्हें सामर्थ्य ही प्रकाशित करते हैं। ये ही दृष्टि में यह न तो संसद् के सदस्यों की योग्यता की ही नहीं और न स्वयं बाह-विचारों की शक्ति या महत्ता के अर्थ का कारण है। बाह्य में इसका कारण दो बातें हैं जिनमें से किसी के लिए भी संसद् को शक्ति नहीं टूटाना का अन्तर्गत। पहला कारण तो यह है कि संसद् की कार्य-शक्ति सामर्थ्य ही सीधे समाचारों या व्यक्तियों के माध्यमों से ही और से जाती है। सुदूर पूर्व काल में ऐसा निरन्तर होता रहता था। मताधिकार सम्बन्धी सुधार राष्ट्रीय विद्या का विद्यालय, आयुर्वेद का होमस्कूल आन्दोलन—इन प्रयोगों को कम से कम योनी कपरेकार्डों को उत्तरदायी नागरिकों को प्राप्त रहती ही थी तथा अर्थव्यवस्था और विद्यार्थी जैसे व्यक्ति अपना अर्थ प्रतिनिधित्व करते थे। परिचायकस्वरूप ये सभी प्रयोग वैश्विक जीवन के अधिकतम अर्थ से मात्तम पहुँचने समर्थ थे। अब ही अब वर्षों कोई ऐसा प्रयोग अन्तर्गत का मन को सुरक्षित अपनी और बीच तकें उठ बढ़ा होता है। सम्पूर्ण राष्ट्र की भावों कायम सत्ता की और तकें जाती है।

दूसरा कारण पहलू कारण के साथ जुड़ा हुआ है। अब संसद् जिन प्रयोगों पर विचार करती है उनमें से अधिकांश अर्ध-व्यावहारिक (quasi-technical) पद्धति के होते हैं। फलतः उनमें लोक-विचारों के विषये कोई स्वयं नहीं रहता और वे अन्तः

बुद्ध से समते हैं। टारिफ-बनसूची (tariff schedule) विषयक ध्योरे नियत मूल्य बटान की योजना के सिद्धांत इति अथवा नी-परिवहन व अन्य आर्थिक सहायता की दायें आवि प्रस्तुत पते हैं जो सर्व-शाखात्म्य की नही प्रस्तुत बनता के विधी विधिष्ठ माप को ही प्रभावित करते हैं। इससे तक बसवारी मूल्य पर भी काफी असर पड़ता है। यदि इन्हें समाचार-पत्रों में स्थान दिया जाय तो इसके लिए आवश्यक है कि इनके साथ कुछ ऊपरी बानें और भिछाई जायें अन्यथा पत्रों में तो ऐसे ही समाचार-धीन स्थान पाते रहते हैं जो जलोजक तथा रोमांचकारी हो। परिणाम यह होता है कि जनता राजनीति की ओर से उदासीन हो जाती है। क्योंकि कुछ तो यह राजनीतिक बटान-बक के सामोहन में कम मिश्रित होती है और कुछ यह इन विभिन्न विभागों को जिनमें विवेचन के लिये पूर्वकाल की अपेक्षा कम स्थान रहता है। अथवा जिनमें कम समय ही पसंदी है। उस संसद् के लिए जो तीन करोड़ निर्वाचकों के लिये रोषक बनता जाये। उन विषयों पर विचार करना आवश्यक है जिनमें जनता का जसकी ओर ध्यान दिख सके। उससे मुहोत्तर पदों में यह करने में प्राय ही सफल हुई है। यदि यह ऐसा करने की ओर प्रवृत्त होती है तो जसे राष्ट्रीय जीवन की बुनियाद पर विचार करना पड़ता और अनुसार एक का यह प्रमाण सक्षम है कि वह ऐसी किसी योजना को रोक। यदि यमिक बल इन प्रश्नों को उठता है तो यदि वह अल्पमत्र में है इतना मह-विभाजन का परिणाम पूर्वनिश्चित है। यह बाद-विचार जिसका परिणाम पहले से ही ब्रह्म हो। जनता के लिए कम बलि का विषय रह जाता है।

मसद् की प्रविष्टा व हाम के लिये एक तीसरा कारण और उल्लेखनीय रह है। अब मसद् पर नाम का बाधा नृणवाक को अपेक्षा नही अधिक रहता है क्योंकि उसका विना बकायो वा अत्र बहुत अधिक बट बना है। परम्परगत उसकी बलिबिधियों पर सरकार के नियंत्रण में वृद्धि होती जाती है। व्यक्तिगत मसद्म का उपक्रम कम हो गया है। बहजन मतलब की कठोरता बर पत है। अब प्रायः समस्त महात्त्वपूर्ण राजनीतिक विवेचनों को अधिमसद् ही उपस्थित करता है और सरन के पास समय का इतना अभाव रहता है कि बाद-विचार के कम को कठोरतापूर्वक नियमित करना आवश्यक है। इसका दो अर्थ है। एक तो यह कि कुछ अपवादों को छोड़कर जिनकी में बाद में चर्चा करना कानिद सम (House of Commons) अधि-संसद् की दृष्टि को पूरा करने का शासन माय रह गया है। दूसरे यह कि परिस्थिति की आवश्यकताओं को देखते हुए एक वा अनुमानत अब इतना बड़ा हुआ है कि कल्प उभ समय का छोड़ कर अकस्मिक अल्पसंसद् बन की सरकार सहायक हो। इस बात की आवश्यकता है कि सरकार को मतलब में पराजित होकर पर-स्थान के लिये विचार होना पड़ेगा। इस स्थिति में तथा संसद् की कुछ से पहले की स्थिति में विचार्यन अतर है। इसका अधिमाय यह है कि उसकी बलिबिधियों अब कम राष्ट्रीय दमनिये है। क्योंकि उनके परिणाम अब कौनसे भी वृद्धि से कम प्रभाव शायी है। अब सरकारें कानिद-मसा के बाहर के काक्रमण से बन्नी-बिबद्धी है। अपन अन्त के संसदीय काक्रमण में नही। ऐसी स्थिति में बीक्रेट व मध्य विक्टोरिया-मूल के लोकमन के अन्त कानिद-मसा के प्रभाव का जो विश्व लीखा या वह हवारे मूल के सम्बन्ध में मायव ही रही हो।

मैं इस मत का समर्थक हूँ कि यह स्वयं संसदीय पद्धति को किमी अन्तर्निहित दोष का परिणाम नहीं है। यह संसद विभक्त भाव-विचार सम्बन्धी भिन्नान् महान् हा अथवा भी काफी बरत-विचार करेगी यह मसद् जा इस प्रकार भाषरण करे कि सामन को अन्तिम को संकट उत्पन्न हो जाय अथ भी व्यापक गति जायुन करेगी। बला ही स्थिति में यह बाहर विद्याल विचार-विमर्श की सृष्टि करेगी और सामाजिक शिक्षा की बहु प्रविष्टा को समस्त क सबसे महत्त्वपूर्ण बावों में एक ह पुन बरत निकलेगी। यह ध्यान देन योग्य ह कि जब १९२४ और १९२९ ३१ म अन्तिम हय न अपनी सरकारें बनाई थीं मरत की हीर्षाका में हयको की अपार भीर रहनी थी। यह बात भी किमी म छिपा नहीं है कि १ २९ अथवा १९३२ क निर्वाचनों में जिगनी अधिक और जिगनी विद्याल मयाण होनी की बेनी बहुत कम निर्वाचना क अवसर पर टकने को दिखनी है। कारण यह है कि उक्त दोनों अवसर पर जनता ने यह समझ किया था कि निर्वाचना क परिणाम अन्तम महत्त्वपूर्णे और सुदूर ग्याी होगी। १९३६ में फ्रांस में जन-मोर्चे (Popular Front) क जो निर्वाचन हुए थे उनके सम्बन्ध में भी यह मत्य है। येरे कथन को मयना इन मध्य में भी पुण होती है कि अमरिका में राष्ट्रपति स्वडेस्ट की प्रुन नीतियो ने अमरीकी नाशेम की कामवाहिया में गृहमुद्रक परचात् में अन्य किसी बात की अपला भाषण जाल टाक दी है।

अने ऊपर जो कुछ कहा है उसका निष्कय स्पष्ट है। यदि संसदीय सामन का जीवन रचना है, तो उक्त कुछ ठान काम करना पड़ेग। यदि यह मह करन म अमरक रहता है तो निर्वाचन कुछ दूरे मार्के लोरेय। मोक्षमन्त्रागमक राज्य में समय मयातक अन्त को स्थिति नहीं है जिसमें कि जनता को यह बिरबाम हो जाय कि उसकी सरकार उन बापिन्को को जो उसे सीये मण है, पुन नहीं कर सकती। यह स्थिति तन्ना का स्वभाव उत्पन्न कर देनी है जो जनता की मुगमतापूर्वक अविनायकवाद की मोहनी आवाज सुनन का प्ररित कर देता है। यह हमारे जेमे काक क मिय बिनाय कर म मत्य है। इन उम स्थान पर पकृष मण है बर्ना अचरिबर्नतवादी एक परिवर्तनवादी बन्को भी नीतियो के आवाजे को अपनी काय करता है। इन अक का परिणाम भीपा है। जब पूँजीवादी मोक्षमन्त्र का हृतीनी निष्कतो है उने अपनी मत्ता बनाए रखने के लिये आधिक रोक में मगाहनीर मकउताए प्रान्त करनी पड़नी है। पूँजीवादी मोक्षमन्त्र के आधिक और रात्रनीतिन स्वल्प म विमलय अतर है। यदि उने अन्तिमता को अपने प्रति एकदिण रहता है तो यह आवश्यक है कि यह उनकी आवाजों का निरन्तर पुन करता रहे। इसका अन्तिमय यह है कि उने निम्न दो बला में से एक बात करनी चाहिए। या तो उम अन्तिमतामी बर्ष का उम बात के मिय लेदाए करता चाहिए कि उसपर जनमाचारण की मर्का क मिय निम्नर अजिवाधिक कर लगने रहे या उसका उत्पादन अनवरत रूप में इन परिभाष में बढ़ता रहे जिसम कि माधारण बेतन-मोमी का जीवन-स्तर निम्नर ऊषा उगाया जा सक। दूरे विषय क सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि उने कम में कम उम माम क आचार पर तो प्राण किया ही जाय जो पूँजीवादी की अपना कार्य करने की प्रेरणा देता है। यदि इन विषयों में से कोई भी अमरक हो जाता है तो पूँजीवादी पद्धति का विनाश निश्चित है क्योंकि यह कोई भी पद्धति को जनमाचारण क लिये मसह दृष्टिदा उत्पन्न कर देनी है अपनी समाधि

अपने हाथों तैयार करती है। जनसाधारण अठसोपरवा यह सोचन क सिद्ध विषय हो जाता है कि वही उसका असतोपो का कारण स्वयं यह पद्धति ही तो नहीं है। एसी स्थिति में जान बलकर यह अटल सा हो जाता है कि लोग उस बस को ओर मुड़ जायें जो समान व्यवस्था क परिवर्तन का प्रतिपादन करता है।

आज की स्थिति कुछ कुछ ऐसी ही है। हमारे सिद्ध यह विचार करना महत्वपूर्ण है कि इसका संसदीय शासन क आर्थिक आचार के ऊपर क्या प्रभाव पड़ेगा। अपरिबर्तनवादियों क सिद्धे इसका अतिप्राम न कबल नहीं होगा कि वे अपने महान् विमपाधिकारों को त्यागें प्रत्युत यह भी होगा कि वे उस परिवर्तन को स्वीकार करें जिसे डाई सी बर्पो की भक्तिमत्ता न उगड़े राष्ट्रीय स्वभाव के सिद्ध प्राथमार्थक बताया है। वे राष्ट्र के हित को अपने व्यक्तिगत हित के साथ जुड़ा हुआ मानते हैं। फलतः उनकी पराजय का अर्थ यह होगा कि संसदीय पद्धति के वे महत्वपूर्ण सिद्धान्त विनक आचार पर उसका निर्माण हुआ है सफल म पर कार्यें और इस पद्धति का आगे चलना असम्भव हो जायगा। वे ऐसे सचों में जो उनके और उनके सिद्धांतों क सिद्धे बीच-भरण का प्रश्न हो उठसक नहीं रह सकते। उनकी इस नीति का अच्छे से अच्छा परिणाम यह हो सकता है कि उनकी सामन में वह विमवास नहीं रहेगा जो एक आर्थिक पद्धति से दूसरी आर्थिक पद्धति क सफल परिवर्तन की सर्व्व आवश्यक घट्ट है। इसका बुरा से बुरा परिणाम यह हो सकता है कि वे शासन के उन परिवर्तन को करने के अधिकार पर जिन्हें वे बिना चुनौती की स्वीकार न करें रोक बना सरने ह। परन्तु नीति का सीधा परिणाम यह होगा कि अपरिबर्तनवादी बल शासन को जानबूझ कर जालि पहुँचाएँगे। वे आचार में रचना लगाता बंद कर देंगे व्यवसाय की प्रवृत्ति रूढ़ हा कामची तथा आर्थिक सफल जनता के रूप की प्रदीप्त कर देगा। एसी स्थिति में सरकार का जाली नीतियों पर अक्षिप रहना उसक विरोधियों क सिद्धे ऐसी एक जाली होगी जो सामन ही सामन की भावना विवक्षित कर सके। एसी स्थिति म सरकार क सिद्धे पीछ हटने का अर्थ भी यह स्वीकार करना होगा कि निर्वाचनीय बहुमत की चाहे कुछ भी इच्छा हा आर्थिक शक्ति क स्वामी हो संविधान के स्वामी दिवता है। उब यह स्पष्ट हा जाता है कि आर्थिक शक्ति के स्वामी अपने इस स्वामित्व के बल पर परिवर्तन की माग्न शासकों को आदेश कर सकते हैं। राज्य उनका राज्य है और उसकी सर्व्वोच्च बलप्रवर्गी शक्ति केवल उन्हीं व्यक्तों के सम्बन्ध में प्रयुक्त हो सकती है जिन्हें वे स्वीकार करने के सिद्धे प्रस्तुत हैं।

दूसरी नीति का सीधा परिणाम यह-यह है। यह ऋको की नीति है जो निर्वाचनीय निगम क परिणाम का विरोधार्थ करना इन आचार पर अस्वीकार करता है कि उनके निष्पत्तियों की वश्यता करना अतमव है। यह बहना उपहासास्पक है कि इस प्रकार की स्थिति इत्यन्त की नी राजनीतिक परम्पराका बाधे रूप म अक्षिप है। यह विष्णुन ऐसी ही स्थिति है कि १९१२ १४ क होयवस-विवाद में सर एडवर्ड कार्मन न जान बूझ कर तथा अनुदाट बल की पूर्ण और बेतन स्वीकृति सहित यहूवड की साथै र्थापि कर ली थी। जमने एक सदारम मला लड़ी की और उनकी सामन की सिद्धे विविदी शक्ति को सहायता प्राप्त करने के भी आगा-बीछा नहीं लाया। उनमें विविध सेवा की राजमनि

भय करती है। उसका सतह को गृहयुद्ध के विषय के रूप में उन शक्तियों को सम्मुख लाने को विवक्षित किया बिनाका वह प्रतिनिधित्व करता था। जो अस्तर जैसे एक छोट से प्रश्न के ऊपर संलग्न हो गया वह आधिकारिकता की बुनियादों जैसे एक बड़े प्रश्न के किम कबापि असम्भव नहीं है। एक बार पुनः वह स्वीकार करना आवश्यक है कि सतहीव शासन की शक्ति ठीक-ठीक उसके मूलभूत जहानों के ऊपर राजनीतिक दलों की एकता से गयी जाती है। एक बार कहा यह एकात्मक मय हुई उसकी आचारभूत मान्यताओं की मधुरता उस समय से भी अधिक स्पष्ट हो जाती है जब कि १८७ के मुबार-अभियोग में बजहोट को उनके परिचारियों के प्रति सचेष्ट किया था। पारस्परिक अल्प-अल्प की सीमाओं का मय करने के किम सम्पत्ति से बढ़ कर अन्य कोई विषय नहीं है, और जब को बाद-विवाद के अधमाम में आ गया है वह है अधिकार है जो उसके स्वाभित्त्व से सम्बन्ध रखते हैं।

(२)

ब्रिटिश संविधान राजनीतिक दृष्टि से लोकतन्त्रात्मक शासन की अभिव्यक्ति तो बतस्य है वह लोकतन्त्रात्मक समाज की अभिव्यक्ति नहीं है। इस भय के निष्कर्ष महत्त्वपूर्ण है। इसके म में न केवल हमारी आधिकार और हमारी राजनीतिक शक्ति के बीच ही अन्तर्विरोध है अनुष्ठानिकता कि की टोने ने कहा है, 'हमारे बतमानता के धर्म' न हमारे राजनीतिक लोकतन्त्र और हमारी समाज-अवस्था के विषय स्वल्प के बीच भी अन्तर्विरोध उत्पन्न कर दिया है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि इयमेड म धन के प्रभाव से कोई भी व्यक्ति ऊंचे से ऊंचे सामाजिक पर तक पहुँच सकता है। लेकिन यह भी सही है कि कबल कुछ मामूली लोगों को छोड़कर अवसरों की समानता भी कम ही दिखाई देती है। राज्य में सर्वोच्च स्थानीय तक पहुँचने के मार्ग में एसी कई बाधाएँ हैं जिन्हें पार करने के किम अनेके कोस्यता या होना ही पर्याप्त नहीं है।

विद्या के क्षेत्र में अवसरों की समानता अत्यन्त है और इसका उत्पत्य यह है कि राज्य के प्रमुख पर राज्य के विभाग बनसमूह के किम अत्यन्त है। इन परों तक पहुँचना बहुत कुछ माता-पिता की शक्ति पर निर्भर रहता है। चाहे तो विधि का धिक्क सचिव हो चाहे सेवा या व्यवस्थापन इन सभी शानों न प्रवेश करने की शक्तें उन व्यक्तियों के किम जिन्होंने मध्यमवर्ग अपना उच्च वर्ग में अग्र नहीं किया है बहुत अधिक माटी है। यदि कोई व्यक्ति सार्वजनिक सम्पत्तियों के निरवकाश-महलों की रचना या राजकीय मामलों की ब्रिटिश इंडिकास्त्रिज वारिरीयन और अल्प परसेजर द्वातपरों कोई जैसी सम्सारों में की जाने वाली नियुक्तियों का अध्ययन करे, तो उसे ज्ञात होया कि इसमें अधिक कम या प्रतिनिधित्व प्राप्त विस्कृत नहीं है। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर के अथवा विदेशों में स्थित ब्रिटिश हुतावासों के महारूपपूर्ण परों के सम्बन्ध में भी वही है। सार्डे-सभा की सदस्यता के लिये भी वही बात है। काम-सभा तक में अनुदार दल के सदस्यों की सीमित आयु अधिक दल के सदस्यों की सीतल आयु से बत वर्ग कम है। यह संघर्ष का वह सूत्र्य है जो अधिक जनता का देना पड़ता है। १८६२ के मुबार-विषयक को पास हुए प्राय ही वर्ष व्यतीत हो चुके हैं

और इस अवधि में अनुदार बल से जाय दर्जन कमकरो तक को संसद् में अपना प्रतिनिधित्व करने के लिये नहीं चुना है।

एक स्थिति राजकीय बच और राजप्रासाद के सम्बन्ध में भी सत्य है। वहाँ का सम्पूर्ण आशावाक्य लोकतन्त्र के सिद्धान्त के विरुद्ध आत्म बद्धता है। विरवविद्यालय राजनीति व्यवसाय विद्यता के संघिष्ट्य को मान्यता देते हैं। वे अपनी डाकूनेट की उपाधियाँ उन बन्धियों को जो उन्हें आर्थिक सहायता दे सकते हैं बड़ी धीपता से प्रसार करते हैं। लेकिन एक दशक में ऐसे जाय दर्जन की अवसर नहीं आ पाय है जब कि भूमिक बन्धता की तरा को ऐसी उपाधि पाय का पाठपोटेँ मान्य मया हो। जब कोई व्यक्ति सम्मानों की सूची का अध्ययन करे, तो वह यह समझ लेया कि सम्मान प्रदान करते समय जिस वस्तु को वास्तव में मान्यता दी जाती है, वह राज्य की धीकी सेवा के अतिरिक्त बल का उच्च पर पाने के लिये अल्पनिहित अधिकार है। चाकर सबसे बड़ा अंग यह है कि जब राजपरिवार का कोई सदस्य मजदूरी की किसी बस्ती या संस्था में मरा-करा पहुँच जाता है तो हमसे कहा जाता है कि हम इसकी प्रशंसा करें या जब किसी उत्सव-तिथि में सरकारी स्कूल के सभ्य पार्क दिव के लिये मजदूरी के बन्धों से सार मिलते-जुलते हैं तो इसे इन बात का प्रमाण बताया जाता है कि जब वर्ग-प्रतिबन्ध टूट चुके हैं।

इनमें कोई संदेह नहीं कि पिछले ती बरों में समाज की मन-स्थिति में वास्तविक परिवर्तन हुआ है। इन्डियन और बँकरे, ट्रोलेय और मेट्रोपिट का बाठक यह समझ लकना है कि अलता में लोकतन्त्रवाक्य भावनाओं का ठेकी से प्रसार हो रहा है। बाय अभिवाक्य-वर्ष की प्रतिष्ठा में उस समय की अपेक्षा राष्ट्रीय कनी हा गई है लेकिन अभिवाक्य-वर्ष के प्यान पर धनिक-वर्ष की प्रतिष्ठा बर गई है। आस्तसोई और कैम्ब्रिज अब ऐसे स्थान नहीं रहे हैं जहाँ कि कबल बन्धियों के बन्धों को ही प्रशिक्षित किया जाता हो। छात्रवृत्ति के विचार के सम्बन्ध मजदूरी के बन्धों में अब सम विरवविद्यालयों, आसफोई और कैम्ब्रिज तक में पहुँच जाते हैं जहाँ वे जाय से बचाय प्रत्युत हीत बरें पहुँके तक नहीं पहुँच सकते ब। लेकिन इस सम्बन्ध में भी कुछ बातेँ बाय रखनी चाहिए। मजदूरों के उन बन्धों की प्रतिष्ठत मस्या जो माध्यमिक विद्या (secondary education) प्राप्त करते हैं और जो विरवविद्यालय तक पहुँच के लिये आवश्यक पाठपोटेँ में काफ़ी कम हैं, ऐसे का अभाव जेकी और भी कम कर देता है। वह १९३१ के "त्याग की उदात्तता" के आवाहन के परभाव बहुत कम हो गई है। साची से यही सिद्ध होता है कि अंशमान भावाओं का बायक यह नहीं कि अमीरों और परीचों के बन्धों की वैतनिक योग्यता में कोई आधाभूत अंतर है प्रत्युत इनका वास्तविक बायक ही यह है कि विद्या की मुश्किलों आदि के प्रथम के ऊपर दोनों के बीच काफ़ी अन्तर बरता जा रहा है। बायक मवान दुर्बल स्वास्थ्य, दीपपुर्ष योग्यता धीरे-धीरे विद्यालय-अवन बसोय अभावक ब मय बन्धुमें धनिकों के बन्धा के लिये अवसरों की अस्वीकृति के विन्दु है।

इन स्थिति का परिचालन सरलता से बनाया जा सकता है। बाँधा कि भी टय का बहना है ह्वाय समाज मुख्य रूप से एक परबर्धनपयक समाज है और उतका मुख्य पाठन-रय उन लोगों के हाथों में है जिन्होंने इस क्षम में सफलता प्राप्त की है। यही

कोय यह निश्चय करता है कि राज्य अपनी शक्ति का कठे प्रयोग करे। यही सोना यह निश्चय करते हैं कि हमारे समाज की क्या आवश्यकताएँ हैं और इनमें से किसकी किस सोना तक पूर्ति होनी चाहिए। धर्मिका को काफी हद तक उनकी इस योग्यता में विश्वास रखना पड़ता है कि वे अपनी कल्पना द्वारा जीवन की उन परिस्थितियों को जिनका उन्हें निश्चयता ठीक ज्ञान नहीं है समझ सकते हैं। उनमें से प्रायः सभी उन मूर्खता तथा उस जीवन स्तर का उपयोग करते हैं जिसकी धर्मिक जनता के लिए कल्पना तक अवसर है। यह भी सच है कि उनमें से प्रायः सभी इस मूर्खता तथा इस जीवन-स्तर का उपयोग करके उन परिस्थितियों के कारण ही करण हैं, जिनमें उन्होंने जन्म लिया था। इसका परिणाम यह होता है कि वे न केवल हमारे समाज की नीचो के बारेमें उन लोगों से जिनके ऊपर वे शासन करते हैं, घिन ही साबने हैं प्रत्यय वे यह भी सोचते हैं कि यह व्यवस्था केवल इस कारण कि वे विजय हैं व्यापकमय हैं; समानता के विचार के उनके निष्कर्ष सामाजिक स्थितियों पर यमीर अधिकार की कोर्ष छाया नहीं डालते। वे बीजहॉट के 'उष्ण' बय है। वे अपने छोटा से भावर और प्रसिद्ध पान की भाषा रखन इ तथा उसे पठ भी हैं। उनके विषय अपने अनुभव न यह निष्कर्ष निकालना अस्वभाविक नहीं है कि उनके समाज-रक्षण की अस्वीकृति या तो सामाजिक संघटन के प्राकृतिक नियमों के अज्ञान का या निम्न वर्गों की उन्मी उकी योग्यता के कारण उत्पन्न ईर्ष्या का फल है।

हमारे सामाजिक जीवन की सारी पक्ति कम-साधारण के ऊपर इस विचार को आरोपित करने में तयगी है। तत्पश्चात् हमारी शिक्षा-पद्धति का मुख्य उद्देश्य यही है कि वह लोगों में आत्म-त्याग की भावना का विश्वास करे। साधारण-पक्ष सिनमा थियटर, चर्च-न सभी अपने सपने प्रभाव में इस उद्देश्य की पूर्ति का साधन हैं। वे समाज की उन्मत्ताय विनयर्मा को कुछ इस संरक्षण का साधन प्रकाशित करते हैं जिनमें कि वह मुख्य को बनना को उसके भूरे लम्बाएँ क लिये देना पड़ना है छिप जाये। वे जनता को अपने अधीनस्थ स्वामियों के प्रति कुनमता-आपन करने का बाधित में विश्वास रखना सिखाते हैं। वे यह प्रभाव उत्पन्न करते हैं कि समस्त अधीनस्थ अर्थात् वास्तविक मजदूर का समस्त परिस्थितियाँ क विषय विरोध नहीं है, प्रत्युत वह मजदूरों को बोझा देने का "अन्धोक्तनवर्तियों" का काम है। वे मजदूरों के नेताओं को कुछ इस रूप में चिन्तित करने हैं मानो उन्होंने समाजवादी आन्दोलन के साथ विश्वासघात किया हो। यदि धर्मिक बय में वे कोई व्यक्ति कभी उष्ण पर तक पहुँच जाता है तो वे यह कृम मचाने नहीं बचन कि धार्मिक व्यक्ति की संकल्पना निश्चित है। वे समाज सुधार की प्रत्येक योजना के विरुद्ध मजदूर रूप में लड़ते हैं। एक दशाब्दी पूर्व ईश्वर ने उन समस्त बुद्धिवादीओं को जिन्हें वे अपने विरोधाधिकारों की रक्षा में काम में लात है, एक सूची तैयार की थी। उनका मजदूर बुद्धिकोण इस विचार पर आधारित है कि निर्धनता की समस्या तो असाध्य है यद्यपि वे यह सभी अवश्य मानते हैं कि पूर्वाचार वे मनुष्य की प्रकृति क ऊपर इतना अधिकार दे दिया है जिसका मनुष्य न कभी स्वयं भी नहीं देगा था। उनका यह विश्वास है कि उनका बल व्यापकमय है, कुछ तो इसलिये कि वे सोच्य है और कुछ इसलिये कि वे नहीं दया से दान लेते हैं।

सेकिन सचची बात यह है कि वे निर्धनों से बचा करते हैं और उनसे डरते हैं। यह हमारी सभ्यता की एक विकृत विशेषता है। यह प्रत्येक बड़ी हड़ताल में बेजान को दिखाती है। यह लगातार दुःख-पान बातें इस विश्वास में भी प्रकट होती है कि बेरोजगारी दोषपूर्ण शक्ति का परिणाम है। यह बात के व्यवसायीकरण में प्रकट होती है और शान संगठन-समाज (Charity Organization Society) जैसी संस्थाओं के वर्तन का मूल में विश्वास है। यह इस व्यापक विश्वास में डूबी जा सकती है कि देश में आवश्यकता से अधिक शिक्षा है अथवा हमारी शिक्षा अत्यधिक साहित्यिक है। इस बात को एक प्रतिष्ठित धर्मशास्त्र तक न कहा है कि हमारी राष्ट्रीय शिक्षा-व्यवस्था अब काफी आगे बढ़ गई है क्योंकि उसने मजदूरों को बच्चा को बच्ची को बच्चों का प्रतिबंधी बतन में समर्थ कर दिया है। यह 'सुरक्षित' तथा 'असुरित' श्रमिक नेताओं के बीच भेद स्थापित करने की चेष्टा में डूबा जा सकता है। यह कोई समाजवादी नहीं प्रत्युत भी फ्लडस्टन से जिन्होंने कहा था कि "जब इस देश के लोग मूर्क होते हैं, आप कहते हैं वे संतुष्ट हैं, जब वे अशांत होते हैं, आप कहते हैं कि हम शिक्षा के मामले मूर्क नहीं सकते।" यी धार में लिखा है "हमारी मस्तिष्क में पर्वतीय प्रवेष्टों अथवा अरब के मस्तिष्क की तुलना में अधिक विषय रहता है।" इस का कारण यह है कि हमारा असमायता का बर्तन भय बचा और ईर्ष्या को जन्म देता है। सुमेच्छा तो अवश्य है, पर म्याय नहीं है और यह भावना जनसमुह के सम्मुख भी दिन प्रतिदिन प्रत्यक्ष होती जा रही है।

हम इसका की संसदीय पद्धति को उस समय तक नहीं समझ सकते जब तक कि हम यह न समझें कि लोकतंत्र के आयात के मूल में यह वह आर्थिक तथा सामाजिक व्यवस्था ही है जिसे कि बनाये रखने का विचार है। इस व्यवस्था का निर्माण उत्पादन-साधनों के स्वामिना न अपनी सम्पत्ति के हित में किया जा और इसके समस्त नियमों का उद्देश्य यह है कि सम्पत्तिहीन वर्ग के सारे अधिकार सुरक्षित रहें। यह जनता को मताधिकार देने के सिद्ध विषय हुई है लेकिन उसने अपने हाथ में एसी शक्ति अथवा रक्षणी है जिसे कि सम्पत्ति ही रखा भी जा सक। जिन लोगों के हाथ में उत्पादन के साधन हैं वही यह भिन्नित करते हैं कि क्या उत्पादन हुआ। उनका किराए, म्याज और लाभ का दावा ही वह प्रमाण बस्तु है जो हमारी जीवित-धर्मों को निर्धारित करती है। यदि किसी नागरिक के पास सम्पत्ति नहीं है तो उसे अपना भय डेकन के किये माध्य होना पड़ेगा। यह काम बरेया या नहीं यह उसकी इच्छा से नहीं प्रत्युत उसका आर्थिक के इस निर्बंध से तब होया कि उसके काम या लाभ है या नहीं। यह काम की माय नहीं कर सकता। यदि वह यह अक्षेप करता है तो अमृत्य है। यदि वह यह दूसरों के साथ मिल कर करता है, तो शक्ति और व्यवस्था न सिद्ध बनना पड़ता है और एनी स्थिति में राज्य की बलप्रवर्ती शक्ति उत्तक हो-इच्छास दुस्मन करने के सिद्ध प्रयुक्त भी आसानी। हजारों 'उमक हो-इच्छास दुस्मन करने' में यही अतिशय है कि उसे सम्पत्ति के अधिकार स्वीकार करने के सिद्धे बस हाथ विषय दिया जायगा। यह स्वीकृति जनता की इच्छा नहीं जाती है।

उक्त विवेचन का भार यही है कि पूजावादी अधिकारों के ऊपर आधुनिक राजनीतिक लोकतंत्र में लड़ाई नहीं रहती है बल्कि यह युद्ध है या प्रकट। इस व्यवस्था में भय का विचार

असंतोषदायक समझा जाता है। पूँजीवादी तो सर्वत्र इस बात को लिये प्रयत्न करते हैं कि जो कुछ उनके पास है, वह बना रहे। मजदूर सर्वत्र इस बात को लिये प्रयत्न करते हैं कि जो कुछ उनके पास है, उन्हें उतने अधिक मिले। यही कारण है कि जब मजदूर अपने जीवन-स्तर की कोई मांग उपस्थित करते हैं तो पहले तो यह हम बाजार पर कि असमर्थ है बस्तीकार कर ही जाती है, लेकिन बाद में जब उतने काफ़ी शक्ति के साथ उठता जाता है वह बाढ़-पौधा करके मान ली जाती है। कारखानों के नियमन कानों की सुरक्षा काम के बटा और निम्नतम वेतन की स्थापना आदि से सम्बन्ध रखने वाली मजदूरों की प्रायः सभी मांगों के साथ यही हुआ है। यह प्रतिरोध स्वामी और मनुष्य के बिना अधिक सम्बन्धों तक ही सीमित नहीं रहा है। अपने अधिकों तथा निर्बंधों के सामाजिक सम्बन्धों पर भी प्रभाव डाला है। कमीरो ने शिक्षा मानविक स्वस्थ और मनोरंजन की सुविधाओं जैसी विषयों के लिये कर देन का विरोध किया है। जब कमी राज्य निर्बंधों के लिये भी इस प्रकार की कुछ सुविधाओं मुक्त करन का प्रयास करता है तबिक काम उचित से हटा उठने से वह समझ ही नहीं पाने कि आखिर राज्य निर्बंधों को किये क्याकर ऐसी सुविधाओं मुक्त करना चाहता है जिन्हें वे अपनी सम्पत्ति के द्वारा अपने लिये खरीद सकते हैं। ऐतिहासिक वागावरण में उन्हें यह मानने के लिये कि निर्बंधों को निर्बंध ही बन रहना चाहिए कुछ ऐसा सम्झन कर दिया है कि वे उन समस्त उपायों का जो उनकी निर्बंधता दूर करने के विरोध करने के लिये विवश से हो जाते हैं।

जैसा कि मैं यह चुका हूँ यह व्यवस्था उस समय तक तो ठीक बस्ती रही जबतक कि वह विचार की अवस्था में थी। मजदूरीय वागम भी समस्या यह है कि उस समय उसका क्या होया जब जैसा कि अब स्पष्ट दिखाई दे रहा है विचार का मुँह समाप्त हो जायगा। इस स्थिति का अतिशय परिणाम हम लिये हुए प्रश्न को जो इस समाज के मुक्त में स्थित है उत्तेजित करना होगा। साथ-प्राप्ति की कष्टा अतिशयिक बढित होनी अब रही है। पूँजी-वा क्रांति-कर्म अतिशयिक बढ़ता जा रहा है। अतिशयिक भाति में बकारों की संख्या बढ़ा रही है तबिक एक-दूसरे पर प्रतिद्वंद्वी अतिशयिक बाजार में अम का मूल्य बढ़ गया है। इति-तथा उद्योग का अनुत्पन्न विवश गया है। परेम् उन्पादक के रसाय की आवश्यकता जिसके नियंत्रण व्यापार पर भी प्रभाव पड़ता है प्रत्यक्ष में विवशित हो रही है। उत्पादन को तेजी से बढ़ रहा है परन्तु विनष्ट काफ़ी पीछे है क्योंकि जनता के पास इतना पैसा नहीं है कि वह अधिक बस्तु खरीद सके। कृषि विविध परिवर्तन हमारे मंत्रों की उत्पादन-शक्ति का प्रतिफल ही बढ़ा रहा है, अतः जानबूझ कर लक्ष्यता (scarcity) को बनाय रखना हम व्यवस्था का एक आवश्यक लक्ष्य बन जाता है। हम इन सब विचारों में सीमित नियमना (restriction-quotas) और एसी ही अन्य प्रकार की सीधियाँ अपनाते हैं। लेकिन हमारा अतिशय परिणाम मुख्य की कृषि है और इस कृषि का परिणाम अतिशय वेतनो की मांग है जिससे कि जीवन-स्तर का संभाव्य पतन रोका जा सके। पूँजीवादी व्यवस्था में हम विचारण तक को तोड़न का कोई मार्ग नहीं है निवन्धन इसके कि या तो वेस में ही का फिर विवेका में ऐसे बाजार खाम जायें जो हटाएँ उत्पादन-बस्तुओं को खरीद सकें तथा हमारे लिये लाभ का कारण बनें। लेकिन हम में तो जनता की दृष्टि

ही यह नहीं होन देती। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि इंग्लैंड में एक करोड़ व्यक्ति अपन भोजन पर भी व्यय करते हैं वह उस निम्नतम व्यय से जिते ब्रिटिश चिकित्सा संघ व स्वास्थ्य को ठीक बनाय रखन के लिये आवश्यक ठहराया है। एक छिल्लिय कम होता है। विदेशों में बाजारों को प्राप्त करना संभव है लेकिन इससे राज्यों की अन्तर्राष्ट्रीय तनातनी बढ़ती है। उन्हें अपने बाजारों को तथा उनमें अपन प्रवेश को सुरक्षित रखने क क्षिय बलवान् खूना पड़ता है। अज्ञान होने क लिये वे अस्वास्थ्य बचाते हैं। इसके दो परिणाम निकलते हैं। एक औरता इसका परिणाम इतना व्यय होता है कि राज्य सामाजिक सुधार की अन्य योजनाओं पर बाधरय गही कर पाता दूसरी ओर इसका परिणाम अस्वास्थ्य की बढ़ होइ है जो अविश्वास तथा अरक्षा उत्पन्न करती है। इस स्थिति का परम परिणाम मुड़ है।

संसदीय शासन का सिद्धान्त पैदा कि मे कह चुका हूं यह है कि नागरिक अपने मत मेलों को शांतिपूर्वक समझौते द्वारा सुमझा सकते हैं। इसका कबल यही अमिप्राब गही है कि वे औद्योगिक प्राणी है प्रत्युत यह भी है कि वे अपने मतमेलों का विवेचन विचार-विमर्श के एक से आभार स्वीकार करक करते हैं। यह फल पाने म उस समय तक तो कोई कठिनाई गही होती जब तक कि प्रत्येक व्यक्ति यह समझता है कि समाज अपने सदस्यों की आवश्यकताएं निरन्तर पूरी करता जाता है। लेकिन उस समय जबकि देश के अन्दर तो गम्भीर मतमेल हो तथा बाहर मुड़ का भय हो वह फल प्राप्त करना पर्याप्त कठिन हो जाता है। देशके अन्दर के मतमेल का अमिप्राब यह है कि समम समाज की विषमतायें उन लोगों को जो स्वयं को उसके कानों से संबंधित मानते हैं स्वयंसंघ गही बनती। बाह्य मुड़ के भय का अमिप्राब यह है कि समाज स्वयं को प्रतिरक्षा के लिये संगठित करे जिसकी संघारिका जाने चलकर उन मेलों को जो विभाजन पैदा करते हैं संभवत और तीव्र कर सकती है। ऐसे बातावरण में विवेक की छक्ति का बने खूना अधिक संभव गही है। सामाजिक तनाव कुछ ऐसे है कि जो पहले काल्पनिक तर्क मालूम पड़ते व वे अब सार्वजनिक साठि के लिये सतरे मालूम पड़ते हैं। फलतः तनातनी बढ़ने कमती है। जो पहले निर्दोष मामूम पड़ता था तनातनी के सम्बन्ध में अभ्यस्त निरवधनों के सिद्ध संघट बन जाता है। चूंकि राज्य की शक्ति इन निरवधनों के बीच होनी है अतः तनातनी उसके स्वामिपणों को उसके प्रयोग के लिये प्रेरित करती है। वे समाज के उन तत्त्वों को जो निरवधन में विरोध डालते हैं निर्बलिन करने का प्रयास करते हैं। यदि यह तनातनी अर्धनी और इटली की तरह राष्ट्री अधिक हो जाती है तो वे उनका हसन करने की शैष्टा करते हैं। लेकिन म तत्त्व उदाहरणार्थ अमिक संघ समाजवादी हल और सद्गुणों आशोसन आदि कालतन्त्रात्मक संसदीय शासन में अधिक हल के हिनो की रखा करने क लिये निरवधत उठ खड़े होते हैं। यदि उनका हसन निषा जाता है तो हममें संदेह गही कि संसदीय शासन की कुतियायों को शोष्ठ पहुंचती है। समाज बड़े संघट की अवस्था में है। एसी स्थिति में कोई भी समाज विवेक के उस मार्ग का प्रिस पर संसदीय धामन निर्भर है सर्वैव अनुसरण गही करेगा।

हमे ऐतिहासिक सामाज्यीकरण की धम्दाकनी में भी सुपमता से व्यक्त निष्ठा या सवता है। लोकतन्त्रात्मक राजनीतिक संघटन सदैव ही आवे चलकर, मोचतवात्मक समाज बन जायेगा अर्थात् वह ग्यावदुक्त दिनरग की शैष्टा करेगा। यह प्रारम्भ में पद,

पन्थ धर्म और भाति के अन्यायपूर्ण विधेयाधिकारों पर आक्रमण करेगा। शुरू-शुरू में तो उसे उनका उभर कर पाने में कोई विरोध कठिनाई नहीं होगी। लेकिन उसे बार में पता चलेगा कि विधेयाधिकारों का वास्तविक मोठ तो उनके मूठ होल पर भी बना हुआ है। तब वह समझेगा जैसा कि आज अमरिका में समझा जा रहा है कि केवल सामंतवाद के विधेयाधिकारों का उन्मूलन ही समतायुक्त समाज का निर्माण नहीं कर देता। उस समय उसे ज्ञात होगा कि विधेयाधिकारों का वास्तविक मोठ तो उत्पादन-साधनों के व्यक्तिगत स्वामित्व में निहित है और यह स्थिति ऐसे वर्ग-सम्बन्धों को जन्म देती है जो न्याय के सिद्धांत के प्रतिफल होते हैं। वह इन वर्ग-सम्बन्धों को जही समय तक और केवल सही समय तक स्वीकार करेगा जब तक कि वे उन सामाजिक मापों को जो उनके सामने आती हैं ठीक और सपेष्ट मात्रा में पुरा कर लयते हैं। लेकिन बड़ा वे इन मापों की पुष्टि करने में असमर्थ होने से उत्पादन के साधनों का व्यक्तिगत स्वामित्व समाप्त कर देने क्योंकि मही अस्तित्व का तीबा और अनिवार्य कारण है। शूकि राजनीतिक संगठन लोकतन्त्रात्मक हैं, अतः वे उत्तरी सत्ता को यह परिवर्तन करने के लिये प्रयुक्त करेंगे। उस समय वे आर्थिक सक्ति के स्वामियों के सम्मुख जो विवक्ष्य रखेंगे वह वा तो यह होगा कि वे लोक अपना स्वामित्व छोड़ दें या यह होगा कि वह लोकतन्त्रात्मक आधार जिसके ऊपर राजनीतिक संगठन निर्भर है मूठ कर दिया जाय। सच तो यह है कि उस समय राज्य आश्रित परिवर्तन को रोकने के लिये पूंजीवादी अधिनायकत्व का रूप धारण कर लेता है।

यह टीक है कि ब्रिटिश सविधान इस परिवर्तन को घातिपूर्ण रीति से पुरा करने के समस्त आवश्यक उपकरण प्रदान करता है। लेकिन यह प्रत्येक राजनीतिक लोकतन्त्र को आर्थिक और सामाजिक क्षेत्र में असमानता के सिद्धांत पर आधारित हो एक ऐसी बटिनाई बड़ी कर लेता है जिससे अन्य वेगों की भाति इपकड भी बछूटा नहीं है। वह बटिनाई यह है कि वे व्यक्ति जो इस असमानता से लाभ उठाते हैं उसक प्रति इतन अनुरक्त हो जाते हैं कि उसक लाभों को त्यागन की अपेक्षा उसक किम पुत्र करना अधिक पसंद करते हैं। वह वे नहे देता है कि वे ऐसा स्वाध की भावनाओं से नहीं करते। वे ऐसा इच्छिमे करते हैं क्योंकि परम्परा न उन्हें न्याय के एक ऐसे सिद्धांत का सम्पस्त कर दिया है जिसमें आर्थिक समानता के विचार को कोई स्थान ही नहीं है। उन्हें अपनी सफलताओं का आरवाहन है। उन्हें अपने धासन करने के अधिकारका विश्वास है। यह विश्वास पुनर्पुनो में उनके अधिकार के प्रयोग से उत्पन्न हुआ है उन्हें इस बात का ज्ञान है कि यदि वे निर्वाचनों में पराजित नो हो जायें तब भी वेध के धासन-तब पर उनका किठना यमोर्द्वानिक नियन्त्रण रहता है। उनकी यह अक्षिय आस्था है कि प्रस्तावित परिवर्तन न केवल उनके स्थिरे ही पातक है प्रत्युत उन लोगों के लिये भी पातक है जिनके सम्पत्त का धावित्व वे अपने कधी कर मानते हैं। वे यह जानते हैं कि परिवर्तन की ऐसी वेष्टाएं असफल हो चुकी हैं। उन्होंने यह देखा है कि कही भाषि ने किठने महुये मुख्य पर समाजवादी व्यक्तियों को त्यागना की है। इस पुठभूमि में यह संभव नहीं है कि वे अपनी सत्ता घातिपूर्ण रीति से त्यागना स्वीकार कर लेंगे।

इस सम्बन्ध में यह बेकना महत्वपूर्ण है कि संघट के इन बग में लोकतन्त्रात्मक समाज के संदेह कितने बढ़ते हैं। हमें इसकी बहिष्कारता के प्रति संशय किया जाता है हमें यह बताया जाता है कि यह सबसे कठिन शासन प्रणाली है। यह सुझाव दिया जाता है कि लोक राजनीति में आवश्यकता से अधिक शक्ति लेते हैं। यदि उनके मन को इस ओर से हटा दिया जाय तो वे धर्म की सेवा जैसी ऊँची वस्तुओं में ध्यान कमा सकेंगे। यह तर्क किया जाता है कि आधुनिक जीवन की जटिलता के कारण विरोधों का नियंत्रण और भी आवश्यक है मानो सरकारी समस्याओं के सामंजस्य से सम्बन्ध रखते बाकी मूल्यांकन विषयक समस्याओं में जनता का नियम प्राम्य न हो। हमारे स्वतंत्रता के अपार महत्व की रक्षा की जाती है और कहा जाता है कि वह बढ़ते हुए सरकारी नियंत्रण के विरुद्ध है तथा यदि इन सरकार के इस बढ़ते हुए नियंत्रण पर कोई बकुरम नहीं बनाते तो अपनी समस्त स्वतंत्रता से हाथ धो बैठेंगे। विस्तारण करने पर इस दृष्टिकोण का संतुष्ट यही प्रकट होता है कि शासन को व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों में कोई हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। इंग्लैंड के प्रधान न्यायाधीश (Chief Justice of England) जैसे कुछ आलोचक गौकरसाही के अंतर्गत पर बल देते हैं। लेकिन विस्तारण करने पर उनका भी तात्पर्य यही मान्य पड़ता है कि सामाजिक मुद्दों की सामान्य विधि (common law) द्वारा विकसित व्यक्तिगत सत्ताओं की सीमाओं को भीतर रह कर काम करना चाहिए।

संक्षेप में अब जो मनोभाव बढ़ रहा है वह लोकतन्त्रात्मक शासनों के प्रति संशय है क्योंकि यह लोकतन्त्रात्मक उद्देश्यों को तापसद करता है। वह लोकतन्त्रात्मक शासन के लिए उस समय तक तय्यार वा जब तक कि उसकी बढ़ती हुई मांगों से कठिनप आचारभूत स्वार्थों को नहीं स्पर्श किया जा। जहाँ इन स्वार्थों को स्पर्श किया गया वह लोकतन्त्रात्मक सिद्धांत के सम्बन्ध में अपने विचारों को संशयित करने के लिए तुरन्त तय्यार हो गया। यह कई प्रकार से स्पष्ट है। यह इन बात से स्पष्ट है कि ग्रेटन एक ओर ता सीवियन ह्य और दूसरी ओर व्हिटर तथा मुसोलिनी के सम्बन्ध में जो नीति अपना रहा है उन दोनों में पर्याप्त अन्तर है। यह सर सेमुअल होर के इस शरारती बचन से स्पष्ट है कि स्पेन की वैधानिक सरकार और अन्तरक ढँको की लड़ाई एक ऐसी दृष्टांत सजाई थी जिसमें हमें एक राष्ट्र के नाते कोई शक्ति नहीं थी। यह १८८५ के बाद से एक अनुभव बना हुआ है कि एक मंत्री ने लोकतन्त्र तथा विधायिका के मुँह के परिणामों के प्रति हमारी उदासीनता घोषित की है। तब यह है कि मुँह के बाध से हमारी परराष्ट्र नीति का मुख्य लक्ष्य उन समस्त विदेशी आन्दोलनों को जितना उद्देश्य लोकतन्त्र का प्रसार करना है लेकिन गिहोल यह धमका सिद्धा है कि उनके मार्ग की प्रमुख बाधाएँ सम्पत्ति के मूल्य स्थाय ह हतोन्माह करता रहा है। देश के मण्डलिकार्य धर्म ने इस नीति का संशय स्थापित किया है। उनमें अलम् विद्वान का अभाव आनन्द की प्रभृति तथा किनी बन्धु के आपारभूत परीक्षण का मय है और यह उन दृष्टिकोण से समालना रचना है जिसमें कई न प्रच राज्यशासित का स्वागत किया जा। जब वर्माधायों का अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धन शक्ति सम्पत्तियों में ईसाई धर्म के सामाजिक

समस्याओं से सम्बन्ध की आवश्यकता पर विचार करने के लिए कहता है 'दि टाइम्स' वह उसे मित्रक होता है कि धर्म का नालायिक धर्म विश्वास है धर्म नहीं। यह का कहना है, 'यदि ईसाइयों का अन्तर्राष्ट्रीय सम्मिलन राजनीतिक और धार्मिक समस्याओं पर इनका समय लगाने की अपेक्षा उसे विविष्ट धार्मिक विषयों पर विचार करने में समता तो अपन प्रयोजन को अधिक सार्थक करता।' ईसाई मन अपने पौराणिक उपालको द्वारा भी एक जीवन-मार्ग माना जाता है। कार्ड मेल्मबरी ने जो कार्ड-समा में अनुसार एक के एक मृतपुन गता यह चुनने के कारण व्यक्तिगत स्वामित्व के प्रति अनुता की भावना को बोधी नहीं ठहराए जा सकते सिद्धा है "अब हमारे सिद्ध ईश्वर को साक्षी बना कर यह धपक देने की परम आवश्यकता है कि हम ईसा की भावना और सिद्धाता को व्यक्तिगत व्यवहार तथा सामाजिक राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रवृत्त करेंगे।" सेकिन 'टाइम्स' के धर्मों में धार्मिक और राजनीतिक समस्याओं के क्षेत्र में यह धपक अप्रासंगिक है। उसके विचार से ईसाई जीवन-मार्ग में इन समस्याओं का कोई स्थान नहीं है।

संघर्ष में इन राजनीतिक मोचन के विचार की अपनी सम्मस्तता में एक अद्वितीय के सिद्धे विचार किन्ना रहे हैं। राजनीतिक मोचन के परिचाम वह नहीं है जिनकी भाषा की जाती थी। हमारा सम्मतिबन्ध वर्ष "समानता चुनन और मोम स्वामने" के सिद्धे विचार कि मैप्पु बालेन्ड ने संघर्ष कहा था कि वह विचार हो जाय विचार नहीं है। आज जब कि आचार्यों का मुक्तिसंघर्ष परीक्षण धार्मिक मुपारथा (Reformation) के बाद से भी अधिक आवश्यक है, एक ऐसे मधोमार्ग का विकास हो रहा है जो विवेक की अपना साध्याग्य बनाए रखने की दक्षिण के सिद्धे सम्मिरीकतरा है। अब इस विचार का कि मोचन सम्मति के आधारे का परीक्षण कर सकता है विरोध बह रहा है। धार्मिक क्षेत्र में सम्मति के स्वामी ध्वंसन (sabotage) और प्रतिरोध तक को दक्षिण सम्मिरीक है। राजनीतिक क्षेत्र में वैधानिक बाद-विचार कार्यों की दक्षिण और सध्या के प्रभाव जैसे प्राचीन इतिहासों को फिर से ताजा करने की लभावना पर इस आशा में कि वे समाजवादी सिद्धांतों की विचार की स्पष्टिण कर देंगे या नष्ट कर देंगे, विचार करते हैं। और फिर इसके साथ उतना यह व्यक्तिमाली प्रचार भी चकता है कि यदि बड़ी समाजवादी सिद्धांतों की विचार हो गई तो जमता का विनाश निश्चित है।

अगर जो कुछ कहा गया है उस लक्ष्य संसदीय साधन की क्षेत्रीय समस्याओं के चर्चित सम्बन्ध है। वह मैं एक बार फिर कहता हूँ कि उनको संकट होने की दक्षिण न केवल जलक उपाया पर ही निर्भर है प्रत्युत उन उद्देश्यों की सहमति पर भी निर्भर है जिनकी पुष्टि के सिद्धे इन साधनों का प्रयोग होता है। असहमति जब छोटी छोटी वस्तुओं से सम्बन्ध रखती है तब उसका कोई विषय महत्व नहीं होगा सेकिन जब वह बुनियातों पर उतरती है, उसका महत्व बह जाता है। उस समय वे मनुष्य जो यह प्रश्न करने में प्रवृत्त होते हैं कि सविधान क्या कर रहा है बड़ी धीप्यता से स्वयं सविधान के अधिपत्य के सम्बन्ध में

भी प्रान्त करने लग जाते हैं। जब सम्पूर्ण संविधान इंग्लैंड के बीता संविधान हो जो स्वयं अपने में ही एक अत्यन्त अटल वस्तु-परम्पराओं विचारों और भावनाओं का विषय हो तो उसके दुरपयोग का खतरा बहुत अधिक होता है। हम लोग जिन्होंने यह देखा है कि म्याय-व्यवस्था अमेरिका तक के संविधान को जो हमारे संविधान की अपेक्षा कहीं अधिक सरल है काफी बखल सकती है, अपन संविधान के अन्तर्भूत विज्ञान को उसके व्यवहार से बचना करने का यत्न नहीं उठा सकते। यह एक नैतिकीय वस्तु, सक्ति प्राप्त करने के लिये विरोधी दलों के बीच सन्धय का एक मातल है। ब्रिटिश संविधान में पर्याप्त नम्रता है। यह उन ब्रिटिश परिस्थितियों में जो सत्ताशुद्ध दल के सम्मुख उठ खड़ी होगी हैं उसके (सत्ताशुद्ध दल के) उद्देश्यों की पूर्ति में प्रयुक्त हो सकता है। सत्ताशुद्ध दल सामान्यतः और निसर्गतः यह मान लेता है कि कहीं ऐति अससे यह संविधान के अपने उद्देश्य की पूर्ति का साधन बना सकता है "बैधानिक" है। हमें संसदीय शासन के आवश्यक आचार कल्प में "संविधान के अभिसमयों (conventions) का इस दृष्टि से परीक्षण करना चाहिए।

(१)

एकदम बर्क न सिखा है संविधान के अभिसमय उस ऐति को निश्चित करते हैं जिसमें विधि के नियम जिन्हें वे पहले से मान रखते हैं, प्रयुक्त होते हैं। इस प्रकार के (अभिसमय) ही वास्तव में संविधान की प्रेरक शक्ति है। दूसरे, अभिसमयों का उद्देश्य यह रहता है कि संविधान युग की प्रचलित बैधानिक विचारधारा के अनुसार आचार्य करें।" मैकिन यह स्पष्ट है कि युग की प्रचलित बैधानिक विचारधारा" कहीं ठोस वस्तु है। मनुष्य संविधान का इस प्रकार प्रयोग करते हैं जिससे यह उनके कठिण वांछित उद्देश्यों को पूरा कर सके। बैधानिक विचारधारा इन उद्देश्यों की अभिव्यक्ति होती है।

एक अष्ट प्रतिवेदन के लेखको न सिखा है "बैधानिक अभिसमयों का विधि क साथ मह्योग ब्रिटिश राज्य के इतिहास में दीप काल से बकता आ रहा है। इसने धारणिक और विधायी दलों प्रकार की शक्ति को अनुप्राणित किया है। जहाँ व्यवहारिक समस्या का विच्छेद कानूनी समाधान असमय था—यह मस्याओं के लिये जीवनप्रद वेतना के स्वतन्त्र विधान को अवरुद्ध कर देता वा उसे प्राप्त करने में असफल रहता—बहु इमन सम्बन्धों में सामञ्जस्य स्थापित करने का साधन प्रदान किया है। ऐसे अभिसमयों की उन बैधानिक विज्ञानों में यथता होती है जिन्हें व्यवहार में यथनवापी और पुनीत माना जाया है चाहे कल्प की कुछ भी शक्तिवा हो।

मैकिन मनुष्य बैधानिक विज्ञानों वा "कल्पनापी और पुनीत" इनलिये वास्तव है यथापि वे उन उद्देश्यों को जिन्हें वह (बैधानिक विज्ञान) प्राप्त करना चाहते हैं स्वीकार करते हैं। यदि मनुष्य उन उद्देश्यों के प्रति ईमानशील है तो क्या वे बैधानिक विज्ञानों का आहार करेंगे? संविधान वा एक अभिसमय यह है कि सरल क स्वामी आरेतों वा इस प्रकार प्रयोग हीना चाहिए कि विरोधी दल को बाह-विधान में पुन संरक्षण मिले। स्पष्ट है कि यह अभिसमय पुनतः बहुजन की इच्छा के ऊपर निर्भर है मन्त्री शकट क मन्त्र

इसे स्थिति करना अत्यन्त मुग्न होगा। अधिकोस अभिसमय बड़े अस्पष्ट है। उनका बीजक बलों की सहमति पर कि उनका किस प्रकार प्रयोग हो निर्भर है। एक बार यह सहमति हट जान दीजिए विरोधी दल को इसमें कोई संदेह नहीं रहेगा कि सरकार द्वारा किया गया उनका निर्बन्धन "अवैधानिक" है। यह कहना जसा कि शायमी न कहा था कि अभिसमयों का अंततोरत्ना पालन इच्छिम आवश्यक है क्योंकि अन्यथा उसका उन्मूलन के कानून अग होगा निश्चितता अस्तव है। मसद् को प्रतिबन्ध आहूत करन के लिये सेना अभिसमय (The Army Act) का प्रतिबन्ध पास करना आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय सेनाओं के लिये वार्षिक व्ययस्था एक वर्ष के स्थान पर मुग्नतापूर्वक हो बर्षों के लिये की जा सकती है। परामित सरकार तक जहाँ एक बार उसका अपना वित्तीय विधान तथा सेनाओं के अनुदान से सम्बन्ध रखन वाले विषयक पास कर लिये प्रायः एक वर्ष के लिये सत्ताकड़ रह सकती है। चूंकि परिस्थितियों ने इन अभिसमयों को "बंधनकारी तथा पबिध" अर्थात् सरकार के जो उनका पालन करती है उर्क्षोंक अनुकूल बनाए रखता है इ सचिय उनका आधर किया जाता है।

आप लौकिक उन दूसरे अभिसमयों पर जो अधिक सूक्ष्म है विचार कीजिए। सविधान का यह अभिसमय है कि अधिकमदक अपने इच्छो के लिये संसद् के प्रति सामूहिक रूप से उत्तर दायी है। १९३१ की राष्ट्रीय सरकार ने इस अभिसमय को अनुविधानक अनुभव किया था कच्छ उस विरोधी दल के विरोधों के बावजूब भी कुछ समय के लिये रह कर दिया। एक अभिसमय यह है कि सभाद् को अपने मन्त्रियों के परामम पर कार्य करना चाहिए। क्या इसका अभिप्राय यह है कि सभाद् को मन्त्रियों का प्रत्येक परामर्श उग समय तक जब तक कि वे कामत-समा का यह परामर्श अनमोहित करन के लिये महमन कर सकते है स्वीकार करते रहना चाहिए? या इसका अभिप्राय यह है कि यदि मन्त्रा मन्त्रियों के एक मुट का परामर्श अस्वीकार करता है तो वह दूसरो से सरकार बनात तथा विघटन (dissolution) के द्वारा अपन कृत्य के लिये निर्बन्धकों की सहमति पाने के लिये कह सकता है। अधिकोस विधानों में इन प्रश्न के ऊपर मर्तक्य नहीं है। यह निदिधत है कि पर्याप्त बहुमत वाली सरकार जिसे ऐसी परिस्थितियों में अपरस्क कर दिया गया हो मसद् के इच्छ को अवैधानिक मानेगी यह भी निदिधत है कि मए मशी शासन मस्रालन के निष्पय मास से वैधानिकता के सम्बन्ध में एक बिल्कुल दृढरी ही दृष्टि रखेंगे। अकेला यह लभ्य ही कि हम राजनीय शक्ति की सीमाओं को नहीं जानते है और संघट की बहिषा म उमका पस तथा विपक्ष दोनों और से प्रयोग हो सकता है। स्थिति की कठिनताओं का विघद परिचय देता है। यह निदिधत है कि राजनीय अधिकार की मर्यदायं उन पुब दृष्टान्तों के द्वारा जो अपनी प्राचीनता के कारण सवेहास्पद है निर्णीत नहीं होंगी प्रन्तुत वे नाविरकों द्वारा उस उर्क्ष्य के त्रिस्के लिये राजनीय शक्ति का प्रयोग किया जाता है अनुमोचन या गिरनुमोचन द्वारा निर्णीत होगी। यह स्मरन्य है कि जब १९३१ में श्री बैन्धविन न इपूक मोक विधर के विवाह का विरोध किया था कुछ कोशों न एडवडे अट्टम से सरकार को बरनने की आज नहीं थी। यह तो केवल सभाद् के आत्ममयम और अधिक दल के श्री बैन्धविन के भाव दृढ मर्तक्य का ही फल था जिसने एक मर्यदर वैधानिक

संकट तक गया। लेकिन मतभेद की यह दृष्टि तथा यह आत्मसंयम दूसरे किसी अवसर पर जब कि सम्राट तथा उसके मंत्रियों के सम्बन्ध बट्ट हो अनुपस्थित रह सकता है।

संक्षेप में पूर्व दृष्टांत उस समय तक अभिसमया की स्थापना नहीं किये जब तक कि यह पक्का न हो कि वे सब व्यक्ति जो उनसे बह हो स्वयं को उनसे पूज्य बह मानेंगे। यदि उन्हें अभिसमयों के व्यवहार के फलस्वरूप उन प्रयाजनों पर जिनसे वे बह हो जाते हैं संदेह हुआ तो वे स्वयं को घायब ही बह मानेंगे। मरा विचार है कि यह १९११ के संसदीय अधिनियम (Parliament Act of 1911) के ऊपर होम वाले बाद-विवाद के अनुभव से स्पष्ट है। यह १९१४ के होम क्लक सम्बन्धी संघर्ष के अनुभव से भी स्पष्ट है। इन दोनों में सचिवी भी स्थिति में प्रश्न को अंतिम वैधानिक निजम तक नहीं बचीय गया। लेकिन हम प्रत्येक प्रकरण में तत्काल की बात पर बह रहे व और बोड़ी सी भी असावधानी विनाश कर सकती थी। १९३६ के संघर्ष को ही ले लीजिए। यदि श्री एटनी एडवर्ड अष्टम के निमन्त्रण पर गया मन्त्रिमंडल बना लेते और बाद में निर्वाचनों में भी जीत पाते तो क्या इसका अभिप्राय बह होता कि यदि कभी सम्राट अपने मंत्रियों से सहमत न हो और उसे अपनी हा में हार मिलान वाले कुछ अन्य व्यक्ति मिल जायें तो बह मंत्रियों की अवहेलना कर सीधे बेज से अपील कर सकता है। इन दृष्टिकोण से तो अभिप्राय यह हो जाता कि वैधानिक कथ का कर्त्रीय विन्दु उन लोगों के हाथ में है जो सम्राट के मत तथा इच्छा पर प्रभाव डालने में समर्थ ह। स्पष्टतः यह दृष्टिकोण उस दक्षयत सिद्धांत के प्रतिकूल पड़ता है जो कि इस समय संविधान का प्राणतत्व है। इस उन लोगों का जो सम्राट को प्रभावित करने वाले समूह में सम्मिलित नहीं रह जायेंगे तीव्र विरोध प्राप्त होगा। कुछ समय बाद इसका अर्थ यह हो जायेगा कि प्रधान राजनीतिक सर्वे राजकीय व्यक्ति की मर्दानगी के ऊपर केन्द्रित होगा। लेकिन यह तो सम्राट के उत्तरदायित्व का विशेषण करना हुआ और उसका अनुत्तरदायित्व संविधान का कवल इस कारण अधिवाह है क्योंकि वैसाकि हम जानते हैं बह इस कारण पर कि सम्राट समस्त राजनीतिक विचारों में उत्सव रहता है अवसम्मिल है।

अथवा आइए हम उस अभिसमय पर विचार करें जो सम्राट के दोनों संघर्षों के सम्बन्ध निश्चित करता है। संसद् के दानो संघर्ष इस समय १९११ के संसदीय अधिनियम द्वारा साधित होते हैं और इत अधिनियम ने वायसी द्वारा विवेचित इस अधिसमय को कि यदि कामन सभा तथा लॉर्ड सभा की इच्छा में कोई स्थायी संघर्ष हो तो किसी न किसी स्थिति पर लॉर्ड सभा को कॉमन सभा के सम्मुख झुटना होया उपेक्षित कर दिया है। संसदीय अधिनियम ने यह स्थिति बा सर्व निश्चित की है। लेकिन दो वर्ष की यह अवधि भी संघर्ष के लिए काफी मुंजायस छोड़ देती है। निर्वाचनों की सफलता से उत्समित मन्त्रिमन्त्र के लिए यह संघर्ष वा स्वाभाविक है कि बह अपने आवश्यकताओं का एक ऐम लय के द्वारा जिने बह अनुरार इत की मुरसित पक्ष समझती हो जो बप तत्र बाधित होते देलना नहीं पसर करेगी। या यह कल्पना कीजिए कि यदि सरकार १९३१ के त्रै मासिक संघर्ष की परिस्थितियों में सत्ता प्राप्त करती है। यह की बान कीजिए कि वे आपात-मन्त्रिमन्त्र जिनका बह इस स्थिति

से निवटने के लिए प्रयत्न करना चाहती है, लंदन सहर शार्प अनुमोदित नहीं है । यह कम से कम अनिश्चित है कि वह इन शक्तियों को प्राप्त करने में सॉर्ट-समा का सहयोग हस्तगत कर लेगी । यदि उसे सॉर्ट-समा का सहयोग नहीं मिला तो यह निश्चित है कि वह अपने लंदनबद्ध कार्यक्रम को पूरा करने के लिए इतने नए पीयर बनाने की सक्ति चाहेगी जिससे कि उच्च समा में सभास्य विरोध पर बच पाई जा सके । क्या यह निश्चित है कि उसे ये पीयर बनाने का अधिकार मिला जायेगा ? क्या यह संभव नहीं है कि उसके सामने त्रितीय साधारण निर्वाचन की मांग रखी जायेगी जिससे यह ज्ञात हो सके कि वेदा उनके साथ है । क्या यह स्पष्ट नहीं है कि ऐसी विषम परिस्थिति में हल्पमत राजनीति की उत्तमता सरकार तथा विरोधी हल के बीच इस प्रश्न पर कि आखिर वह कमिसन क्या है जो दोनों सदनों के सम्बन्धों का नियमन करता है, धायर मनीस्य रोके से और यदि रोके नहीं तो धायर कटिन महस्य कर दे ।

साधारण अर्थ में यह स्पष्ट है कि संघों की 'आधारभूत स्वतन्त्रताएँ' हमारे वैधानिक कमिसन का कोई भाग नहीं है । लेकिन यह कि बहुमत के अत्याचारों से हल्पमत के अधिकारों की रक्षा की जानी चाहिए संघीय सासन की एक ऐसी मांग्यता है जिस पर अंततःसत्ता समस्त कमिसन निर्भर है । इस दृष्टि से "आधारभूत स्वतन्त्रताओं" की रक्षा एक महत्त्वपूर्ण वैधानिक समस्या है । इस प्रश्न क दो पहलू हैं । एक पहलू तो यह है कि विचारों को इतना स्वतन्त्र छोड़ दिया जाय कि प्रचलित सरकार गठ की सरकार हो । दूसरा पहलू यह है कि 'स्वतन्त्र' शब्द की कुछ ऐसी व्याख्या की जाय जिससे कि उसके तत्त्व पर सभी हल सहमत हो सकें ।

यह विषय जैसा कि ऊपर से देखने पर मासूम पड़ता है उससे कहीं कटिन विषय है । बिबि की दृष्टि से हमें इस बात में कोई मूल अधिकार प्राप्त नहीं है, हम उनके रसाज के लिए राज्य के साधारण वैधानिक तंत्र पर भरोसा रखते हैं । हमें कोई संदिग्ध नहीं है कि घाति-नाकों में यह रसाज पर्याप्त रहता है । वास्तविक समस्या यह है कि संसार सामाजिक परिवर्तन के मुहूर्तों में जो वस्तु एक प्रकार के मठाबलम्बियों की भूल मानुम पड़ती है दूसरे प्रकार के मठाबलम्बियों की भूम नहीं मानुम पड़ती । कई यह नहीं कहता कि मापक देने समा करने और समुदाय बनाने की स्वतन्त्रता अमर्यादित है क्योंकि एक व्यवस्था पर प्रतिबंध का अभाव सार्वजनिक व्यवस्था के लिए पातक हो जाता है । उदाहरणार्थ नाव-स्वार्थस्य का अर्थ जैसा कि म्यामपूति होम्स ने कहा था यह नहीं हो जाता कि कोई व्यक्ति एक मरे हुए विषय में "जाम" खींच सके । समुदाय-स्वार्थस्य का अर्थ सासन को अपदस्त्र करने के लिए एक सहाय संस्था का निर्माण नहीं हो जाता । कहने का सार यह है कि स्वतन्त्रता की कुछ मर्यादाएँ हैं और इन मर्यादाओं को सरकार निश्चित करती है । इस देश में इन अधिकारों का उपयोग हमारे सामाजिक जीवन के एक विरोधाभास का ही अर्थ है । एक ओर तो बिबि की मर्यादाएँ नहीं बँटती हैं और दूसरी ओर यह परिपाटी है कि वे कायू नहीं की जायेंगी । "बिबि" जैसा कि डा बेनिम ने कहा है, "उन दिनों की विरासत है

यह कि इस जनसंख्या के छोटे से भाग द्वारा शासित होगा-वा और यह कि निम्न-वर्गों का एकमात्र काम आजा पालन करता था।" विधि उक्त "छोटे से भाग" की उक्त आवश्यकताओं की अभिव्यक्ति है जिन्हें वह किसी चुनौती के विरुद्ध अपनी उतावनाएँ रखने के लिए उपयोगी सबूतों का।

शांति के समय में सामान्य सहमति द्वारा विधान को प्रयुक्त नहीं किया गया है। इसका लेख असाधारण रूप से स्वायत्त है। या अभिव्यक्ति में लिखा है, "उत्पाद को उत्पादकों की दृष्टि में प्रतिनिधित्व करना असंतोष और शत्रु उत्पन्न करना जनता को अशांति, हिंसा और अभ्यन्तरीय के लिए उत्तेजित करना साधन और संविधान के विरुद्ध युवा और विरक्ति उत्पन्न करना वा प्राथमिक शक्ति द्वारा विधियों में कोई परिवर्तन करना राजद्रोह है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए व्यक्तियों का संलग्नता राजद्रोहपूर्ण व्यवहार है और यह सभी वहाँ ऐसे व्यक्तियों के लिए बंद-कानूनी जमा है।" यही नहीं सावधानिक भावों और समाजों के ऊपर पुस्तक का स्वायत्त निर्बंधन रहता है। यह संघी या प्रधान कास्टेबिल को जलुसों पर नियंत्रण रखने का अधिकार है। यदि वे उचित समझें तो किसी निश्चित बिंदु में किसी निश्चित समय पर उन्हें रोक सकते हैं। उन्हें १३६१ की एक विधि के अनुसार किसी व्यक्ति से न केवल उसके सम्पत्ति के लिए ही प्रयुक्त उन व्यक्तियों के सम्पत्ति के लिए भी जो सीधे उसके निर्बंधन में न हो प्रतिभूति (sureties) मांगने का अधिकार है। इस सम्बन्ध में श्री टॉम मेन का उदाहरण सम्बन्ध है। अदालत ने उन्हें प्रतिभूति पाने से इनकार करने पर बेल मेन दिया यद्यपि व्यापारी ने यह स्वीकार किया था कि वे किसी अपराध के लिए दोषी नहीं हैं। १८२० के अधिक संघ-विधि-संशोधन-अभिव्यक्ति (Trade Union Law-Amendment Act) ने जो १८२५ के पश्चात् से अधिकों की स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप करने वाला पहला विधान है, अधिक संघों के कार्यों को घोर कठिन कर दिया है। पुस्तक और सेना १८३४ के पूर्व ही प्रचार द्वारा उत्पन्न असंतोष के कारण से मुराहिन समाजों वाली की केंद्रित उक्त वर्ष की एक विधि में तो इतने स्वायत्त उपबंध हैं कि इनका अर्थ यह भी हो सकता है कि एम्बरघाट जैसे एक हीनिक क्षेत्र में कोई शक्ति-वादी भाषण देना अधिनियम के अनुसार एक अपराध माना जाये। तबपुत्र यह कहना कि यह मापन जो बड़ा अ-प्रतिपाद्य के निरवेश कर्तव्य का प्रचार करे अपराध नहीं है, बड़ा कठिन है। आखिरी ने काफ़ी समय पहले ही यह कहा था कि विधि क वर्गगत रूप में सामान्य राजनीतिक वाद-विवाद की इतिहास रूप है क्योंकि सरकार विधि को लागू करने का प्रयास नहीं करती है।

मेरे विचार से श्रेष्ठ यह कहना कि कोई सरकार विधि को लागू करने वा उक्त समय तक प्रयास नहीं करेगी जब तक कि उसकी बुद्धि न विवक बर्दी हो वा यह कहना कि अपराधी को यदि उक्त दण्ड की तो सर्वैव जूरी (Jury) का संरक्षण क्लियेरा परबन्ध नहीं हो जाता। यही बात का उत्तर यह है कि संघ के समय में सरकारों की बुद्धि विवक जाती है। दूसरी बात का उत्तर यह है कि ऐसी परिस्थितियों में जो जोव जूरी में धाविक होते हैं, वे बड़े प्रतिभूतिवादी होते हैं और इनके सम्बन्ध ऐसे

सोयों के आचरण का निर्णय करने के लिए कहा जाता है, जिनके विचार बड़े प्रयत्न-शील होते हैं। पुनर्रचन समिन्धोषो का निर्णय अधिकतर वे न्यायाधीश करते हैं, जिनकी अपेक्षा कारण यह है कि राजनीतिक क्षेत्र में उच्च विचार रखना अनिवार्य है। डॉर वनाम पॉलिट (R. V Pollit) समिन्धोष के द्वारा कि न्यायिक स्वतन्त्रता और न्यायिक निष्पक्षता एक ही वस्तु है। कम से कम पिछले छी बरों में न्यायाधीशों ने पुरियों के निर्णय पर अप्रतिम प्रभाव डाला है। पुरी-मंडल के वर्तमान स्वरूप की देखते हुए स्वाभाविक ही है कि विधि का प्रयोग करने के लिए अतीव धार्मिक सरकार अपनी आवश्यकता के अनुसार ही धार्मिक पुरियों को प्राप्त करने का प्रयास करेगी।

अकिन्त यही इति नहीं ही जाती। बाहे कुछ भी ही सरकार का काम-समा में बहुमत रहना है। यदि वह स्वयं आर्थक-दस्त हो तो इस बात की सम्भावना है कि उसके सम्बंध में आर्थक का मात्र प्रकट करे। ससद् की विधान-निर्णयनी शक्ति के ऊपर कोई संकुच नहीं है और कुम्ब सरकार ऐसे विधान का निर्माण कर सकती है जो अंग्रेजों की आध्यात्म स्वतंत्रताओं पर अनुग्रह कमाए। सरकार अपने विधान के द्वारा प्रचार के उन समस्त लाभों को जिनके ऊपर उसके आलोचक निभर रहते हैं, निर्मित कर सकती है। फिर, सरकार के हाथ में शाहकारिस्टिक का भी शक्तिशाली दस्त है, इसके द्वारा वह अपने विरोधियों के अन्तर अतीव तनाव की स्थिति उत्पन्न कर सकती है। सरकार के विरोधियों के पास इसका प्रतिकार करने के लिए कुछ भी नहीं होता है। संक्षेप में आर्थक-दस्त सरकार जो न करे नहीं बोझा है और वह आर्थक का समय बीत जाता है सरकार की तथा उसके अधिकारियों की समस्त पूर्ण शोषण विधिनियम (Indemnity Act) द्वारा जमा कर दी जाती है। पिछले छी बरों में एक भी ऐसा अवसर नहीं आया है जबकि ऐसे विधिनियम को जमा किया गया हो।

इस सम्भावनाओं के सम्बन्ध में यह कहने से ही कि वे नहीं हो सकतीं ब्रिटिश संविधान अपना मानसिक संकुचन नहीं छोटा और राष्ट्र की राजनीतिक प्रतिष्ठा ऐसी शक्तियों के दुरुपयोग को रोक लेती है, नाम नहीं चल सकता। ब्रिटिश संविधान भी अन्य किसी संविधान की भाँति उस समय जबकि उसके ऊपर अन्याय बनाव पड़े अपना मानसिक संकुचन खो देता है। १७६२ के पदचान् पिट् और १८१५ के पदचान् मिडलैंड निर्णय वमन के लिए अंतरराष्ट्रीय से और सोनों में से किसी भी स्थिति में राष्ट्र की राजनीतिक प्रतिष्ठा में घबकर अन्यायों को नहीं रोक। उन कालों का प्रतिष्ठा स्वरूप एक ऐसे सार्वभौम आन्दोलन का भाग था जिसमें युद्ध तथा धार्मिक वमन से बच जाति द्वारा उत्पन्न आतिशायी मनोवैज्ञानिक परिवर्तनों के परिणाम थे। सम्पत्तिशाली वम एवम् ही आर्थिक हो गया था और इनने राज्य की सत्ता का प्रयोग न केवल हिंसक जुनौती से अपनी रक्षा के लिए ही किया प्रचलन इस कारण भी किया कि उसकी शक्ति के आर्थिक आचारों का विप्लव न हो सके।

स्वयं हमारे युग में नयी शक्ति का नही मनोवैज्ञानिक प्रभाव है जो कि मात्र से प्रायः उच्च सत्ताधी पूर्ण से बच जाति का हुआ था। नयी शक्ति ने सम्पत्तिशाली

बर्ष को आर्तवित्त कर दिया है और इस बर्ष के सदस्य बहु मानते लगे हैं कि वे विचार और ऐच्छिक समुदाय, जिन्हें पहले हुबने उपेसा के साथ देखा था अब हमारे विधेयाधिकारों को चुनौती देते हैं। वे ठीक पहले की तरह उन से कुछ करने के लिए निकलते हैं। पहले का जेकोबिन आज का मोसोविक है और उसका ठीक पहले की तरह नातून तथा ब्यबस्था के नाम पर दमन किया जाता है। लेकिन इन घण्टों का अनिग्राम कुछ ऐसे सिद्धांत नहीं हैं, जिनके ऊपर कि सामान्य मतैसब हो। इन घण्टा का अनिग्राम परिवर्तन के सहारे से पुरानी ब्यबस्था का रक्षण है। आज के पहले की उपेसा अधिक धर्मोन्वामित जिसमें इस बात की कम संभावना है कि इंग्लैंड इन विचारों के प्रभाव से स्वतंत्र रहेगा। इसमें कोई संशय नहीं कि उत्तरी हीरोन स्थिति ऐतिहासिक वरम्भराएँ, अवार बनराशि तथा रिमासठ देने की अधिक क्षमता उसे प्राविवापी परिवर्तनों से बचाने के लिए महत्त्वपूर्ण साधन है। लेकिन उनसे सर्वत्र काम नहीं चल सकता। उत्तरी भी एक सीमा है और वह सीमा यह है कि मनुष्य व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों की उपेसा सामाजिक शांति का अधिक ध्यान रखता है। अब कभी उसके सामने इन दोनों विकल्पों में से किसी एक को चुनने का समान प्रयोग यह व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों की तुलना में सामाजिक शांति की अधिक पसंद करेगा।

कहने का अनिग्राम यह है कि ब्रिटिश संविधान में तबसीते के लिए बन्ध देणों की उपेसा अधिक स्वान है परन्तु इस सम्बन्ध में यह बात रखना चाहिए कि तबसीते का विचार उसकी लक्ष्यता की एक भाषा ही है न कि एक विस्मय। सामाजिक शांति का सपारस कई बलिहार और जदिक तलों पर निर्भर रहता है। यह हमारे शासकों के लिए केवल विवेक और आत्म-समय का ही प्रश्न नहीं है। कम-से-कम यतना ही आवश्यक अब बस्तुपरक परिस्थितियों का बस्तित्व है जो कि उनके विवेक और आत्म-समय को सन्न बनवाती है। सज्ज तबसीते की परिस्थितियों के लिए उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा जादिक पुनर्माय की आवश्यकताएँ हैं। इनके मनुष्यों में विरवात उत्पन्न होता है और एन दूसरे को समझने की संभावना बढ़ जाती है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति हमारी भाँखों का सामने बिचड़ती चली जा रही है और बहा शांति की बहुत कम संभावना है। आज अब कि बारे संसार में बलिच्छिन्न स्वार्थ न कबल समाजवाद के ही प्रत्युत अज्ज समासम की भासठों के ही बिनकी पुत्रीबाव को सब धारण्यकता होती है। मार्ग में खड़े हैं, स्वाधी जादिक पुनर्माय की कम आसा है। उत्तरी अपवा एक बिच्छिष्ट और बरल लक्ष्यारण है। बलिच्छिन्न स्वाधों का अठार इन लक्ष्यारण को इतक मूख्य बुराए बिना बस्तीकार नहीं कर सकता। यह मूख्य क्या है इस सम्बन्ध में बुडोत्तर बनों का अनुसर्णों को देखते हुए किसी मूल की संभावना नहीं हो सकती।

उपेन में यह मूख्य विचारधारणों का कुछ है। इड जानाएँ सपसन्न दर्शन बन जाती है और वे एक दूसरे से कुछ करने लगती हैं। बुडोत्तरुन बस्तिन एक भाषा नहीं बोलते, फिर वे एक दूसरे को समझने की भाषा कैसे कर सकते हैं? ऐसे वातावरण में यह

सोचना कि वे उन मूढ़ विद्वानों को जिसके ऊपर ब्रिटिश संविधान के अविनाशनीय निर्भर है, "परिचय तथा बचनकारी" मान लेंगे ऐतिहासिक अनुभव के विष्कृत प्रतिफल है। प्रस्तुत परिस्थितियों में वे जो ही मार्ग अपनाएँगे या तो वे अविनाशनीय को स्पष्ट कर देंगे या वे उनके स्वरूप को तो बनाए रखेंगे परन्तु उनकी भावना को विष्कृत कर देंगे। इससे पहले वे बूझते बात का अधिक सतर्क है। राजनीतिक दल अपने ऊपर पड़नेवाले बचावों के उपाय का अनुभव करते हैं। वे अपने लिए शांतिपूर्ण सहयोग का मूल का सबसे अच्छा समझते हैं। वे अपनी हताशा के विषय स्वल्प पर बह देते हैं वे हमें आश्चर्य दिलाते हैं कि हिंसक समाधान जनता की राष्ट्रीय प्रतिभा के अनुकूल नहीं है। लेकिन उपायनीय का मतोमान उपस्थित है और उसका समय समार की बिलकुटी हुई हानि को रोकने पर निर्भर है लेकिन राष्ट्र के बड़े-म-बड़े राजनेताओं के मन में नहीं है।

राष्ट्र में शांति उत्पादन के सम्बन्धों और उत्पादन की शक्तियों में एक नया सामंजस्य स्थापित करने पर निर्भर है। इन नए सामंजस्य का अर्थ क्या कि वह मूल काठ में सर्वत्र रखा है, अधिष्ठित स्वरों के ऊपर सर्वथाही बाधक है। अधिष्ठित स्वरों के सामने जो ही विकल्प है—या तो वे समझाने-बुझाने से शुरु जायें या उन्हें बल-प्रयोग द्वारा झुका दिया जाये। इतिहास ने यही सिद्ध होता है कि वे सभी तक बड़े पैमाने पर और अल्प समय में समझाने-बुझाने से नहीं शुरु है। इसके लिए अर्थात् समझाने-बुझाने से मान जाने के लिए जिस विज्ञान मानसिक संतुलन की आवश्यकता है, उसका उनमें अर्थवा अभाव है। उनके जीवन एक विशेष प्रकार के रहन सहन के अन्तर्गत हो गए हैं। उनकी न्यायसम्बन्धी मायमा इन रहन-सहन में मदीकित है। उन्होंने जिस राज्य का निर्माण किया है, वह उनकी दृष्टि में उनके प्रयोजनों की पूर्ति का मायमा है। राज्य की बल-प्रयोग सम्बन्धी शक्ति का अल्प आक्रमण से इन प्रयोजनों की रक्षा करना है। वे प्रयोजन उनके लिए अल्प भय का तुल्य है जिस पर उनका जीवन निर्भर है। वे उसका विद्वानों में ठीक उसी प्रकार संदेह नहीं करते जिस प्रकार कि एक भ्रष्ट मूलजन्म श्रृणु के विद्वानों में संदेह नहीं करता। वह उनके लिए उन समस्त निरिहान्ताओं का प्रतीक है, जो उनके जीवन में आशा तथा सरमता का संचार करती हैं। क्या वे बुद्धिपूर्वक लेकिन स्वतन्त्रतापूर्वक यह स्वीकार कर सकते हैं कि यह सब वास्तव में एक भ्रष्टकर मूल है? इस प्रकार की स्वीकृति अभी तक अनुपलब्ध-आति का स्वभाव नहीं रहा है। न हमें ऐसे किसी परिवर्तन का ही ज्ञान है जिसके कारण हम यह मानन लभ जायें कि मानव-आति की मानसिक रचना में कोई परिवर्तन हो गया है।

हम यह मन्त्री तरह जानते हैं कि नए हथियारों के कारण संचर्प जिनी पूर्व युग की अपेक्षा अधिक विनाशकारी है लेकिन फिर भी हम कम-से-कम आशानों पर श्रुति की अपेक्षा लक्षण के लिए अधिक उद्यम है। हम साम्राज्यवाद की पूर्ति में लगे आपत्त की भांति शांति की भावा में निर्लज्ज हाकर लूट बोल सकते हैं और भय के कारण विशेष से मूर्ख छिपाने हुए संसार की पत्थर के देवता बने बैठते रह सकते हैं। वैश्विकता के क्षेत्र में हम बुद्धिमत्ता की अपेक्षा एक दृष्टि भी माने नहीं बने हैं। पाश्

बर्न को आशंकित कर दिया है और इस बर्न के सरस्व यह मानने लगे हैं कि वे विचार और ऐच्छिक समुदाय जिन्हें पहले हमने अपेक्षा के साथ देखा था वह हमारे विधेयाधिकारों को चुनौती देते हैं। वे ठीक पहले की तरह उन से मुझ करने के लिए निकलते हैं। पहले का जेरोबिन माज का बोसोविक है और उसका ठीक पहले की तरह कानून तथा व्यवस्था के नाम पर हमन किया जाता है। लेकिन इन घट्यों का अभिप्राय कुछ ऐसे सिद्धान्त नहीं है जिनका अर्थ कि सामान्य मूर्तत्व हो। इन घट्यों का अभिप्राय परिवर्तन के अन्तरे से पुनर्जीव व्यवस्था का रक्षण है। माज के पहले की अपेक्षा अधिक सम्बोन्धात्मक विरह में इस बात की कम संभावना है कि इसलैंड इन विचारों के प्रभाव से स्वतन्त्र रहेगा। इसमें कोई सन्देह नहीं कि उत्तरी द्वीपीय स्थिति ऐतिहासिक परम्पराएँ, अपार बनर्राजि तथा रियासतों देने की अधिक क्षमता उसे आधिपत्यी परिवर्तनों से बचाने के लिए महत्वपूर्ण साधन है। लेकिन उनसे सर्वत्र काम नहीं चल सकता। उनकी भी एक सीमा है और वह सीमा यह है कि मनुष्य व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों की अपेक्षा सामाजिक शांति का अधिक ध्यान रखता है। जब कभी उसके सामने इन दोनों विषयों में से किसी एक को चुनने का सवाल उठेगा वह व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों की तुलना में सामाजिक शांति को अधिक पसंद करेगा।

बहने का अभिप्राय यह है कि ब्रिटिश संविधान में समझौते के लिए अन्य देशों की अपेक्षा अधिक स्थान है परन्तु इस सम्बन्ध में यह साद रखना चाहिए कि समझौते का विचार उसकी सफलता की एक भागा ही है न कि एक विरहास। सामाजिक शांति का संचारण कई अस्थिर और अदृष्ट तत्वों पर निर्भर रहता है। यह हमारे शासकों के लिए केवल विवेक और आत्म-समय का ही प्रश्न नहीं है। कम-से-कम उतना ही आवश्यक उन अनुपपन्न परिस्थितियों का अस्तित्व है जो कि उनके विवेक और आत्म-समय को सफल बनाती हैं। सफल समझौते की परिस्थितियों के लिए उन्हें अन्तर्राष्ट्रीय शांति तथा आर्थिक पुनर्जाँच की आवश्यकताएँ हैं। इनसे मनुष्यों में विश्वास उत्पन्न होता है और एक दूसरे को समझने की संभावना बढ़ जाती है। लेकिन अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति हमारी आँखों के सामने विपद्गी चली जा रही है और बड़ा शांति की बहुत कम संभावना है। आज जब कि सारे संसार में अविच्छिन्न स्वार्थ न करत समाजवाद के ही प्रबुध सफल समागम की आवश्यकता के ही जिनकी पूर्वीवाद को स्वयं आवश्यकता होती है मार्ग में अड़े हैं, स्थायी आर्थिक पुनर्जाँच की कम भासा है। उसका बचना एक विच्छिन्न और अदृष्ट तर्कसास्त्र है। अविच्छिन्न स्वार्थों का संचार इस तर्कसास्त्र को इसका मुख्य बुझाए बिना अस्वीकार नहीं कर सकता। यह मुख्य क्या है, इस सम्बन्ध में सुदोतर बर्नो क अनुभवों को देखते हुए किसी मूल की संभावना नहीं हो सकती।

सन्धि में यह मुख्य विचारशासकों का बुझ है। यह आशाएँ इसलैंड सर्वत्र बल जाती हैं और वे एक दूसरे से मुझ करने लपटी हैं। मुझेपुल व्यक्ति एक भासा नहीं बोलते, ठिरे वे एक दूसरे को समझने की भासा कँठे कर सकते हैं? ऐसे आशास्त्र में यह

सोचना कि वे उन मनु मिदान्तों को जिसके ऊपर ब्रिटिश संविधान के अविश्वस्य निरर ह, "पवित्र तथा अचलकारी" मान ली ऐतिहासिक अनुभव के विष्कृत प्रतिष्ठन है। प्रस्तुत परिष्पिनिर्मों में वे ही माय अपनाएँ मा लो व अविश्वस्यो को स्पष्टि कर ह्ये मा व उनक स्वरूप को ही बनाए रखेंगे परन्तु उनकी भावना को विष्कृत करके ह्ये। इसलिये में दूरगयी बात का अधिक सतप है। राजनीतिक दम अपन ऊपर पड़नवाले रबाओं के तनाव का अनुभव करते हैं। वे अपने लिए घातिपूर्ण सहयोग के मूच को मरक्षेष्ठ ममज्ञते हैं। वे अपनी रबाओं के विद्यप स्वल्प पर बल देन हैं, वे हमें माह बिलाते हैं कि ह्यिक समाधान जनता की राष्ट्रीय प्रतिभा के अनुपूप नहीं है। सेकिन तनावनी का मनोभाव उपस्थित है और उसका ममन समार की विमङ्गी हुई हासत को रीचने पर निर्भर है सेकिन राष्ट्र के बड़े-न-बड़े राजनताओं के बल में नहीं है।

वास्तव में घाति उत्पादन के सम्बन्धों और उत्पादन की घनिष्ठों में एक नया साम्प्रस्य स्थापित करने पर निर्भर है। हम नए साम्प्रस्य का अम र्जना कि वह मूच काठ में मरैव रहा है, अविच्छिन्न स्वाओं के ऊपर मरवाही माक्रमण है। अविच्छिन्न स्वाओं के सामने ही विवलय है—या ली वे समझाने-बुझाने से मूच जाये या उगह बरु-प्रमोव टाप मूच विमा पाये। इतिहास से मही सिद्ध होता है कि वे अभी तक बड़े र्जाने पर और अल्प समय में समझाने-बुझाने से कभी नहीं मूच हैं। इसके लिए अर्थात् ममझाने-बुझाने से मान जाने क लिए जिस विदास मानसिक अनुकूलन की बाध स्पष्टता है उसका उनमें सभेबा अभाव है। उनके जीवन एक विद्यप प्रकार के र्जुन सहन के अम्मस्त ही मए है। उनकी म्यामनम्बन्धी मान्यता हम र्जुन-सहन में मर्षित है। अन्ति जिस राष्ट्र का निर्माण किया है, वह उनकी दृष्टि में उनके प्रमोवना की पूर्ति का माध्यम है। राष्ट्र की बरु-श्रयोय सम्बन्धी अविन का लक्ष्य माक्रमण से हम प्रमोवनों की रसा करना है। वे प्रमोवत उनके लिए अम अम के तुम्प ह, जिस पर उनका जीवन निरर है। वे उसके विद्वान्तों में ठीक उसी प्रकार सिद्ध नहीं करने जिस प्रकार कि एक अष्ट मुमअजान नृपान के विद्वान्तों में सिद्ध नहीं करता। वह उनके लिए उन समस्त निविमस्तताओं का प्रतीक है जो उनके जीवन में जाया तथा सरमता का संचार करती है। क्या वे बुजबूतक सेकिन स्वच्छतापुवक मह स्वीकार कर सकते हैं कि यह सब वास्तव में एक अर्षकर मूच है? हम प्रकार की स्वीदृष्टि अभी तक मनुष्य-जाति का स्वभाव नहीं रहा है। व हमें ऐसे किनी परिवर्तन का ही ज्ञान है जिसके कारण हम यह मानने लव जाये कि मानव-जाति की मानसिक रचना में कोई परिवर्तन हो गया है।

हम यह बन्धी तरह जानते हैं कि नए ह्यिचारों के कारण अर्षर्य किनी पूर्व मूच की अवेद्या अधिक विनासकारी है सेकिन फिर भी हम कम-न-कम आचारो पर मूचने की अवेद्या अकने के लिए अधिक तय्यार है। हम साम्प्रस्यवाय की पूर्ति में लो जापान की जाति घाति की भाग में निर्लक्ष्य होकर मूच बाल मरते हैं और मय के कारण विरोध से मूह छिपाते हुए संसार को पत्थर के देवना बने देसते रह सकते हैं। वैदिकता के क्षेत्र में हम बुजबाल की अवेद्या एक दम भी पाये नहीं बडे हैं। भाव

की जब हम किसी बुद्धिमत् पर उत्तर करते हैं, तो उत्तरा बोधित्व सिद्ध करने के लिए नए-नए सिद्धांत बंध करते हैं। उदाहरणार्थ जर्मनी के सामन्ती विद्वानों ने पारलमन से भरे वातिवार का आधिपत्य किया है। कैबिनेट वास्तविकता यह है कि नाजी नेता अपने अनुयायियों को पुरस्कार के रूप में वे पर देना चाहते हैं जिन पर यहूदियों का अधिपत्य है। यह सभी समय है जब कि वे यहूदियों का जर्मनी से निकाल दें। इसी प्रकार इंग्लैंड के ग्वावशासितवा ने अपने संमेलन राज्य (corporative state) के लिए जो समझ संकार के अतिरिक्त कुछ नहीं है, एक नए काशीरी दर्शन का निर्माण किया है और अपने विज्ञान के साथ अधिपत्य किया है। यही दृष्टा अमेरिका के उन बड़े-बड़े उद्योगपतियों की है जो बुद्धकाव ईरेन और टिकापो में हड़तातियों के ऊपर इस आधार पर कि हम सन्धि (contract) की रक्षा के लिए लड़ रहे हैं, योही बंधा बैठे हैं। अग्रिय सत्य यह है कि वे व्यक्ति जिनके हाथ में शक्ति है, उनके त्यागता नहीं चाहते। उन्हें उन लोगों के ऊपर अपनी शक्ति का अधिपत्य सिद्ध करने के लिए, जिन्हें सबसे कुछ लाभ नहीं है एक विचारधारा की आवश्यकता है और वे इस विचार धारा को जनता के ऊपर आरोपित करने के लिए अपनी बल-बखर्ती शक्ति का विशेष प्रयोग के प्रतापी कथन का रूप बैठे हैं, प्रयोग करते हैं। यह बल-प्रयोग उस समय तक जब तक कि जनता उसे चुनौती नहीं देती, सहनति का रूप धारण किए रह सकता है। जहाँ जनता के वर्तमान भाव में उसे चुनौती देना प्रारम्भ किया, उसकी आलोचना घमभी बन जाती है, उसका संघटन राजगोह या पञ्चम बन जाता है और जाग्रत तथा व्यवस्था की चुनौती को दबाने के लिए राज्य की शक्ति का प्रयोग होने लगता है। ये शक्ति के अटक निष्कर्ष हैं और जितनी अधिक अधिपत्य के बनाए रखना चाहते, उतना ही अधिक उन्हें हमन करना पड़ेगा।

यह वह संघर्ष है जिसमें हमें अपने संविधान के अधिसमर्थकों को समझना है। प्रत्येक पीढ़ी उसकी व्याख्या अपने समय की प्रधान विचारधारा के अनुसार करेगी। जहाँ राजावरण तनिक दृष्टि हुआ, सोम उनकी बहार व्याख्याएँ मान लेते, लेकिन जहाँ वातावरण शुष्क हुआ, उसकी व्याख्याएँ संकुचित हो जायेंगी। इसी संकुचित कि एक पक्ष की व्याख्या दूसरे पक्ष की समझ में ही न जा सकती। यहाँ संभवता वा संभावना का कोई प्रश्न नहीं है। उस वर्ग को जिसे अपनी शक्ति बनाए रखनी है, साध्य के अनुसार ही साधन अपनाते पड़ते हैं। हमारी राजनीति का जो वर्तमान रूप है, उसमें जूजीबाबी लोक-सर्व के संघारक का अधिपत्य अंततः वास्तविकता जूजीबाब का लोकसत्तात्मक कर्पायो द्वारा समाज-वाद के रूप में परिवर्तन है। यही वह मार्ग है जिसमें उत्पादन के सम्बन्धों का उत्पादन की शक्तियों के धान साम्यत्व बँटाया जा सकता है। लेकिन इस प्रकार के साम्यत्व का अर्थ तो उन सीमाओं को काटना हुआ जिनके अंदर जूजीबाब ने लोकसत्ता को सीमित करने का प्रयास किया है। विचारों पर दोनों एक दूसरे के अन्त हैं। इस एक ऐसे युग में पहुँच गए हैं जहाँ उन चरम मन्थनवालों को जिनका एक वर्ग में अपनी घलाई के लिए आधिपत्य किया है, दूसरा वर्ग जो पहले वर्ग के रक्षण पर आता चाहता है, उसके विरुद्ध प्रवृत्त कर्पा है। संघर्ष में संसदीय शासन की वर्तमान सहायता यही

है। अभी तो कड़ाई मुक्त भी नहीं हुई है। अभी तो हम १९२६ की सामान्य हड़ताल के रूप में या १९३१ के संकट के रूप में केवल एक विचारियों को ही देख रहे हैं जो कि संघर्ष की संभावना का परिचय देती हैं। लेकिन इनका अर्थ समझने में कोई संदेह नहीं रहना चाहिए। यदि मनुष्य एक बार नई सामाजिक व्यवस्था को मन से स्वीकार नहीं कर पाते तो उन्हें बर्नबुद्ध प्रारम्भ कर देना सुझाव बनता है। वहाँ वे एक बार इस भाव में हुए, किन्तु उनके आदेसों के अर्थात् हो जाता है तथा यह मनस्थिति जिसमें सहिष्णुता एक मुन मानी जाती है पीछेता न विरोधित हो जाती है।

मैंने ऊपर मनोभाव के विषय बड़े हुए संतर की चर्चा की है यह स्पेन के गृह युद्ध की समस्याओं के प्रति इस देश की प्रतिक्रिया से मनी-माति प्रकट होता है। दक्षिणपंथियों के लिए यह या तो सर संजुक्त होर के अर्थों में 'वक्तव्य कड़ाई' रही है जिसमें किसी भी पक्ष की विजय में हमारी रधि नहीं है या यह भी गार्बन के अर्थों में अंधकार के विच्छ प्रकाश की कड़ाई रही है जिसमें बनरक फेंको की विजय सम्मता की रक्षा के लिए आवश्यक है। वामपंथियों की सहानुभूति स्पेन की सरकार के साथ रही है। अमिक बल हस्तक्षेप न करने की नीति के सम्बन्ध में सर्वत्र अंधकार या और अन्त में १९३७ के प्रीम्स के उपरान्त स्पेन की सरकार का कुलकर साथ बना। मजदूरों ने स्पेन की सरकार को सहस्रों स्वयंसेवक लिए हैं और जिनकी कड़ते हुए मृत्यु हो गई है वे लोकतंत्र की बेदी पर सहीर माने जाते हैं। वे दक्षिणपंथियों के हृदय में ऐसी कोई भावना उत्पन्न नहीं करते। सब तो यह है कि इस प्रश्न के ऊपर दोनों पक्षों में कोई सामान्य विचार-भूमि नहीं है। दक्षिणपंथ स्पेन की वैधानिक सरकार की विजय को कठिनाता से परिपूर्ण समझेया और उसकी पराजय को व्यवहार में एक ऐसी समस्या मानेया जिसे वह अपनी चतुर दूतनीति के द्वारा सुलझाने में सक्षम नहीं होगा। वामपंथ के लिए सरकार की पूर्ण विजय न होने का अर्थ महा-विनाश है। उसके विचार से सरकार की विजय यूरोप में लोकतंत्रात्मक स्वतन्त्रताओं के जीवन की मूर्खी है। ब्रिटिश सरकार की नीति न उसके हृदय में तीव्र विरोध उत्पन्न कर दिया है। जिस समय युद्ध की समाप्ति पर इंग्लैंड ने रूस को मामले में हस्तक्षेप किया या उस समय के बाद से ब्रिटिश सरकार की यही नीति संदेहों के लिए सबसे अधिक उत्तरदायी है।

यह सारं क्यों है? मूलतः उत्तर यह है कि वे वस्तुएँ, जिनके लिए बनरक फेंको लड़ा है दक्षिणपंथियों द्वारा अनुमोदित हैं और वे वस्तुएँ, जिनसे वह बच् रहा है, वाम-पंथियों द्वारा अनुमोदित हैं। दक्षिणपंथी स्पेन में निर्वाचित लोकप्रिय सरकार के सम्पत्ति की बुनियादों को अतिकार को स्वीकार करने की अपेक्षा नहीं लोकतंत्र की पराजय केवल अधिक पसंद करते हैं। वामपंथी यह अधिकधिक अनुभव करते हैं कि सरकार की पराजय इस अतिकार के ऊपर एक वातक प्रहार होगी। प्रत्येक पक्ष की पसंद का हमारी अपनी राजनीति पर व्यापक प्रभाव पड़ा हममें कोई संदेह नहीं। यह निश्चित है कि स्पेन की सरकार की पराजय इस देश में उन शक्तियों को अन्धी प्रोत्साहन देनी जो यह अनुभव करते हैं कि लोकतंत्र के अतिकार

उत्पादन-साधनों के व्यक्तिगत स्वामित्व के द्वार पर एक जाते हैं।

बस एक बात और। वैधानिक पद्धति का उद्देश्य विधि के शासन की स्थापना करना कहा जा सकता है। अर्थात् इस सिद्धान्त को जो उनका कानूनी प्रतिष्ठा के प्रारम्भ से जन्मता आया है त्यागने के लिए कदापि प्रयत्न नहीं हुंमि। विधि के शासन का अर्थ यही है कि विधि के उद्देश्य को एक निश्चित प्रतिक्रिया से होकर पूरा करना पड़ता है। यह स्वयं विधि के अन्तर्गत ही स्पष्ट नहीं करता। यह अन्तर्गत उन धर्मों द्वारा निर्दिष्ट होता है, जिनकी पूर्ति में राज्य की शक्ति निरस्त रहती है और ये धर्म समाज के बह-सम्पर्कों द्वारा निर्धारित होते हैं। संक्षेप में हम पुनः अन्तर्गत शासन के उक्त सिद्धान्त के पाम पहुँच जाते हैं जिसे मैंने प्रारम्भ में उद्धृत किया था। पूर्वीयार तथा मोरतंत्र के विवाह में जिसने हमें हमारा संवैधानिक शासन दिया है पूर्वीयार मोरतंत्र की अनेक अधिक महत्त्वशाली है कदापि उसके द्वारा घोषित सम्पत्ति के सम्बन्ध ही मोरतंत्र को उसका विधायी सिद्धान्त देते हैं। मोरतंत्र इस सिद्धान्त को यह विवाह विच्छिन्न किए बिना जिनसे उसे जन्म दिया है धरतीकार नहीं कर सकता। वह विधायक के साथ ही विच्छिन्न रह सकता है लेकिन केवल इस धर्म पर कि ठीक ठीक उद्देश्य के द्वारा हो।

मेरे कहने का अर्थप्रामय यह है कि इंग्लैंड में संसदीय शासन का अस्तित्व इस रूप पर निर्भर था कि उसने उन लोगों के लिए, जिन्होंने उसका निर्माण किया था उन उद्देश्यों को सफलतापूर्वक व्यक्त किया जिनको उन्होंने पूर्वीयार के आचार पर नए सिरे से समाज-रचना करते समय अपने सामने रखा था। ब्रिटिश संविधान इन लोगों के लिए, जो इस बात पर सहमत थे कि ब्रिटिश राज्य को वैसी नीच-पतित का आगेवक करना चाहिए, एक शासन था। उसे उक्त धार्मिक पद्धति द्वारा जिनके ऊपर वह निर्मित हुआ था प्रकुर पोषण मिला। वह इंग्लैंड को उत्तम की उद्योगशास्त्र बन गया था वह इंग्लैंड को दुनिया के बाजार को पाने में सारी देशों से जाने बड़ा हुआ था उन समस्त समस्तियों की जो उसमें अन्तर्गत थे कीमत हुआ सकता था। यही अंग्रेजी की स्वतंत्रता सहिष्णुता तथा सामाजिक शांति का कारण है। वे १९८८ के पश्चात् एक दूसरे को ऐसी रियायतें दे सकते थे जिनके अर्थ का कि आचारभूत प्रतीकों को फिर से न उद्घाटन जाये। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि इस पद्धति की सफलता के पीछे सोलहवीं शताब्दी की क्रूर कड़ाईयाँ और सत्रहवीं शताब्दी का पृथ्वीय शक्ति के विघ्न हुए हैं। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि लॉक की प्रति और नीपोलियन के युद्धों ने उसकी सफलता के लिए अन्तर्गत उत्पन्न कर दिया था। हमें यह भी नहीं भूलना चाहिए कि यद्यपि इसकी सफलता ने इसे ऐसी सफलता प्रदान की जिसके अन्तर्गत सत्रहवीं शताब्दी के उत्तम में अनुसरण हुआ है इसका अन्तर्गत ही कहीं सफलतापूर्वक अनुसरण हुआ हो। इसका कारण यह है कि उन अधिकार देशों में जहाँ इसका अनुसरण हुआ है सफलता के आर्थिक आचारों का अभाव रहा है। उनके पास शासन की उस एकाकी को खोजने की अधिक शक्तिशाली नहीं थी जो राष्ट्रीय राजनीतिक परम्परा की बुनियादों में समझौते की भावना का निर्माण करती है। वह इटली और जर्मनी के सम्बन्ध

में विरोध कम से कम है। दोनों ही देशों में उस छांति का अभाव या जो समझौते की भारत को संभव कर देती है। दोनों में से किसी भी देश में प्राथमिक समृद्धि का इतना शीघ्र युग कभी नहीं रहा जिससे कि यह भारत पर पकड़ सकती। यह परिपक्वता पहुँचने के पूर्व ही नष्ट कर दी गई क्योंकि समझौते का मुख्य आर्थिक शक्ति के स्वामियों की दृष्टि में बहुत अधिक था।

लेकिन बीसा कि मैं निवेदन कर चुका हूँ समझौते की भारत शुभ्य में नहीं रहती। उसके ऊपर यह मर्माया कभी हुई है कि जहाँ वे परिस्थितियाँ जो उसकी वृद्धि करती हैं, नष्ट कर दी जाती हैं, वह स्वयं भी नष्ट हो जाती है। मैंने यह निष्पत्ति का प्रयास किया है कि इस समय इनकी सम्भीर खतरा है। यह खतरा देश के दो प्रधान दला के वर्ग-सम्बन्ध-सम्बन्धी विचारों के विरोध द्वारा प्रकट होता है। उनका अंतर नीति की उस अविधिन्नता को जो अब तक सामाजिक और राजनीतिक सगठन के समस्त प्रधान विषयों में ब्रिटिश राजनीतिक इतिहास की एक अनुपम विरोधता रही है अब खड़ा कर देते हैं। अविधिन्नता के अवरोध द्वारा वे एकता का भी अवरोध कर देते हैं और यह अवरोध बीसा कि मैंने निवेदन किया है यह प्रश्न खड़ा कर देता है कि क्या हमारी पद्धति के अमिसम्ब उच्च नए युग में भी जिसमें होकर वे पुनरुत्थित हैं सफल होंगे? यह स्मर्य है कि मैंने यह नहीं कहा है कि उनको सफल बनाने का संकल्प नहीं है। मैंने केवल यही कहा है कि इस संकल्प के सफल होने की शक्ति उन परिस्थिति पर निर्भर है जिन पर राजनेताओं का अखत ही अधिकार है। मैंने यह मानने के भी कारण बताए हैं कि ये परिस्थितियाँ अपना एक विधिष्ठ मनोविज्ञान बनाती हैं और यह मनोविज्ञान हमारी उन आदता तक जो भुसमता से पार कर सकता है और कर जाता है जो कि हमारी परम्परा में गहराई से बंध बनाए हुए हैं। इमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारे ऐतिहासिक समझौते का ममतावरण छांति तथा युद्ध था। इनमें से कोई हमकिए नहीं आया क्योंकि उसकी जानबूझकर इच्छा की गई थी प्रत्युत इनमें से प्रत्येक विरोध के शक्तिशाली प्रयत्नों के बावजूद भी आया। जहाँ तक हम इन संकटों के प्रति सजग हैं, वही तक हम अपनी स्थिति को सम्हाल सकते हैं और समय रहते कुछ काम कर सकते हैं।

अधिक स्वतंत्रता की मांग नहीं रख सकते। मत की ऐसी अनेक धाराएँ और प्रति-
धाराएँ हैं कि १८४४ के लार्ड सेप्टेसबरी के कंपनी-विधायक में या लार्ड वामस्टन
की विरोध-नीति पर १८५५ के डॉम पैगिफिको बाद-विचार में प्रकट हुईं भी अब
असम्भव ही नहीं हैं। अब वे केवल उन चोटों में और कम महत्व के अवसरों पर
विचार्य होते हैं जबकि सरकार सदन में स्वल्प मतदान को अनुमति दे देती है। इत
बढोरता का अनिश्चय यह है कि कामग-ममा के ऊपर मण्ड-मण्डल वा नियंत्रण
बढता जा रहा है और इस नियंत्रण का रहस्य यह है कि सरकार और विरोधी
दल के नेता समान रूप से समस्त सगठन के द्वारा अपने सदस्यों के कार्य-कार्यों पर
अनुष्ठान रख सकते हैं।

यह बढती हुई बढोरता के कारण सरल नहीं है। हमका आधिक कारण तो यह है
कि आधुनिक इमर्जेंट के विस्तार निर्वाचक-मण्डल को पहल से अधिक विस्तृत दल-
सगठन की आवश्यकता है। इसका कुछ कारण यह भी है कि राज्य-हस्तक्षेप के विस्तार
में ससद में सरकार के नाम को बढा दिया है यदि हम नाम की समय के अन्दर पुष्ट
करना है तो बढोरता दल-सगठन आवश्यक है। इसका कुछ कारण यह भी है कि
आजकल के निर्वाचक सिद्धांतों की अपेक्षा व्यक्तिगत में अधिक प्रभावित होते हैं और
वे प्रत्यायियों को उनके काम के आधार पर कम उनके मतों के आधार पर अधिक-
निर्वाचित करते हैं। दल की सम्पूर्ण पद्धति का ही व्यक्तिगतकरण हो गया है और
उनके नामों की व्यापकता में उस नेता के समान अनुमान रखने की विवशता
दिया है। दल की बढोरता के विरुद्ध आवाजें उठ सक्ती हैं और विरोध भी हो
सकते हैं। लेकिन दल के अविचार्य सदस्य यह समझते हैं कि दल से सम्पन्न करना
न केवल उनके लिए ही सतत है प्रत्युत यदि नहीं यह समझा गम्भीर हुआ तो इसके
उनके विरोधियों की उपपन्नता के धक्कर बढ जाते हैं। इसलिए जब तक कोई बहुत ही
गम्भीर बात न हो दल के अन्दर विरोध वा कोई प्रश्न नहीं उठता। १९११
तक में अधिक दल के केवल सोझ सदस्यों ने ही की समस्त धीकड़ानसह का साथ
दिया था।

यह विविध पद्धति की एक विशेषता है, जो केवल अंग्रेजी भाषा-भाषी देशों में
ही विद्यमान रूप से पायी जाती है कि राज्य में स्मूल रूप में जो ही ऐसे दल उठें
आहिएँ जो कि निर्वाचकों के ध्यान को गम्भीरतापूर्वक अपनी ओर आकृष्ट कर
सकें। कुछ लोगों की दृष्टि में तो यह स्थिति स्वतःसिद्ध सरल हो गई है और उनका
कहना है कि प्रतिनिधिक शासन के सफल सञ्चालन के लिए यह सर्वश्रेष्ठ उपाय है।
मेरे विचार से यह सही है। लेकिन यह याद रखना चाहिए कि द्विक पद्धति संयोग
से ही उत्पन्न हुई है न कि किसी योजना से। निश्चितता द्वि-दल पद्धति से कई
बढ लाभ है। एक लाभ तो यह है कि इससे निर्वाचकों को सीधे अपनी इच्छा की
सरकार चुनने का अवसर मिलता है। दूसरा लाभ यह है कि किसी कार्य का उत्तर-
दायित्व एक निश्चित मत-समूह के ऊपर रहता है। महाद्वीप की बहुदल-पद्धतियों
में सरकार का चुनाव बनना के द्वारा से निकलकर निर्वाचित सदन के हाथ में जा

जाता है और मजबूतता जो चाहते तो यह वे कि हम भी हरियट के द्वारा प्राप्त हो, वास्तव में अपने को भी पोइलकेयर या भी साबक द्वारा प्राप्त करते हैं। अपरन्त बहुदल-पद्धति में या तो संकुल सरकार बनती है जिसका अनिर्वाय परिणाम सैदा लिक मिथिलता है या अल्पदल की सरकार बनती है जो सर्वत्र दुर्बल रहती है तथा किसी कार्यक्रम को सुचारु रूप से पूरा नहीं कर पाती। यदि हम यह मान लेते हैं कि एक इसलिए सत्ता प्राप्त करना चाहते हैं जिससे कि वे अपने विद्यार्थियों को कार्य-रूप में परिणत कर सकें तो यह स्पष्ट है कि ब्रिटेन प्रत्यक्ष तथा निर्वाचक निर्वाचक-बण्डल की पसन्द हाथी उठना ही सबसेकर निर्वाचक-मण्डल तथा विधान-मण्डल का कार्य होगा।

श्री रैमंडे म्योर ने एक रोचक विश्लेषण में इस निष्कर्ष को अस्वीकृत करा दिया है। उनका कहना है कि बहुदलमूलक शासन में एक बड़ा काफ यह है कि हममें जनता के सामने केवल दो ही विकल्प नहीं रहते उनके सामने कई विकल्प रहते हैं और इस प्रकार अनेक प्रकार के दृष्टिकोणों में सामंजस्य स्थापित हो जाता है। उन्होंने द्वि-दल पद्धति के विकास को उसके विस्तृत संघटन के विकास से अनुपेक्षित किया है। इस पद्धति ने कठोर अनुशासन को जन्म दिया है और कठोर अनुशासन का अर्थ "मन्त्रि-मण्डल का अधिमायकत्व" है। उन्होंने लिखा है "इसने संसद को जो सुदृढ़ और अनुशासित मैनाओं के बीच विभाजित करके हमारे शासन-संघटन में विघ्न उपस्थित कर दिया है। बहुमत का प्रधान उद्देश्य दलगत सरकार को सत्ताकृत रखना है और असममत का प्रधान उद्देश्य उसका स्थान देने के लिये उसे निम्नित करना है। इसमें संसद की कार्यवाहियों में अवास्तविकता आ जाती है और राष्ट्र की भाषा में उसकी प्रतिष्ठा को बरकरार पहुँचता है। चूंकि विरोधी दल सरकार को निम्नित करने के प्रत्येक अवसर पर उपजोय करता है अतः सरकारी दल के लिए यह आवश्यक हो गया है कि वह उस समय के दृष्टिकोण का कि उसका कोई सम्बन्धी परिणाम न हो अपनी समस्त सुनो को उपेक्षित कर दे और मुक्त व निरच्छल आलोचना के बर्तव्य को व्यापकर सरकार का उनके प्रत्येक कार्य में समर्थन करे। श्री म्योर का विश्वास है "हमारे देश में विपक्ष पद्धति की महत्वपूर्ण और निरन्तर बढ़ती हुई प्रकृति दृष्टिकृत होती है। यह सामान्यतः निर्वाचकीय पद्धति के संघात्मक से बाधित है, परन्तु बार-बार धीमे हो जाती है।" श्री म्योर दक्षिण केन्द्र तथा काम की बहुदल-पद्धति का प्रतिपादन करते हैं। वे एक न्यूनाधिक रूप से हमारे अनुदार दल उदारदल और अधिदल दल के सम्बन्धी होने। उनके मत से यह सामु-लिक परिस्थितियों में सबसे अधिक स्वाभाविक दल-पद्धति होगी। प्रायः सभी देशों में वे व्यक्ति जो राजनीति में सक्रिय रहि लेते हैं, ठीक वहाँ में बंटे जा सकते हैं। पहले वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं जो सामाजिक व्यवस्था में कोई सम्बन्धी परिवर्तन नहीं चाहते। दूसरे वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं जो बड़े बड़े परिवर्तन चाहते हैं परन्तु वे परिवर्तन केवल समाजवादी या न्यायवादी विद्या में ही होने चाहिए। तीसरे वर्ग में वे व्यक्ति आते हैं जो बड़े बड़े परिवर्तन चाहते हैं, लेकिन वे परिवर्तन

समाजवादी विद्या में नहीं होने चाहिए प्रत्युत इस प्रकार होने चाहिए कि अधिक से अधिक नाम और दूसरों की स्वतन्त्रता के कम से कम प्रतिबंध के साथ व्यक्तिगत उद्यम बना रहे। श्री म्योर वर्तमान निर्वाचकीय पद्धति में स्वार्थों और मतों की जो व्यापक संसमति है उसका निर्वेध करते हैं और सानुपात प्रतिनिधित्व को अपनाते वा समर्थन करते हैं। उनका मत है कि "सानुपात प्रतिनिधित्व के द्वारा ही देश के प्रत्येक राजनीतिक दल को उसकी शक्ति के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सकता है।" उन्होंने लिखा है "स्वतन्त्र और उत्तरदायी मासोचना केवल उम सुरक्षा और स्थिरता के आधार पर ही जो एकमात्र सानुपात प्रतिनिधित्व ही आवश्यक कर सकता है कम सम्झती है।"

स्पष्टतः यह समर्थन और हृदयवाही उर्ध्व है। फिर भी मेरा विचार है कि यह विमूलक दमन है। इस बात का कोई प्रमाण नहीं है कि प्रायः जैसे देशों में जहाँ कि बहुसंख्यक पद्धति प्रचलित है, विभाग मंडल की प्रतिष्ठा हमारे यहाँ से अधिक है। यहाँ तो प्रतिनिधि कभी एक दल में शामिल होते हैं कभी दूसरे में और इन प्रकार के घासन की नींव को दुर्बल कर देते हैं। घासन जनता की आँसों में गिर जाता है और किसी भी कार्यक्रम को पूर्ण रूप से कार्यान्वित नहीं कर पाता। इंग्लैंड में अविश्वस्य-पद्धति की महत्त्वपूर्ण धीरे निरन्तर बढ़ती हुई प्रवृत्ति पारसिय दल के अत्याचार को छोड़कर पिछले तीस वर्षों में ठीक वा बार चटित हुई है। एक बार तो वह १८३२ के बार के तीस वर्षों की अल्पवस्था में जब कि बाहुनिक उदार और अनुदार दल तुम्हारे पूर्व युग के राजनीतिक कोलाहल से बाहर निकल रहे थे चटित हुई थी। दूसरी बार वह धीरे धीरे ११ व से १९१० के बीच में तथा अधिक तीव्रतापूर्वक इसके बाद जबकि इन देश में राजनीतिक कार्य के एक नए सिद्धान्त के रूप में समाजवाद का अवतरण हमारी राजनीति में मौसिक बुनामत्तर ला रहा था पटित हुई। चूंकि अब निर्वाचकों के सामन वास्तविक प्रश्न समाजवाद की स्वीकृति या अस्वीकृति का ही है इसलिए देश में दो ही राजनीतिक दलों के सिद्ध स्थान रह जाता है। एक तो वह दल है जो समाजवाद की स्वीकार करता है और दूसरा वह है जो उसे स्वीकार नहीं करता। चूंकि केन्द्र का दल समाजवाद की स्वीकार नहीं करता अतः वह धीरे-धीरे समाप्त होता वा रहा है।

श्री म्योर कैड के दल की नींवित रचना चाहते हैं, और इसलिए उनका विचार है कि संसद् को राष्ट्रीय मत का दर्पण होना चाहिए अर्थात् उनका गठन सानुपात प्रतिनिधित्व के आधार पर होना चाहिए। इस सम्बन्ध में पहली बात तो स्पष्ट रूप की यह है कि जब श्री म्योर ने लिखा था उसके बाद से जर्मनी और स्पेन दोनों ने उनके विचार को कि सानुपात प्रतिनिधित्व काठजगत्वात्मक घासन को सुरक्षा और स्वायत्त प्रदान करता है अत्यन्त सिद्ध कर दिया है। ये विशेषताएँ तो ऐसा कि मैं न पूर्व अध्याय में लिखाने का प्रयास किया है, कसु और ही परिस्थितियों का परिणाम होती हैं। यदि हम उन्हें ही दृष्टि से संशोधित निर्वाचकीय पद्धति के आधार पर

भी म्योर की त्रि-बल पद्धति मान भी लें तो क्या परिणाम होगा ? या तो कमिन्-ब्रमा में एक ऐसा घबिडताही बल होगा जो आज की तरह स्वयं सरकार बना लेगा । इस स्थिति में वर्तमान स्थिति से कोई अंतर नहीं होगा । या कमिन्-ब्रमा में कोई एक बल ऐसा घबिडताही नहीं होगा जो दूसरे किसी बल की सहायता के बिना सरकार बना सके ।

दूसरी स्थिति का परिणाम या तो बलमय की सरकार होगी या संयुक्त सरकार । बलमय की सरकार की दुर्बलता तो हमारे मुझेतर अनुभव के प्रकाश में स्वतः स्पष्ट है । वह किसी हठ नीति का पालन नहीं कर सकती । ऐसी स्थिति में वास्तविक शक्ति महायता देने वाले बल के हाथ में रहनी है और सरकार अपने विरहल मित्राणां की उन सिद्धान्तों के लिए, जिनके लिए उसे सहायता पाने की आशा होती है, स्थापित कर देनी है । फलतः उनके कार्यों में साहज और हठता का उन पुत्रों का जो प्रत्येक सामन के लिए सबसे पहली आवश्यकताएँ हैं—ब्रमाव रहना है । जहाँ तक संयुक्त सरकार का प्रश्न है वह दो परिस्थितियों में ठीक मासूम पड़ती है । यह युद्ध के समय ठीक मासूम पड़ती है क्योंकि उस समय ममल मतभरों को स्थापित कर देना तथा विजय के उद्देश्यों को सर्वोपरि रखना आवश्यक हो जाता है । ऐसी एगता सीमित समय तक ही रहनी है और बंसा कि भी साम्य जाई की संयुक्त सरकार में सिद्ध विद्या या पाठि की स्थापना के बाद कठिनाता से ही बच पाती है । यह उस समय भी ठीक मासूम पड़ती है जबकि जैसा कि १९११ में फ्रांस में प्रथम सरकार के साथ हुआ या व्यापक मतभेदों द्वारा विमलक दो बल कुछ ऐसे विषयों पर, जिनमें वे कुछ समय के लिए अपने मतभेदों की उपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण मानें एगमत हो जायें । ऐतिहासिक अनुभव से यह बात पड़ता है कि ऐसी संयुक्त सरकारों को कुछ सफलता पाने के लिए काफी सबल पुष्टभूमि की आवश्यकता होती है और आमनीर पर होता यह है कि या तो १९११ की तरह स्वाधी अमिसलि का रूप बालम कर लेटी है (जिसका कार्य त्रि-बल पद्धति का प्रत्यावर्तन है) या अमिसलि विघटित हो जाती है और फिर दुर्बल शासन उस समय तक बसता रहना है जब तक कि निर्वाचक यह हठ निरचय नहीं कर लेते कि अब हमें निच बसा में बचना है ।

असल बात यह है कि भी म्योर उन आचार्यों को बूल जाते हैं, जिनके ऊपर विक्टोरिया युग की बल-मरुति इतने मुबार रूप से बसनी रही थी । वे यह बूल जाते हैं कि उन दिनों निर्वाचकों की संख्या कम थी वे निर्वाचक राज्य के उद्देश्यों के ऊपर एगमत से और विधान न इतना विमान ही था और न इतना महत्वपूर्ण हो कि उसे आबलस की तरह कम से कम प्रथम विषयों में अविपरक के उपरान्त की आवश्यकता पड़नी हा । वे आहते हैं कि संसद आज भी विक्टोरिया-युग के समान ही सीधे शासन करने के लिये वे यह बूल जाते हैं कि आज के परिस्थितिया जिनके कारण एग हो गया या निरहित हो चुकी है । वे संविधान के अविनापनरक के सम्बन्ध में उनके विचारों का इन पुस्तक में आगे बसबर विवेचन करेगा । यहाँ जो महत्वपूर्ण है वह यह अनुभूति है कि यदि हम कुछ सघन सिद्धान्तों के आधार पर किसी विधान

निर्माण की आवश्यकता स्वीकार कर लेते हैं तो उस स्थिति में मत की मित्तताए बढ़ी बिनासकारी सिद्ध हो सकती हैं। मैं इस विवेचन में सानुपात प्रतिनिधित्व के छोटे-मोटे दोष—उसकी वल बढ़ाने की प्रवृत्ति जैसे कि उसने जर्मनी में बह-संगठन की शक्ति घटाने के स्वाम पर बढ़ा भी है—घामिल नहीं कर रहा है। सानुपात प्रतिनिधित्व जिन दोषों को दूर करना चाहता है वे काफी गहरे हैं और उन्हें किसी निर्वाचकीय पद्धति द्वारा दूर नहीं किया जा सकता।

यदि हम दलों की ठमिक गम्भीरता से देखें तो हमें ज्ञात होगा कि उनके प्रचल मिश्रान्त आर्थिक संघटन के उन विचारों पर निर्भर होते हैं जिनके साथ राष्ट्र का प्रगाढ सम्बन्ध रहता है। यदि जैसे कि उन्नीसवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड निरव्यात्मक रीति से पूंजीबारी है, तो पूंजीबारी स्वामित्व के विभिन्न पहलुओं के विचार के सम्बन्ध में क्या नीति अपनाई जाये इस प्रश्न के ऊपर दलों में कुछ मतभेद हो सकते हैं। उनके कार्यक्रम और उनके सामर्थ्य इन्हीं मतभेदों से विधेय सम्बन्ध रखेंगे। उदाहरणार्थ हमारे समय में प्रयुक्त राष्ट्रीय प्रश्न यह है कि उत्पादन के साधनों का समाजीकरण हो या नहीं हो। निरसगत प्रत्येक बल के लिए यह आवश्यक हो जाता है कि वह इस प्रश्न के ऊपर अपनी एक निश्चित नीति निर्धारित करे। थी म्योर की ब्रिटिश लोकमत का ऐसा स्थायी तरल पाने की चेष्टा जो न अनुहार है और न समाज बारी है लेकिन जो उन परिस्थितियों का मूजन करना चाहती है जिनमें कि व्यक्तिगत उद्यम स्वयं अपना अधिकतम लाभ साधते हुए तथा दूसरों की स्वतंत्रता के साथ कम से कम हस्तक्षेप करता हुआ बना रहे निष्फल हो जाती है। इसका कारण कुछ तो यह है कि यह नीति ही ऐसी है कि अधिकार अनुहारबारी इसे अपनी नीति बतावेगे और कुछ यह है कि जहाँ तक यह नतिपम ऐसे कम करना चाहती है जिन्हें दोनों दलों में से कोई भी स्वीकार करने को प्रस्तुत न हो वह प्रभावशाली माधन का आधार नहीं हो सकती। इसका स्पष्ट अभिप्राय यह है कि दलों का मटन चाहे कुछ भी हो राज्य में कुछ ऐसा लोकमत बनस्य रहेगा जो किसी भी सरकार द्वारा प्रस्तावित योजनाओं को सिरोधार्य करने में असमर्थ होगा। यह लोकमत दलों की नीतियों को प्रभावित करने में सफल हो सकता है लेकिन उनकी नीति के आधार मून मिश्रान्तों को नियमित नहीं कर सकता। इसका मुनाब हर हालत में अनुहार नार की ओर है क्योंकि यह स्वयं को व्यक्तिगत उद्यम के संचारण के साथ सम्पर्कित करता है।

मेरा निवेदन है कि बल मुक्यता से संघटन हैं जो राज्य की आर्थिक रचना को निर्धारित करने का प्रयास करते हैं। मेरे कहने का यह अभिप्राय नबाधि नहीं है कि नबल आर्थिक विचार ही उनकी नीति निश्चित करते हैं। ममिक बल विद्या के मामलों में रोमन कैथोलिक लोगो के मतों की ओर अधिक ध्यान देना अनुहार बल वर्ध को राज्य से पूजन करने के मामले में एंग्लिकनो की मत-शक्ति पर विधेय निर्भर होगा। प्रत्येक बल कुछ सीमा तक विभिन्न द्विषों का सच झोटा है और उससे जहाँ तक बन पड़ता है, वह अपनी नीति का इन विभिन्न द्विषों के साथ सावस्य स्थापित

करने की शैली करता है। लेकिन एक बड़े ब्रिग्स-कम्पार्सों का मुख्य आधार अधिक है। यह उच्च ध्यान में रखते बिना किसी भी इस की नीति को नहीं समझा जा सकता। बिग्स एक ने व्यापारी वर्ग के मर्तों को भी प्राप्त किया था इसका प्रमुख कारण यह था कि उसने 'मुक्त वाणिज्य' के सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया था। टोरियो की विजय का प्रमुख कारण यह था कि उनका कृषिजीवियों के हितों के साथ अनिष्ट सम्बन्ध था। यह प्रत्येक व्यक्ति को १९८८ के बाद से साम्राज्य के प्रति राजनीतिक दलों के परिवर्तित इतिहास को देखता है यह समझ है कि इसके मूल में व्यापिक परिस्थितियों का कायाकल्प ही विद्यमान है।

इससे भी अधिक आश्चर्यजनक उनके कर्मचारों-बन्धु एवं निधियां से सम्बन्ध उच्च है। अनुहार एक के निर्बंधन में मजदूरों ने कभी कोई महत्त्वपूर्ण भाग नहीं लिया है। उसकी कार्यपालिका-कमिटी में सायब ही किसी मजदूर को कभी कोई स्थान मिला हो उसने अपने टिकट पर सायब ही किसी मजदूर को संसद के लिए प्रत्यायी के रूप में खड़ा किया हो, यदि खड़ा भी किया है तो ऐसे बुनाब-खेन से जहाँ कि संकलता की रचना भी बाधा न रही हो। अनुहार एक के उच्चतम स्तरों पर मजदूरों का कभी कोई अधिकार नहीं रहा है। इन स्तरों पर तो बड़े-बड़े जमीन्दारों मजदूरों और व्यापारियों की ही तुली शोम्नी रही है। हमें अनुहार एक की निधियों के स्तर का निश्चित रूप से कोई ज्ञान नहीं है। यह हम अनन्त जानते हैं कि इसकी आय का मुख्य स्रोत कितनों का राज है। हम यह भी जानते हैं कि जब उसका कोई 'सुरक्षित' निर्वाचन-क्षेत्र जाली होता है तो उसे इधियाने के लिए प्रत्याधियां में कांशी खोजार कीजताम होती है और प्रत्यायी की अत्याग्य शोम्नीको के साथ-साथ उसकी इस योग्यता पर भी ध्यान दिया जाता है कि वह एक को कितना पैसा दे सकता है। हमें यह भी ज्ञान है कि इसकी निधियों का अधिकतम भाग सम्मानजनक उपाधियों के व्यक्तिगत विषय द्वारा उपलब्ध होता है और यह प्रायः उसी प्रकार है जैसे कि जेम्स प्रथम अपने कोय की पुष्टि आनुवंशिक पन्धियां कैच-कैचकर करता था। अतः हम यह भी जानते हैं, कि प्रत्येक साधारण निर्वाचन के अवसर पर सुप्रसिद्ध वाणिज्य-मैदा उसकी ओर से अपने नाम में बड़े की एक अपील निकालते हैं और यह जानने का कोई कारण नहीं है कि वे अपने प्रयत्न में असफल होते हैं।

इस सम्बन्ध में थमिक एक की नीतियां विस्तृत भिन्न हैं। उसके अधिकतम सरसम थमिक संघों से आते हैं और उसकी राष्ट्रीय कार्यकारिणी समिति मुख्यतः मजदूरों से मिलकर बनती है। उसके प्रतिनिधियों में व्यापारियों अथवा पन्धियों का मिश्रण अपवाद-स्वरूप ही है। उसके प्रतिनिधियों में जोड़े से बैरिस्टर, डॉक्टर और व्यापक होते। जिनमें से आधे पदाधिकारी की वैधानिक आवश्यकताओं की पूरा करने के लिए थमिक सरकारों द्वारा बनाए गए पीयर होते हैं। कहने का सार यह है कि एक का वास्तविक निर्बंधन मजदूरों के हाथ में रखा है। जोड़े से कृषिजीवियों और छोटे छोटे व्यापारियों का भी इस एक के अन्तर् प्रभाव रहता है। इसकी निधियों का मुख्य स्रोत थमिक संघों के सदस्यों द्वारा अपनी इच्छानुसार स्वयं अपने अन्तर् आते-पित कर

है। इसके अतिरिक्त दल की स्पानीय छात्राओं के सरस्य दल को प्रति सप्ताह एक पत्नी के हिसाब से खर्चा भी देते हैं। मैसों, नृत्य-समारोहों और समारोहों आदि के द्वारा भी दल को थोड़ी बहुत धाय हो जाती है।

इसमें उदार दल की सर्व-व्यवस्था का अनुदार-दल की सर्व-व्यवस्था की श्रेष्ठा अधिक जान है। इसमें कोई संदेह नहीं कि १९१६ तक उसकी निश्चिन्ता भी अनुदार दल की निश्चिन्ता की भाँति ही एकीकृत की जाती थी। १९१० से १९२२ तक सॉन्ड जार्ज सरकार का समय उपाधियों के जिस अयोग्य निष्पत्ति के द्वारा एकत्रित किया गया था वह ब्रिटिश इतिहास में घायक अनुभव है। १९२२ के बाद से उदार दल की आर्थिक स्थिति विकसित हुई है। लेकिन इनसे निश्चिन्ता एकीकृत करने के उसके साधनों में कोई अंतर नहीं आया है। वह दल जिसको सरकार बनाने की आशा कम है अधिक समय खर्चों को आकृष्ट करना कठिन पाता है। एक ओर तो विचारपाठ के प्रकार की चिन्तितता और दूसरी ओर प्रत्याशियों की संख्या की कमी से यह प्रकट हो जाता है कि उदार दल धनिकों का बरत हस्त अपने घीघ बर से हट जाने के धक्के की सम्मति नहीं करता है। उदार दल के अधिकार अधिक समयक या तो अनुदार दल में सम्मिलित हो गए हैं, या उन्होंने सक्रिय राजनीति में रति लेना बन्द कर दिया है।

उक्त विरोधाभास की कैवळ एक ही सिद्धान्त के अनुसार व्याख्या की जा सकती है और वह सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक दल का स्वल्प उसके आर्थिक हितों द्वारा निर्धारित होता है। यह समझ नहीं है कि व्यक्ति दल जान बूझ कर कोई ऐसी नीति अपनाए जिससे कि व्यक्ति सभ दृष्ट हो जाय। इसी प्रकार यह भी समझ नहीं है कि जनधार दल कुछ ऐसे काम करने लगे जिनका कि व्यापारियों के ऊपर अधिकतम प्रभाव पड़े। जहाँ तक मूलाधारों का प्रश्न है, प्रत्येक दल ही कुछ ऐसे सिद्धान्तों के दायरे में बंधा हुआ है जिनका निर्माण उनके समर्थकों ने उसके लिए किया है। जहाँ तक इस दायरे को कोई थोड़ा नहीं पहुँचती वहाँ तक प्रत्येक दल को वह स्वतन्त्रता है कि वह निर्वाचकों का अधिक से अधिक समर्थन पाने के लिए को चाहे ही करे। उदारहरणार्थ कोई भी व्यक्ति व्यक्ति दल से इस घोषणा की घोषणा नहीं करेगा कि वह परमार्थ-सोच-विचार के उपरांत इस विष्कार्य पर पहुँचा है कि व्यक्ति संघों का १९२० के व्यक्ति सभ विधि-संशोधन अधिनियम से लड़ने का कोई कारण नहीं है। इसी प्रकार अनुदार दल से भी वह आशा करना बुरासामान ही होगा कि वह प्रति सप्ताह तीन पाँच अनिवार्य म्यूनिसिपल सेशन की एक घोषणा निकाले है। वास्तव में वह सोच जिनमें प्रत्येक दल स्वतन्त्रता पूर्वक कार्य कर सकता है, उसके आर्थिक समर्थकों द्वारा निश्चित किया जाता है।

वस्तु, उन मूलाधारों के बारे में जिनके ऊपर प्रत्येक दल के सिद्धान्त निर्भर हैं, विभिन्न वस्तु वह यहुराई है जिसके द्वारा वे पूषक हैं। १९२४ के पूर्व उदार दल की सरकार व्यापारियों को यह आश्वासन देकर कि हमारे सम्राज का बुनियादी ढांचा यथापूर्व रहेगा अनुदारदल की सरकार का स्वागत प्रह्वम कर सकती थी। कोई भी व्यक्ति को १९१० के संघर्ष में प्रस्तावित व्यक्ति दल के 'वैधियत कार्य-क्रम' को

देखेगा यह समझ लेना कि अब ऐसा कोई आश्वासन नहीं है। श्रमिक रक्त का निर्वाहकों से यह वायदा है कि यदि हमारी विजय हुई तो हम न केवल पांच बयों की शर्तों में बहुत सी वस्तुओं का राष्ट्रीयकरण ही करेंगे प्रत्युत ऐसे बहुत से व्यापक सामाजिक सुधार भी करेंगे जिनमें बेकारों के लिए 'मीन्स टेस्ट' का उन्मूलन उनके लिए ही जाने वाली शीमे की दरों में वृद्धि तथा वृद्धावस्था की पेंशनों को बड़ा कर प्रत्येक अविवाहित व्यक्ति के लिए एक पीठ प्रति सप्ताह तथा विवाहित व्यक्ति के लिए पैंतीस पिटिंग प्रति सप्ताह कर देना शामिल होगा। इन कार्य-क्रम के आर्थिक निष्कर्ष विस्तृत स्पष्ट हैं। अतएव इस विधान का सीधा अतिप्रामाण्य नीति की उभर पुरानी अविच्छिन्नता को जान बूझ कर नष्ट कर देना होना जिसके ऊपर कि हमारी संसदीय पद्धति टिकी हुई है। हमारी संसदीय पद्धति विभिन्न हितों की मांगों के उत्तर के ऊपर निर्मित है यह एक ऐसे समाज की कल्पना करती है जो बाजारक क द्वितीय समाज से विस्तृत मिला है। मेरा विचार है कि यह कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यह उन प्रयोगों की सिद्धि का जिनके प्रति राज्य-व्यक्ति अनुरक्त है, एक साधन है। यह उन 'हमक कर्पणों' में से एक का प्रतिनिधित्व करती है जिनका विचारम करना भी हमें स्पष्ट के अनुसार रक्त-पद्धति का प्रमुख कार्य है।

(२)

क्या इतने व्यापक मतभेदों के ऊपर रक्तगत संघर्ष सामान्य सा ही बना रहेगा ? क्या इन सारे बल्बों की मध्याहली में मूमाबारों के सम्बन्ध में सुरक्षापूर्वक मतभेद महान कर सकते हैं ? स्पष्टतः सम्भावनाएं ये हैं। श्रमिक रक्त का कार्यक्रम ही कुछ ऐसा है कि उसे किसी भी समय आवश्यक बहुमत नहीं मिल सकता। ऐसी स्थिति में अनुसार रक्त सप्ताह बना रहेगा और संविधान के अन्दर किसी भी कृत्रिम की सम्भावना नहीं उठनी। या श्रमिक रक्त विजयी हो जाये और वह अपने वांछित परिवर्तनों को धातिपूर्वक पूरा करने में समर्थ हो; यह जैसा कि मैं प्रथम अध्याय में निवेदन कर चुका हूँ इतिहास में अतिरिक्त क्षति होगी। या तीसरा विकल्प यह हो सकता है कि श्रमिक रक्त विजयी हो जाये लेकिन वह आर्थिक और वैधानिक संघटन उत्पन्न किए बिना अपने कार्यक्रम को पूरा करना असंभव पाये। क्या इन अंतिम स्थिति में संसदीय शासन के परम्परागत ढांच को बनाए रखना संभव होगा ?

हमें इन प्रश्न को अच्छी तरह से समझ लेना चाहिए। श्रमिक रक्त की विजय एक ऐसे समय में होगी जबकि मजदूरों के बानों में यह कूट-कूट कर भर दिया जायेगा कि समाजवाद की विजय का अब राष्ट्र का विनाश है। इन एक ऐसे कार्य-क्रम को लेकर सत्ताकण्ड होगा जिसका कि प्रत्येक विषय विरोधियों के लिए अतिशय होगा। वे अपनी पूंजी के अधिक के सम्बन्ध में बहुत संकल्पित हैं। जैसा कि मैंने और यह हो सकता है कि वे जैसा कि विमवाङ्गट एन्किमेंट ने उन्हें परामर्श दिया था अपनी सामान्य पराजय की स्थिति में अपनी अधिक से अधिक पूंजी का निर्यात कर दें। विश्वास की कमी हो जायेगी बाजार में पूंजी आना पिछले पड़ जायेगा और साम्य राज्य राष्ट्र में छोटी शक्ति के लिए दिए जाने वाले कर्म बंद हो जायेगे। स्पष्ट है

कि इस आर्थिक संकट को रोकने के लिए सरकार धनिक सरकार को कुछ ठोस कार्यवाही करनी पड़ेगी। इस उद्देश्य में सरकारता प्राप्त करने के लिए उसे न करक काई-समा की ही प्रस्तुत उन आर्थिक धरणाओं की भी जिनका विश्वास उमकी नीति से हित नया या सहायता लेनी होगी।

मैं नहीं जानता कि धनिक बल को यह सह्योस मिल जायेगा। मैं नहीं समझता कि कोई भी व्यक्ति यह दावा कर सकता है कि वह इस बात को जानता है। फिर भी इतना स्पष्ट है कि वह संसदीय शासन की अभिपरीक्षा है। १९३१ की धरणाओं को देखते हुए यह विश्वासपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि वह इस अभिपरीक्षा में उत्तीर्ण हो जायेगी। वैधानिकता के अतिक्रमणों के अलावा १९३२ के घटना-बल का कुल प्रभाव यह हुआ था कि निर्वाचकों में आतंक का भाव पैदा हो गया था। यदि वही धनिक बल उस संघर्ष में विजयी हो जाता तब भी उसके लिए उस आतंक पर बय पाता दुस्ताप्य होता। श्री रैमके मैकडालफ़ और उनके छात्रियों ने जैसा बलात्कार तम्हार कर दिया था समझे यह सब प्रभावशाली था कि देश की आर्थिक स्थिति बहुत डंभारोड हो जाती। हमें यह भूलना है कि बिस्वाउट स्मोरेन ने धनिक बल के आर्थिक कार्यक्रम को बिस्वक ताठ के स्वयं निर्माता के समस्त बोझोबिभम बढाया था। क्या कोई बल जो ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दे, निर्वाचन के पश्चात् अपनी बात बरक सकता है और वह सकता है निर्वाचन क समय में उसने वा कुछ कहा था वह बिस्वसनीय नहीं है? क्या वे व्यक्ति जो कल तक राष्ट्र के बिस्वसक से आब समस्त बेधकत नागरिकों के, उन नागरिकों के, जिनके बन्दे बिरोधाधिकारों को त्यागने की बात कही जाती है सहयोग के पाव हो सकते हैं? इन्हें यह याद रखना चाहिये कि वह स्थिति १९२४ अथवा १९२९ की जति नहीं है जिसमें कि अस्वस्थक धनिक सरकार को, जहाँ उसने अपने सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने का प्रयास किया अपरस्य किया जा सकता है। इयाती बन्पता यह है कि जन्के बहुमत ने उसे राज्य के सम्पूर्ण रंन का अधिकार सौंप दिया है। वह एकमात्र उपाय बिस्वके हाथ उसको अपरस्य किया जा सकता है संसदीय पद्धति के सामान्य सिद्धान्तों के बाहर है। इस प्रकार की परिस्थितियों में इन सिद्धान्तों का क्या होगा?

उनके अर्थशास्त्री को देखते हुए उन तीन सम्भावनाओं में से जिनकी मैंने चर्चा की है पहली सम्भावना धनिक स्वाभाविक मासूम पड़ती है। देश में धनिक बल का काफी लम्बे समय तक शासन रहेगा क्योंकि निर्वाचक-बल उसके किसी विकल्प में अन्तर्निहित कठरा का सामना करने के लिए तम्हार नहीं होंगे; लेकिन वह विचार उतना आसान नहीं है जिसका कि अगर से देखने पर मासूम पड़ता है। यदि इस काल में जनता की उतत भौतिक अविबुद्धि नहीं होती और साथ ही साथ सामाजिक विधान के देश में आये करम नहीं बढ़ाये जाते तो धनिक बल अपना मोर्चा राजनीतिक क्षेत्र से हटाकर आर्थिक क्षेत्र में से लायेगा। इसका अनिर्धार्य परिणाम यह होगा कि औद्योगिक क्षेत्र में अस्त-व्यस्तता का भायेगी मजदूर हड़ताल के द्वारा अपने बेचन घटाने के प्रयास रोकने में प्रवृत्त होंगे और बेकार कोन जसुस निकाल निकाल कर लोगों का ध्यान अपनी ओर

घातुष्ट करेये । अधिक दल इस समय का मसद् में समझ करने के लिए विषय होगा । मूलकामीन अनुभवों के आधार पर हम कह सकते हैं कि १९२६ की हड़ताल के परवान् की भाँति ही कुछ बाधिका और उसका परिवर्तनी का दोन सरकार के ऊपर ही शक जायेगा । फलतः फिर अधिक दल की विषय की सम्भावना हो जायेगी । अनुहार दल के सामने यह दुष्प्रसन्न समस्या मूँह पँना कर बाड़ी होगी कि या तो वह जनता की जीवन-स्तर बढ़ाने की माँग को पूरा करे या इनका मुख्य निर्वाचना के अब सर पर चुवाए । हमारी धामन-व्यवस्था में उसके पास अभी कम-से-कम काफ़ी समय तक क लिए अन्य कोई विकल्प नहीं है ।

अनुभव यह बताता है कि कुछ विषय परिस्थितियों को छोड़ कर संसदीय शासन पद्धति में घायर ही कोई प्राकृतिक निर्वाचक-मय एक ही सरकार को सम्भ समय तक सत्ताकूट देनेके क भिन्न प्रस्तुत हो । यह दो ही स्थितियों में स्वीकार्य हो सकता है या तो बीनेम्यानी मूँडनाक में या उस रणा में जब कि सरकार के धामन-काल में बेच की जनवतल अनुधि होनी रहे । इंग्लेड में १८३२ के परवान् में कोई भी सरकार दस वर्ष के अधिक समय के लिए सत्ताकूट नहीं रही है । यदि हम धोकर कभीकलक के १८८४ के निर्वाचन को बसिग के राष्ट्रीय जीवन में अबतरन का भीषणोष मानें तो अमरीका में १८९६ से १९१२ तक का रिपब्लिक दल का शासन दीर्घतम शासन-काल है । फ्राँस में कुत्तु-काल के परवान् से लोकमन में निरन्तर परिवर्तन होना रहा है वही का विधान-अंकल कमी तो पूर्ण रूप से बसिग वर्ग के हाथ में और कमी पूर्ण रूप से शाम बय के हाथ में रहा है । इसलिए, मेरे विचार से यह स्पष्ट है कि यदि अनुहार दल की सरकार सम्भ समय तक सत्ताकूट रहना चाहती है तो उसे जवाबदारन रूप से सकल होना पड़ेगा । बाधिका या अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति यद्यपि दोनों को एक दूसरे से पूरक नहीं किया जा सकता—इस सकलता की अधिक सम्भावना नहीं प्रकट करतो । इसलिए समय के पलटा खाने ही सम्भव पद्धति पर उन बबाव का पड़ना शिमका मने उल्लेख किया है अबसम्भावनी है ।

यह उचित रूप से कहा जा सकता है कि अधिक दल जैसा कामगरीय बल बिलने अधिक समय तक सत्ता से च्युत रहेगा, वह उतने ही अधिक जातिकारी विधान को कार्यान्वित करने की योजना करेगा । जब तक उनका विरोधी जनवतन और व्यापक सामाजिक मुधारों का प्रवेडा नहीं है उने दो आधारों के आधार पर यह प्रहण करना होगा । इस सम्भव में पहले बात तो यह है कि उने अपने पूर्ववर्ती के धामन-काल की अति-पूति कमी होगी । महान शिक्षा सार्वजनिक स्वास्थ्य और बेरोजगारों की समस्या जैसे मामलों में प्रबल हनों द्वारा प्रगतीकन विधान के विभिन्न मानदंड इस बात के आरशासन हैं कि यही स्थिति होगी । इसलिए, केवल इन बुद्धि से भी यह निरिजन है कि कर के भार में बुद्धि हो जायेगी । हम सम्भव में दूसरी बात यह है कि राज-नीतिक क्षेत्र की विषय के साथ-साथ भीषणिक क्षेत्र में भी प्रगति होनी चाहिए । यदि कोई व्यक्ति अमरीका में राष्ट्रपति कबरेल तथा फ्राँस में भी स्कन के शासन-कालों में अधिक बंधों के इतिहास का विवेचन करे, तो उसे यह सम्भावना समझने में बाँझाई

नहीं होती। इसका अर्थ यह है कि यमिक दल की विषय के परभाव पूँजीवाद पर तीन ओर से आक्रमण हुआ सामाजिक सम्पुत्पान के लिए प्रयत्न होया औद्योगिक विकास का बल जैसा तथा ऐसे विधान का निर्माण होया जो प्रमुख उद्योगों का समाजीकरण करे और भूमि को राष्ट्रीय स्वामित्व में ले ले।

फिरी भी उरह देखा जाये इतना स्पष्ट है कि इतने संसदीय पद्धति पर कार्य पवान पड़ता है। मेरा निवेदन है कि यह सब उस दसमत मर्ष के स्वरूप में जो हा देण रहे है छिपा हुआ है। जहाँ एक बार इनो का विभाजन उत्पादन की पूँजीवाद पद्धति की स्वीकृति या अस्वीकृति क द्वारा निश्चित हुआ सभ्य का भूक इव प्रयोजन के सभ्य पर आनर ठहर जाता है। मैं यह और कहूँ कि यह सभ्य ऐसा नहीं। विनमें कि विनास इतना घन घन हो जिसमें कि धार्मिक सक्ति के स्वामी जमय परिवर्तन के सम्पत्त हो जायें। यमिक दल का भोपित कार्यक्रम इस संभावना के स्वयं पूर कर देता है। यह तो अपनी सगों द्वारा इस बात के लिए बचन-बद्ध है कि पूँजीवाद के केन्द्रबिन्दु पर सीधा संसदीय आक्रमण करे। जहाँ निर्वाचकों ने उसे अपने कार्यक्रम पूरा करने की एक बार सक्ति दे ही मनोईवातिक बृष्टि से उसके लिए इने खानने की श्रेष्टा असम्भव हो जायेगी। यदि वह ऐसा नहीं करता तो यह उतनी आत्महत्या के सुप्य है क्योंकि पूँजीवाद को बरकने की श्रेष्टा त्यागने का अर्थ अपने सम्पूर्ण अस्तित्व का विनास है।

मेरे कहने का सार यह है राजनीतिक लोचन अपनी साम्यन्तरिक प्रवृत्तियों के कारण सामाजिक और भाविक लोचन होने की श्रेष्टा करता है। लेकिन उसे इस लक्ष्य तक पहुँचने का मार्ग उन पूँजीवादी बुनियादों द्वारा जिन पर राजनीतिक लोचन निर्मित होता है जित हुआ शीतला है। इसलिये, इन बुनियादों की बँधता राजनीति में केन्द्रीय प्रसन्न बन जाती है। अपरिवर्तनवादी दल पूँजी की बँधता को विच्छ करने का प्रयास करता है। इसके लिए वह सार्वभौम महाधिकार की व्यवस्था करता है और प्रयास करता है कि जनता के जीवन-स्तर में निरन्तर बृद्धि होती रहे। वह सत्तास्व वैभव उड़ी समय तक खोया जब तक कि जनता उसकी सफरताओं से संतुष्ट रहे। जहाँ जनता एक बार असंतुष्ट हुई वह परिवर्तनवादी दल को सत्तास्व पर देवी और परिवर्तनवादी दल पूँजीवादी बुनियादों को बरकने का कार्य प्रारम्भ कर देगा या प्रारम्भ करने की श्रेष्टा करेगा।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि आज बल-व्यक्ति एक ऐसे वातावरण में कार्य कर रही है जो कि यत सत्ताधियों के वातावरण से विस्तृत भिन्न है। अब तक उसका कार्य परिभाषात्मक मन्त्रों को मुकसाना रहा है अब उसे बुनात्मक मन्त्रों के मुकसान का काम करना है। अस्तित्व के सिद्धान्त उन्ही आधारों से प्रारम्भ होने से जिनसे कि विचारणी के इसी प्रकार की एस्तित्व और की कायड जार्ज के सिद्धान्त उन मूलधारों से प्रारम्भ होते थे जिन्हें मोने तीर से पर कई बल्यौर बावधा कई साम्यविन युगमता से स्वीकार कर लेते। आधुनिक संसदीय इतिहास के ही वर्षों में आचार्यदूत मन्त्रों का एक प्रसन्न १९१४ के हीमस्क एक से अस्टर का अपवर्तन

था। यह एक ऐसा प्रश्न था जिस पर बस्टर सुकने के बजाय लड़ने के लिए तय्यार था। १९१४ में उदार दलीय सरकार ने सर्वप की बमडी के सामने धासन-स्वयं कर दिया था। इन ही वर्षों में राजनीतिक दलों के बिबाह अपने उद्देश्य की बन्तमूर्त एकठा को छिगाने और अपने मतप्रेषों को बड़ा-बड़ा कर दिखाने की चेष्टा किया करते थे। मोटे तौर पर वे राज्य की बुनियातों के ऊपर कमी बाध-बिबाह नहीं करते थे। १९२८ तक तो उनके धामन मुख्य प्रश्न यही था कि मताधिकार की कैसे वृद्धि हो क्योंकि १८९२ से साठ वर्ष तक मताधिकार बड़ा सीमित रहा था। उनके धामने एक अन्य प्रश्न यह था कि पूजीवारी व्यवस्था का किस प्रकार ठीक संचालन हो। उन्होम इस बात पर कमी बिचार नहीं किया कि यदि यह व्यवस्था समाप्त हो जाये तो कैसा रहे? इन राजनीतिक दलों ने उन बाधा पर कमी बह नहीं किया जिनसे कि स्वयं पूजीवारी व्यवस्था के सम्बन्ध में सहिह उपस्थित हों। राजनीतिक दलों की उद्देश्य-विषयक समानता के कारण ही नीति की यह बहिभिन्नता सम्भव रह सका। साम्राज्य वैदेशिक मामले सामाजिक सिद्धान्त और धार्मिक नीति जाकि कै क्षेत्रों में उदारवादी और धनदारवादी समान रूप से एक दूसरे की सरकारों के परिधामों को स्वीकार कर सकते थे क्योंकि उनमें से किसी की भी नीति नै सम्पति के बंठिम बल्ल के बाधारमूर्त प्रश्न को कमी नहीं छठया। उन्होने राष्ट्र के मायको का संचालन इस स्वीकृत सिद्धान्त के व्याहार पर किया कि इस प्रश्न को कमी नहीं छठया जायेगा।

वास्तव में वे अपने इस चिन्तन में सच्चे भी थे क्योंकि उसका बिचार था कि एक बाधारमूर्त प्रश्न के रूप में इसके ऊपर कोई मन्नीर बिबेचन नहीं हो सकता। उस समय की राजनीति का बल्ल भी कुछ ऐसा था जिसकी बबह से यह प्रश्न उनके धामने ज्वलन्त रूप से कमी नहीं उठा। १८७४ तक कॉमन-सभा में एक भी मन्तूर सदस्य नहीं था १९१६ तक उनकी संख्या लगभग थी १९२२ तक वे ऐसे बिरोधी दल का रूप धारण नहीं कर सकते थे कि धासन के माय को प्रभावित कर सकते। इन सजी वर्षों में उन्हें इन दोनों ऐतिहासिक दलों में से किसी के भी अन्धर नीति के निर्धारण में जान लेने का बबसर नहीं मिला था। उनमें से कोई भी उन्हें कॉमन सभा के संभव प्रत्याधियों के रूप में नहीं समझता था। भी रैमने मीकडॉनल्ड का एक पत्र यह स्पष्ट कर देता है कि उदारदल ने उन्हें १८९९ तक में कॉमन-सभा के नियु बपना प्रत्याधी बनाना अस्वीकार कर दिया था। यही कारण था कि वे भी केर हार्डी के दल में सम्मिलित हो गए। सामयिक बिबेचन से यह स्पष्ट है कि अनुदारवादीयों और उदारवादीयों दोनों ने १९१९ में धमिक प्रतिनिधित्व समिति (Labour Representation Committee) का निर्माण कोई बिधय महत्त्व की घटना नहीं समझी थी। उदार दल ही धमिक दल के प्रत्याधियों से ह्यकिप रष्ट था क्योंकि इसने उनके बापध में मठ बंठ जाते थे फलतः उनके सामाय्य धनु अनुदार दल को काम पहुँचता था। १९१९ से १९१४ तक उदार दल का प्रमुख रहा था। लेकिन इस बीच में भी धमिक दल का महत्त्व धायय ही समझा गया हो। इन वर्षों में अनुदार दल और उदार दल की मोति यह रहती थी कि वे धमिक दल

के कार्यक्रम में से कुछ बस्तुएं ग्रहण कर लेंगे। १९१६ का वाणिज्य-विचार अधिनियम इसका एक उदाहरण है। वे कठिन परिश्रम वाले उद्योगों में वाणिज्य-संरक्षक अधिनियम बेकारी के सम्बन्ध में सम-अधिनियम केन्द्रों की स्थापना (१९१८) और बुढ़ापे की समस्याओं के लिए उत्तर वर्ष से उंची अवस्था वाले व्यक्तियों के लिए पांच दिवस प्रति सप्ताह पेंशन की व्यवस्था करके अपना काम निष्कासने की चेष्टा करते थे। मेरा विचार है कि इस विधान में और कोई संवेदनशील व्यवस्था विस्तारित क्रॉस के प्रयत्नों में कोई महत्त्व मेरा नहीं है। वे तो वही सीपी-सारी रिवायटें हैं जिनकी बीजबूट में जर्मा की थी। हाँ इतना अवश्य है कि वे उस निर्वाचक-सम्बन्ध के दबाव के फलस्वरूप जो बीजबूट के समय से कहीं अधिक विशिष्ट और कहीं अधिक संमठित हैं, उनका विस्तृत हो गई हैं।

युद्ध के पश्चात् इंग्लैण्ड के राजनीतिक क्षेत्र में एक तात्कालिक और नाटकीय परिवर्तन हो गया है। उस की अन्तिम मताधिकार के विस्तार, अधिकांश संघों की शक्ति वृद्धि और इस विचार में कि युद्धस्वयं पूंजीवाद के पतन की अभिव्यक्ति या राजनीति में एक नई जागृति का हो है। इसका प्रभाव दीर्घकालीन अवस्था महंगाई, ऐतिहासिक अन्तिम आवृत्तियों के मनोवैज्ञानिक परिवर्तन और युद्ध के फलस्वरूप निर्मित गए सामाजिक सम्बन्धों में दिखाई देता है। अधिकांश देशों में विरोधी दल का रूप धारण कर लिया। इतिहास में यह पहली बार पुण्ये राजनीतिक दलों की तरह एक महान् राष्ट्रीय संमठन बना। उसने स्वयं को स्पष्ट रूप से समाजवादी आचार पर खड़ा किया। यह ठीक है कि इसे १९२४ अथवा १९२९ में अपने सिद्धान्त के साथ प्रयोग करने का साहस नहीं हुआ। लेकिन कम से कम १९३१ में उसने यह दिखा दिया कि वह अपने स्थापने के लिए भी प्रस्तुत नहीं है और छोड़ी हो या फलतः यूरोप और अमेरिका के बाह्य क्षेत्रों के इतिहास में यह प्रकट कर दिया है कि उसका यह नबम फलतः नहीं था। इस विकास-परम्परा के परिणामस्वरूप समाज का आधिकारिक संमठन बलवत् मतभेद का केन्द्रबिन्दु बन गया है। इस केन्द्रबिन्दु पर ही संसदीय शासन का सम्पूर्ण अधिनियम निर्भर है।

लेकिन इस घटना-परम्परा का सबसे अधिक विस्मयजनक प्रभाव पुण्ये दलों पर पड़ा है। इस प्रभाव को संक्षिप्त रूप में इस प्रकार व्यक्त किया जा सकता है कि इसने समस्त प्रधान प्रयोजनों के लिए जनता की बड़ीकरम आवश्यक कर दिया है। १९३१ में राष्ट्रीय सरकार का निर्माण ब्रिटिश राजनीतिक दलों के इतिहास में संभव एक परिवर्तनकारी बिन्दु था। उसके प्रधान मंत्री ने तो कहा था कि वह एक अन्तर्गामी अधिकारी है और केवल कुछ सप्ताह तक ही चलेगी। लेकिन बाद में इसने स्थायी पठन का रूप धारण कर लिया है। साक्षीवादों को एक दूरे से भिन्न करने वाली कोई बस्तु नहीं है और जनता की एकता का वास्तविक आधार समाजवादी कार्यक्रम के परिणामों के बिना जनता सामान्य विरोध है। विरोधी दल के उदाहरण भी इस सम्बन्ध में उनके साथ शामिल हैं और वे मुक्त वाणिज्य को छोड़कर राष्ट्रीय सरकार का अर्थ कोई सिद्धान्त अपने प्रतिकूल नहीं पाते। यदि हम समाजवादी दृष्टि से विचार

करते तो यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश मताशाना का वास्तविक चुनाव हम बात पर निर्भर है कि वह हमारे समाज के आर्थिक आधार के समाजवादी परिवर्तन के पक्ष में है या नहीं।

उमर जो कुछ कहा गया है वह सर्वथा गूढ विचार नहीं है। वह तो बैब्यूट के विवेचन में और उसके लिपियों पर लॉर्ड बरटोर की टिप्पणी में लिहित है। १९८९ ग राज्य के ऊपर मुख्यतः एक ही बल का नियंत्रण रहा है। यह ठीक है कि वह बल दो पक्षों में बँटा रहा है। परिवर्तन की गति और परिवर्तन की दिशा के सम्बन्ध में उममें मतभेद रहा है, लेकिन परिवर्तन के आधारभूत सिद्धान्तों के ऊपर उममें कमी कोई सम्मिलित मतभेद नहीं रहा है। वह मताधिकार के विस्तार, धार्मिक महिष्णुता मुक्त आधिपत्य अथवा सरकार की (सीमाओं) सामाजिक विभागों के स्वरूप उपनिवेशों को दिए जाने वाले स्वशासन की भाषा और वैदेशिक नीति के व्योमों के बारे में बिना किसी कटुता के विचार करने में समर्थ हुआ है। सब तो यह है कि उमके ये विचार सर्वत्र ऐसे परस्पर विचार रहे हैं जिनमें समझौते के लिए काफी सुजायस रही है। हॉ आयरलैंड का प्रश्न हमका एक अपवाद था और यह महत्त्वपूर्ण है कि वह आयरलैंड की समस्या सुलझा स्वीकृत समाधान को धर्म के द्वारा लागू किया गया था और वह दोनों पक्षों के बीच एक समझौते का परिणाम था। किसी भी बड़े प्रश्न पर दोनों पक्ष एक दूसरे से इतनी दूर कभी नहीं हटे हैं कि उनमें चरम असामंजस्य का क्षय होना था ही यह विस्वास रहा है कि छात्रों के व्यक्तिगत स्वामित्व पर कमी चैम्पकी नहीं उठायी जा सकती। वे व्यक्ति जिन्होंने इन पक्षों का माध्यम-निर्णय किया था प्राम-एक ही सामाजिक वातावरण से आये थे वे एक ही भाषा बोलते थे उनका परिचय-मंडल एक ही था और उनके विचार भी एक से ही थे। वे एक ही तरीके से शासित थे। एक पक्ष का संप्रत्य अपन सिद्धान्त के बिना किसी आधारभूत परिवर्तन के दूसरे पक्ष में सम्मिलित हो सकता था। डिबर्टरी की भाँति एक टोपी लोफ़नवादी सामाजिक विचार के मामले में स्वीडन जैसे उदारवादी और जॉन ब्राइट जैसे शक्तिवादी से अधिक प्रगतिशील हो सकता था। लॉर्ड सैसिल जैसा अनुहार अभिजात वैदेशिक नीति के संबन्ध में श्री सॉयड बाज जैसे शक्तिवादी व्यक्ति की अपेक्षा अधिक उदार विचार रख सकता था। सर हर्बर्ट मैनुअल जैसा उदारवादी भारतीय स्वशासन की समस्याओं के बारे में सर मैनुअल होर जैसे कट्टर टोपी के से विचार रख सकता था। लॉर्ड वास्किन जैसे अनुहारवादी के पूरबी के उत्तरदायित्व के बारे में विस्वातन्त्र निर्माण जैसे उदारवादी व्यापारी भी अपेक्षा नहीं उभे विचार थे।

हमको ब्याख्या यही है कि वे उम दायरे के बारे में जिसके अन्दर रहकर उन्हें काम करना था एकमत थे और वह समाज जिसका यह डाँचा अभिन्यक्ति या इतना समृद्धि और कर्तव्य था कि मताधिकार के विवेचन के लिए काफी जगह छोड़ देता था और स्वीकार्य समझौते करवा सकता था। स्वयं हम दायरे के ऊपर बट कर कमी कोई विचार नहीं हुआ। यह-कुछ के समय से जबकि संसदीय धर्मियों की सफलता में उसकी कारोबा निश्चित कर ही थी उसके ऊपर कमी कोई धंगली नहीं उठी है। और कुछ तब इसके विवेचन की कोई आवश्यकता भी नहीं थी। राष्ट्र का समझ रूप से यह

विचार वा कि उसने माय के साथ सीनेबाजी कर ली है। राबर्ट आर्देन जैसे व्यक्ति वा फ्रेडरिग सीसायटी जैसे छोटे-मोटे घुट यह अवसर कह देते थे कि इस सीनेबाजी को दुबारा धर करणा होना। लेकिन इनके इस करने का कोई काम नहीं था। यही कारण है कि इस सम्पूर्ण मय में वार्षिक आर्नेस्ट विलियम मॉरिस और एडिन जैसे सम्बेहवादिनों की बाटी पर जनता ने कभी यन्नीरतापूर्वक विचार नहीं किया। लोगों की दृष्टि में वे अत्यावहारिक थे कवि के धासोषक थे वेनम्बर थे। उनकी अधिष्ठा वाणिज्य की ध्वजारिक सम्प्रदायों से जुड़ा सिद्ध किया जा सकता था। इंग्लैण्ड के शासकों को अपने दृष्टि की दृष्टता में कभी कोई सम्बेह नहीं हुआ। होता भी कैसे? सारा संसार तो यह अपनी मज्जाजली बँट करणा था और उन्होंने ममटीरा की छोड़ कर अपने प्रजासनों के लिए सम्य किसी भी देश की अपेला अधिक ढँके जीवन-स्तर का निर्माण किया था।

अब हमारा विस्तृत बरण नई है। अब विजेता बाद-विवाद की सीमित नहीं रख सकते। अब वे उस ढँके का विवेचन करने के लिए, जिसे उन्होंने अपरिवर्तनीय मान रखा था विचर है। अब उनके नीर उनके विरोधियों के बीच कुछ ऐसे मतभेद हैं जिन्हें पुरानी घर्तों अबका भुलने संग थे नहीं मुकसाबा जा सकता। यही वह केन्द्रीय समस्या है जो बल-व्यक्ति के सम्मुख मूंह बाए लारी है। संविधान ने जिसके अंतर्गत बल-व्यक्ति कार्य करणी है उसकी एकता की इन सम्बाओं के रूप में बल किया जा भी उस एकता के अनुकूल थी। आपस की स्वतन्त्रता समुदाय की स्वतन्त्रता उस आस्थागत उस आत्म-विश्वास के परिणाम थे, जो कि एकता से उत्पन्न होता है। उसके बल रहने का रहस्य नहीं था कि वे केवल अपने मनोमुक विषयों पर विचार विलिख्य करते थे। बिन विषयों को वे पसन्द नहीं करते थे उन पर विचार होने का शरन ही नहीं उठता था। आपरिस जनता ने इसको समझ लिया और पार्लैम की प्रतिता ने भाषा बालने के एक ऐसे सत्त्व का आदिष्कार किया जिसने कि आयरलैंड के सम्बाओं के प्रति ब्रिटिश शासकों का ध्यान बाह्य करके ही छोड़ा। इसके अब तरण के समय तक आयरलैंड के प्रति इंग्लैण्ड की नीति बाद्रुकि तथा दमन की रही थी। यह कहना अनुचित नहीं है कि अधिक बल के कुछ बल प्राप्त करने के पूर्व तक ब्रिटिश शासकों की मजदूरी की समस्याओं के प्रति भी बहुत कुछ बड़ी नीति रही थी। लेकिन अब स्थिति में भी परिवर्तन हो गया है, उस परिवर्तन को ठीक से समझने के ऊपर ही संसदीय शासन का अधिष्ठा निर्भर है।

हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि ये विशेषताएँ केवल इंग्लैण्ड तक ही सीमित नहीं हैं, ये तो सभी पूनीवादी लोकतंत्रों में दिखाई देती हैं। जनरीय में रिपब्लिकन और डेमोक्रेट बलों की दृष्टता के मूल में यही सचिपता काम कर रही है। कनाडा आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड इन सभी देशों में ये परिस्थितियाँ दृष्टित होती हैं। दक्षिण अफ्रीका में यमरी का बल अत्यन्त प्रबल है वहाँ पर रोरे लोगों ने बाले कोषा के विरुद्ध अपना धार्मिक मोचन करने के लिए अपनी सक्ति बुरद की है। यह विन्-भिल्ल भाषाओं में फल हाउड और कैम्ब्रियम के बारे में भी सही है।

दल-पद्धति पूजीवारी लोकमत को उसी समय तक बनाए रखती है जब तक कि जनता पूजीवारी के परिणामों में संतुष्ट रहती है। उस समय वह लोकमत को कुछ इस प्रकार निर्दिष्ट करती है कि पूजीवारी की सुरक्षा को बाट पहुँचाने वाले बाधकों के बनने का प्रश्न ही नहीं उठता। लेकिन जब पूजीवारी संरक्षण के घटते हुए सितियों में इस प्रकार की संज्ञा का उठना स्वाभाविक बन गया है। फलतः एका के एक नये आचार को प्राप्त करना मसवीय शासन के भावी जीवन की धर्म ही जाती है।

(३)

इस अध्याय में मैं आधुनिक राज्य में दलों के क्या कार्य होते हैं इसका सारगर्भ विवेचन किया है। मैंने यह विवेचन किया है कि दलों के अस्तित्व के लिए कानूनी मान्यता की अनुपस्थिति का यह अधिग्रहण नहीं हो जाता कि वे सरकार के प्रभाव वाली शक्ति नहीं हैं। वैधानिक दृष्टि से संविधान के अधिनियमों का केवल यह विचार है जो संसद के सर्वोच्च में रहकर प्रशासन का संचालन करता है। लेकिन वास्तविकता यह है कि वे संसद के अन्तर्गत ही कि क्योंकि दल उन्हें काम में समा में बहुमत देता है। इसके अतिरिक्त वैधानिक शक्ति को छोड़कर ऐसा कोई उपाय नहीं है जिससे कि वे अपने पक्षों पर स्थिर रह सकें। दल को संगठित कौन रखता है? कुछ तो संगठन का धोरण और कुछ नवत्व की अनुपातों को माहृष्ट करने की शक्ति। लेकिन दल के अस्तित्व का मुख्य कारण यह है कि उसके सख्य बसा कि दल न कहा जा सके कुछ विशेष निदानों की अधिभूति का जिसके ऊपर कि वे एकात्मक होते हैं प्रयास करते हैं। मैंने यहाँ यह विवेचन किया है कि मुख्य उन निदानों का स्वल्प आधिक होता है। हाँ सचता है कि कभी-कभी यह स्वरूप समाज की अतिव्यवस्था में घुमिक्त पड़ जाये। लेकिन दो बातों से यह पता चलता है कि वास्तव में आधिक आचार ही एक ही रचना को निर्धारित करता है।

पहली बात तो यह है कि वे सभी राजनीतिक दल जो कभी कभी समय तक चलते हैं, आधिक वर्तमानों में नग्न होते हैं। यह इंग्लैंड में विद्यमान और टोरी दलों तथा अमेरिका में रिपब्लिकन और डेमोक्रेट दलों के बारे में सही है। वहाँ इंग्लैंड के अधिकांश दल या अमेरिका के एवेरियन दल की तरह तीसरा दल उठ खड़ा होता है वहाँ भी यह सही है। वे दल जो धर्मों के आचार पर उठते हैं अतिव्यवस्था से ही स्वयं को अधिक समय तक बनाए रख पाते हैं और अधिक बनाए भी रखते हैं तो उन्हें किसी न किसी रूप में आधिक वर्तमान अवस्था बनाना पड़ता है। यही नियम राष्ट्रवारी दलों उदाहरणार्थ इंग्लैंड के क्वेकर दल और डेमोक्रेट के एवेरियन दल के बारे में भी लागू होता है। यदि हम विचारपूर्वक करते हैं तो पता चलता है कि राष्ट्रवारी दल राष्ट्रीय स्वयंसेवा की नींव डलीय करने हैं क्योंकि इनके अभाव में उन्हें आधिक अवसर नहीं मिल पाते। यही कारण है कि स्वयंसेवा प्राप्ति के पश्चात् राष्ट्रवार की सबसे बड़ी अधिभूति संरक्षणामक आत्मरक्षण (protective tariff) के रूप में दिखाई देती है। यह उत्पादक के लाभ के लिए नृ-आचार कुछ इस रंग

ये प्राप्त करने की कोशिश की जाती है जिससे कि उपभोक्ताओं के हित बाकी चीज हो जाते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि यह सब स्वाभाविक भी है। बूकि प्रत्येक व्यक्ति के लिए सबसे महत्वपूर्ण वस्तु यह चीज है जिसमें वह अपनी जीविका उपार्जित करता है। इसलिए जैसा कि मैडीसन ने कहा था वह आवश्यक ही है कि "हल्कल का एकमात्र स्वाधीन स्रोत" सम्पत्ति हो। यह सम्पत्ति के सम्बन्ध में लोकमत को अपने स्वयं की इच्छानुसार नियमित करने का सामन है।

उक्त पद्धति में कुछ दुर्बलताएँ भी हैं जिनके ऊपर ओस्ट्रोवोर्की और माइकल एसे विद्वानों ने सुप्रसिद्ध पुस्तकें लिखी हैं। ओस्ट्रोवोर्की ने इंग्लैंड तथा अमेरिका के राजनीतिक दलों का व्यापक परीक्षण करने के उपरांत यह निष्कर्ष निकाला था कि उन बहुत सी प्रचण्ड कुटिलताओं को रोकने का जिनके लिए राजनीतिक दल उत्तरदायी हैं एकमात्र उपाय राजनीतिक दलों का ही उन्मूलन है। हैलोफेसु की प्रति उसका भी यह विचार था कि अपनी उत्पत्ति के समय अर्थात् से बन्ना दल "राष्ट्र के विरुद्ध एक प्रकार का पशुत्व होता है। लेकिन राजनीतिक दलों के स्थान पर वह केवल कुछ ऐसे ऐच्छित संघों का ही सुझाव दे सका जो कि कुछ विचार हितों की सधिबुद्धि के लिए निमित्त हैं। लेकिन यह स्पष्ट कि है उसकी योजना उस आवश्यक संगठन को नहीं बनाए रख सकती जो कि सरकार के विरुद्ध आवश्यक होता है। निर्वाचक-मंडल को यह ज्ञान की आवश्यकता है कि उसका प्रयापी वैदेशिक नीति के बारे में क्या सोचता है और परीक्षण से यह स्पष्ट हो जाता है कि वैदेशिक नीति सबसे उसके विचार बाधित मामलों में कुछ दल तरह सबक रहते हैं कि वे एक विशेष जीवन-दर्शन और जीवन-रोति का निर्माण कर सकते ह।

वास्तविकता यह है कि आधुनिक राज्य में रक्तपत घातक का एकमात्र विरुद्ध अभिमायकवाद है। घातक को नवाजो की आवश्यकता होती है और नवाजो को अपने पीछे सर्वसंठित बौद्ध की नहीं प्रत्युत सुसंयतित अनुयायियों की आवश्यकता होती है। प्रतिनिधिक घातक ने लिए राजनीतिक दलों की अनिवायता बर्न के समय ही निश्चित हो गयी थी और उस समय के बाद से जब तक बर्न के उर्क का कोई उत्तर नहीं दिया जा सका है। रक्तपत घातक की अपूर्वताओं का कारण यही है कि इन एक अपूर्व सत्ता में रहते हैं। बूकि इन पूर्णतः नीतिक प्राणी नहीं हैं, इसीलिए राज नीति दूसरे वर्ग के लोगों का दर्शन है। बूकि दलों की हलचल के पीछे मनुष्य का सबसे घनिष्ठकारी हित उसका जन घर्तों पर जो अनुभव जसे ठीक बताये जीविका बनाने का हित छिपा हुआ है। इसलिए दल अपने जपन पक्ष की विजय के विरुद्ध प्रत्येक सम्भव उपाय का प्रयोग करने। राष्ट्रपति ब्रजेस्ट के विरुद्ध बानाकुनी चीन की गलामी की वर्य 'कैसर को फौसी दो' नारा ने ही विजय प्राप्त करने की गड़ग ही सीधी-सधी पद्धतिवाँ ह। लेकिन जब निर्वाचन के परिणाम काफी सुदूरभायी और महत्वपूर्ण हों तब ही राजनीतिक दल विजय प्राप्त करने के लिए जो न करें वही बोधा है। वह मान लेन पर कि मनुष्य एक कबहुमिय प्राणी है विचार कठिन होता है विशेषकर एक विषय समाज में विरोधी महत्वपूर्णताओं ईर्षा और नफा का

चार रत्ना हूँ हमके अतिरिक्त और भाषा ही क्या की जा सकती थी? बागिगन्त की एक रत्न के ऊपर दूसर रत्न की निरकुण्ठा' जिनसे 'बहुत्र विषट अमणितियों की उत्पन्न किया हूँ और जो 'स्वयं ही एक मयंकर निरकुण्ठा हूँ उस निरकुण्ठा से फिर भी अच्छी हूँ जो रत्न-पद्धति का पूर्णतया विनाश कर देती हूँ। एक का अधिक से अधिक मूल्य पर से हटाया जाता हूँ लेकिन हमारे का मूल्य जैसा कि हमन अपने समय में बना है समाहार-विधि, नेताओं की हत्या तथा शासन द्वारा संगठित हिंसा आदि हूँ।

हमारे घामका में विवेक-पद्धति का अभाव पाया जाता है। आक्सेलस्टर्न^१ का मोक्ष मानव इतिहास में सबसे ही बेजाने को मिलता हूँ। हम इस बुराई को जाती हूँ तब तक नहीं क सपठन द्वारा पूर कर सकते हूँ। लेकिन यह तभी संभव है जबकि हमारा एक क संघातकों की उत्पत्ति और न्यायनिष्ठा में विश्वास हो। लेकिन इन विषयनाओं की धर्म कठिन हूँ। जो ग्दस्त्र क अनुसार यह धर्म है कि राज्य के महान् एक सामयिक राजनीतिक मनभेना का मूलकर पारम्परिक विश्वास क मूल में बने रहें।

लेकिन ऐतिहासिक दृष्टि से यह 'पारम्परिक विश्वास' मईब इस तथ्य पर आधारित रहा हूँ कि राजनीतिक एक मूलाधारों के ऊपर एकमत हो। बर्से के अनुसार ये मूलाधार मॉस्ट तीर से प्राचीन परम्पराओं द्वारा निर्धारित होत हूँ और इन पर परम्पराओं का सबसे बड़ा भाग जनसाधारण की सम्मति विषयक पारंपार्य हूँ। मेरे कहने का भाव्य यही है कि अनुसार एक तथा अमिक यस के सम्मति विषयक दृष्टि दोनों को मिलता का बेजत हुए हमें यह मही मानूम कि एक पद्धति का अधिक्य क्या होमा। यहाँ हम एक ऐसे क्षेत्रमें प्रवेश करत हूँ जहाँ कि विवेक कोई विशेष काम नहीं करता। अविद्या कागो का मत है कि ऐसी स्थिति में जनबलत संघर्ष उठ सता होगा। इटली और जर्मनी में लोगों ने संघति विषयक विचार के बनने के पूर्व ही वैधानिक क्षेत्रण क मूल का स्पष्टि करता प्रारम्भ कर दिया था। जहाँ इन विषय पर विचार प्रारम्भ हुआ संघतियानो बर्ष आगकित हो उगा और उगत फ्रमिष्ण राज्य की स्थापना कर डायी। आमाचारियों का कहना है कि हमारी परम्पराएँ इतनी मिल है कि विवेका के अनुसर हमारी समस्याओं में कोई विशेष संघर्ष नहीं रखते। मैंत हम अर्थाय में उन क्यरकों का निर्देश कर दिया हूँ जिनके ककम्बरन इस आमा-चार का आधार विन्मुक्त चिपिल मानूम पड़ा है।

हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि एक क मताओं का अविधान चाहिए क सपसोने क लिए किन्त ही उत्पन्न हों विचार अधिक नहीं बनता। उन्हें अपने अनुभवियों का समझला पड़ता हूँ, वे उन्हें विषय नहीं कर सकते। बजहों क अनुसार कड यह होता हूँ कि एक का मता सामान्य विचारों का एक असामान्य व्यक्ति बन जाता है।

१ आक्सेलस्टर्न स्वीडन का एक महान् राजनीतिज्ञ था। उसका विचार था कि शासन बना एक अत्यन्त दुष्कर और हीन काम है।

उसके बल के मुख्य काल उसके समर्थक होते हैं : पील और बैलिगटन के सम्मिश्रित प्रभाव ने टोरीयो को रैडिकल कर्म में गुहार करने के लिए विवश कर दिया जासेनिम जब पील न जाने साख (Corn Laws) को रद्द करने की आवश्यकता स्वीकार की उसने अपने एक को भय कर दिया। इसी प्रकार धर्मेस्टन वा अद्वितीय स्पेन्सर तक १८७७-८ के उदारवादियों को आवश्यक होमरूल स्वीकार करने के लिए मजबूतता से तैयार नहीं कर सका था। इसका मुख्य उद्देश्य यह देना पड़ा कि बल के अन्दर फूट पड़ गई और उनके प्रायः विहाई साधियों ने उनका साथ छोड़ दिया। श्री रिमने मैकडोनाल्ड १९३१ के आर्थिक संकट में सम्पूर्ण आर्थिक नीति के स्वरूप में अपने मन्त्रि-परिषद् के साथ सहमत व कैबिनेट उसके बल के प्रवर्धन सम्मत से बिकारी के नेशन में बड़ा प्रतिघट कमी करने के प्रयत्न पर उनका साथ छोड़ दिया।

अधुने का सार यह है कि बल के नेता को अपने बल से इतना आगे बढ़ा हुआ नहीं होना चाहिए कि जब यह बल की सामान्य नीति में कुछ परिवर्तन करे, तो बल के सबसे उतका अनुगमन न कर सके। आज हमें जिस स्थिति का सामना करना पड़ रहा है उसमें अनुहार बल के नेता के सामने केवल दो ही विकल्प हैं और इन दोनों विकल्पों का एक दूसरे के साथ आनामनी से मेल नहीं हो सकता। एक ओर तो जैने अपने अनुयायियों से यह कह देना है कि आर्थिक बल का आर्थिक कार्यक्रम राष्ट्र के लिए बाधक होता है। यह भी कुछ ऐसा है कि उसके अनुयायी इसे अस्वीकार करते हैं। दूसरी ओर उसे उनसे यह कहना होगा कि यदि निर्वाचकों का बहुमत विनाश के कार्यक्रम को पसन्द करता है तो उन्हें उसकी स्वीकृति के लिए स्वयं को तैयार कर लेना चाहिए। चाहे जिस दृष्टि से देखा जाय यह बहुत कठिन कार्य है। यह कार्य विचारक से कठिन इसलिए है क्योंकि महाजन और व्यापारिकों आदि को प्रभावित करने की उसकी क्षमता काफी दूर तक मर्यादित है। ऐसे कितने अनुहारकारी महाजन हैं जो अंग्रेजी प्रतिभू को विरोधी प्रतिभू के रूप में बखला इसलिए अस्वीकार कर देने क्योंकि उनके नेता न समझे कहा है कि नव-निर्वाचित आर्थिक सरकार को उस सरकार को जिसके लिए वह निर्वाचकों को काम यह नेतावनी दे रहा था कि अपनी विषय का बर्ष राष्ट्र की सुरक्षा को संकट में डालना है काम करने का पूरा अवसर मिलना चाहिए।

जसा संकट अनुहार बल के सामने है, प्रायः यही आर्थिक बल के सामने भी उपस्थित है। जब बहुमत के विना उसकी सरकार बनी उसके अनुयायियों ने उसे पूर्वीवाह की सीमाओं के भीतर रखते हुए अनिष्कारपूर्वक विभाग बनाने की अनुमति दी। लेकिन यदि किसी आर्थिक प्रभाव मंत्री को बहुमत प्राप्त है तो उसे अपने सिद्धान्तों पर आवश्यक न करने की शक्त न मिल सकेगी। दूसरी मैकडोनाल्ड सरकार न इस प्रकार की विधिकता दिखा कर स्वतन्त्र आर्थिक बल में घूट पैदा कर दी थी और मेरा विचार है कि यदि इस प्रयोग की पुनरावृत्ति हुई तो आर्थिक बल ठगर से नीचे तक हिल जायगा तथा उसके अनिर्वाच्य सबस्य साम्यकारी हो जायेगा। इसके फलस्वरूप हमारे देश में बहुत मन्वीर संकट उत्पन्न हो जायगा। आर्थिक सरकार के विरोधी जिस सीमा तक संसद के भीतर और बाहर उसके कार्यक्रम में बाधा डालने का प्रयास

करते उगी सीमा तक बेरा के अन्दर समाव बढ़ना जामेगा । फलतः शान्ति ही पक्षों का अन्त्य बढ़ना और समाश्रितों की सम्भावना बटिज हो जामेगी ।

इस पद्धति की समस्याएं ऐसी हैं कि उनका सामना करने के लिए जिस कौशल की आवश्यकता है, वह मानव प्राणियों में बटिजना से ही उपलब्ध होता है । एक बार तो उनके लिए यह आवश्यक है कि अनुरार दल कुछ ऐसा दर्शन अपनाए—उसके गताश्रों को कहना चाहिए । यदि समाजकारियों को बहुमत मिल जाता है, तो वे देश का विनाश कर दें और हमसे आनका भी विनाश हो जामेगा । अतः हमें उनकी विजय को रोकने का सहायम्भव प्रयास करना चाहिए । लेकिन आपको याद रखना चाहिए कि यदि बहो से जीत आये ता हमें ऐसा कोई काय न करना चाहिए जिससे कि उन्हें अन्त कायक्रम पर पाठिपूर्वक आचरण करने में कोई बाधा पहुँचे । देश की पानि आपकी सपति से अधिक महत्त्वपूर्ण है । इतिहास संविधान का मूलभूत सिद्धान्त ही यह है कि उस प्रत्येक सरकार को जिसे शान्त-सुखा का समर्थन प्राप्त है और जिसके पीछे निर्वाचन की स्वीकृति हो अपने कार्यक्रम पर आचरण करने का अधिकार है ।”

मग निबदन है कि अनुरारकारी नेताका के लिए इस प्रकार की नीति अपनाता बढ़ कौशल की बात होगी । हो सकता है कि हमसे पूजावादी धामन के समर्थक यह मानने के लिए तय्यार हो जायें कि समाजवाद के परिणामा के सम्बन्ध में उनकी संकाएं चाहे कितनी ठीक क्यों न हों निर्वाचन में पराजित होत पर उन्हें अपनी नीति पर आचरण करने का अधिकार नहीं है । इसका परिणाम यह भी हो सकता है कि पूजावादी धामन के समर्थक यह मानने सम जामें कि इन प्रकार के पराजित का अन्त यह है कि उनके गताश्रों में पीपन का अभाव है क्योंकि यदि उन्हें यह दृष्ट विचार है कि समाजवाद की विजय का अर्थ राष्ट्रीय विनाश है तो उन्हें अपनी पराजय अनुचाव नहीं सहनी चाहिए ।

आपने हम इस स्थिति पर तनिक दूरसे पथ की दृष्टि से भी विचार करके देखें । क्या हम साधारण निर्वाचन में विजय के अन्तर पर अधिक प्रयास मंत्री को अपने अनुयायियों से यह कहना हुआ पा सकते हैं, “हमने अन्त में समाजवाद के लिए बहुमत प्राप्त कर लिया है । हमारा विचार समाजवादी राज्य की बुनियादें डालना है क्योंकि जमा कि हम राष्ट्रीय समय न करने जा रहे हैं, पूजावाद के अन्त हुए अन्त का और अधिक समय तक बनाए रखना अर्थमत्त है । अन्त बुनियादका हमारी विजय और अन्त परिणामो ने दूरसे पथ में ऐसा आशंक उत्पन्न कर दिया है जिससे यह अन्तहास्य हो गया है कि हम अन्त कार्यक्रम को पाठिपूर्व रीति में क्रियाम्बित कर सकें । हमें पानि को जो समाजवाद में अधिक महत्त्वपूर्ण है, अन्त में नहीं डालना चाहिए । इतिहास संविधान उस समय तक नहीं बन सकता जब तक कि अन्तमन्थक अन्त निर्वाचन के निर्णय को सिरोधार्य करने के लिए तय्यार न हो । अन्त है कि वह हमें सिरोधार्य करने के लिए तय्यार नहीं है । इसलिए मैं और मेरे साथी पानि के दिग्ग में उन नीतियों पर आचरण करना जिसके लिए हमने अन्त

दिया जा और बिलके लिए कॉमन-लावा में हमें आवश्यक समर्थन प्राप्त है उस समय तक के लिए स्वयंसेवक रहें जब तक कि यह स्पष्ट न हो जाय कि उनके आचरण से कोई संघर्ष उत्पन्न नहीं होगा।”

इस प्रकार का दृष्टिकोण शासन का नियम है। जो मता इस दृष्टिकोण की अप-माय्या वह एक दिन भी मता नहीं रह सकता। लेकिन यह संभव नहीं है। यदि इस बात का कोई भी व्यक्ति इस प्रकार का आचरण नहीं दे सकता। कम-से-कम वे लोग तो दे ही नहीं सकते जिसका यह विश्वास है कि समाजवाद का अर्थ विनाश है। दूसरी बात यह है कि यह भोवना करता कि वह इसी बातों पर आचरण करने जान-बूझ कर एक ऐसी स्थिति को उत्पन्न करता है जिसमें कि समाजवाद का प्रयोग अशक्य हो जाये। इसका अर्थ समाजीकरण की रोहने के लिए प्रत्येक उपाय को जिसे कि समा-पौष्ट्य करता है, ब्रॉस्टर जनन के लिए आभयानक देना है।

वास्तविकता यह है कि समाजवादी सोशलिस्टिक दल होने के नाते बिल एगमाव सम्भाव्य नीति को अपना सकते हैं वह सभी के बीच उस “पारस्परिक विश्वास” को मान लेता है जिसकी भी स्वीकार्यता न करनी की थी। जब तक यह है और कानून उन्हें समाजवादी विचारों के प्रचार के लिए अनुमति देता है उनका यह दायित्व है कि वे निर्वाचकों को उन सिद्धान्तों से अवगत कराएं, जिनको सत्ताबद्ध होने पर कार्यान्वित करने का उनका विचार है। उनके विरोधियों का एक मात्र अधिकार मतदाताओं को यह विश्वास दिखाना है कि वे समाजवादी सिद्धान्तों को स्वीकार न कर। लेकिन यदि कई वर्षों के प्रचार के बाद जिसमें कि समाजवादी विचारों के परिणामों का अच्छी तरह निरूपण कर दिया गया है समाजवाद की विजय हो और फिर उस पारस्परिक विश्वास को जिस पर हमारे संविधान का आचरण निर्भर है हटा लिया जाये तो हमारे संविधान में कोई भार नहीं रह जाता। इसका अभिप्राय तो यह हो गया कि केवल एक ही दल को संसदीय शासन के धर्मों की ध्याना करना अधिकार है। निश्चिततः यह ऐसा सिद्धान्त नहीं है जिसे कि दूसरा दल स्वीकार कर ही सके। यदि हमने इसे स्वीकार कर लिया तो यह ऐसा करने पर दब नहीं रह जायेगा।

मेरे ऊपर जो कुछ कहा है उसका सारांश यही है और इसे मैं पहले भी यह चुना है कि १९०९ के परभाव से इन समस्त आचारमूल मानकों में केवल एक दल नीतिक दल के द्वारा ही स्थापित होते हैं। यह ठीक है कि इस दल ने विश्वास के लिए स्वयं को दो पक्षों में बांट रखा है लेकिन अब तक उम्न सदैम यह रहा है कि इन दोनों ही पक्षों ने संसदीय शासन के धर्मों की एक ही ही व्याख्या की है। ये धर्म मोटे ढीरे पर यह कह कर बर्णित किये जा सकते हैं कि चाहे कोई भी सरकार सत्ताबद्ध हो उसे उत्पादन के साधनों के व्यक्तिगत स्वामित्व के भीतर रहते हुए, बहुत तक संभव ही निर्वाचकों की इच्छा को पूरा करने का प्रयास करना चाहिए। आगामी संसदीय निर्वाचन में निर्वाचक ही इस बात के निर्वाचक होते हैं कि उनकी इच्छा को कहीं तक और किस रीति से पूरा किया गया है। आगामी में अब कुछ

या कि हमारे पद्धति निर्वाचकों को देश का राजनीतिक प्रश्न बना देनी है उसका यही मर्मप्रामाण्य था। मनुष्यता निश्चित करता है कि किस ढंग को सरकार का निर्माण करना चाहिए। और जिस उद्देश्य से सरकार का निर्माण करना चाहिए। हमारे अधिकांश में ऐसे कोण स्पष्ट या समित मूल अधिकार नहीं हैं जिन्हें कि संसद् स्वेच्छा से बदल सकता है। इस संबंध में संसद् की शक्ति के ऊपर कोई राजनीति या वैधानिक प्रतिबन्ध नहीं है।

हमसे कहा जाता है कि ऐसा करने के लिए सरकार के पास निर्वाचकों का 'आदेश' होना चाहिए, जबकि उस समयपर्यन्त ज्यों की भावना का भाव नहीं पहुँचानी चाहिए जबकि उस अपनी सत्ता का प्रयोग उस बुद्धिमानी और विवेक से करना चाहिए जिनके ऊपर कि सफल शासन निर्भर होता है। इनमें से पहला ठरक हमारे से जरा भिन्न है और उग्र किञ्चित् परीक्षण की आवश्यकता है। भावनात्मक यह एक नया सिद्धान्त है और उसका प्रारम्भ राष्ट्रीय उदार संघ (National Liberal Federation) के १८९१ के स्थापक कार्यक्रम समाना जाता है। इसका सार यह है कि कोई भी सरकार क कान में संसद् के सामने एक कानून नहीं रखना जिनके लिए कि वह पहले से घोषणा न कर दे कि उसका यदि उमरे हो सके तो उन्हें कार्यान्वित करने का इच्छा है। स्पष्टतः भाग्य के इस सिद्धान्त पर कई प्रतिबन्ध लगे हुए हैं। चाहे कोण भी सरकार हो उग्र शासन-वाक्य में भावनात्मक भावनाओं का जड़ा होना स्वाभाविक है। उदाहरणार्थ देश के सम्मुख युद्ध का संकट उत्पन्न होने पर सरकार निर्वाचकों से सलाह लिये बिना ही कुछ न कुछ करने के लिए विवश है। पुनश्च, १९१६ में संसद् का जीवन को १९११ के संसद् अधिनियम द्वारा निर्वाचित धरति से अधिक समय के लिए बना दिया गया था। राष्ट्रीय सरकार के १९११ के 'बिल्टन मेमोरेण्ड' के बारे में भी यही कहा जा सकता है। उस बिल्टन पर यह प्रश्न कि क्या राष्ट्र शासन शासक का पद्धति को बदलाए, भविष्य के लिए धारु दिया गया था। निर्वाचन के कुछ बहाने परचाद अधि-संसद् की एक समिति ने जिसे अधि-संसद् के बहुमत का समर्थन प्राप्त था लेकिन जिसका लॉर्ड स्तोडेन और उनके कुछ उदार छापीना ने उस विरोध किया था यह निर्णय किया कि आयम शुल्क राष्ट्रीय है। इस निर्णय के लिए अधि-संसद् का कोई सामूहिक उत्तरदायित्व नहीं था। स्पष्टतः, ऐसा सिद्धान्त जिसको इतनी व्यापक व्याख्या हो सकती हो कोई सम्पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं है।

चाहे कुछ भी स्थिति हो आदेश का सिद्धान्त अधिक सरकार के ऊपर लागू नहीं होता क्योंकि घोषित वाक्यों का उसका कार्यक्रम तो पहले से ही देश के सामने है। यदि इस सिद्धान्त का यह अर्थ किया जाये कि सरकार को बिना बहुमत बहुमत के कम से कम सम्पत्ति के सम्बन्ध में आधारभूत परिवर्तन नहीं करने चाहिए, तो हम तीसरे प्रतिबन्ध पर आ जाते हैं। यह प्रतिबन्ध है सरकार को अपने बहुमत का प्रयोग 'बुद्धिमानी और विवेक' से करना चाहिए। स्पष्टतः, इनसे कुछ ऐसे प्रश्न उठ जाते होते हैं जिनका स्वल्प वैधानिक नहीं है। "संसद्" बहुमत क्या है? क्या ऐसे विभिन्न स्थानों या ढाँके गये मणों के अनुसार निर्वाचित किया जा सकता है? सरकार

तो वित्त वस्तु की ओर ध्यान देनी यह यह है कि उसे कॉमन-मार्ग में कामचलाऊ बहुत मत प्राप्त हो। उदाहरणार्थ १९२४ में अनुदारवाधियों को कुल ४० मत मिले थे, लेकिन कॉमन-मार्ग में जनता ६१५ में से ४१५ स्वामी पर अधिकार था। साधारण हड़ताल के पश्चात् अनुदार वल ने अपने बहुमत का प्रयास १९२७ के व्यापार-संबंध विधि-संशोधन-अधिनियम (Trade Union Law Amendment Act of 1927) को पास करने में किया था। भारत के विद्यमान के अनुसार उसे ऐसा करने का अधिकार नहीं था क्योंकि उस समय उप-निर्वाचनों के परिणाम १९२९ की धर्मिक विजय की मविष्यवाणी कर रहे थे। क्या यह "बुद्धिमानी और विवेक" के साथ बहुमत का प्रयोग था? १९३५ के लैबल कांड के ठीक भी वही विचार लागू होते हैं, और लैबल कैम्पेन में यह अभी प्राक में स्वीकार किया है कि १९३५ के साधारण निर्वाचन में उन्होंने बुद्धिमत्तापूर्वक के परिणाम के बारे में विचारा उन्होंने अपने मन में निश्चय कर लिया था निर्वाचकों को धोखा दिया था। क्या यह भी "बुद्धिमानी और विवेक" था?

सब तो यह है कि जब हम सरकार की किसी नीति का समर्थन करते हैं, तब समझते हैं कि उसने बुद्धिमानी और विवेक से काम किया है। जब तक सरकार अपना बहुमत बनाए रखती है तब तक जागामी साधारण निर्वाचनों में मतदाताओं के निर्णय के अतिरिक्त उसके कुर्या की बैठता को परखने की कोई वैधानिक नतीजा नहीं है। इस तर्क के विरुद्ध जो हो सकते हैं। या तो यह हो सकता है कि जब जनता सरकार की किसी नीति से घबरा घट हो जाये तो, वह उसके विरुद्ध बांबेबाही कर सकती है। लेकिन यह एक नैतिक प्रश्न है और एक-पक्षी की परम्पराओं से भेक नहीं जाता। या यह हो सकता है कि सम्राट् एक निर्णय बर्ष में सभितान ना अधिराजक है और यदि यह यह समझे कि सरकार को देश का विश्वास प्राप्त नहीं है तो वह उसे अपदस्त कर सकता है चाहे उसे कॉमन-मार्ग में बहुमत क्यों न प्राप्त हो। ये इन बुद्धिमत्ता के सिद्धांतों पर बाद में सम्भीरता से विचार करना। यहाँ ध्यान यह करना काफी होया कि ऐसी स्थिति में सम्राट् का निर्णय वैध नहीं होना और इस हस्तक्षेप के परिणामस्वरूप नेता जब राजनीतिक बाध-विगत छड़ पड़ा हो सकता है जो कि संभवतः राजतन्त्र को ही ले दूँगे।

यह तर्क कि सरकार को अल्पसंख्यक वर्ग की भावनाओं को धोखा नहीं पहुँचानी

पर निर्भर है कि उसके पास बाकों के मन में क्या है। यदि वे उसे रोपद्रव मान लें तो यह एक सत्य है कि समशील शासन की सम्मत् परम्पराएं छिन्न-भिन्न हो जायेंगी। लेकिन मरा विचार है कि किसी सरकार के लिए ऐसे विधान को पुरोस्थापित न करने का क्रिमिके लिए बहू बचन-बद्ध है और क्रिमिको पुरास्थापित करने का अधिकार पास क लिए उनमें विरोधी दल के रूप में क्यों एक न बन गया है। इस विचार पर कि इस स्थिति में हमारा दल दल-पद्धति के पारम्परिक विधान को स्थापित मानना नियम करना सम्भव नहीं है। इसका कारण तो यह हो गया कि यह बहुत ही बड़ा या न हो समाजवादी विरोधी दल को मदद सत्ताकृत बन रहने का अधिकार है। निरिच्छता, राजनीतिक लोकतंत्र में इस प्रकार का विचार वाञ्छनीय नहीं है।

निरिच्छता यह है कि यह विचार जीवित है और चूंकि यह विचार जीवित है, अतः मरा यह बचन मध्य प्रमाणित होता है कि हमारे मविधान के अधिसमय बुद्धि सम्पूर्ण है और उन्हें बनाय रचना काफ़ी कठिन है। दल-पद्धति की महान सफलता यह थी कि उसने इन्हें कुछ अपवादों को छोड़ कर बोलती पचास वर्षों तक जीवित रहन दिया। इसकी इस सफलता का कारण यह था कि क्रिमिको पर यह था उनमें अधिक रचना के प्रयत्नों का मूल्य विवेकन सम्मिलित नहीं था। अब परिस्थितियाँ ऐसी आ गई हैं कि इन प्रयत्नों को नहीं टाला जा सकता। परिस्थितिका ने हमें समाज की बुनियादों के सामने आ बड़ा दिया है और अब हम यह निर्णय कि उसका भावी स्वरूप क्या है नहीं टाल सकते। वे युग क्रिमिके ऐसे निर्णय किये जात ह करें तनाव के युग हुआ करते हैं। यह देखना सम्भव बड़ा रोचक होता कि क्या यह मानि जो दल-पद्धति ने हमें दी है उन अनुभवों के बाद भी बनी रहनी है क्रिमिका उसे आध्यामी पीढ़ी में निरिच्छता-मामता करना है।

लॉर्ड समा

(१)

प्रायः पिछले चालीस वर्षों से लॉर्ड-सभा को सुधारने के विचार ही प्रचलित होते रहे हैं। इससे सात होता है कि इसका हमारी वैधानिक पद्धति में कितना महत्वपूर्ण स्थान है एक बात ही इसके अस्तित्व मात्र से कितनी अतिरिक्त समस्याएँ उठ जाती हुई हैं। यह प्रायः सर्वत्र स्वीकार कर लिया गया है कि राजनीतिक जीवन में द्वितीय सदन के रूप में यह एक ऐसी अंतर्गत है जिसको कदापि उचित नहीं ठहराया जा सकता। सात ही पचास पीयरो का यह निकाय जिसके अस्तित्व सार्वभौमिक और लोगों को छोड़कर सामुदायिक है तथा जो अपने अतिरिक्त अन्य किसी के प्रति उत्तरदायी न हो किसी अतिरिक्त विभाग के अधिनियम को दो वर्षों तक रोके रखने की शक्ति रखता हो यह एक विचित्र बात है। यह भी उचित केवल इसलिए बना रहा है क्योंकि पिछली पीढ़ी के प्रत्येक संवर्ष में उसने अपने अपने के स्थान पर नुकसान अधिक पसंद किया है और जब तक राजनीतिक दल इन विचारों पर एकमत नहीं हो सके हैं तब तक लॉर्ड-सभा के सुधार किया जा सके।

लॉर्ड-सभा के स्वरूप को समझने के लिए उसकी वर्तमान विशेषताओं को समझना आवश्यक है। जब यह पुराने वर्ष में प्राचीन जमीनदारों के प्रतिनिधियों का जिम्मे हमारे समाज का नैतिक नेता समझा जाता है और जो अपने विशेषाधिकारों के बड़े में महान् सार्वजनिक सेवाएँ करते हैं एक छोटा-सा निकाय नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं कि संसद और स्टेशनरी जैसे कुछ परिवार अब भी ऐसे हैं जिन्होंने पिछली एक पीढ़ी के राष्ट्र के राजनीतिक जीवन में प्रचंडनीय और महत्वपूर्ण भाग लिया है। लेकिन लॉर्ड-सभा के प्राये सार्वभौमिक पीयरो पुराने हैं और हाल में बनाए गए संवर्षों में वे अधिकतर को केवल जन के कारण यह गौरव मिला है। अपने प्रधान मंत्रिक के साठ वर्षों में श्री एडिन्बर्ग ने १८ पीयरो का और श्री लामंड जार्ज ने १६ वर्षों में ११५ पीयरो का निर्माण किया। जिन लोगों को लॉर्ड-सभा का सदस्य बनाया जाता है, उनमें से अधिकतर व्यक्ति मोटरकाठों के व्यापारी समाचारों-पत्रों के स्वामी जसोपति व्यवसायी बेकर्स वगैरह राजनेता जनकाय प्राप्त सैनिक और नाविक प्रसिद्ध वैज्ञानिक विनिष्पक विभिन्न सर्वेक्षक और राजदूत ही मुख्य रूप से होते हैं। यह ऐसा निकाय हो गया है जिसमें जन व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता है जिनका पक्ष या जन इतना अधिक हो कि इनको माइस्ट्रुज की उपाधि प्रदान करना अपर्याप्त माक्रम पड़ता ही।

श्री रैमजे म्योर के सन्धों में लॉर्ड-सभा "जन वा सामाय पक्ष" भी बन गई है। पत्रिक कर्मियों के निर्देशकों को काम-रक्षा की अपेक्षा लॉर्ड-सभा में अधिक स्थान प्राप्त है।

इंग्लैंड में पहले साइ-समा की सदस्यता प्रदान करते समय उद्योगपतियों को भावर की दृष्टि से नहीं देखा जाता था। लेकिन १८७ और नियंत्रक १९ ने पश्चात् यह भावना बड़ी तेजी से समाप्त हो गई है। अब देश में एसा कोई बड़ा राष्ट्रीय उद्योग नहीं है जिसके पूंजीवादी मालिकों को साइ-समा में उचित प्रतिनिधित्व प्राप्त न हो। उन्हें मजिस्ट्रेट में भी प्रतिनिधित्व प्राप्त है क्योंकि कानून के अनुसार यह आवश्यक है कि राज्य के दो मंत्री उच्च सदन के सदस्य हों और १९८८ की शक्ति के पश्चात् यह एक अद्वैत परम्परा रही है कि साइ-समा को पीमरेज प्रदान को आम। साइ-समा के समय से कोई भी प्रदान मंत्री अपनी पदाधिक में साइ-समा का सदस्य नहीं रहा है और जार्ज पंचम का साइ-समा के स्थान पर श्री ब्रिटीश को प्रदान मंत्री-सद के नियम इस आधार पर चुनना (कहते हैं कि उन्होंने यह चुनाच समस्त जीवन मूल्य प्रदान मंत्रियों के परामर्श पर किया था) कि यह विगत आवश्यक है कि प्रदान-मंत्रियों का मत समा का सदस्य हो यह स्पष्ट कर देता है कि वह मंत्रियों में उच्च सदन के सदस्यों में से कभी नहीं चुना जायगा।

अथवा साइ-समा की सदस्य-संख्या तो ७५ है लेकिन वह स्पष्टता में विन्तु क मित्त निकाल है। उसकी सामान्य उपस्थिति-संख्या १५ है और १९१९ के पश्चात् से ऐसे केवल १५ अवसर ही उपस्थित हुए हैं जब कि किसी बाद-विवाद में २ से अधिक सदस्य मौजूद रहे हों। इसी अर्थ में मत-विभाजन के अवसरों पर साइ-समा की सदस्य संख्या १ से कम रही है और उन पीमरों की संख्या जो वय में जीसतण एक बार से अधिक मापन देने हैं ९८ है। सदन के प्रायः आध सदस्यों ने कभी मापन ही नहीं दिया है और (अवस्था को छोड़कर) १ से अधिक पीमर ऐसे हैं जिन्होंने कभी तक सदन प्रहय न करने के कारण उसकी कार्यवाहियों में कोई भाग नहीं लिया है। हम सामान्य पुस्तकों से यह नहीं जान पाते कि इन सदस्यों का किस दल से संबंध है। लेकिन एसा मान्य पड़ता है कि बाह्य पीमर तो अधिकांश दल के हैं प्रायः बस्ती उदार दल की दो शाखाओं के हैं लीग या चार श्री रैमजे मैकडाल्ड के राष्ट्रीय अधिकांश दल के हैं तथा सप की या तो कोई राजनीतिक निष्ठा नहीं है या वे अनुदार दल के सदस्य हैं। मैं यह पता लगान में समर्थ हुआ हूँ कि प्रायः चार सौ सदस्य ऐसे हैं जो स्वयं को अनुदारवादी घोषित करते हैं।

इसके अतिरिक्त सामान्य प्रयोजनों के लिये साइ-समा की सदस्य-संख्या पचास से भी कम रहती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस छोटी सदस्य-संख्या का कारण शांतिपूर्वक कार्यों में यह बड़ी गुणवत्ता सिद्ध होती है। इसके प्रमुख बाद-विवादों का संचालन अनुभवी और व्योक्त राजनता करते हैं। इन बाद-विवादों में कभी कभी कुछ प्रतिनिधि बर्माबिकारी और प्रसिद्ध सा-साइ (Law Lords) भी योग देते रहे हैं। यह आचम से पीरे श्रीरेकाम करल वाला सदन है। कामन-लॉ इस के पास जो विषयक मन्त्री है उनका यह फलमत से निष्पत्तापूर्वक परीक्षण कर सनता है। यह उन बड़े सांख्यिक प्रश्नों को भी निष्कृ कि उत्पत्ती सरकार विभाग के लिये उचित नहीं समझती उठा सनता है। इस दृष्टि से यह एक ऐसे सदन का काम करता है जिसके द्वारा अधिमत का निर्माण किया जा सनता है। उदाहरणार्थ महापुरुष के बीच में बाह्य मत या साइ-समा की बह कभी कोई मापन देते

वे तो उससे कमता को बड़ा उल्टाह मिलाता था। इसके अतिरिक्त सार्ड-सभा म्यकिनवट विधेयकों (Private Bills) के परीक्षण में प्रथमनीय कार्य करती है।

यदि किसी लोकसभायक राज्य में द्वितीय सदन की आवश्यकता हो तो साड-सभा जब कि अनुसार बिल सत्ताक है शायद सवार का मर्याप्ट द्वितीय सदन है। उसके बाद विचारों का स्तर ऊंचा होता है उसे ऐसे किसी उच्चन्यायक प्रश्नों पर विचार नहीं करना पड़ता जिसका उद्देश्य विचारकों को प्रभावित करना हो। उसके पास ऐसे समस्त प्रश्नों पर विचार करने का समय रहता है जिनके लिये पम्पीर विमल की आवश्यकता होती है और जिन पर विचार करने का अत्यधिक व्यस्त कामन-सभा के पास समय नहीं होता। सार्ड-सभा वास्तविक समस्याओं को उच्च राजनीतिक बाह-विचारों के जम्ही जलों में धरवा करती है जबकि कोई प्रगतिशील सरकार सत्ताक हो। एमे ही अवसरों पर "बन के सामान्य बह" के रूप में उसका स्वल्प स्पष्ट रूप से सामने आता है। यह अनुवार बल की सचिब शक्ति बन जाती है और जहा तक उमका बन बसता है यह निर्वाचन में प्रगतिशील बल की विजय के परिणामों को दुस्त करन की चेष्टा करती है। १९११ के संसदीय अधिनियम ने उसकी इस शक्ति के ऊपर जो प्रतिबन्ध लगा दिया है उसने बाबजूब भी उसका प्रभाव बना हुआ है। अब यह किसी विधेयक की अस्वीकृत नहीं कर सकती और अब किसी विधेयक की आगुनी परिमाया यह है कि जिस विधेयक को कामन-सभा का स्वीकर किसी विधेयक कह दे बड़ी किसी विधेयक है। लेकिन यह अब विधेयकों को ससोधित या अस्वीकृत कर सकती है और वे सविधि-युक्तक तक सभी पक्ष सचते हे जबकि सरकार उन्हें कम से कम दो बर्षों के भीतर तीन पक्ष सभों में पास कर दे।

यह सही है कि संसदीय अधिनियम ने राज्य में सार्ड-सभा की स्थिति को निश्चितता प्रीभा कर दिया है। अब यह किसी मामलों में कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकती और दूसरे मामलों में जब तक तत्कालीन सरकार के पास बहुमत है और उस विधान को जिस पर साड-सभा कार्य करते हैं पास करने का संकल्प है सार्ड-सभा केवल ससोधन या विमल करन की ही चेष्टा कर सकती है। लेकिन सामाजिक कारणों के लिये यह जेही ऊपर देखन में मामुम पड़ती है उससे कही अधिक बड़ी शक्ति है। पहली बात तो यह है कि साडें अस्वीकृत की अपनी शक्ति का वह विधेयक से प्रयोग करते हैं। जब अनुवार बल की सरकार सत्ताक होती है तब तो वे उसका प्रयोग नहीं करते लेकिन जब उधार बल या शक्ति बल की सरकार बनती है तब वे उसका प्रयोग करते हैं। दूसरे हमका अभिप्राय यह हुआ कि सार्ड अपनी इच्छा से समाजवादी सरकार ने विधान को दो बर्षों तक तो रोके ही उस धरने है और वे इस तरह कामन-सभा का बहुत सा समय उस विधान पर केवल इस कारण गप्ट कर सकते हैं कि उससे उन्हें कुछ हय है। साड संसदासन के अनुवार यह स्पष्ट कि यह अपनी शक्ति का प्रयोग करते समय बिना के संशय आचार को कुल में धरन रहती है स्थिति को और बिया देता है क्योंकि इसका अभिप्राय यह है कि साड-सभा अपने ऐसे विधेयक उन समय केवल आगामी साधारण निर्वाचन के ऊपर पड़नपाय सामान्य परिणाम का ही विचार करती है। पुनःपुनः जने सरकार अपनी

पदाधिकार के अन्तिम वर्षों में पदार्पण करनी है। विलम्ब करने की सक्ति का अब अतिरिक्त काल के लिये स्वीकृत करने की सक्ति हो जाना है। उदाहरण के लिये गान्धीजी कि कामत-सभा न अपना चौथे वर्ष में मध्य-राज्य के राष्ट्रीयकरण के लिए एक कानून पास किया और बिने साइ-सभा न अस्वीकार कर दिया। यदि आत्माभी सामान्य निर्वाचनों में सरकार पराजित हो गई तो उसका अर्थ यह होगा कि विधायक दो वर्षों के लिये स्वीकृत नहीं होगा। प्रत्युत उस समय तक के लिये स्वीकृत हो जायगा जब तक कि अधिक दल को बुझाया अपनी सरकार बनाने का अवसर न मिले। विलम्ब करने की सक्ति इसलिये और भी महत्वपूर्ण है क्योंकि उसका प्रयोग ऐसे महत्वपूर्ण अवसर पर हो सकता है जब कि वह सरकार, जिसकी लॉर्ड-सभा विरोधी हो आपात-सन्धि पास चाहती हो। ऐसी स्थिति में पीयर के पुच्छर के दो परिणाम होते हैं। या तो सरकार को द्वितीय सत्र में विरोधी दल को पराजित करने के लिये अथवा समाजवादी पीयरों का निर्वाचन करना पड़ता है या यदि कहीं सभा ने उसके पीयरों के बनाने का अधिकार को अस्वीकार कर दिया तो वह सभा का काम-समाप्त करने का परामर्श देती है।

यह कहा जाता है कि विलम्ब करने की सक्ति इसलिये ठीक है क्योंकि यहान् परिवर्तन उस समय तक नहीं करन चाहिये जब तक यह निश्चित न हो जाय कि देश उन्हें मजबूत चाहता है। लॉर्ड-सभा इस बात का आश्वासन देती है कि निर्वाचकों को बहुत इच्छा की ही विधान का रूप दिया जायगा। लेकिन इस सम्बन्ध में दो बातें कही जा सकती हैं। पहली बात तो यह है कि लॉर्ड-सभा यह आश्वासन उस समय देती है जब कि अनुदार दल सत्तात्क न हो। जब अनुदार दल की सरकार होगी वह बड़ बड़े परिवर्तन बिना किसी विलम्ब के कर लेने देती है। दूसरे, कोई भी व्यक्ति द्वितीय विधान के गत ही वर्षों के इतिहास को देखकर यह नहीं कह सकता कि महान परिवर्तन बड़ी अन्धी में किये गये हैं। राजनीतिक समाधिचार को विस्तृत करने की प्रक्रिया १८३२ से १९२८ तक चलती रही। राष्ट्रीय प्रारम्भिक शिक्षा की स्थापना से १८१३ से १८७७ तक का मजबूत मजबूत। इसी प्रकार राष्ट्रीय साम्यिक शिक्षा की स्थापना का कार्य १९२८ में प्रारम्भ हुआ था वह १९०२ और १९३६ में चला और अभी अधूरा है। आयरलैंड के प्रोपर्टी का प्रश्न पर १८६१ से १८८६ तक समय समय पर बराबर वाद विवाद होता रहा उस समय तथा बुझाया १८९३ में एक विधायक का रूप दिया गया अन्धरे बालूना की एक पूरी माफा के पदना प्रोपर्टी विधायक १९१२ में पुनः प्रारम्भित किया गया और वह १९१४ के मजबूत अधिनियम के अन्तर्गत परिवर्तित करने का प्रश्न। तत्पश्चात् दो अन्धरे का प्रश्न प्रोपर्टी प्रश्न पास (Priestly Vs Fowler) के द्वारा १८३७ में उद्योग या कर्मिण वह उन कानूनी विधान के रूप में १८८६ तक स्थापित हो चुका था। विवाद-विच्छेद विधायक के सुधार पर मजबूत देन के लिये जब एक राष्ट्रीय आयोप का नियुक्ति हुई तो हमने एक सम्पूर्ण आन्दोलन चलाया था। इस आयोप ने १९१० में निर्वाचन की निर्वाचन मंत्री मिश्रिका का निर्वाचन को १९३७ में ही वास्तुतः रूप दिया था तथा। स्वयं संसदीय अधिनियम को प्रस्तावना में यह कहा गया है कि लॉर्ड-सभा का सुधार

का प्रश्न एक ऐसा आवश्यक प्रश्न है जिस और अधिक समय तक नहीं टालना चाहिये। यद्यपि संसदीय अधिनियम को पास हुए बीसार्ध सप्ताहों बीन तक ही है किन्तु इन सब में कोई भी विषयक अधिनियम तक नहीं पहुँच सका है। बीसगन हमारे देश में राजकीय आयोग के सर्वोच्च प्रतिवेदन की विचारियों को कानूनी रूप धारण करने में उद्योग वर्ष सत्र आठ है और यदि आयोग को राज बटी रहती है तो बीसगन इनको कुछ शिक्षा रिखा को कानूनी रूप धारण करने में प्रायः तीन वर्ष कम जाते हैं। यदि हम यथिक सरकार के १९१८ के प्रविष्ट कार्यक्रम को बहु दिवि मान जबकि उनसे समाजवाद के प्रश्न को स्पष्ट रूप से निर्वाचका के सामने रखा जा सम समय से सब तक बीन वर्ष से अधिक व्यतीत हो चके है जबकि उसक शिक्षाओं को कानूनी रूप देने की गमावता रिखाई देती है। इन उपाहरणों में प्रथम में तथा एक सत्ताधिक उपाहरण और विषय का उल्लेख है में नहीं समझना कि यह बात सम्पीरतापूर्वक कहो जा सकती है कि इस देश में राजनीतिक सम विना काही साध-विचार के ही सब बह परिवर्तनों के लिये उत्साह हो जाये है।

सम्मत यह तक कि लार्डे-समा का जस्वबाजी को रोखने का काम माझनीय है दो बारको से निस्तार प्रतीत होता है। यह हमलिय निस्तार प्रतीत होता है क्योंकि निवारण केवल एक ही दल के लिय प्रयुक्त होता है। दूसरे इन स्थिति में "जस्वबाजी" के तर्क का वास्तविक अधिप्राय यह है कि लार्डे-समा किसी विषय कानून को अस्वीकृत करके कौमन्-समा में अनुधार इस की सहायता करती है जिससे कि बहु प्रवृत्तित सरकार के काम में अपन हकमत-विरोधी भाव से अधिक धोरण इन से बाधा डाल सकती है। कौमन्-समा में वा यह दमपत विरोध ठीक है क्योंकि अनुधार सबस्य निर्वाचको के द्वारा बहा हसीकिन्तु मज पए है। लार्डे-समा में इस प्रकार का विरोध ठीक नहीं है क्योंकि उतना साधार यह है कि अनुधार सब सब ही उत विभाग को उठा सकता है जिस कि बहु अपन विरोधियों को अधिनियमित करने की जनमति है। लार्डे-समा के कार्यों के मूल में "आदेश" का कोई भी विद्यता निहित नहीं है। १९११ के संसदीय अधिनियम की आवश्यकता को अभी हाल के एक साधारण निर्वाचन में अधिपुष्ट क्रिया का लेविन लार्डे इसे पास करने के लिये बड़ी कठिनाता से नए पीयरो के लुबन की समकी के बाध, उठी हुए है। १९२७ के धर्मिक सम अधिनियम अधिनियम के लिये अस्विकार सरकार के पास जनता का कार्य आदेश नहीं था अधिक दल में उसका धोर विरोध क्रिया का लेविन लार्डे-समा में ऐसे विषयक में जिसे कौमन्-समा के बाध-विचार में दुर्बल-दुर्बल कर दिया गया था अस्विकारी की कोई शक्त नहीं देखी और उसे विना कठिनाता के पास कर दिया। स्पष्ट है कि विलम्ब करने की यह धर्मिक, जो केवल एक विद्या के विभाग के विषय ही प्रतिबन्ध के रूप में प्रयुक्त होती है धर्मिक सरकार को अधिनियम में इतनी ही असह्य शिक्ष होयी जिसकी कि बहु १९६ और १९१४ के बीच उधार सरकार को बहदा सामुम पड़ी थी।

(२)

वास्तविकता यह है कि अब इस स्थिति को स्वीकार कर लिया गया है और कोई भी व्यक्ति उच्च सदन के कर्तमान सपटन का समर्थन नहीं करता। काम वर्ष या तो कोई

द्वितीय मदन नहीं चाहता और यदि चाहता है तो वह द्वितीय मदन लार्ड के द्वितीय मदन की तरह सीमितम अर्थात् बहुरूपनेवाला निवाय-मात्र हाता चाहिए। दक्षिण-पश्चिम एक वास्तविक द्वितीय मदन एमा पुनर्मांडित द्वितीय मदन चाहता है किमंत पाम कि दक्षिण पार्श्व के सम्प्रदायों को यदि उनकी बन्नी सरकार बन ता विकल्प करन की आवश्यक भक्ति हा। लॉर्ड-सम्मिबरी न १९३० में लार्ड-सभा के मुद्दा के जो मुद्दा लिख व उनमें उल्लेख इस बात को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया था। उनका कहना था कि इस पाल का मतारा है कि एक दिन समाजवादी सरकार बन वे समाजवाद को मान्य समझने प हमकिय उनकी इच्छा थी कि द्वितीय मदन का इतना पक्षितालो होना चाहिए कि वह समाजवाद के आगमन को जिनत अधिक समय तक हो रोक सक।

उसके मुद्दाके स्वीकार नहीं हुए। इस समय इन इस बात पर एकमत है कि लॉर्ड सभा की रचना और शक्तिवा के सम्बन्ध में जो भी मुद्दा हो, उसे सामान्य स्वीकृति मिलनी चाहिए। इस प्रकार के मुद्दाके जब तक नहीं आ सक है लेकिन लार्ड सेन्सिबरी के मुद्दाके के पीछ क्या उद्देश्य है उनह समयत के सिद्ध इन मुद्दाको के सिद्धान्त का मयझता उचित होना। लॉर्ड सेन्सिबरी न करीब तीन सौ मद्रमों के एक मदन की बन्दना को थी। इनमें से आध मद्रम्य तो बानुबन्धिक पीपरो द्वारा बाह्य रूपों के सिद्ध निर्वाचित होना चाहिये और बाध बाध मद्रम्य इनी अधिक के सिद्ध सरकार द्वारा मनोनीत होना चाहिये। मदन की शक्तिवा मयापूर्व रखनी चाहिये। हा उनमें इतना मन्तर आवश्यक ही कि वित्तीय विवरण की परिभाषा स्वीकर के इतना में न रह प्रत्युत उसको अध्ययन में स्थायित रानों करनो की एव संयुक्त समिति के हाथों में रहे। आगत में बानुबन्धिक निर्वाचको की शक्ति का रोदन के सिद्ध सम्राट का परमाधिकार इस प्रकार मर्यादित होना चाहिये कि एक वय में बाह्य में अधिक पीपर न बनाय जा सकें तथा मन्त्रीय अधिकारियम के उपबन्ध नए द्वितीय मदन के ऊपर लागू न हो। यह मुद्दाक लमी संभव हो सकता था जबकि लॉर्ड-सभा इस पर स्वय महमन हो।

स्पष्ट है कि यदि इन योजना के अनुसार लार्ड-सभा का मद्रप्रथम संघटक अनुहार बन को सरकार द्वारा हा तो उसमें अनुहार मद्रम्य का प्रबन्ध बहुमत रहेगा। अधिक-से-अधिक बानुबन्धिक तरह द्वारा निर्वाचित केवल बाह्य पीपर ही अधिक दल के मद्रम्य होना। इन अनुमत का ठीक करन का इन के निवाय अन्य कोई उपाय नहा हो संभव कि प्राय सभी मन्त्रीय मद्रम्य अधिक दल का प्रतिनिधित्व करने हो। पीपर बनने के सम्राट के अधिकार को सीमित करन का सर्व सामान्यत यह होगा कि प्राय एक पीप्री के बाध बानुबन्धिक निर्वाचको का बहुमत अधिक दल में मद्रानुमति मद्रम्यता हो मकेवा (इसका अभिप्राय यह है कि उस पीप्री में अधिक दल निर्वाचक मद्रम्य बना रहे) लेकिन इसके साथ यह भी आवश्यक पाने चुनी हुई है कि अधिक सम्राट द्वारा बनाय नए मद्रम्य पीप्री के कुछ भी अपन पिताओं की विचारवाता को स्वीकार करे। इन योजना का एक उपबन्ध यह है कि वित्तीय विवरण की परिभाषा स्वीकर जब एक सम्य व्यक्ति के हाथों में न रखकर विमुक्त रक्षण आचारो पर चुनी गई एक एमी मद्रिने के हाथों में रखनी जाये जिसमें अनुहार दल का बहुमत आवश्यकताओं हो।

वह स्वामाधिक ही है कि इन मुताबाकों अस्वीकृत कर दिया गया। इनका अनुधार बल की ओर से स्वयं लाई-समा के अपन साधियों न ही कट्टर विरोध किया जा। उनका उद्देश्य स्पष्ट रूप से अनुधार बल का पराजय उपार्थों द्वारा सर्वैय सत्ताम्बु रचना था। अनुधार बल लाई-समा के मुबार की जा भी योजनायें उरस्थित करता है। उनका उद्देश्य यही है। यदि लाई-समा के समस्त सदस्य मनोनीत हू। जीवन भर के लिये या कुछ वर्षों के लिये तो निश्चिततः वह या कम से कम उसका बहुमत अनुधारबलीय होया। अबकासप्राप्त धनिकों और भाविकों नृतपूब सिविल सर्वेंट्स राजभूतों और प्रयासको ब्रिटिश उद्योग-संघ के अग्र्यसो और ब्रिटिश मक़ारमी तथा रॉयल मासायनी क अग्र्यसो के बारे में यह मही कहा जा सकता कि वे समाजवादी विचारों के होंग। यह ठीक है कि वह कुछ धमिक संघ के अधिकाधिक नृतपूबे धमिक मन्वियों और राष्ट्रीय कार्यकारिणी के अधिकाः क्पातिप्राप्त सदस्यों को भी लाई-समा या सक्षम मनोनीत करन के लिय रँवार हीं जाय लेकिन मनोनयन को यह बबामना उसके सदस्यों को अरिज मीमा तक सन्न नहीं हावी।

इसो प्रकार सिविल ब्रिटिश सदन भी जा नुज तो निर्बाचित हो और कुछ मनोनीत अधिकाः सन्तोषप्रद नहीं है। इसका फिर यह फल होगा कि अनुधार बल नदब बहुमत म बना रहेया। यह भी संभव है कि इस स्थिति में पीपर यह आग्रह करें कि सदन के कुछ सदस्यों का आनुबन्धिक पीपरों द्वारा चुना जाना आवश्यक है। यह निश्चित है कि धमिक बल इन सिद्धांतों को अस्वीकृत कर देया और जेंसा कि उसके कार्यक्रम से प्रकट होता है वह बिलम्ब के ऐसे किसी सिद्धांत को मानन के लिय प्रस्तुत नहीं होना जो जश्च सदन को लोक-सदन की सत्ता के ऊपर दो वर्ष का निवन्धन है। समाजवादी बल इस प्रकार के प्रत्येक सुझाव का या उसके ऐसे क्पासठों का जितन परोक्ष निर्बाचित का उन्म अस्तर्घस्त हो बंटकर विरोध करेया।

यही बात निर्बाचित त्रितीय सदन के सम्बन्ध में बाहे वह प्रादेशिक आचार पर और बाहे क्पावसायिक आचार पर निर्बाचित हो कही जा सता है। पहले सिद्धांत में अतक कठिनाइयां हैं। निर्बाचन-अथा क क्षमक की कठिनाई है। उम ठिथि की कठिनाई है जिसपर कि सदन को चुना जाय इस बात की कठिनाई है कि सदन को सावधीम मताधिकार द्वारा चुना जाय या नहीं फिर सदन की सक्तिबां क्या हों विषयक विद के क्षेत्र में यह निर्णय करने की कठिनाई है। आरकन के क्षमस्त राज्यों में बाही कि दो निर्बाचित सदन हैं यह सर्वैय देखा गया है कि वास्तविक शक्ति एक सदन के हाथों में जा जाती है। अमरीका में सीनेट शक्तिशाली है और फ्रांस में सेन्वर आफ डिप्टीज। और, संवीय राज्य को छोडकर, सय राज्यों के द्विलोय सदन में उस समय तक कोई विषयजा नहीं पहुँची जब तक कि उनके निर्बाचन-अथ और उनके निर्बाचन को ठिथि पहले सदन म विषय न हो। लेकिन उनको विश रचन म सतरा यह है कि दोनों निकार्यों में कमी न कमी सर्वैय अक्षयम्भावी हो जाता है। इस सर्वैय के परिणामस्वरुप वैधानिक परिवर्तन की आवश्यकता सठ कबी होती है क्योंकि जब दोनों सदनो का निर्माण निर्बाचन के आधार पर होता है तब इस प्रसल का कि सत्तराताओं की वास्तविक इच्छा कहा है निर्णय

नहीं हो पाता ।

इस प्रयोजन के लिए व्यावसायिक प्रतिनिधित्व भी सन्तोषजनक नहीं है । इस स्वरूप पर यह प्रश्न कठिनाई उठ सकती होगी है कि भ्रम और धूर्तों को किन अनुपातों में प्रतिनिधित्व प्राप्त हो । इसके पश्चात् यह विकट और म समझना है कि असम्भवमाय कठिनाई है कि प्रतिनिधित्व के एककों की सीमा-रेखा कहा खोबी जाय । यह प्रश्न जर्मन बाणिक परिषद् जैसी विपुल परामर्शीय सत्त्वा तक में भ्रम उठ चुका था । किन्तु, स्थितियों को भी कठिनाई है । यदि उनको व्यवसाय के आधार पर, उनकी संस्था के अनुपात में प्रतिनिधित्व दिया जाय तो यह निश्चित है कि विवाहित गृहपत्नियों का व्यवसाय सबसे अधिक बहुमुखी और उत्तरदायी है । यदि उन्हें उनकी संस्था के अनुपात में प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाता तो एसा अन्य कार्य मित्रात समझ में नहीं आता जिसके आधार पर कि उनके प्रतिनिधित्व का विचार निश्चित किया जा सके । पुनरुक्त यह भी एक बुरा प्रश्न है कि विधित्वा जैसे व्यवसाय का विधान-समा के प्रयोजन से क्या उचित सम्बन्ध है । मुख्य बाणिक या गणना के गणनाकरण या विशेष नीति के बारे में विधित्वाक दृष्टिकोण जैसी कोई कल्पना नहीं है । यदि वास्तव में किसी प्रणाली को इन विषयों पर उनके विचारों के कारण मत दिया तो वे वास्तव के रूप में बिल्कुल मत नहीं दे रहे होंगे और यदि उन्होंने अपने में बहुत व्यक्तियों को अपने व्यावसायिक हितों के कारण मत दिया तो वे व्यक्ति उनके नाम में विधित्वा-समा से बाहर के विषयों पर दोस्तों के अधिकारी नहीं होंगे । अतः यह है कि व्यावसायिक प्रतिनिधित्व के सिद्धांत और संव्यक्तिसम्बन्ध विधान समा में कोई सम्बन्ध नहीं है । यदि इस प्रकार के निर्वाचित निष्काय के काय परामर्श देने तक सीमित हो तो भी उनमें कोई सम्बन्ध नहीं मानना पड़ता । यही कारण है कि जर्मन बाणिक परिषद् एक साधारण निष्काय के रूप में क्या इतनी धर्ष मित्र हुई और क्या उनकी कुछ उप-समितियों में उसके विशेषज्ञ इतना मूल्यवान् परामर्श देने में समर्थ हुए । क्योंकि जब वहाँ विचार के लिये उनके पास जो विषय मने जाते थे उनके बारे में उन्हें विशेष ज्ञान रहता था ।

इस प्रकार साई-समा के मुद्दारे के लिये एसा कोई अनुदारदर्शीय सिद्धांत नहीं है जिस कि अधिक दल स्वीकार कर लेगा । इसी प्रकार यह भी स्पष्ट है कि साई-समा के मुद्दारे के लिये अधिक दल के किसी मुद्दारे को अनुदारवाधियों का कोई समर्थन नहीं मिलेगा । अधिक दल की उपचारिक नीति जब भी एम्बरनात्माक धासन के पक्ष में है और यह मानने का कारण है कि इस नीति को पर्याप्त समर्थन प्राप्त है । कुछ सर्वज्ञ का यह पुराना विचार कि यदि द्वितीय सदन पहले सदन से सहमत है तो वह धर्ष है और यदि वह उसमें असहमत है तो त्याग्य है अब भी बहूना को ठीक मानना पड़ता है । समर्थीय धासन के मुद्दारे अनुभव में इस विचार को और भ्रमण कर दिया है । हमने प्रकट कर दिया है कि द्वितीय सदन या तो प्रथमिक सरकार के विरुद्ध प्रतिक्रिया का एक धासन हो जाता है या वह उक्त समय जबकि सामाजिक समस्याओं के बीच समाधान की आवश्यकता हो परिबलन की गति को भीमो कर देता है । अधिक दल इस विचार से प्रभावित नहीं हुआ है कि यदि अधिकतर राज्यों में द्वितीय सदन है अतः उसके अस्तित्व

को राजनीतिक अनुभव का एक स्वतः सिद्ध प्रमाण माना जा सकता है। उसके बहुत से सदस्यों ने इस निर्णय को स्वीकार नहीं किया है और बताया है कि तृतीय चरण के पास में बेचम परस्मिन् मॉन्टोरसेट तथा बकरलन जैसे उद्भट विचारक हैं।

लेकिन मुझे के परचात् से इस समस्या पर सद्भावितक दृष्टि से विचार नहीं हुआ है। यदि इस समस्या पर विचार हुआ तो यह सम्भव है कि व्यक्ति एक छोटे से कुलपत्रवाक सदन का विचार इस धर्म पर स्वीकार कर लेगा कि उसके पास कामन सभा द्वारा स्वीकृत विधान के अधिनियम में विद्यमान करने की कोई शक्ति न रहे। नए विधान की सदस्य सभा ही होगी और इन सदस्यों को प्रत्येक नव-निर्वाचित कामन सभा अपने मनबारी दलों की सदस्य-सभा के अनुपात से उनके द्वारा तयार की हुई सूचियों में से चलेगी। इस सदन की रचना कामन-सभा की रचना के समान ही होगी और उसके सदस्य कामन-सभा के प्रत्येक सभासदों के परचात् नए सिरे से निर्वाचित हुआ करेंगे। इस योजना के अनुसार जिस सरकार का कामन-सभा में बहुमत होगा उसे नए सदन में भी बहुमत मिल जायगा। उस स्थिति में सरकार को बहुत अपने कार्यक्रम के विनाश या विघ्नान का कोई भय नहीं रहेगा। कोई-सभा आजकल जिस उपरोपी कार्यों का करती है वे नए सदन द्वारा भी किये जा सकते हैं। उसके सदस्यों में भी दोनों पक्षों की ओर से कुछ प्रसिद्ध व्यक्ति यदि वे अपने दल के नाम पर निर्वाचन में लड़े होंगे के किम तैयार हो सकते हैं वह उन बयोवृद्ध राजनेताओं के लिये जो लोक-निर्वाचन के दबाव और कामन-सभा के बकावताने कार्य को सहने के किम तयार न हो विभाषि का स्वतः सिद्ध हो सकता है। वह कोई-सभा के सवान बड़े बड़े प्रश्नों पर बड़ी यत्नीरता और फुरतत से विचार कर सकता है। वह कामन-सभा को परामर्श प्रोत्साहन और बैठायवी दल के भेद घुन को अपनाने में समर्थ होगा। एक बड़ी क्षमि विस्तरे वह शक्ति हो जायगा, यह है कि वह किसी सरकार को कागून के पास होने में शाय न डक सकेगा।

लेकिन वास्तव में यह क्षमि कोई-सभा की एक बहुत बड़ी क्षमि है। वह निश्चित है कि इसका अनुष्ठान कोई तो वह एक सदनपरक व्यवस्था की स्थापना द्वारा हो या इस वैयक्तिक उपाय द्वारा हो अनुधारवादिना को कदापि इष्ट नहीं होगा और वे इसका उद्वेग विरोध करेंगे। कारण यह है कि बहुत बड़े क्षमि एक बार समाप्त हुई, पुनीवार तथा सविधान की रूपरेखा के अंतर निर्वाचकों की इच्छा के बीच फिर कोई कस्तु नहीं रही रह सकेगी। इसके फलस्वरूप वर्तमान व्यवस्था की रत्ता करण का एक बाधक माध्यमिक साधन लट्ट हो जायगा और सम्पत्तिवादी बर्ग बहा एक बार समाजवादी बहुमत में आम इस योजना के अन्तगत कोष-सभा की इच्छा को स्वमित करण का कोई उपाय नहीं खोज सकेगा। अनुधारवादी एक इस बात को बहुत अच्छी तरह समझता है और बही कारण है कि उसके प्रत्येक वारिक अधिवेशन में वह मांग की जाती है कि कोई-सभा के मुधार का कार्य उक्त समव हो जबकि उसकी अपनी सरकार सत्ताक हो। अधिकांश अनुधारवादिनों को उक्त सदन का दुर्बल होना, जो वर्तमान सम्पत्ति-व्यवस्था के अन्तर्गते सत्तिसाधी आजकल को रोचन में अब भी समर्थ हो संभव भी इष्ट नहीं है। वह एक ऐसा वैयक्तिक प्रारण है जिसके अन्तर्गते दलों के बीच समझौते की कोई

सम्पादना नहीं है। यही कारण है कि जब कभी मुबार की आवश्यकता सामन आती है जब कभी अनुशासकी नेता मुबार की वाञ्छनीयता स्वीकार करते हैं, वे क्लमान स्थिति को मर्यादित ही छोड़ देते हैं। वे यह समझते हैं कि परिवर्तन का यह प्रत्यक्ष मिश्रण जिसे वे अपन समर्थकों को स्वीकार करने के लिये तैयार कर लते उनके अनुयायियों को कदापि प्राप्त नहीं होगा।

कॉर्डे-समा ने कहा था कि कॉर्डे-समा तुलान में से सन्तुलन निकल जायगी। मिश्रण ही अधिक इस उसके स्वरूप और सन्निधान में उसके स्वाम का परीक्षण करते हैं। उतना ही अधिक इस कथन का सत्य प्रकट होता है। कॉर्डे-समा का सामाजिक महत्त्व नहीं है कि वह "धन का सामान्य स्रोत" है और अपनी शक्तियों को इस धन के अधिकारों की रक्षा में प्रयुक्त करना चाहती है। तनिक आप उसके इस स्वरूप को हटा दीजिये उसका मुबार की समस्या तुरन्त सुगम हो जाती है। लेकिन जहाँ आपन उसके स्वरूप को बचानिक बरततक पर हलका धन की मण्डि तुरन्त ही सत्याजों को सपिन के बाव बुन्द आती है। यह इस बचपन को सुबमता से स्वीकार नहीं करेगी। जब तक उसकी समझी अधिकारों द्वारा पर्याप्त शक्तियाँ विद्यमान हैं वह अधिक सरकार के काम में बाधा डालती रहेगी। जैसा कि मैं कह चुका हूँ, वह आपन-कानूनों पर बाधक प्रहार कर सकती है। वह सरकार के कार्यक्रम को उस के पहले दो मालों में पास होने में देरी करके मजबूत कर सकती है। वह अतिशय दो बरों में सरकार के कार्यक्रम को एते समय के लिये स्थगित करके जब जनता का उस कार्यक्रम के लिये कोई विषय उत्पन्न न रहे सरकार के इरादों पर तुल्यपालन कर सकती है। इसके अतिरिक्त कॉर्डे-समा को यह सपिन भी जो उसका १९१०-१९११ में प्रकट की थी प्राप्त है कि वह कामन-समा का विघटन बाध्य कर सकती है।

यह शक्ति विद्यनी वास्तविक है इसे उस अवसर का विचार करके जब इस का प्रयोग किया जा सकता है अच्छी तरह समझा जा सकता है। मान लीजिये कि अधिक इस की निर्वाचनों में विजय होती है अधिक सरकार का निर्माण होता है और अधिक सरकार उन कानूनों को पुरास्थापित करती है जिनके लिये कि वह बचनवद्ध है। फलतः वह भी मान लीजिये कि अधिक सरकार प्राण की बाधक विना किसी प्राथमिक कठिनाइयों का सामना लिये सम्माननी है। उसके कानून मुख्य रूप से दो शक्तियों में विभक्त है—राजनीतिक सामाजिक मुबार के कानून उदाहरणार्थ बकारी की समस्या और लाना के राष्ट्रीयकरण जैसे कानून जिनका लाभ काशी समय बाव प्रदाया जा सकता है। यह स्पष्ट ही है कि राजनीतिक कोषक की दृष्टि से जहाँ अधिक सरकार संघर्षी अधिकारियों के लान को सुसंती भनी क लिय प्रयुक्त करने के लिये प्रस्तुत ही सकती है वह उसे पहली भनी के लिय प्रयुक्त नहीं करेगी क्योंकि निर्वाचकों के ऊपर उसका प्रभाव मुख्य रूप से इसी बात पर निर्भर है कि वह जन-साधारण से जीवन-स्तर को ऊँचा उठान की माग कहा तक पुरा करती है। यदि कॉर्डे-समा इस क्षेत्रों के साथ हस्तक्षेप करेगी तो उसे यह बननी ही जानी कि नए पीयर बनाकर उसका विरोध निरन्तर कर दिया जायगा। नए पीयर बनाने की शक्ति की शक्ति का उल्लेख १९३१ और १९३५ की तरह

अधिक दलक निर्वाचनीय कार्यक्रम का एक आवश्यक भाग हो सकता है।

इसका लाभ-समा के विनाश का बिना सुरक्षित हो सामन आ जायगा। यदि वह इन धमकी के सामन झुक गई तो अधिक सरकार के भिय मह आवश्यक होगा कि वह धमकी की पुनरावृत्ति को रोजन के भिय उमके पुनर्मटन में सुरक्षित बतचित हो और यदि उसके सवस्यो न लखते-सकते मर जाना पसह किया तो नए पीयरों के मुबन द्वारा कार्ड-समा की सदस्य-सस्या इतनी बढ़ा दी जायगी कि वह एक विरूप निशाय हो जायगी तथा उसका मुधार आवश्यक हो जायगा। दोनो ही स्थितियों में कार्ड-समा और उनके साथ समाजवाद के विरुद्ध धन की रक्षा का एक आवश्यक साधन गट हो जायगा।

मगिन इसका अये तो यह पहले से मान लेना हुआ कि 'नाशन' पीयर बनान के अधिकार को स्वीकार कर सगा। हम इस बान का बिश्वास नहीं है कि ऐसा हागा। १९११ के छोटे से विचार में पीयरों के विरोध के फलस्वरूप 'नाशन' न यह मांग की थी कि इन अधिकार को बेन क पूर्व का साधारण निर्वाचन आवश्यक है। हमें विश्वास है कि इन कौशल की पुनरावृत्ति के सिद्धि संग्रह पर मसल सम्भव बबाव डाका जायगा। उक्त स्थिति में इस प्रकार क बचनी से कि बेन ने इस संग्रह में पूरा निर्बन नहीं किया है संग्रह का जनता से राय मन का बतल्य है इन बर परिवर्तन के सिद्धि निर्वाचन की विषय सहमति आवश्यक है संग्रह का सविधान को "रोयल्टी" से बचान का शक्ति है पूरा काम उठाया जायगा। यह कहा जायगा कि यदि संग्रह अपन मंत्रियों से परामर्श लेना बर्तीकार कर देते है तो विरोधी दल मता-ग्रहण करने के सिद्धि प्रस्तुत रहेगा। निर्वाचन में अधिक दल की असफलता संग्रह के इन कार्य को पूरा कर देगी। इस प्रकार के निर्वाचन का परिणाम निश्चय मजबूतता को यह बार बार बताया जायगा कि अधिक दल की विजय में शक्तिहासत का अस्तित्व एक क्षण में ही स्वतः स्यात् है।

प्रत्यक्ष है कि यह एक शक्तिशाली स्थिति है और इसमें भविष्य के बारे में कुछ भी निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। सारी कठिनाई को इस रूप में रचना का संकटा है (१) यदि कार्ड-समा को मर्णास्थिति छोड़ दिया जाता है तो दर-सवेर समाजवादी सरकार के साथ उसका संधर्ष अपरिहार्य है (२) यदि उसका मुधार अनुधार दल के द्वारा होता है तो उसे अधिक दल बिरुद्ध स्वीकार नहीं करेगा (३) यदि उसका मुधार अधिक दल करता है तो वह अनुधार दल को बिरुद्ध स्वीकार नहीं होया।

यह स्थिति क्यों है? मेरे विचार से इस प्रश्न का उत्तर महत्वपूर्ण है। वास्तव में कार्ड-समा के मुधार का प्रश्न एक बर्णानिक प्रश्नो म से एक है जिसको बड़े राज्य की अधिक बुनियादी तक जाती है। सोनो सभ्यो म गम्भीर संधर्ष के प्रत्यक्ष अवसर पर मही हुआ है। १८३१-३२ में मुधार विधायक सम्बन्धी बार्ड-विवाद के अवसर पर मही हुआ था १९००-११ में उस वर्ष के बजट विधायक संधर्ष के अवसर पर भी मही हुआ था १९१०-११ में संसदीय अभिविषय के सम्बन्ध में जिसमें वास्तविक प्रश्न यह था कि अनुधार दल उधार दल क विधान को पसंद नहीं करता था एक बार फिर इसको पुनरावृत्ति हुई थी। केवल म सब संधर्ष उन मधवों की तुलना में जो अब भविष्य में उठ सकें हो सकते हैं बहुत छोटे है। कारण यह है कि पुनः प्रश्न तो केवल परिमाणान्तरक विचार-मेरी के प्रश्न न

और कहा कि पटनाचक्र न प्रकट किया था उनमें समझौता भी हो सकता था। लेकिन जब जो प्रश्न सामन आ रहे हैं उनका स्वरूप बिस्फुक्त भिन्न है। वे सामान्य प्रश्न नहीं हैं। वे एने प्रश्न हैं जिनके निर्णय से हमारे समाज की बर्ष-व्यवस्था बिस्फुक्त बदल जायगी। चूंकि इस निर्णय में कार्ड-सभा को महत्वपूर्ण स्थिति प्राप्त है अतः यह विचार मासान नहीं है कि यह अपनी शक्तियों को बनाम रखने का उद्यम प्रयास किम जितना ही शुक जायगी।

यह कहा जा सकता है कि कार्ड-सभा के लिए यह आश्वासन मागना कि अधिक दल जिन बड़े परिवर्तनों को करना चाहता है उनको अमता का दृढ़ समर्थन भी प्राप्त हो या नहीं स्वाभाविक है। मूलतः हमें उसे अहम यह मानना हुआ कि किसी प्रश्न के ऊपर जनता न दृढ़ संकल्प का परिचय दिया है वही यह शुक मई है और प्रश्न की सम्पीछा को देखते हुए उस सत्त्व के प्रभाव के रूप में द्वितीय साधारण निर्वाचन की माग करना कोई बनी बात नहीं सीखती। लेकिन हम इतिहास का उत्तर कहा सकते हैं। कार्ड-सभा एसी कार्ड परदाताहीन और सम्पूर्ण संस्था नहीं है जो कि मत्कमत के बारे में स्वतन्त्र और निरा मत्त राय रखती है। उसकी रचना उन अनुदारदल के सम्भागल मन्त्रीमाल का एक आधारीत भाग बना देती है। उसका अर्थ यह है असा कि कार्ड-सम्प्रेर में एक बार कहा था कि जनदार दल चाहे वह पराकर हो या न हो सर्वत्र अक्षि में बना रहे। उसके इत्य द्वारा बाधित प्रत्येक विद्युत सर्वत्र एक पक्ष के विरुद्ध होता है। इसलिये यह बह परक विद्युत नाम पढ़ना है। इस प्रकार का विद्युत उस दल को जिसके विरुद्ध वह प्रयत्न हो सविधान का अस्वतन्त्र नाम पढ़ना निश्चित है।

लेकिन इसका अभिप्राय तो यह कहना हुआ कि अधिक दल अमता से जिसमें एक कोलतनामक दल होने के नाते वह अपना विरवास प्रकट करता है अपनी नीति का पुन स्तम्भन प्राप्त करते हुए करता है। यह एक अधिक इतिहास है और इसके पीछे कोई सार नहीं है। मुख्य रूप से निर्णयों पर निर्भर राजनीतिक दल का उस सत्त्व के प्रति अज्ञान होना जो उसके बनी विरोधियों के हाथों में इतनी प्रचुरता से है स्वाभाविक ही है। यह निश्चित ही है कि यह इस दल का विरोध करे कि सरकार के रूप में उसकी गतिविधिया उन सत्त्व की विषय है जिनमें कि दलिक बर्ष स्वतन्त्र है। अपनी राय में यह एक बात कार्य क्रम के आचार पर जिनके किय यह निर्वाचकों का समर्थन प्राप्त कर चुकता है सत्ताकर होता है। उनके विधान के सिद्धांत और कार्य-मन्त्रिके उपाय बात ही है। यह अपनी विजय को एक एसी रीति-निर्वाचन सभा की शक्ति के सामन शुककर जिसकी उनको सत्कता को अवरुद्ध करने की प्रयास इच्छा उसके सत्ता-अर्थ के पूर्व ही बात की बर्षों तकटपस्त करे ? अनुदारदासी सरकारों इस प्रकार की बाध्यता में अपने 'मैग्नेट' के निर्वाचन के लिये निर्वाचकीय प्राधिकार प्राप्त का प्रयास नहीं करती। संसदिक सरकार में १९२९ या हुआ १९३६ में एसा किया अक्षि स्वयं प्रयास-बर्ष की अपनी स्वकरोक्ति के अनुसार ही उसकी पुनरावस्थाकरण की नीति उन माग्नाओं के बिस्फुक्त विरुद्ध की जिनके आचार पर उन १९३६ के पुननिर्वाचन में विजय प्राप्त की थी। यदि जिनो संविधान की मूल आचार्यों बर्षों के बीच विषय रीति से प्रयुक्त होती है तो यह सत्क नहीं हो सकता।

इसलिये यह कहना असा कि बी ईमज म्योर न कहा है कि "कार्ड-सभा बुद्धान

बासा और विस्मय करनेवाला निश्चय है और इस प्रयोजन के लिये भी बहु बहुत वाग्वर नहीं है बहुत सही नहीं है। महत्त्वपूर्ण यह है कि सचेत विस सभान पर विस्मय करने की शक्ति प्राप्त है। उसकी स्थिति अंश कि उन्हीन बड़ा है कामन-सभा से निश्चितन मोची है। संसदीय अधिनियम से पहले करने की वास्तविक शक्ति निर्वाचित सभन को दी है। लेकिन उसमें लार्ड-सभा के पास एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शक्ति रक्षी है। लार्ड-सभा इस शक्ति का प्रयोग ठीक ऐसे अवसर पर, जबकि उसे बुद्धि के मानसुद्धय आपारा पर नही प्रत्युत विधवाधिकार के ठोस माचाने पर सभने की आवश्यकता हो कर सगती है। उसकी विस्मय करने की शक्ति केवल बनिफो के हाथों की एक शिलीना है जो जनता की इच्छा के विरुद्ध बचन का काम करती है। यह शक्ति स्वयं रैमज म्योर के शब्दों में 'लोक-वर्धनात्मक राज्य में एक अनंयति' है। कइल को तो लार्ड सभा का विधवाधिकार बला गया है लेकिन उसका बहुत कुछ लक्ष अब भी विद्यमान है। यह कहा जा सगता है कि परोलत उसकी विलीय शक्तिया भी बनी हुई है। सामाजिक पुनर्निर्माण का प्रत्यक्ष बला कानून वास्तव में आय के पुनर्वितरण का विधेयक हाठा है और उसके अधिनियमन को स्वीकृत कर देने की शक्ति उच्च कोटि की विलीय शक्ति की है।

(३)

कभी कभी यह कहा जाता है कि इन कठिनाइयों का समाधान एक विश्व क्षेत्र में विद्यमान है। ऐसे बहुत से अनुवादाशील हो लार्ड-सभा के अधिकार के विषय प्रयोग को समझते हैं और वे अक्षपरक विचयन के अन्तःशोधप्रद स्वरूप का स्वीकार करते हैं। उनका कहना है कि विल कानून को सरकार बहुत महत्त्वपूर्ण समझती है जब पर जनता की राय वादन के लिये साधारण निर्वाचन तो न किया जाय परन्तु जनमत-संग्रह किया जाय। वे कहते हैं कि यह एक लोकवर्धनात्मक प्रक्रिया है यह उन प्रश्न को जिसपर मनदाता को निर्णय देना है, विस्तृत पूबद्ध कर देती है और निर्णय को केवल एक प्रश्न तक ही सीमित रखने से सरकार अक्षपरक विचयन की आवश्यकता से बच जाती है।

अगर से देसन पर यह योजना विचारणीय और आकषक मानन पडती है लेकिन सूक्ष्म परीक्षण क उपरान्त यह अर्थ मानन पडती है। पहली बात तो यह है कि यह प्रश्न को कि क्या जनमत-संग्रह उच्च सदन के हाथों में अर्थात् अनुवाद बल क हाथों में रखन दिया जाय छोड़ देती है। हमारा तो दक्षिण और बाज के इस विभर पर अन्वय है जोकि लार्ड-सभा की रचना में निहित है। प्रस्तावित योजना इस विचयन को समाप्त नहीं करती। लेकिन कुछ और भी बड़ी आपत्तियां हैं। इन-लिगे काय ही इस बात को मान सकते हैं कि उक्त हुए प्रश्नों को जन-मतदान के द्वारा अच्छी तरह मुक्तजाया जा सकता है। असाधारण के लिये कोर्टी जी ब्लिड १९२९ के इटिब एन पर मत-संग्रह का सुझाव नहीं दिया। यदि किसी कानून के सिद्धांतों को विस्तार की उर बातों से अलग कर दिया जाता है जो उसे महत्त्व देती है तो वे विस्तृत अवास्तविक हो जाती हैं। "बला आय वातों के राष्ट्रीयकरण के पक्ष में है" वास्तव में यह विचयन की काराओं से एक विस्तृत मित्र प्रश्न है। इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार करने के लिये विल वातावरण की आवश्यकता है यह काको निर्वाचन के लिये संभव नहीं है। किसी एक प्रश्न को राय सगस्त रिवाज

से जिसका वह एक भाग होता है बचन करना संभव नहीं है। इसीलिए तो एने होने हे जो यारान्त बिल पर सरकार के विरुद्ध मत देते ह इसकिये मही कि उनकी उम विषयक के बारे म कोई काम सम होनी है प्रत्युन इसकिये कि वे सरकार की विरुद्ध नीति को पसन्द नहीं करते। प्रदो को बलम असह करके देखना सुपम कार्य नहीं है। सब तो यह है कि सब सपह भी की पुच्छमिति बही हामी कोकि साधारण निर्वाचन की होती है। प्रत्यक व्यक्ति को यह बात होना कि विषयक की असोहृति सरकार की प्रतिष्ठा के लिए एक यम्मीर चुननी होमी और उनके विरोधी हलमत स्वाबों की बुद्धि के तिम उमका प्रयोग करन से मही चुनने। विरुद्धा में विरुद्धकर सिस्टमरुद्ध और अनगीका म अनमत-सबह के अनुपम से यह सिद्ध नहीं होता कि यह लोकतन्त्र को एकल बनान का विषय मन्त्रा साबन है। उसका प्रयोग संहान्तिप्रस्था के उत्तर पाने तक सीमित है लेकिन विन्डार के मयाब में म प्रदन वास्तविक सब से बलिष्ठ हो जाने ह। यदि उस किमी अन्ति सन्धि के पूरे विषयों पर विचार करन के तिम विन्डुन कर दिया जाय तो यह बहाना प्रबं होना कि उसकी काराबी पर अनता का निर्णय किमी भी तरह ठीक है।

सबन विवेचन को १९१५ की एक मात्कीय बनना सेकर सुकमता से विद्ध किया जा सरता है। म मही मानता कि कोई व्यक्ति यह तक करेवा कि यदि निर्वाचका के सामन यह प्रदन रसा जाय कि बना जाय हारे-साबेक प्रस्थाओं के बस म है तो वे एंसा उत्तर दे सकत ह जिसकी कि अचिन ब्याख्या की जा सके। पूरे प्रस्थाओं पर निर्णय को मान करना विस्तार की उम बहुत सी बनो पर निर्णय की मान करना है जो उनके प्रकाशन के पूर्व संसदसदस्या और बहुत से मंत्रियों तक को मान्य नहीं को। इनमें कोई सम्वेह नहीं कि दीर्घ और सुकम परीक्षण क उपरान्त कोई यम्मीरचित निर्वाचक निर्णय देन म बबरब समय हो सकता है लेकिन अनमत-सबह उन परिस्थितियों का निर्णय नहीं करता जिनमें कि दीर्घ और सुकम परीक्षण सम्भव हो सके।

वास्तविकता यह है कि अनमत-सबह का पूरा सिद्धान्त ही निर्वाचकों के प्रयोगन को नहीं समझता। निर्वाचक-मंडल किमी राजनीतिक प्रवृत्ति के साधारण मार्गचित्र पर ही अपना दृष्टिकोण निर्धारित करता है और पारसमाभी र्व व्यक्तियों को उस मार्गचित्र क एक बड़ भाग से पक्ष या विपक्ष में अपना मत देन के तिम प्रवना है। राजनीतिक सब विनयी अन्धी तरह ही सक्ता ह उस विषय को समाने है। उस विषय म से किती एक रेखा को चुन लेना और मठबानाओं से उने समूचे विषय से अलग करन के तिम कहना उनमे एक एमै चार्ज के तिम कहता है जिसके तिम से एक अनमतसबह के माते संबंदा अनुपमकन है। संसद में, प्रत्यक्ष याधन स्वसाधन का पर्याप्त नहीं है। यह तो पना कि पारसिस्टवादी देधो का अनमत बनाना है उसका किन्डुन विरोधी हो सक्ता है। निर्वाचका का कार्य तो एक दल को सरकार बनान क तिम चुनना और उनके कार्यकाल को समाप्ति पर उनके सम्पूर्ण रिचार्ज पर निर्णय दे खलना है। यदि उन रिचार्ज के कुछ विषय कनों को अनता के विषय के तिम चुन दिया जाय तो वे सम्पूर्ण निर्णय को मूस्यहीन कर देते हैं। वे ऐसा इसकिये करते ह क्योंकि जहाँ वे एते चुन गए, वे विषय चार्ज नहीं प्ते। वे उत साधारण निर्णय के साथ बक-विषय जाने हैं जिसकी मकीविधि गोपचा करन में

लोकतन्त्र स्वयं को समर्थ पाता है।

(४)

ब्रजहर्षि ने लिखा था "बुद्धीमत्तन अत्यन्त उपयोगी है म केवल इस कारण कि वह क्या बनाता है बल्कि इस कारण भी कि वह क्या रोकता है।" वह बच के शासन-स्वयं के स्वयं-को रोकता है। हमें उसका यह रूप मानने की कोई आवश्यकता नहीं है कि वह जो उपायना मान्य-संरक्षण देता व ही विमरूप से दिखाई देती है। जब इस देश में बुद्धीको का एक समुदाय है ठीक उस अर्थ में जिसमें कि ब्रजहर्षि उसका प्रयोग किया था। श्री टोने के शब्दों में हमारा समाज एकव्यवस्था समाज है और वर्तमान कार्य-समा इह शब्द में जो कुछ अभिन्न है उस सबको व्यक्त करती है। वह अतीत में या वर्तमान में उन सिद्धांतों पर प्राप्त की गई सफलता की जिनसे इस प्रकार की व्यवस्था हमारे जिन समाज में प्राप्त की जा सकती है, प्रतीक है। वह इस आदर्श की कमी पूर्ण प्रतीक है वह इससे समझा जा सकता है कि हम एक मनी व्यक्ति के जिनमें नैतिक रूप से यह माना करते हैं कि वह कार्य-समा का उपाय होगा किन्तु जब कोई व्यक्ति जन के अतिरिक्त अन्य किसी बात के लिये प्रसिद्ध होने के कारण कार्य-समा का उत्पन्न हो जाता है तो हमें आश्चर्य होता है।

जब तक हमारे समाज के अन्तर्गत सिद्धांतों पर अपनी नहीं उठाई गई कार्य-समा के शासन-कार्य में भाग लेने के दावे पर सम्बन्ध करने का कोई कारण नहीं था। इसके कुछ महत्वपूर्ण गुणों की मैं पहले ही बर्णना कर चुका हूँ इनके अतिरिक्त उसमें एक और विशेष गुण था : वह पूजनीय थी। जब से हमारे पास संविधान रहा है वह हमारे संविधान की एक अभिन्न बंग रही है। बहुत से समय जिनोंने उसमें महत्वपूर्ण भाग लिया स्वयं इ लैम्ब के इतिहास के समीक्ष प्रतीक थे। प्रायः १८१७ के पश्चात् कार्य-समा कभी सुविधासंगत समर्थन के योग्य नहीं रही किन्तु १९१९ तक उसके समर्थन की गंभीर आवश्यकता कभी उत्पन्न नहीं हुई। वह एक ऐसी शक्तिपूर्ण संस्था बन गई थी जिसे हम एकत्र स्मारक की तरह स्वयंसेवक मान लेते हैं। वह अपने मूल की प्रकृतियों के प्रतिबुद्ध नहीं थी क्योंकि उसका गुण उसकी प्रकृतियों के प्रतिबुद्ध नहीं मान्य पड़ता था। उन्नीसवीं शताब्दी के अविद्याय भाग तक अथवा के रूप में जन के प्रति पूजनीयता का भाव होने के साथ-साथ बुद्धीमत्तन व प्रति भी पूजनीयता का भाव था। डिबेन और बेंचरे की तरह कुछ व्यक्ति यथा-यथा मुंह दिखाई सक्षम थे मेकिन ट्रीनोन्स के उपस्थाओं के पाठक उनमें ऐसा कोई भी संकेत नहीं पायेंगे कि बुद्धीमत्तन के शासन करने के अधिकार पर उगली उठाई जा सकती है।

वह ब्रजहर्षि को मासूम था कि कार्य-समा से कार्य-समा की हीनता वह से स्थापित एक वैधानिक सिद्धांत था। वह इस विचार से सहमत था कि यदि कभी उन दोनों में संघर्ष हो तो अतौल्यता कार्य-समा को बुद्ध्या चाहिए। लेकिन वह यह नहीं देख सका था कि बुद्धीमत्तन और जन के संयोग के अन्तर्गत शासनिक व्यवस्था पर आधारित हमारे समाज में इस व्यवस्था का स्थान विशुद्ध बरक जायेगा।

इस स्थिति के कई कारण हैं। कुछ तो यह सीमित उत्तरदायिता का परिणाम है। पीयर बन्धनियों के निर्देशक हो गए और उन्होंने बिल तथा चीन के प्रतिरिक्त धन्य बातों में रुचि लेना बन्द कर दिया। कुछ यह पीयरों की राजनीति में सर्वोच्च स्थान पाने की असमर्थता का परिणाम है। यह स्मृतव्य है कि १८७० के पदचाल हमारी राजनीति में कार्ड रॉसबेटी ही एकमात्र ऐसे व्यक्ति हैं जिनकी कार्ड-सभा में प्रतिष्ठा थी। इस स्थिति का एक कारण यह भी था कि धरम के आकार में बहुत बुद्धि हो गई। कोई संस्था यदि उसकी स्वस्थ-संस्था पचास बरों में बुझती हो जाये नर्जनीयता का जो कुलीनता का सार है, बढ़ाया नहीं कर सकती।

लेकिन कार्ड-सभा के राजनीतिक क्षिति में प्रभावशाली भाग लेने के प्रति तर्क-भिन्न दृष्टिकोण विकसित होने का असली कारण यह है कि उसका उन कुछ प्रश्नों से मिलका उसे निर्णय करना है, जमिन्न सम्मान है। यह यह धरम है जिसमें अतल सम्पत्ति के स्वामी की आक्रमण से रक्षा होती है। इस प्रतिरक्षा में कार्ड-सभा का रूप एक ऐसी स्तूप इकाई का है जो देश के सम्भाव्य मापी बहुमत के विरुद्ध है। जहाँ उनका यह स्वल्प सामने आता है आलोचक बैजहॉट के आलोचक के सामने यह अनुभव करने के लिए बाध्य है कि "कार्ड-सभा की प्रवृत्ति का एकमात्र उपचार यह है कि उनके पास आकर उसका अक्षकोकन किया जाये।" तब फिर प्राचीनता का तर्क कुछ अर्थ नहीं रखता। यह तो वस्तु इस बात का प्रमाण हो जाता है कि यह संस्था एक असंगति है। तब फिर, धरम के ठोस गुण भी विलुक्त दूसरे रूप में दिखाई देने लगते हैं और आलोचकों को यह स्पष्ट हो जाता है कि इन गुणों को एक ऐसे मूल्य में भी पामा जा सकता है जिसमें कि कार्ड-सभा के रूप में हों।

सचार्थ यह है कि एक अलोकतन्त्रात्मक संस्था लोकतन्त्रात्मक समाज में उस समय तक नहीं रह सकती जब तक कि वह अपने व्यवहार को लोकतन्त्र की भाँवों के अनुकूल ढालने में समर्थ न हो। कार्ड-सभा प्राचीन संस्था है। इसका यह अधिप्राय नहीं हो जाता कि वह स्वयं को नई परिस्थितियों के अनुकूल ढाल ही नहीं सकती। उदाहरण के लिये इस 'आठन' को ले सकते हैं। जहाँ तक उसके दार्शनिक व्यवहार का संबंध है, अपने यह विज्ञ कर दिया है कि सामंजस्य स्थापित करने की दक्षिण परिचार्यत प्राचीनता के प्रतिरूप नहीं पड़ती। कार्ड-सभा की कठिनाई यह है कि वह जित बस्तु की रक्षा करना चाहती है। लोकतन्त्र उसी पर आक्रमण करने के लिए उत्तर है। कार्ड-सभा अपनी रचना-धाम से इन अर्थ संस्था के संबंध का जब कभी संख्या संबंध पर उदात्त हो प्रतीक है। यदि कार्ड-सभा परिवर्तन की धनि अपवाद करण को उत्तर न हो तब फिर उसमें कोई तार नहीं रह जाता। उसका सघटन ही उसे इन अक्षरोप के लिए प्रेरणा देता है और जहाँ वह पैदा करता है उसकी वीणा किम स्थिति में समस्त कार्यधनियों का जाती है।

इस स्थिति का ध्यंग यह है कि अपनी दुर्बलताओं से परिचित धरम अपने सुधार के उपाय साज मित्राग्ने में असमर्थ है। जहाँ यह प्रत्य किया जाता है कि इस सुधार का उद्देश्य क्या है तो इस प्रश्न का जो उत्तर मायन जाता है उस पर बोली राज

नीतिवत् बल एकमत नहीं है। अनुदारवादी उसका सुधार इस दृष्टि से करना चाहते हैं कि वे उन सुधारों को जो उनके विचार से समाज के वर्तमान बर्त-संघटन में आवश्यकता से अधिक क्रांतिकारक परिवर्तनों की धमकी देते हैं, स्पष्ट कर सकें। समाजवादी उसका सुधार इस स्पष्टता को टोकने के लिए करना चाहते हैं। एक पक्ष की ओर से जो सधार आया वह दूसरे पक्ष की ओर से जानेवाले सुधार के प्रति क्रूर है। जितना सम्बन्ध और जितनी ईमानदारी से यह बह-विवाद जैसे-जैसे समझौते की उतनी ही कम आधा बिछाई देती है। विभिन्न स्थिति यह है कि प्रत्येक बल ही इन प्रश्नों को टाकना चाहता है क्योंकि वह जानता है कि उसके द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रस्तावों का दूसरा बल अपने लिए चुनौती समझता। लेकिन इस विषय में मतभेद समाप्त नहीं होते प्रत्युत वे बढ़ते ही हैं क्योंकि इससे धार्मिक बल के सामने यह स्पष्ट होता जा रहा है कि यदि उसे वेग में लोकतंत्र के सच्चे स्वल्प की प्रतिष्ठा करनी है तो उसे एक न एक दिन कॉर्ड-सभा को अपने मार्ग से अलग हटाना होगा। यह निश्चित है कि धार्मिक बल कॉर्ड-सभा को जिस ढंग से और जिस उद्देश्य से हटाएगा उससे उसके विरोधियों में प्रबल रोष जाग्रत होगा।

यह आश्चर्यजनक ही है कि जब आज से सत्तर वर्ष पूर्व बैजहॉट ने कॉर्ड-सभा की स्थिति का सबलान किया था तो वह उसे विस्तृत मिला माजूम पड़ी थी। उसने लिखा था "कॉर्ड-सभा निर्मम विनाश से बचनी तरह सुरक्षित है, लेकिन वह साम्य-न्तरिक पतन से सुरक्षित नहीं है। उसका सफट हत्या में नहीं प्रत्युत समय में सम्पूर्ण में नहीं प्रत्युत पतन में है। उसने कॉर्ड-सभा की दुर्बलता के ये कारण बतलाए थे "उसके अधिकांश सदस्य अपने कर्तव्यों की उपेक्षा करते हैं "उसके सब सदस्य एक ही वर्ग के हैं और वह भी सर्वश्रेष्ठ नहीं। बैजहॉट ने मविध्यवादी की भी कि "अउन की तरह कॉर्ड-सभा का भी नियेमाधिकार कृप्य हो जायेगा। फिर भी कॉर्ड सभा का कोई साम्यन्तरिक हास नहीं हुआ है। जो कार्य वह बैजहॉट के समय में करती थी आज भी करती है। वास्तव में कॉर्ड-सभा का बसकी चतरा हत्या है जिसे बैजहॉट असम्भव समझता था। अनुदारवादी पक्ष के अनुसार उसका सुधार करके हम अधिवात के अमरवादी को—उसके निर्णयों को सम्बन्धन करने की उसकी शक्ति को नष्ट कर सकते हैं। यदि हम धार्मिक बल के सिद्धांतों के अनुसार उसका सुधार करते हैं, तो हम सम्पत्ति के स्वामियों में उस शोचनशालक पद्धति को जो उसकी शक्ति के लिए बतल है दूर से नमस्कार करने का सकल्प उत्पन्न कर देते हैं। वह राजनेता जो इन गम्भीर संघटनों के बीच से अपना रास्ता निकाल लेगा वेध की कृतज्ञता का अधिकांशी होगा।

कॉमन-सभा

(१)

मरा विचार है कि यदि कोई व्यक्ति कॉमन-सभा की प्रकृतियों तथा प्रक्रिया का कुछ समय तक ध्यान से अवलोकन करे, तो उसके हृदय में कॉमन-सभा की विषय-ताका के प्रति प्रपञ्च का भाव आए बिना नहीं रह सकता। आखिर, यह एक दुर्लभ और अनुपम बात ही तो है कि प्रकीर्ण व्यक्तिपत्रों का एक निकाम सद् के पदचान् सत् तक विप्लव व्यक्तियों के ऐसे तर्कों को जितमें उनकी भावना हो सुनता था। यह और भी अनुपम है कि हम अल्पसंख्यक (स्पीकर) को जिसका कार्य यह देखना है कि हम विप्लव व्यक्तियों के सुन जाने का अधिकार मानव-महति द्वारा जब तक बाधित नहीं हो सके अथवा सबसे अधिक विस्तृत प्रक्रिया द्वारा रक्षित हो राज्य में सबसे ऊँचे पदा में से एक है।

हम विचार-विमर्श द्वारा भावना को स्वतः सिद्ध स्वीकार करते हैं और जब मन विभाजन हो सकता है तो परिणाम पर संतोष किए बिना उसे विरोधी बनाना अपना नैतिक दायित्व समझते हैं। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि विचार-विमर्श द्वारा प्राप्त प्राप्त सबसे बड़का इतनी कठिन कला है कि विश्व में केवल दो-तीन ही ऐसे देश हैं जहाँ यह सम्बन्ध समय तक रहा है। अपने विरोधी को उस समय भी जब आपको यह कुछ विवश हो कि यह गलत है, जो कुछ यह कहना चाहें बहुत की अनुमति देना उसे जग कोश को जो वा तो संदिग्ध है या उदासीन है यह विरक्त्य दिखाने का अवसर देना कि आपके बलिदान के बावजूद भी हमें हम सही है, अपने उस भावने को जिसे आप अत्यावश्यक समझते हैं पराजित होते देखना और फिर हम पराजय की सामान्य दिनचर्या की भाँति स्वीकार करना यह सब यदि वास्तव में कठिन न हुआ होता तो अधिकतरसमीप ही लगता। अर्थात् मानवी जीव होते हैं उन्हें अपनी सफलता पर अपनी पीठ आप टोचने में रस मिलता है। मेरा विचार है कि कॉमन-सभा की प्रति-विधि पर जिसका ही अधिक विचार किया जायगा उतना ही अधिक अवरोध को अपनी सफलता पर बर्ष करने का अवसर मिलेगा।

आखिर, एक इतनी बड़ी संस्था का निर्माण कर देना जिसकी प्रति-विधियों में कोई व्यवहारिता तक सामाजिक शांति को बनाए रखता है एक बहुत बड़ी जीव है। हमारे राज्य का सेवा में जो ऊँची-से-ऊँची प्रतिभाएँ लगातार लगी हुई हैं, कॉमन-सभा उनकी सेवाएँ प्राप्त करने में समय हुई है। जहाँ यह बात जाना है कि वास्तविक रूप में कॉमन-सभा के बहुमत का सम्बन्ध नहीं पा सकता यह व्यापक देने के लिए तुल्य उत्तर हो जाता है। यही नहीं। सभा के वा-विचारों में चाहे जो दल हो उनमें से ऐसे कई

कुछ हूँ जिनके महत्त्व का वर्णन करना बर्झिन है। वे इस बात का आस्वादन करते हैं कि जब बड़े-बड़े प्रश्नों पर विचार-विनिमय होता है तो उनके बारे में जो कुछ कहा जान योग्य होता है कहा जाता है और नियमता इतने ज़रूर हम म कहा जाता है कि सारे राष्ट्र का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट होता है और उसे विश्वास मिलती है। कॉमन-समा में जब कभी कोई बस्तु महत्त्वपूर्ण बान-विबाह हा रहा होता है तो हम यह विचार रख सकते हैं कि राष्ट्र के सर्व-अल्प व्यक्तियों में से अधिकतर उसे सुनते हैं। वे भाषनों की विषयता तथा प्रयुक्त हुए शब्दों का आतुरतापूर्व विवेचन करते हैं। देश के प्रमुख समाचार-पत्र उन पर टिप्पणी करते हैं। बहुत से गृहिक संघ उन पर प्रस्ताव पास करते हैं। कॉमन-समा में चाहे कुछ भी दुर्बलता हा उनमें विविध जनता को सशर की अल्प किसी जनता की अपेक्षा राजनीतिक दृष्टि से अधिक वेतन बताया है।

यह एक ऐसी सफलता है जो धीरे-धीरे प्रायः होनी बर्षों में अधिक समय में पूरी हुई है। न्यूतापिक रूप से उसका विकास बिन्नी के निर्वाचन-विषयक बान-विबाह से प्रारम्भ माना जा सकता है। इग बटना ने यह सिद्ध कर दिया कि सरकारी निर्णयों के निर्माण में जनसाधारण के सक्रम को महत्त्व देना भी अनिबाय है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमारी बँसी सामाजिक व्यवस्था में जनसाधारण को अपनी शक्ति का धनः धर्म ही मान हुआ। कुछ अपवादों को (जो इतिहास-ग्रंथा में कुन्नात आन्दाजन-कक्षा के नाम से विख्यात है) छोड़ कर जनसाधारण का १८१७ तक यह मान नहीं हुआ कि उसे अपन शासकों के समीप मिङ्किङ्कते हुए जान की आवश्यकता नहीं है। जनसाधारण में यह वेतना निरन्तर ही बढी है। बर्षों की स्वतन्त्र शासन की सुदीर्घ परम्परा का यह एक प्रमुख कारण है। मेरे कहन का मतलब यही है कि कॉमन-समा वह मुख्य साधन है जिसने वेतना की इस प्रक्रिया को संभव किया। इसने सदस्य तथा निर्वाचन-सभ के बीच ऐसा सम्बन्ध स्थापित किया जिसने कॉमन-समा को यह अनुभव करन के लिए बाध्य कर दिया कि उसका जीवन लोकमत को सन्तुष्ट रखने पर ही निर्भर है। समा का कार्य स्वयं को इस तरह धारित करना वा जिससे कि वह अपन धामने प्रस्तुत की गई माँगों वा अधिक से अधिक उत्तर दे सके। इस प्रकार के दृष्टिकोण का धाधार यह जान वा कि यदि उसमें लोकमत की माँगों का सतोपग्रह उत्तर नहीं दिया तो इस बात का सर्वे बतया है कि निर्वाचन इस सम्बन्ध में कठर अवयव निकाल लेया।

कॉमन-समा एक ऐसी संस्था है जिसमें सभी प्रकार के तत्त्व प्रवेश करते हैं। जब कोई बँजहॉट की तरह यह संस्थापूर्वक नहीं कह सकता कि अधिक जनता एक एंसा बर्ष है जिसकी लोकमत वा निर्माण करने बाध टल्को में मगना करने की आवश्यकता नहीं है। सार्वभौम मताधिकार का समिप्राय यह है कि जनसंख्या का कोई भी बँव एंसा नहीं है जिसकी राय को राजनीतिक बर्षों द्वारा महत्त्वहीन समझा जाए। नागा स्वाधी के संभव में से एंसी सुनिश्चित मोति को निकाल लेना जो कुछन शासन संघारण के लिए पर्याप्त ही सचमुच ही एक दुस्तर कार्य है। यह कार्य अभी तक सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ है, इसका बहुत कुछ कारण यह है कि कॉमन-समा को

राष्ट्र का अनुपम आदर है।

कॉमन-समा किस लिए है? जब तक हम उसके उद्देश्यों के बारे में स्पष्ट नहीं हैं हम उसके महत्व को नहीं समझ सकते; आखिर ऐसे ३१५ स्त्री पुरुषों के एक प्रतीक विकास को जिनमें से अधिकांश राजनीति में गौरेविलिए हो सर्वोच्च विभागीय उन्नति दे देने से तो सफल विधान का निर्माण नहीं हो जाता। कॉमन-समा की सफलता का रहस्य उसके संरक्षण में तथा उन उद्देश्यों में जिनके लिए यह मजबूत प्रयत्न होता है निहित है। यह समझना भी आवश्यक है कि कॉमन-समा राष्ट्र के समस्त मनो तथा हितों का पूर्ण रक्षण नहीं है। यदि वह ऐसी होती तो घायल अपन काम को नहीं कर पाती। कारण यह है कि वे मत और धर्म एक दूसरे से इतन भिन्न हैं कि यदि समा इनके पर्याप्त अंश को प्रतिनिधित्व देती तो उसका संरक्षण स्थिर-सुख हो जाता और वह किसी एक समरस नीति का निर्माण नहीं कर पाती। कॉमन-समा का जीवन छायात्मक लोकमत के ऐसे प्रथम सूत्रों के प्रतिनिधित्व पर निर्भर है जोकि साधारण ऐसे साधन का निर्माण छत्र कर सके जिसके पीछे कि प्रभावशाली बहुमत हो। हमसे सरकार प्रशासनिक विधा-कलापो में अविच्छिन्नता बनाए रखन में समर्थ होती है। सरकार का निर्माण करना और सांख्यिक न्याय-संशोधन के लिए उसे औपचारिक प्राधिकार देना या न देना कॉमन-समा का प्रथम कार्य है जिसके ऊपर अन्य समस्त कार्य निर्भर है।

इसका अर्थ यह है कि कॉमन-समा का जीवन सम-गठित के द्वारा ही चलता है। वह ही मे आधार है जिनके ऊपर समा की एकसुत्रता अवलम्बित है। केवल कुछ अपवादों को छोड़कर समा के सदस्य का एक का भी अन्धता अवश्य होता चाहिए, सभी समा अपना काम अच्छी तरह कर सकती हैं। दार्शनिक अपने अध्ययन-काल में इस आवश्यकता पर आँसू बहा सकता है। वह कह सकता है कि इससे तो व्यक्ति की भावना का एक की बेसी पर बलिदान हो जाता है। वह उन्हें बर सकता है कि इससे तो सदस्य ऐसे मामलों पर जिनके बारे में उन्होंने चाहे समा में बाद-विवाद भी न मुना हो विभिन्न गुणों में बँट जाते हैं। वह समा में अतिमहत्त्व के अधिनायकत्व के बारे में त्रौणपूर्वक सिला सकता है। तब इन भावनात्मक विचारों के समया विपरीत है। बहुत कम अवसर ऐसे होते हैं जब कि औपचारिक सदस्य अपने एक के विरुद्ध विमर्श कर जब कि वह एक सत्ताहीन हो मत देने की सोचना है। स्पष्ट से यह निश्चित होता है कि जब इस प्रकार मत देने की भावना अत्यन्त तीव्र होती है सदस्य उसका पालन करता है। यह सोचना मुश्किलपूर्वक है कि बाद-विवाद के मामला में सदस्य को प्रत्येक विषय पर ही अपनी एक अलग राय रखनी चाहिए। समा तो नाम के निमित्त है सदस्य का कार्य यह है कि वह बड़ी बड़ी प्रकृतियों का समझन करने के लिए प्रयत्न रहे जिनकी सामान्य विधा को वह मोटे तौर पर स्वीकार करना हो। यदि उनकी अन्तर्गतता इतनी मोटे हैं कि वह प्रत्येक विषय पर मतदान करने के पूर्व उनका मूलम पटीराम आवश्यक समझता है तो उसके दृष्टिकोण पर उचित टिप्पणों यही है कि वह किसी विधान-समा का सदस्य होने योग्य नहीं है।

मन्त्रिमंडल के अधिनायकत्व का प्रश्न जटिल है और मैं उस पर अपने अध्याय में विचार करूँगा। सभा के स्वरूप को समझने के लिए पार्लो आवश्यक चीज यह समझना है कि विधान के अन्तर्पक्ष करने का काम न मया था है और न होना चाहिए। उसका प्रमुख कार्य सरकार का निर्माण करना है और जब तक यह सरकार उसकी विश्वास-पान रहे, तब तक उसका यह कर्तव्य है कि वह उसकी पहल का स्वीकार करे। कॉमन-सभा और मन्त्रिमंडल के इस सम्बन्ध में यह निश्चय हो जाता है कि जो भी कानून पास हो, व एम एन चाहिए उनके बारे में महत्वपूर्ण लोग मत विहित हो। यह उस समय और भी विद्यमान रूप से जाता है जब कि सभा के सम्मुख कुछ बड़ी बड़ी समस्याएँ विद्यमान हो। यदि वह स्वयं को इनमें से केवल कुछ समस्याओं तक ही सीमित न रखे तो वह अपना कार्य विस्तृत न कर सकेगी।

इसलिए सभा का पहला कार्य यह है कि वह सरकार का निर्माण करे और उसे विधान में पहल करने का अधिकार दे। वह इन कार्य को निरंतर प्रचार करती है, इसका निश्चयन में उस समय नहीं है जबकि मन्त्रिमंडल के निर्माण की समस्या पर विचार करेगा। यदि हम यह मसलें कि सरकार अस्तित्व में है तो उन समय सभा के क्या कार्य हैं? वे कार्य हैं विधानों का सामान्य स्ताना जनता का हित रखने की सुझाव देना, वाद-विवाद करना। वाद-विवाद के द्वारा प्रमाण किया जाता है कि संविधान को बनाए रखना या तो जो कुछ किया जा रहा है उसके महत्व के सम्बन्ध में जनता को शिक्षित किया जाये। सभा का एक प्रमुख कार्य है जिसका अर्थ यह मूल मनीषात्मक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक सदस्य को अपनी प्रतिष्ठा बनाना है और दूसरा नहीं बना पाता। इसका प्रभाव सरकार के सदस्य चुनने पर भी पड़ता है। अंततः यह प्रश्न है कि व्यक्तिगत सदस्य को कॉमन-सभा के कार्य में क्या स्थान प्राप्त हो। उनमें से प्रत्येक विषय पर प्रथम प्रथम विचार करने की आवश्यकता है।

वह स्मरतव्य है कि मैंने यहाँ पर यह मान लिया है कि वित्त का परीक्षण और निरीक्षण कॉमन-सभा का प्रमुख और विद्यमान कार्य नहीं है। मेरा ऐसा ही विचार है। वित्त नीति से प्रमुख कोई वस्तु नहीं प्रत्यय उसकी एक अभिव्यक्ति है। यह निश्चय करके कि उसे हमारे अर्थों में क्या करना है सभा एक प्रकार से यही निश्चय करती है कि उसे वित्तीय क्षेत्र में क्या करना है। सभा में वित्त-मंत्री का प्रधान-मंत्री के पश्चात् प्रथम स्थान है। उसके कार्य का उसके अन्य साधियों द्वारा किए गए कार्यों की अपेक्षा कम ही परीक्षण हो सकता है। कॉमन-सभा जैसी एक बड़ी संस्था आगमनाया का विवेचन नहीं कर सकती वह तो केवल उस साधारण नीति का ही विवेचन कर सकती है जो कि इन आगमनाओं के पीछे रहती है। वहस्य कह सकते हैं "हमारी इच्छा है कि माध्यमिक विद्या पर अधिक ध्यान होना। वे वाद-विवाद में यह नहीं कह सकते कि ऐसेक के नष्टी रकता के लिए अधिक धन दिया जाना चाहिए था। उनका यह कहना एकेक निर्वाचन-क्षेत्र के सदस्यों के लिए तो अधिक ही सकता है, लेकिन संसदीय व्यवस्था के सदस्यों के सदस्य सुरक्षित यह कहने में कि सभा का बहुमुख्य समय देश के

किसी एक विशेष भाग की विनायकों को बुर करने के लिए नहीं है। यदि कॉमन-समा मजदूर आर्थिक दृष्टि से आत्मकलाओं का परीक्षण करना चाहे, तो उसे ऐसा करने के लिए कुछ विशेष उपकरणों का निर्माण करना होगा।

अर्थशास्त्र की समस्या के सम्बन्ध में भी यही सच है। सम्पूर्ण समा में बजट का विशेषण अधिक से अधिक करारों के सामान्य सिद्धान्तों का वित्त-मन्त्री के प्रस्तावों के सम्बन्ध में प्रयोग ही हो सकता है। उससे यह निवेदन किया जा सकता है कि उसका कामकाज बहुत अधिक रकबा है या वह कमियों पर पर्याप्त कर नहीं लगा रहा। उसे यह चेतावनी दी जा सकती है कि वह जनता के योगदान पर बहुत अधिक बोझ डाल रहा है। यह कहा जा सकता है कि माटरलायों पर उसका कर उस प्रकार के बाह्य का जो विशेषी बाजार में अपना स्थान बना सके उत्पादन निरस्तकृत करता है। उससे यह मा- रखने की धारणा की जा सकती कि नगरभूमि मूल्य (urban land value) के दर में उसने पास उपलब्ध राजस्व का एक सफल मोल है। मरम्मत दृष्टि के सम्बन्ध में उसकी उदारता का जोर-शोर से बखान कर सकते हैं। उसे यह चेतावनी दी जा सकती है कि वह भूमि के द्वारा अधिक धन एकत्रित कर रहा है और कर के द्वारा धन एकत्रित करने की ओर से उदासीन है। लेकिन वित्त-मन्त्री की चाहे विपत्ती आलोचना की जाये प्रतीक समा में उनका प्रभाव विविध नहीं प्रभूत साम्राज्य ही होगा। मोटी कपड़ेबाजों का नियन्त्रण उसे अपने ही हाथों में रखना पड़ता है। इनका विफल यह है कि समा स्वयं ही विज्ञान बनाए और फास तथा अमरीका दोनों का अनुभव यह बताया है कि इसका अर्थ दूषित विधान है। बजट-निर्मात्री समिति का उत्तरदायित्व इतना विधीन होता है कि वह व्यावहारिक एका या अनुभवता नहीं का पानी। पुनरुत्पन्न यह समय है कि कुछ निम्न उपकरणों द्वारा कॉमन-समा वित्त-मन्त्री के ऊपर अपना प्रभुत्व बमाने में समर्थ हो जाये। लेकिन हमें इसमें संदिग्ध है कि ऐसा होना पर एक बेहतर वित्त-व्यवस्था का निर्माण हो सकेगा। लेकिन कॉमन-समा के पास ऐसे उपकरण नहीं हैं और उनकी अनुपस्थिति का तात्पर्य यह है कि या तो बजट वित्त-मन्त्री का बजट होना चाहिए, उस रूप में विषय कि वह जनता उत्तरदायित्व सम्हालने के लिए तय्यार हो या कॉमन-समा दूसरे वित्त-मन्त्री को और धायक दूसरी सरकार को प्राप्त करे। लेकिन कॉमन-समा ऐसा करम उठाने के लिए तय्यार नहीं होनी और इतना अर्थ यह है कि वह विशेषी बल के माध्यम से वित्त मन्त्री की और प्रनायकों से सरकार की आलोचना करनी है और अतिनि निर्धम निर्वाचन में निर्वाचकों के ऊपर छोड़ दिया जाता है।

सरकार का निर्माण करने के पश्चात् हमारी पद्धति में सबसे महत्वपूर्ण कार्य विधायकों को सामन बना है। कोई भी सरकार प्रत्यक्ष शक्ति को संपुष्ट नहीं कर सकती और कुछ सरकारें कुछ शक्तों को चाहे वे महत्वपूर्ण हो या महत्वहीन संगठित करने में कुछ तरह अन्याय रखती हैं। औद्योगिकशास्त्रिक शासन की यह विधायिका है कि यदि किसी व्यक्ति या व्यक्ति-समूह को कुछ शिकायत हो और वह समा के किसी सदस्य को यह शिकायत समा में उपस्थित करने के लिए तय्यार कर के तो समा

उसकी इस विरामत पर अवश्य विचार करनी। वह भी जो ब्रिएन हो (Mr O'Brien) मन्त्रों हैं जिन्हें वातुल की आवश्यक प्रथिमा के बिना विरामत दिया जाता है। वह भीमती सेबिज हा सनती है जिनके ऊपर पुतिम कोई मन्त्रण आरोपित करे सेबिज जिन्हें व्यापारिक दायमुक्त कर दे परन्तु इसके बाद भी पुतिम उनसे बढोर सवास पुछे। सहकारी आन्दोलन बित्त-मंत्री द्वारा जिन्होंने पहले एक प्रसिद्ध अधिवक्ता के रूप में कह दिया था कि जूनि सहकारी आन्दोलन मुनाफा नहीं बनाता भग उस पर कर नहीं लगाया जा सकता अपने नाम पर लगाए गए कर के बारे में दृष्ट हो सकता है। यह भी पिन्ममोल हो सनते है जो व्यापारिक दायों के स्वामियों के साथ मद्ध्यवहार करने की सरकार की मस्वीकृति से बिन्दु बीछापूर्व सवर्ष कर रहे हैं। वह विरोधी बल हो सनता है जो या तो मन्त्रण के ऊपर अविश्वास का प्रस्ताव कर रहा हो या विदेशी मामलों के संचालन में किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में विचार-विनिमय करने के लिए एक दिन की मांग कर रहा हो। विषय का कार्य महत्व नहीं है। पद्धति इसकी सरल हो सनती है कि मंत्रियों से केवल एक मीमांसा प्रश्न ही पूछा जाय या इतनी माटनीय हो सनती है कि आवश्यकता के प्रश्न पर सदन को भंग करने के लिए प्रस्ताव उपस्थित किया जाये। आवश्यक बल यह है कि विधान का चारों बल वास्तविक हो या अवास्तविक मानने लाया जा सनता है और सरकार को जहाँ तक हो सके विधान का संतोपजनक उत्तर देना चाहिए।

इस अधिवक्ता के महत्व के बारे में किसी भी व्यक्ति को जिसने उसका प्रयोग देखा है कोई संदेह नहीं हो सनता। प्रसासन के संतोपजनक संचालन के लिए इससे अच्छी और किसी पद्धति का आविष्कार नहीं हुआ। इसका अभिप्राय यह है कि सरकार को प्रत्येक कार्य दिन के प्रकाश में करना होगा और उसको जबाब भी दिन के प्रकाश में देना होगा। मैं यह नहीं कहता कि इससे स्यास का आस्वादन मिलता है। लेकिन इससे यह आश्वासन अवश्य मिलता है कि स्यास के दोषारोप की सजग छान-बीन होगी। वह मंत्री जिसके विमान के विच्छ होपारोप किया जाता है वह समझता है कि उसकी अग्नि-परीक्षा है। वह समा को विश्वास दिलाने के लिए बाबुर होता है वह आलोचक से अपनी ध्याख्या स्वीकार करवाने के लिए सत्सुक होता है। ऐसे बहुत से प्रकरण हैं जिनमें कि व्यक्तिगत सदस्य को अपनी जड़ी से कड़ी विधान का शीघ्र ही परिष्कार मिला हो। वैबिज प्रकरण में सम्पूर्ण समा इत्मत मेबमाभा की मूलकर उस सदस्य के पक्ष में भी जिसने समा के स्वमत का प्रस्ताव उपस्थित किया था। इन सम्बन्ध में गृह-मंत्री को विवध होकर पुतिम की सन्निधों तथा प्रथिमा के सम्बन्ध में विचार करने के लिए एक राजकीय आयोग की नियुक्ति करनी पड़ी थी। इस आयोग ने पस्सि अधिकारियों की शक्ति में महत्वपूर्ण परिवर्तन किए।

निसर्ग इस पद्धति की कुछ सीमाएँ भी हैं। उसकी सफलता बहुत कुछ इस बात पर निर्भर रहती है कि बल का उसके सम्बन्ध में क्या दृष्टि-बिन्दु है। मित्रा के केवल कुछ ही मत सफल हो सनते हैं। यदि किसी बित्त-मंत्री ने व्यक्तिगत अधिवक्ता के रूप में सहकारी आन्दोलन के ऊपर कर सपास का विरोध किया हो और बित्त-मंत्री बल पर

उसे सहृदयी बाम्बोकरन के ऊपर कर लगाने परों और इस पर उसकी बाधोचना हो तो वह अपना मुँह फिटाने के लिए अपने दल की तड़ितपक नीति का ही बहाना लोरेगा। अभी हाक के एक प्रकरण में नौवैदिक नावयना (Admiralty dock-yards) के औद्योगिक मजदूरों को अपने अधिपतिताओं तथा वापारोया का नाम दिए बिना ही पकड़ कर दिया गया। वह बात ब्रिटिश पराम्परावा के विन्कुस विन्द थी। सम्बन्ध मंत्री ने अपने दल से विचक्षण रहने की माग करके तथा बन्ध्याय के अनुत्तरित आरोपों का इस प्रश्न के ऊपर इतक प्रमाण बहुरत का प्रयास कर टाक दिया। १९३९-३७ के विन्कुस-नीति उपद्रवों में सरकार ने ब्रिटिशों से बचने का यह रास्ता निकाला कि इस प्रश्न के ऊपर एक राजकीय आयोग की नियुक्ति का बन्धन किया और बन्ध्याय का कुछ ऐसी धरों के साथ नियुक्त किया कि सिक्कामन के मूक कार्यों पर विचार करना जिसके लिए उसकी स्वायत्ता की गई थी बाधाय की जाय-यङ्गास के साथ सहायक था। एक यह हुआ कि अन्तर्गत धीरे-धीरे मूक प्रश्न को विन्कुस मूक गई। यह भी हो सकता है कि मंत्री किसी प्रश्न का उत्तर देना इस बाजार पर अम्बीकार कर दे कि यह सार्वजनिक हित में नहीं है बल्कि यह सिक्कामन के अधिनियम को ही अम्बीकार कर सकता है चाहे सिक्कामन सम्बन्धी धरम ही पर उनके लिए ऐम प्रमाण चुटाना सम्भव न हो जिससे कि कामन-सभा में मंत्री का स्थिति को उत्तर पढ़ें-बता हो।

य सब महत्त्वपूर्ण सीमाएँ हैं लेकिन उन्हें घुस रूप में टोकर-नीट कर देकर मने के बाद भी उस अधिकार का महत्त्व बहुत अधिक है। यह कहना किन्तुमा ठीक है इसे एक छोटे से उदाहरण में समझा जा सकता है। मन्त्रीय पत्रों के बारे में यह सही है कि अन्तर-योर्प्टिम न विद्विन्कुस ट्रायल में जमा प्रार्थना किया था उनके बाद न ब्रिटिश सरकार के चौबीस बने भी लक्ष्य नहीं रह सकते थे। ब्रिटिश प्रधान मंत्री को इस बात का पता होता है कि ऐसे सारों के बारे में सभा में जमान प्रश्न किया जायगा और यह सभा के सम्बन्ध हाल के पूर्व ही उसका त्यागपत्र क देता जिससे वह सभा के सदस्यों को विचारात बिना देगा कि इस प्रश्न पर वह पूर्व कर दे मना क साथ है। सिक्कामन को मायन काने की मक्ति का आशय सिक्कामन क प्रति ध्यान बाह्य करने की मक्ति है। वह सरकार जिम विरुद्ध के द्वारा अपने कार्यों की सधार्ई देन के लिए बाध्य किया जागा विरुद्ध के निवारण की धम्मक चट्टा करती है। यह उत्तरदायी ध्यान के लिए जमान बन्धन है। जहाँ यह मन्त्रि नहीं हानी बनी सम्बन्ध के लिए काठी गुंजाइश रहनी है। जमान क अन्तर मन्त्र्य अधिक जगता उन समय बनी है जब कि वह अपनी गिरावट प्रस्तुत करने और केन्द्रीय सरकार के ऊपर उसके विचारण के लिए जग जमान में धम्मक है। जीवन-संज्ञा इसे कर लेनी है और जमी-जमी तो इतने जोर के साथ करनी है कि मधुमे रोग का ध्यान अन्तर्गत प्रश्न के ऊपर केन्द्रीयमन हा जाता है। सैब्रिय-यन्त्रण उन समय तक अब तक सरकार न विचारण के निवारण का आश्वासन मनी न दिया था पत्रा क लिए एक धीरे-धीरे मन्त्रीय मन्त्राचार रहा था। क्या कोई मन्त्रि के लिये स्टेनोग्राफर क विषय में यह साथ सकता है कि उसके साथ भी यदि वह जमान पत्राओं के अन्तर्गत अन्तर्गत ध्यान के बारे में जमान देण के संसक-

एक में सिकायत करती तो ऐसा ही व्यवहार होता ?

विधायक को सामने आने की शक्ति के समान ही सूचना प्राप्त करने की शक्ति भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। संसदीय शासन का जीवन और मरण इसी बात पर निर्भर है कि वह सरकारी विधिविधियों और सरकारी प्रक्रियामा के बारे में कितना ज्ञान प्राप्त कर सकता है। मैं उदाहरण के लिए जुलाई २१ १९३७ को लेता हूँ। इस दिन श्री ईडन स्टेन और जॉन बिपमर अपनी वैधैतिक नीति गाढ़ी तरह में हमों के आगत आन्ध्र-प्रदेशी सम्मेलन पर फिक्शन-प्रतिबन्धन के प्रभाव इन देश में बेरोजगारियों के विरुद्ध प्रचार चीन जापान के सम्मेलन के साथ राष्ट्र-संघ की प्रासंगिकता ब्रिटिश राष्ट्रपति के बलि में दिए गए एक भाषण तथा राष्ट्र-संघ के सुधार के बारे में भाषण देने लगे। श्री इफ वपुर जनरल फेंको के आक्रमण से ब्रिटिश जहाजी बेड़ की रक्षा योजना जहाजी नावयानों (dock yards) में बारबार की हाफ्त सिंगापुर में मस्साहा की उपसभिया वीयरलस में टीका छानने के नियम, और पोर्टलैंड बिल्डिंग के समीप समुद्र के अन्दर के प्रयोगों की बखर्च में एक आरोपित बाइ के बारे में प्रकाश डालते हैं। श्री आर्मी गार उपनिवेशों के भूमिका के सम्बन्ध में परामर्शीय समिति रिनिडाई के औद्योगिक उपकरणों अथवा प्रोटेक्टर की वासता गाइनेरिया के विमान और जमीनार के कर्म-उद्योग आदि के विषय में प्रश्नों के उत्तर देने लगे। सर जामस इम्प्रेसेप नौका-वास्तु के कारखानों हवाई जहाजों के सम्मरण और प्रतिरक्षा की विविध समस्याओं के बारे में अपनी नीति स्पष्ट करते हैं। विमान चालन मातायात मार्ग की दुर्भंगताओं, रैम के डिम्बों के सम्मरण विद्युतीकरण की देरी कोमते से लेक निकामने और बीरह से समूह वर्ष तक की घबराहट के बच्चों के अर्द्ध नियोजन के सम्बन्ध में कारखानों के प्रमाण इन्स्पेक्टर के कर्मचारी वर्ग की उपयुक्तता आदि के ऊपर प्रश्न पूछे जाते हैं। कहने का सार यह है कि सदस्यों में तो सूचना प्राप्त करने की असीम क्षमा और सरकार में इस क्षमा को तृप्त करने की अपूर्व उत्कंठा रहती है।

प्रश्न पूछने की इस प्रक्रिया के महत्वपूर्ण परिणाम निकलते हैं। इससे राज्य के विभागों का काम जनता के सामने आ जाता है। इससे उन्हें यह ज्ञान हो जाता है कि वे जनता की ऐसी सनकें निगलनी में कार्य कर रहे हैं जो उनकी विपुलता और ईमानदारी की सतत जाँच करती रहनी। वह निविक सचिव की बहुत सी नीकरघाती प्रवृत्तियों को यदि पूर्ण रूप से रोक नहीं सकती तो कम अवश्य कर देती हैं। वे व्यक्ति जिन्हें अपने निर्णयों के लिए दिन-रातिपिन उत्तर देना पड़ता है, इस बात की चेष्टा करते हैं कि वे अपने इस कार्य को अच्छी तरह कर सकें। यदि कोई व्यक्ति प्रश्नों के इस बम का कुछ समय तक निरीक्षण न करे, तो उसको यह अवश्य ज्ञान हो जायगा कि प्रशासन को जनता के लिए सुबोध बनाने की दृष्टि से यह प्रक्रिया अत्यन्त उपयोगी है। केवल इसका दुम नहीं समाप्त नहीं हो जाता। कुछ प्रश्नों से मन्त्रालय विभाग की दोषपूर्ण स्थिति का ज्ञान होता है। मंत्री को यह पता चल जाता है कि उसके उत्तर अक्षतोपमच रहे हैं। वह सोचता है कि उसे अपने विभाग हाथ दिए गए उत्तर से जाये बढ़ना चाहिए। वह उद्य

विभिन्नता सामान्य लोचनता को जो यह आप्रह करता है कि और अधिक ज्ञात होना चाहिए अनुष्ठान करने के लिए उत्सुक होना है। यह समस्या पर रिपोर्ट देने के लिए प्रत्येक समिति विभागीय समिति अथवा राजकीय आयोग को नियुक्त करता है। या यह सोचता है कि ज्ञानता के मामले एसा कोई प्रयत्न ज्ञाना चाहिए जिसके बारे में पर्याप्त ज्ञानकारी न हो या जनता की भावना सम्मिलित और उद्दिष्ट हो। समिति तथ्यों की खोज करेगी और ज्ञान मंत्रालय में नीति की रूपरेखा निश्चित करेगी जिस पर आगे चलकर कार्यवाही सम्मिलित होगी।

सर्वकारीय प्रवृत्ति की प्रतिनिधित्व सामान्य के प्रति एक बहुत बड़ी देन समितियों द्वारा किया गया अनुभवान है। इन समितियों में जो प्रतिवेदन प्रकाशित किए हैं अपने-अपने विषय के इतिहास में सीमा-विस्तार है। पिछले कारखाना की स्थिति के मुद्दा निर्देश विधान-सुधार वास्तव-मंत्रालय के पुनर्गठन मंत्रियों की समितियों की सीमाओं स्थानीय रूप के विज्ञानों ज्ञान के विषय में हमारे पास जो प्रतिवेदन हैं उन्होंने सरकार की नीति पर गहरा प्रभाव डाला है। जब १९३६ के बजट के समय से पूर्व ज्ञान का ज्ञान से लोचनता अनुष्ठान हुआ गया था पोस्टर-समिति न उसे संतुष्ट करने की विद्या में आदर्श रूप ज्ञान कार्य किया था। यह एक ऐसा कार्य था जो केवल साधन-आत्मक वास्तव में ही संभव हो सकता था। यही बात फिटर-समिति की द्वितीय ज्ञान के बारे में भी जिसके फलस्वरूप लोचन-मंत्रालय से एक विभाग के एक स्थायी समिति को बना दिया गया था सही है। एक दृष्टि से फिटर प्रतिवेदन सामग्री में पोस्टर के प्रतिवेदन में भी अच्छा है। पार्स समिति एक ऐसे आरोग्य कर्मक के ऊपर लागू हुई थी जो सर्वत्र ही चर्चा का विषय था। लेकिन फिटर-समिति ने एक ऐसे कर्मक की छान-बीन की थी जो अधिक स-अधिक छ-माल व्यक्तियों को ही ज्ञात था और जिस मुक्त कार्यवाही द्वारा बड़ी मुश्किल से जनता से छिपाया जा सकता था। यह प्रकारक इस बात का मजबूत प्रमाण था कि सर्वकारीय वास्तव में विभिन्न समितियों में ज्ञान-समा की परम्परा को जो नीच-राही की बुद्धिमत्ता के विरुद्ध सर्वप्रथम कदम है किना विकसित कर लिया है।

जब सामान्य की भी विचारपूर्वक सामान्य ज्ञान के माध्यम की मांग कुछ सीमाएँ हैं। समितियों द्वारा किए गए अनुसंधान का मुख्य अधिकतर समितियों के मरस्य-वृत्त पर निर्भर है और यह कुछ ऐसी दोषक समस्याएँ लड़ी कर देता है जिस पर दो ध्यान करना ठीक होगा। हाँ सचता है कि सरकार विद्यमानता की दृष्टि में समिति को पर्याप्त सचि-वीय महापता न दे। उसके मरस्य की नियुक्ति उनके ज्ञान के आधार पर नहीं प्रत्युत ज्ञान आधार पर कि सर्वो अपने किसी विषय की प्रतिष्ठा देना चाहें हो सकती है। जनता एक अविभाज्य नियुक्तियों अविभाज्य-प्राप्त राजनताओं में से और अधिक एक समिति सबके अधिकारियों में से जिनके विचारपर पर विचारस किया जा मने-करता है। प्रतिवेदन में सर्वसम्मति बनाए रखने की नीति-ज्ञान रखी है मानो निष्कर्षों का महत्व विद्यमान की दृष्टि में नहीं प्रत्युत उन निष्कर्षों को विचारण में है जिनमें वर्तमान विचारों को ज्ञान से ज्ञान जोड़ें। स्थानीय सामान्य के सम्बन्ध में नियुक्त किए गए राजकीय आयोग का प्रतिवेदन इन जनता का मजबूत उदाहरण है। अपने मरस्य

परिष्कार के पश्चात् वह उन समझौतों का सामना करने से विनम्र परीक्षण करने के लिए उसका निर्मात्र किया गया था मुजर जाता है। उसका महत्व कम-साध्य विधेयकर उन अधिकारियों के साक्ष्य में है जो उसके सामने उपस्थित हुए थे। साध्य व्ययता माहवगुर्ण है मकिन किसी राजनीय भाग्य की नियुक्ति केवल साध्य भाग्य करने के लिए ही तो नहीं होती।

इन समस्त दुर्बलताओं के बावजूद भी इस पद्धति का महत्व बहुत अधिक है। इसके तथा सरकारी प्रकाशनों में उपलब्ध प्रचार मूचना के बिना हमारे पास ऐसा कोई तन्मात्रक आधार नहीं होता जिसके द्वारा हम जीवन की अपनव सामग्री से कुछ सिद्धांत को निवृत्त कर सकें। हमें यह याद रखना चाहिए कि कार्य माहसं ने पूरबी बाबी सम्मता की थी मसंमा की हू वह मुख्यतः उन तन्मा के ऊपर आधारित है जो उमे संसदीय दबाव के कमस्वरूप की गईं छान-बीनीं के द्वारा उपलब्ध हुए थे। चाहे किसी भी दृष्टि से देखा जाय यह एक अद्भुत तन्मा है। यदि हम इन प्रवृत्तियों की फासीबादी देशों के सीमित और अस्पष्ट प्रचार से तुलना करें, तो इस तुलना से मनीय पद्धति का पक्ष ही अधिक पुष्ट होता है। मात्रसत्तर में एक भी एसा फासीबादी देश नहीं है जो नतनों और मूल्या बरोजगारा की सत्या एव उनक साथ किए जाने बाक व्यवहार तथा न्याय-व्यवस्था बाकि के बारे में जनता को सही मूचना देता हो। एसा कोई भी फासीबादी देश नहीं है जो कि जनता को बड़-सत्यो तक के परिधायो के बारे में बिचार-विमर्श की अनुमति देता हो। तन्मा को बना देना और फिर राजनीति के ऐसे सिद्धांत निकालना जो इन तन्मा का मन्तव्य स्पष्ट करते हों एक एसी सफलता है जिसका सही मूल्यांकन मुगम नहीं है।

क्राम-समा बाह-बिबाह की भी समा है। यूरोपिय बयों में इन कार्य के महत्व को कम करने की प्रवृत्ति दृष्टिगत होती है। इस सब कुछ न कुछ माना में भूतकाल के मकत है। हम सममता से यह मान लेते हैं कि संसद् का महान बुध यह है जिन हम विस्मृत कर चक ह। ईश्वरिन के समय के राजनीतिज्ञ बहते हैं कि समा अब ऐसी नहीं है जैसी कि बड़ थी एस्किवक के समय में थी। थी एस्किवक के समय के राजनीतिज्ञ बड़ी वेदना से अर्बिस्टन तथा डिजरीली के महान दिषसो को बार देखते थे। इसमें कोई भी संदेह नहीं कि उन दिना का कोई कुछ सदस्य बाह भरकर पिट और फलस के दिना को याद करता होगा। कहा जाता है कि बाह-बिबाह अब पुरान सत्यो के नहीं रहे थे ममा के मतानो द्वारा बहुत अधिक नियमित हुने है, वे केवल रिक्त और यांत्रिक प्रवर्तनमात्र हैं क्योंकि १९ प्रतिष्ठत स्थितिमा में बाह-बिबाह के परिधायों का पहल से ही भाग रहना है। समा के ऊपर मु ह बिगाड़ना राजनीतिक नपट का प्रमाण सा बन गया है। कार्कायित जैसे बहुध में न्यविन इस 'बातूनी बुकान' की ओर देखकर बाह भरते हैं।

इस सबके प्रत्यक्ष में कहने के लिए बहुत सी बातें हैं। इनमें से एक प्रमुख बात यह है कि बातूनी बुकान का विनम्यसमाहार-सिबिर (कंसं-उम-कम्प) है। उम ममात्र का जो बिचार-विमर्श कर सक्ता है मकिन को कोई बाहव्यकता नहीं है औरबितनी ही अधिक बिचार-विमर्श में बकि बनाए रखने की दमता होगी जगती ही अधिक उन मम

झोते को बनाए रखन की संभावना होगी जो कि सामाजिक शांति को बाधम रखता है। मेरे विचार से बाह-विबाह के स्तर में बर्षी मानने का कोई कारण नहीं है। समा की प्रवृत्तियाँ उसी प्रकार बदल गई हैं, जिस प्रकार उनकी रचना बदल गई है। जब समा मुख्य रूप से उच्च वर्ग को ही प्रतिबिंबित नहीं करती। अब समाओं की शिला मिन्य है उनकी विवेक्य-विषय-वस्तु मिन्य है और बाह-विबाह की धैवी मिसर्यत अपने का नर्त परिस्थितियों के अनुकूल डालती है। यदि कोई व्यक्ति माठ या सत्तर वर्ग पूर्व के मस वीय बाह-विबाहा को पढे तो उसे संवेष्टेष्ट अपाठ्य ऐतिहासिक भाषणा को छोड़कर और सब कुछ मिन्या। वह वही पुनरावृत्ति वही धरर मवार नेताधा वा वही माधिम्य पायेगा। अब भी म्ईइस्मन पबबाव दे बकने है समा रिक्त हो जाती है टीक उसी प्रकार जैसे कि वह थी बेल्बिन के बैठ जाने पर रिक्त ही जाती थी। एक या बा पीडी पूर्व भाषण समा के मस को उसी प्रकार नहीं बदलते ये जिस प्रकार कि वे भाव नहीं बदल पाते। संसदीय शासन का आलोचन भी यह घाना नहीं रखना कि वे बाले। इसको मानन का इसी प्रकार कोई कारण नहीं है जिस प्रकार कि यह मानन का कि कुछ प्रबलन ईसाइयों के एक समाज को उष्ण कर देंगे। बाह-विबाह की प्रथिया में आकस्मिक म्हापरिवर्तन की भाषा रखना निर्मूल है और जो लोग समा की इन भाषार पर आलोचना करते हैं कि उनके भाषणों का दुरापी प्रभाव नहीं होगा काष्ण में वे बौद्धिक शक्ति के विचार ह।

बास्त्र में संसदीय बाह-विबाह एक सजी धारावाही प्रथिया का एक भाग है जिसका कोई एक भाष स्वयं में ही महत्त्वपूर्ण नहीं है। यह आश्चर्य नहीं है कि उरका अभिवास भाष पम्मीर और बनात्कीय ही हो। यदि कॉमन-समा में निरन्तर उत्तजना बनी रहे, तो यह अश्चर्यभासी है कि वह निरन्तर संशान्ति में रहेगी। वह साधारणतः इस बात का संकेत होता है कि मतासक मरकार अब बच की ओर पर बढ़ा रही है। महत्त्व आश्चर्यक महान् बाह विबाह का उतना नहीं है शिलना इस बात का ह कि संयुक्त संसद का प्रतिष्ण निर्वाचका की राम के ठरर बरा प्रभाव डालना है। इस हृष्टि से बाह विबाहों का समित महत्त्व है। वे कुछ है और उनक वा में सहसा ऐखी और भाषणों में जो कुछ लिखा और कहा जाता है वही वह सजीव सामपी है जिसके आभास पर मठवाता की पसर बनती है। बाह-विबाहा के द्वारा ही थी बेल्बिन न विधिग जनता के हृदय में इतना महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त किया। बाह-विबाह के द्वारा ही थी एटकी राष्ट्रीय नेता होने के अपने दाव की स्थापना करण है। थी ईकन धरनी विरग-नीति के पस में जो कुछ कहन ह उनके एक-एक शब्द का विष्णेषक कर लिया जाता है और संसद गण-एक संभव और अनभव धर्ष का ममश किया जाता है। लौकन्य बोसे हुए शब्द से और जम बोसे हुए शब्द के बारे में जो कुछ मथित होगा, उसने जीवित रहता है। इसमें कोई मद्दह नहीं कि बॉर्न बडा अक्षरर इस प्रतिष्ण का एक महत्त्वपूर्ण सूत्र होता है। इस पर विदवान रख मरने है कि एडवर्ड मन्म के अक्षर पर किया गया थी बेल्बिन का भाषण उनक मन्म में किए गए भाषी निर्णय की बुनियादों में से एक होता। बेल्बिन बडा अक्षरर बक एक सूत्र है। संसद महान् अक्षरों के आभास पर ही नहीं बनती।

मेरे विचार से यह भी महत्वपूर्ण नहीं है कि समस्त सामान्य परिस्थितियों में बाह्य विचार वा परिणाम-विचार-विमर्श के पूर्व ही ज्ञान रहना है। यही वा दम-पद्धति वा उद्देश्य है। यदि सङ्घारी पक्ष और विरोधी पक्ष ध्यान रूप से अपने-अपने अनुयायियों के मनों पर निर्भर न रह सकें तो यह मानना होगा कि सरस्यो का निश्चय बहुत अस्थिर है। नीति की प्रकृतियों में कुछ ठो एम्ब्रूवता रहनी ही चाहिए यदि सदस्य सङ्घार को हर बार पर-व्युत् करने की टांग न तो हमारी स्थिति बड़ी गंवार हो जायगी। सरस्य अपन विस्थापन के विरुद्ध मत नहीं देने। वे यही कहते हैं जो पावर हम सब वहीये कि मर्यादा से इस विषय विचरक की इस विषय धारा को पसर नहीं करते अपना वे नीति के इस विषय मूढ़ के प्रतिफल ह कि भी वे सरकार बदलने की अपेक्षा अपन द्वारा समर्पित सरकार को ही मत्ताक रखना पसर करते क्योंकि ही सकता है कि वे दूसरी सङ्घार के विरुद्ध और भी अधिक बार मत दें।

यह भी नहीं मूल्यना चाहिए कि मन्त्रालय मन्त्रालय का सिद्धांत भारत में सही नहीं है। सरकार कुछ सीमाबा से परे अपन बहुमत को सीधे का ताइत नहीं कर सकती क्योंकि ऐसा करने पर उसे अपन बहुमत को खोने का मख रहता है। श्री बैस्डमिन को सर सेमुअल होर का त्याग करना पड़ा था श्री चेंबरलेन को अपने राष्ट्रीय प्रतिरक्षा अंशदान (National Defence Contribution) का मूल स्वरूप छोड़ना पड़ा था। १९२३ में एक्स पार्टि ओ ब्रियन (Ex parte O'Brien) के सम्बन्ध में श्री बिबनेन को मूल के पश्चात् यह प्रस्ताव किया गया था कि अतिपूति वा एक विधेयक पास किया जाय जिसमें सभी निरक्षर ब्रियन हुए व्यक्तियों को प्रतिफल के उनके कानूनी अधिकार से वंचित कर दिया जाय। सम्पूर्ण सभा ने इस सिद्धांत का विरोध किया और इसे ग्याय वा उन्मूलन बतलाया। सरकार को सभा की राय के जाने सुकना पड़ा था। वास्तविकता से रहित मन्त्रालय बाह्य-विचार का एक निरी मूच्छेता है। यह उन कम्बी बाह्य-विचारों को जो इनो द्वारा नीति-निर्धारण के पूर्व बकती है तन्वो के मूल्यांकन मतो के प्रकाशन और सम्बद्ध हितों के प्रकाशन की मूल जाता है। वह इस बात को भी मूल जाता है कि एक अपन समर्थकी की रायों और भावनाओं को ज्ञात करने के लिए निरन्तर व्यग्र रहते हैं और कॉमन्स-सभा में श्रेष्ठ नपुत्र की कमी ही यह समझने की योग्यता है कि नेता अपन अनुयायियों को किस सीमा तक अपन साथ स चल सकता है। बाह्य-विचार सरकारों को सामान्यतः इसलिय नहीं पसन्द आते क्योंकि सरकार का मुख्य कार्य अपन समर्थकों के आधानुस्य कार्य करना है। जब कोई नेता यह करने में इस सीमा तक असफल रहता है कि अनुयायियों में अक्षय उत्पन्न हो जाय तो फिर यह होता है कि वह १८४९ में पील की तरह वा १९३२ में श्री मन्डलिन की तरह अपन अनुयायियों द्वारा त्याग दिया जाता है। सभा कक्ष में मन्त्र-विभाजन का यह उद्देश्य नहीं है वैसे कि श्री रैम्से म्योर का विचार है कि सरकार के साथ में सभा का विश्वास करने की समझी रहती है। वह सरकार जो इस समझी के अभाव और किसी तरह रह ही नहीं सकती सीध ही सरकार नहीं रहेगी।

कॉमन्स-सभा का प्रकृत्य कार्य उसके समस्त शक्तियों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

इसकी कोमियागिरी का बणेत इसकी व्याख्या की अपेक्षा अधिक सुगम है । सभा में प्रतिष्ठा का निर्माण सीधे योग्यता का फल नहीं होता । सर आर्ने जैमेस जैसे ब्रह्म में प्रथम बोटि के मेबापी व्यक्ति कॉमन-सभा में असफल रहे । उसका ऊपर कबल भाषण देन की प्रतिभा या बार-विबाह की मक्ति का ही प्रभाव नहीं पड़ता । उदाहरणार्थ वह घोषण में ब्रिम्के महत्त्व का श्लोक कॉमन-सभा के बाहर ही था जमी प्रभावित नहीं हुई । ब्रिम् की प्रतिष्ठा सदस्य को सभा में भविष्य महत्त्व दे सकनी है बाहे उसकी मानसिक शक्ति साधारण ही बना न हो । लार्ड एम्पोर और श्री बाल्फोर लोग दोनों ही इस प्रतिष्ठा के उदाहरण हैं । यदि सभा किसी सदस्य की प्रशंसा करती है तो वह साधारणक नहीं है कि वह उसका आचर भी करती हो । वह आचर और प्रशंसा में मद करती है और कोई भी व्यक्ति इस घर को समझ बिना सभा की कार्यवाही को नहीं समझ सकता । सभा उस धाराप्रवाही बहना की अपेक्षा जो अपना नाम काल के लिए बना रहा हो उस धारा बहना को नहीं अधिक ध्यान से सुनती जो एक एक कर अपनी शक्ति भावनाओं के अनुसार बाल गूहा हो या ऐसी कोई जानकारी दे रहा हो जिस वह महत्त्वपूर्ण समझता हो । वह उस बुद्धिमान व्यक्ति पर अधिकारास करती है जो अपना आर्थक जमाने को बेचना करता है । वह उस अपेक्षाक बहना का भी पत्र नहीं करती जो सदस्य को उनकी प्रशंसा के लिए प्रबलन देना मानस पड़े । यदि कोई व्यक्ति बाहर में प्रतिष्ठा लेकर सभा में प्रवेश करता है तो सभा उसे सदेह की बुद्धि से ही देखती है । वह उस व्यक्ति से बूना करती है जो सिखा को एक विद्यपना के रूप में प्रयुक्त करता है । केवल यदि किसी व्यक्ति का आक्षेप उसकी किसी बहुरी मानस अनुभूति के ऊपर आधारित है तो सभा उनका प्रति बड़ा मरद व्यवहार बिनाएगी ।

इस सबके वर्णन करने का मरद उद्य यह है कि कॉमन-लवा एक आर्थक कल्प है और उसमें इन मन्त्रा की सब विद्यपताएँ पायी जाती हैं । इसमें कोई सदेह नहीं कि यह बहना नहीं भी है क्योंकि वे व्यक्ति जिन्हें यहाँ तक साम-साध रहना और माय-याव नाम बहना पड़ता है वस्तुतः मर्त्य की आधुनिक परिस्थितियों में भी एक दूसरे के प्रति सहयोग और मित्रता की आपने विचलित किए बिना मरु रह सकने । ये आपने महत्त्व पूर्ण भी है क्योंकि उनसे मरुक्त समझने का वह आक्षेपक बातावरण तयार होगा है जो मरुतीय धानन का भार है । यदि सरकारी पक्ष विरोधी पक्ष के सामने अधिक की बुद्ध से बड़ा हो तो यह स्पष्ट है कि बार-विबाह बटिन ही जायया एवं धानि अर्थप्रव हो जायगी ।

इन आपनों से एक और अप्यत महत्त्वपूर्ण उद्देश्य पूरा होता है । सभा के ऊपर सदस्य का प्रभाव मक्ति-यह के लिए उनकी वाग्पना की आचन का एक मरुत उपाय (यद्यपि यह एकमात्र उपाय नहीं है) होता है । उस व्यक्ति में जिसे एक विभाग का शासन करना है वे कुछ आक्षेपक है बिना वह कॉमन-सभा के लिए स्वीकार्य हो सके । वह कॉमन सभा के लिए इन प्रमाण स्वीकार्य है इसका यह अभिप्राय नहीं है कि वह एक पच्छ नहीं होगा क्विन् यदि वह कॉमन सभा के लिए स्वीकार्य न हो तो इसका यह अभिप्राय अवश्य होगा है कि वह सक्षम मंत्री न ही सकेगा । जैसा कि एक मरुतीय युवाजी कहावत

में कहा गया है केवल यही नहीं है कि पर व्यक्ति को प्रकट कर देता है । इससे भी अधिक सही यह है कि समाज व ध्यान का आइट्ट करन की माय्यता कुछ लोगों में प्रति प्राप्त करन की पात्रता का प्रमाण है । यह मनुष्या को सम्हालन की उस कला का एक भाग है जो मनुष्य का केन्द्र बिन्दु है । इससे व्यक्ति के चरित्र की पूर्ण परीक्षा हो जाती है । यदि किसी सरकार की आलोचना नहीं होती तो वह जिसको चाहे अपना सबस्य बना सकती है । मपोसिवन कहा करता था कि बेरे की स्थिति में एक पूर्ण भी पासन कर सकता है । लेकिन वह सरकार जिसके सबस्य निरन्तर आलोचना की जाग में हों जो इस आलोचना के धाये बुद्धिमत्ता का भाव बनाए रखें जो जोष से बचते रहें, जो उदारता तथा समय से काम में जो यह समझने हो कि कमी-कमी किमी प्रान के उत्तर में केवल भाषण बना और पुनरावृत्ति से ही काम नहीं चलता है कठिन से कठिन परिस्थिति में भी अपने मस्तिष्क का क्षाति रक्षनी ।

मेरे विचार मे यह सही है कि समाज अपने शास्त्रों को जो प्रतिष्ठा देती है उससे यह भली भाँति जात हो जाता है कि कौन व्यक्ति मनि-यद के योग्य है । इसमें कोई संदेह नहीं कि वह गलतियाँ करती है लेकिन वह पराजय गलतियाँ नहीं करती । जिन व्यक्तियों को वह रोचक और उद्योगशील पाती है व अधिकतर रोचक और उद्योग शील होते हैं समाज इन व्यक्तियों को अपने इन गुणों को प्रशंसित करने के लिए प्रतिष्ठ करती है क्योंकि इनकी माय्यता के पारितोषिक बहुत बड़ हैं । बहुत ना सार यह है कि समाज अपने आठावरण द्वारा व्यक्ति में से उसके उन सर्वोत्कृष्ट गुणों को निकाल लेती है जो कि बलपद्धति में शासन के लिए आवश्यक होते हैं । हमारे समय में लार्ड बम्बिन न यह मन्त्री तरह प्रकट कर दिया है । जिन गुणों के कारण उन्होंने समा के ऊपर इतना आम्बवैजनक प्रभाव बना किया था उन्ही गुणों के कारण उन्होंने बाद में राष्ट्र के ऊपर इतना प्रभाव बना किया था । मेरे विचार से एडवर्ड सप्तम् के सिद्धान्त-रमाग श्री मूयातवारी बटना इस प्रभाव के बिना इतनी सफलता से नहीं हो सकती थी । इस बहुत प्रभाव के रहस्य का वर्णन करना कठिन है लेकिन मेरे विचार से इस रहस्य का मूक लोगों के हृदय में ऐसा विश्वास प्राप्त कर लेना है जो दृढमत मठमैरो के पार बना जाता है । लार्ड एम्बोप में यही गुण था और सर एडवर्ड प्र के सबस्यो के ऊपर प्रचंड अधिकार का भी यही कारण है । यह विश्वास समा के इस प्रतिभाग पर निर्भर रहता है कि सम्बन्ध मंत्री उसका और उसके द्वारा उन बारमाओ का जिनके ऊपर वह माहित है जाबर करता है । १९१८-२२ की संसद् एक पराज संसद् भी क्योंकि उसमें इस प्रकार के विश्वास का अभाव था । इसी प्रकार १९११ की संसद् भी एक पराज संसद् भी क्योंकि उन परिस्थितियों ने जिनमें संसदा निर्वाचन हुआ था इस विश्वास को अक्षय कर दिया था ।

इस विश्वास के संहालन के लिए दो वस्तुएं आवश्यक हैं । इनमें से पहली वस्तु एक लम्बे समय तक सचन की सबस्यता है । वे सबस्य को एक दूसरे की काफ़ी समय से नहीं जानते एक दूसरे पर विश्वास नहीं कर सकते एक दूसरे के व्यक्तित्व को नहीं पहचान सकते जानस में सहयोग और समबाय की भावना का बड़े ज़रूरतों के लिए

मिथ जुस कर काम करने की प्रवृत्ति का विकास नहीं कर सकतै। अमरीका में संघातिक दृष्टि में तो सोनेट और प्रतिनिधिक समा की शक्तिया समान है। एशिया व्यापारिक दृष्टि में सोना की शक्तिया प्रतिनिधि समा की शक्तिया में अधिक ह। इसका कारण यह नहीं है कि नीजट के सदस्य जम्बी-जम्बी निर्वाचित होते हैं। यदि कोई व्यक्ति यह मास रखे कि भी स्टेडस्टन कॉमन-समा में साठ वर्षों में अधिक और भी डिबर्सी वासोस वर्षों में अधिक समय तक रहे वे भी एशिया पश्चिम वर्षों में कुछ कम समय तक सदस्य रहे वे और भी लायड जार्ज ने बरन जोषन का मास में अधिक समय बर्न व्यतीत किया है। यद्यपि भी वैश्विक प्रदान-समा का सयोग में ही हो पए वे के अपने प्रबन प्रदान-समा के समय पन्द्रह बर में मसदू के सदस्य रहे वे और बीच क कुछ काल को छोड़ कर भी मीनडालरड गठारु बर में मसदू के सदस्य रहे वे तो वह इन सबका महत्व समझ लेया। यदि कोई व्यक्ति वासी समय तक कुछ बड़ी-बड़ी कन्ग्रेसों के बीच में रहना है तो उस पर भी उन बटनारों का प्रभाव पडना बरपयम्मावी है। उनका मसदू प्रदान के बालाकरण से परिचय होना है। वे मिस-जुसकर काम करन निर्णय करन और फिर बिचारोतरान कार्य में प्रवृत्त होने के पुन सीसते ह। वे समझ सेते है कि बिचार-विमर्श की व्यबस्था में निर्णय का अधिकार बेबन आरेगा वा ही प्रबन नहीं है। प्रत्युत वह ऐसा प्रबन है जिसकी सार्वजनिक आलोचना से रक्षा करनी पडती। कहने का मार यह है कि बिजनी ही सीस के इन बातावरण से परिचित हो आवेगा उननी ही अधिक इस बात की सम्भावना रहेगी कि वे उन पर अधिकार पाने में समर्थ होय। यही कारण है कि एक व्यापारी की अपेक्षा जो प्रीडाबस्था में कॉमन-समा में प्रवेश करता है एक लक्ष्य बलिदान अधिक मजबूत मंत्री होया। यही कारण है कि अधिक पय की ओर नी कुछ जनवारों को छोड़कर एक बूड व्यक्ति सब अधिकारी घायब ही कॉमन-समा का सदस्य रहस्य हो सक। यदि कोई व्यक्ति किसी समय व्यबसाय में वासी समय तक काम कर चुका हो तो उसकी जायने उन बाबता में बिजनी राजनीतिक क्षेत्र में आबस्यता होती है। मिन हो जानी है।

येरे बिचार ने इस बिबाम के मंचारण के लिए यह बतना सामान्य कर स ही सही है कि बिरोपी दल का सरकार मजबूत करने के लिए सत्या और कुछ बोलों की दृष्टि से वासी शक्तिवाली होना चाहिए। सत्या की दृष्टि से हमका शक्तिवाली होना कई कारणों में आबस्यक है। बहुमना बिमर्श बिरोपी दल लक्ष्मण होता है। विधिक हो जानी है। उसमें उपस्थिति बलिगमित हो जानी है। सत्कारी बल और बिरोपी पय की सदस्य सत्या में अंतर इतना अधिक होता है कि छोग परिधम नहीं करते। एक दूसरे को सम मने की प्रत्या पर्याप्त मास में नहीं रखती। सरकार के बिकड बोधने वाले प्रतिनिधि बन्तारों के अंतर इतना अधिक भार रहता है कि वे अपने कार्य की ठीक नहीं कर पाते। बिरोपी दल का गुण की दृष्टि से भी शक्तिवाली होना कई कारणों से आबस्यक है। सामन्तबान मनुष्य के अमास में बिरोपी दल की स्थिति दुर्बल रहती है। सरकार की आलोचना करने का प्रभाववाली कार्य ठीक से नहीं हो पाता। बकि वह इत कार्य को ठीक से नहीं कर पाता अतः देश नमा की कार्यवाहिया की ओर कोई ध्यान नहीं देता एवं

बाद-बिबादों का सिद्धाचारमय महत्त्व मट्ट हा जाता है। यही नहीं। दुर्बल विरोधी दल का स्वयं अपने ऊपर विश्वास कम होना लगता है और वह सावधानिक रूप में अपनी आकांक्षा को कम कर लेता है। फिर यह होता है कि वह अपने पक्ष के सदस्यों का निर्बल करने के स्थान पर अपने आत्मतट्टिक मतमेदा में अल्पप्रति व्यक्तिता की छोटी छोटी समस्याओं में उद्यत कर रह जाता है। वह निराश और अनुत्तरदायी हो जाता है। वह अबसर आने पर आक्रामक रूप धारण करने की सामर्थ्य को संसदीय पद्धति में अल्पतः आवश्यक होती है खो देता है। यदि कोई विरोधी दल अपनी संस्कार बनाना चाहता है तो उसे दो कारणों में से हाकर निश्चिन्ता पड़ता। पहला कारण तो यह है कि वह सत्ताच्छेद दल के विरुद्ध अपनी स्थिति बनाने की चेष्टा करता है। कुछ समय पश्चात् इस प्रकार की स्थिति सामने आ ही जाती है। दूसरा कारण यह होता है कि विरोधी दल को अपना के मन में यह विश्वास बँधना पड़ता है कि न केवल सत्ताच्छेद सरकार गठन ही है प्रत्युत देश के हित में यह निराला आवश्यक है कि विरोधी दल सत्ता स्थान ग्रहण करे। कोई विरोधी दल यह विश्वास उस समय तक प्राप्त नहीं कर सकता जब तक कि उसके नेता-सदस्यों में व्यापक और उचित आचारों पर सरकार को ऊपर आक्रमण करने की योग्यता न हो।

जब मैं वर्तमान काम-समाप्त राजनीतिक दलों के स्वरूप पर विचार करूँगा तो इस दृष्टिकोण के निष्कर्षों पर भी प्रकाश डालूँगा। यहाँ यह कहना ही अनिवार्य होगा कि सरकार के ऊपर आक्रमण करने का सिद्धांत संसदीय शासन का मूलमंत्र है। नूक संसदीय शासन दल-पद्धति पर निर्भर है अतः समा में दलों की लड़ाई ही वह प्रमुख राजनीतिक साधन है जिसके द्वारा विजय का सेहारा कभी एक पक्ष के पक्ष पर करता है कभी दूसरे के। यह एतन्नाम उपाय नहीं है। १९२६ की आम हड़ताल के समान बड़ी-बड़ी औद्योगिक घटनाएँ भी निर्वाचकों के मन पर व्यापक प्रभाव डाल देती हैं। लेकिन सततता भी अल्पेक ठाँकासोत सरकार द्वारा लिये गए एक निश्चय में होता है चाहे वह निर्णय निपचारमय हो या विधायक। यह निर्णय विरोधी दल के सामर्थ्य प्रसार करता है और विरोधी दल उस प्रश्न के माध्यम से विचारवाचक का किन्ता प्रचार प्रसार कर सकता है, यही उसकी सामर्थ्य का वास्तविक मापदण्ड है अतएव मुझ में आक्रमक दृष्टिकोण धारण करने की उमकी शक्ति का प्रमाण है। श्री स्पेंडरन और श्री लावड जार्ज की यही कला थी। एक का मिडसोपियन आम्बोलन और दूसरे के कादन हाउस स्थापना इस आक्रमक दल को ग्रहण करने के घण्ट उदाहरण थे। प्रत्येक अपने कुशल मनुष्य द्वारा निर्वाचकों के मन को उन प्रश्नों पर केंद्रित करने में समर्थ था जिनका वह विशेषण करना चाहता था। प्रत्येक अपने आलोचकों को उस दृष्टिकोण से बाद-बिबाद करने से रोक देता था जिससे उन्हें लाभ हाता था। फलाना निर्वाचकों के बहुमत को इस बात का विश्वास दिला देता था कि जिस पक्ष का वह प्रतिनिधित्व करता है उसकी विजय के सिद्ध शक्ति हविमाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यह समा का प्रवृत्त दृश्य है कि वह दल वा मनुष्य ऐसे लोगों के हाथ में ब जो अपने दलों की यह सेवा कर सकें। मुझ की समाधि तक यह कार्य लूब अच्छी तरह होता था।

पूछ के बाद से यह कार्य बक्षिण पक्ष की अपेसा बायपक्ष की ओर लम्बा हुआ है। कामन समा के दसमठ संगठन पर विचार करते समय हम इसके कारणों का भी विवेचन करेंगे।

साधारण प्रश्नों में सबसे अतिम प्रश्न जिसका विवेचन यहाँ आवश्यक है समा के सबटन में व्यक्तिगत सदस्य का स्थान है। आवश्यक माओचको के लिए उसके पक्ष की आवश्यकता के बारे में आसूबहाना एक फैसला बन गया है। बहुप्रश्न पूछ सकता है बाद-विचार कर सकता है छोटे विधेयक और प्रस्ताव पुरोस्थापित कर सकता है उस समय तक जब तक कि उनसे कुछ विधेय परिणाम निकलने की संभावना न हो। लेकिन वह ने मनि-मदल को स्वामी बना रखा है और यदि वह दस के बावनों को नहीं मानता तो वह एक ही समस्या से बचिठ कर दिया जायेगा। मनबारादलीय निर्वाचनसेत्र ऐसे किसी व्यक्ति को जो बार बार वह के विरुद्ध मन से अपना प्रयासी नहीं चुनेगा। धर्मिक वह का अपने सदस्यों के ऊपर और भी कठोर नियन्त्रण है। उसके नियमों के अनुसार यदि कोई सदस्य समझे कि बहुत मतदान में उनकी अन्तरात्मा निहित है तो वह मतदान में अतपस्थित रह सकता है। लेकिन यदि किसी विषय में वह ने एक निर्णय कर लिया हो तो मतदान में उस निर्णय के विरुद्ध मन देने का अर्थ यह होगा कि वह अपनी दस्यता सदस्यता को खतरे में डालेगा। मन्मोर मामलों में मत दाम के बदल पर व्यक्तिगत सदस्य को केवल एक एपी निर्वाच दफाई ममसा जाता है जिसका न अपना कोई स्वतंत्र व्यक्तिगत हो और न कोई स्वतंत्र कर्मस्य।

मेरे विचार से यह दोकदोस्यार विच्छुल व्यर्थ है। यह आकर्मिड कामन-समा के इत्थों का नहीं समझना यह आधुनिक राज्य न वला के प्रयोगन को नहीं समझता यह हमारे इतिहास के उस मुक्तग की एक विरामस्थ है जिसमें राजनीति कुछ भीमाना के मनोरंजन का साधन भी और जिसमें सरकार का कार्यभेन अत्यन्त सीमित था। व्यक्तिगत सदस्य को उस प्रतिष्ठान को देने का जो उसे अस्मों का पचासी वर्ष पूर्व प्राप्त था एकमात्र सपाय उन एनिहासिक परिस्थितियों की ओर बायस कीटना है जिन्होंने वह दमा संभव की थी। इतिहास हमें ऐसे दिवा-स्वनों में मन्म होने की अनुमति नहीं देता।

आधुनिक धामन की समस्या समय की समस्या है। यही यह मूल कारण है जिसकी वजह से पक्ष करने का अधिकतर व्यक्तिगत सदस्य के हाथ में जाता रहा है। यदि कोई मामला इतना महत्वपूर्ण है कि उस विषयक का अर्थ दिया जाय तो उसके पास करवाने का उत्तरदायित्व सरकार के पास रहना उचित ही है। समा किसी विषय पर उस समय तक विचार नहीं करेगी जब तक कि सरकार उसका अनुमोदन न कर दे। और यदि सरकार किसी मायसे का पुरोस्थापित करने के लिए तय्यार नहीं होती तो हम बात की सम्भावना बहुत कम है कि कामन-समा उसके ऊपर अपना बोहा या ममय भी व्यर्थ करना ठीक मम लगी। मैं नहीं समझता कि यह निर्णय हम लस्य से यमन हो जाता है कि एक व्यक्तिगत सदस्य भी ए पी हर्बर्ट ने अपने उत्साह से विवाह विच्छेद विवाह-मुबारक का कुछ संस पास करवा लिया है। मुक्ति उनका विवेक सरकारी विवेक नहीं था अतः उन्हें उसमें

एसे व्यापक संसोधन स्वीकार करने पड़ किन्होंने उसके क्षेत्र को सीमित कर दिया और इस प्रकार विधान का जो अंतिम रूप सामने आया है वह शायद आज के कई बर्षों तक विवाहविधान के संसोधन को रोकेगा। श्री हर्बर्ट के अनुभव से तो यही धिया मिलती है कि अब किंगी बड़ दिपय को विधान का अंग बना ही तो बबल सरकार को ही उमे ऐगा रूप देने का आवश्यक अधिकार प्राप्त है।

इसलिए, यदि हम यह मान लें हैं कि विधान के अंदर पार्ल का कार्य सरकार के हाथ में रहना चाहिए, तो फिर व्यक्तिगत सन्स के लिए क्या रूज जाता है? शिकायतों को सामने आना नूपना प्राप्त करना प्रणामनिक प्रक्रिया की आलोचना करना वाह-विचार में माय केना। इसके अतिरिक्त बहु व्यक्तिगत सन्स का प्रस्तावों में उन बड़े मिठाठो की सर्वा बसा सकना है जो लोकमत से प्रवाह की बाध करते हैं। बहु पांच समितियों में काम कर सरता ह। में नही समझता कि बहु कोन सोना काम है। लेकिन में यह संप्रति तरह समझता ह कि सरकारी पक्ष के स्फूर्त-चित्त व्यक्ति के लिए यह पर्याप्त कार्य लक्ष नहो है। इसलिये योग सुगाब बहु है कि विधान प्राम्भ करन के सरकार के अधिकार में हस्तगत किए बिना इन लक्ष को विस्तृत करना चाहिए। बहु बड़ी मुन मता से किया जा सकता है यदि हम एक बार यह मान लें कि सना का कार्य व्यक्तिगत मामरिक के रखक के रूप में प्रघाप्त की प्रक्रिया का निरौअक करना है। प्रसत विधान के परीक्षण विस्लेषण तथा आलोचना द्वारा विनायीब कार्य के सुधार, बाध-अच्छाल की प्रथर समितिया के विस्तार आदि बिगब ऐसे हैं जिनका हम वर्तमान बाध में पूरा साध नही उछाठे। में बाये बख कर उन उपायो पर विचार करेगा जिनके द्वारा यह किया जा सकता है।

ककिन इस प्रकार के विस्तार का परिणाम यह नही होना चाहिए कि उसने मंत्रि-मंडल के संसदीय गतिविधियों के नियंत्रण के मुक्त प्रवाह में कोई बिज्ज उपस्थित हो। यदि ऐसा हुआ तो नीति की एकसूत्रता और उसके साथ ही उत्तरदायित्व की मायना तुग-त गण ही बावपी। सब तो यह है कि हमारे मासन की लक्ष्यता का मुक्त उत्तरदायित्व के ठीक निश्चिन्ध में ही बिद्यमान है। अब बड़ी मुन हो जाय तो यह बागना घरेब हितकर है कि मूल के लिए कौन होगी ह। यदि कोई व्यक्ति अमरीका की मासन-व्यवधि से हमारी मासन-व्यवधि की तुलना करके देखे तो बहु समझ केना कि स्थिति ऐसी ही है। प्रायः ही राष्ट्रपति को इस बाल के लिए बोध केना कि बहु अपने इच्छित विवेक को पास न कर सका अनुचित ही होता है। उमे अपने इस हित को बची कभी हम प्रकार उत्तरा करना परता है कि लोचनत उनके इस रखे का अनुवर्तमान नही कर पाता। बायेल को भी सर्वत्र बोध केना ठीक नही है। यदि बहु बसितमा के पुबलकरण के अन्तर्गत राष्ट्रपति की बाबोनाता स्वीकार कर लेती है तो फिर बहु विधान-समा नही रखे पाती। बहु एक बार व्यक्तिगत सन्स के अंदर मंत्रि-मंडल की व्यक्ति विधिक हुई, हमारे पास साबधिक सना का साधन रूज जाबया। बूकि बलगत नेतृत्व मंत्रि-मंडल में निहित है इसी का यह फल है कि सना ऐसे स्थापित स्वरों का जो सरकार द्वारा अपनी बुद्धि और रखा के लिए संघर्ष कर रहे हों अमबट नही विचार लेती। जो लोम बहु

बहल है कि मंत्रिमंडल का नियंत्रण कांग्रेस हद तक कम हो जाने के कारण में ऐसी बात करने हूँ जिसका परिणाम मंत्रीय उत्तरदायित्व का विनाश होया ।

म यह विश्वास नहीं कर सकता कि इससे हमारी सामान्य-व्यवस्था को लाभ पहुँचेगा । इसके परिणामस्वरूप या विनाश सामान्य आपदा बहु किमी विज्ञान के ऊपर आया नहीं होया । मंत्री नियंत्रण ही एक सुगमजिन हिन के बरवानु हमारे सुमगजिन हिन के लिए मिरल्लर ही इसका त्याग करने होंगे । यह प्रत्यक्ष सामान्य के लिए एक बुरी बन्नु है कि वह पढ़ते तो ऐसे कामून सामान्य रख सिंग उन पर आचार्य के जिनके मन्त्र-यका विश्वास न हो लेकिन जिन्हें वह पराजय की घमनी के कारण मंत्रीकार करे । श्री रमने म्पोर ने यह ठक किया है कि इसका परिणामस्वरूप 'नरम कामून' पास होय क्योंकि मंत्रि-मन्त्र के नियंत्रण में कमी आ जाने से व्यक्तिगत सदस्य का अपनी सामाजिक उत्तरदायिता विज्ञान का अधिक उत्तर मिलेगा ।

मेरे विचार से यह बात ही भादा दृष्टिकोण है । यह कॉमन-समा के दृष्टिकोण को ठीक नहीं समझता । प्रारंभिक प्रतिनिधित्व के उपचारिक तथ्य के पीछे जिसके लिए अभी तक कोई सुविभाजनक स्थापनापत्र नहीं आया या सका है कॉमन-समा मूलतः एक व्यावसायिक मन्त्रा है । इस में कोई संदेह नहीं कि सदस्य इकायों तथा बोर्ड करन और मंत्रिमन्त्री के लिए ही निर्वाचित होने हैं । लेकिन इससे यह तथ्य बही छिप जाता कि वे बर्षीय, व्यापारी व्यवसायप्राप्त सैनिक और नाविक बेकर रेट-निर्देशक तथा श्रमिक संघ के अधिकारी आदि हैं । उनमें से प्रत्येक यह देखता है कि विधान का उस व्यवसाय पर जिससे उसका सम्बन्ध है क्या प्रभाव पड़ता है । हम सब यह जानते हैं कि नौकर के टायटी का स्वामी राष्ट्रीयकरण की योजना में विषय मुख्य के प्रति एक तन्त्रि में विप्लव मित्र दृष्टिकोण रहन करेगा । हम जानते हैं कि समा में दैनिक दैनिकों के काम करन के बन्ध और उनकी उचित सीमाया के बारे में नाबंवन-निर्वाचन-योग के मन्त्रियों से विप्लव मित्र विचार रखते । मंत्रि-मन्त्र का नियंत्रण विनाश मित्रिक होया उनका ही हम उस व्याख्या के निम्न पक्षमें जिसके सच-व्यक्त उदाहरण अन्तरही और उन्नीसवीं पताष्टिका के 'ग्राइवेट एम्प्लोयर एक्ट्स' है । अमरीकी हीनर का सरास्य अधिनागी मन्त्रि में कुछ हद तक स्वतंत्र है कि देश के कुछ आत्मिक रूपे बाह्योय समझने ह । मेरे विचार में इस स्वतंत्रता के कारण ही उन समा-कर्मों की जो अमरीकी सासन का एक रूप ह, मन्त्रि इनकी बधी हुई हैं । मेरे करने का यह अधिप्राय नहीं है कि हमारे इस देश में समाजस (Lobbies) नहीं हैं । दृष्टिकोण हिनों की-निर्वाचन जोड़ा फौदार और बन्ध आदि स्थानों की दन्त्रि मन्त्रिमन्त्रि ह । अमरीकी और अधिका कर्षों का अधिका के ऊपर व्यापक प्रभाव है । लेकिन मंत्रिमन्त्र के नियंत्रण के कारण इस देश में व्यक्तिगत मन्त्र के ऊपर समाजस का आधिपत्य हो महत्वपूर्ण कारणों से घट जाता ह । इसमें से एक कारण तो यह है कि निवृत्त सैनिक समा-कर्मों की अधिकात्मनीयता के विप्लव मंत्री का परामर्श देती है । दूसरा कारण यह है कि मन्त्रिय संघ के निर्वाचन में एता है क्योंकि मंत्रि-मन्त्र सत्ताप्य दल के साथ समीक्षण उनका है । पहले का कम यह होना है कि प्रत्येक अधिसर वर सहायता के लिए समा-कर्मों के

बाबेजिन का स्वयं परीक्षण होता है। दूसरे का फल यह होता है कि जो सरस्य समाज के आगे झुक जाता है वह कॉमन-सभा में अपने स्थान को सतरे में डालता है और कुछ मन्त्रियों का मुँह जो इस झुकाव से सरकार के स्वामित्व को धमकी देता है सभा के विघटन का पथ प्रशस्त करता है।

बीजहॉट ने क्लिफा का "सभा में नियुक्तता के लिए बड़े मन्त्रों के ठोस पुंज की आवश्यकता है। बीजहॉट के कथन में हम यह और जोड़ सकते हैं कि यह ठोस पुंज बराब से बराब बयानाचार से अपने का प्रमुख उपाय है। यह ठोस पुंज दम्भगत नियंत्रण से प्राप्त होता है और हमें नहीं मालूम कि अन्य कोई वस्तु इसका स्थान ले सकती है। इसका विकल्प स्वार्थों द्वारा संघिबद्ध की गई यह सरकार है जिसमें सरकारी उत्तरदायी को स्पष्ट करने की समस्या कमी ठीक से नहीं सुलझती। यह ठीक है कि सभा को विघटन करने की शक्ति एक बहुत बड़ी शक्ति है। इनके अभाव में जो विकल्प सामने आता है वह हम अमरीका तथा फ्रांस में देखते हैं। एक में तो राष्ट्रपति अपनी मनचाही 'पैरसप' (patronage) के द्वारा करता है और जहाँ तक यह इस शक्ति का प्रयोग करता है इसके गुणगिनाम दूरगामी होते हैं। दूसरे में वृत्ति सरस्य यह जालते हैं कि विघटन अधिचारपीय है, वहाँ उनमें उत्तरदायित्व की भावना बहुत ही कम होती है। अपरंज बिना किसी बंध के सरकार को पसंद देने का अधिप्राय यह होता है कि बहुत से बड़े बड़े निर्भय सरकार की राय पर ध्यान दिए बिना ही किए जाते हैं। देख लो एक सरस्य के लिए मत देता है लेकिन सदन बाहरी बहाव के फलस्वरूप बिना अन्य व्यक्ति की सरकार को पाता है। व्यक्तिगत सरस्य के ऊपर मन्त्रिमंडल के नियंत्रण से हम कम से कम इस प्रकार की विकट विह्वलियों से बच जाते हैं।

मुझ इस प्रसंग में एक अंतिम बात और कहनी है। हवाई पद्धति में मन्त्रिमंडल का सरस्य अपनी समस्त दुर्बलताओं के होते हुए भी लम्बी अवधि तक प्रसिद्धता का मन्त्र बिना चुकता है जिससे उसके अन्दर उत्तरदायित्व का मान आ जाता है। इस सम्बन्ध में सभा का प्रबन्ध कार्य भी कुछ मन्त्र देना है। जिस ईश में प्रत्याधी चुना जाता है उस से लो हमें उत्तरदायित्व का कोई आश्वासन नहीं मिलता। अनुहार बल अपना प्रत्याधी मन्त्र बप से एसे लोभो को बनाता है जो अधिजात हो व्यापारी हो बैरिस्टर हों। दूसरी ओर शक्ति मन्त्र अपने अधिकारियों को बिना हम बात का परीक्षण किए कि वे सभा की सरस्यता के उपयुक्त हैं या नहीं सभा में भेज देते हैं। जितना ही हम प्रत्याधियों को चुनने की अपनी पद्धतियों पर विचार करते हैं उतना ही अधिक मन्त्रिमंडल का बल का उनके ऊपर नियंत्रण हमें अधिकतम मालूम पड़ता है। इससे उत्तरदायित्व का धार यथास्थान रहता है। जब मन्त्रिमंडल का नाशनाश समाप्त होता है उसके क्रिया-कलापों का सही मूल्यांकन करने में सहस्यित होती है। हम ने फलस्वरूप कॉमन-सभा का जो स्वरूप सामने आता है उससे हमें निर्वाचकों की विचारधारा का ठीक से अनुमान हो जाता है। दम्भगत नियंत्रण से यह निश्चित हो जाता है कि सामान्यतः व्यक्तिगत सरस्य नहीं करेगा जिसे करने के लिए जो रेस्टमिनिस्टर बना जाता है। यदि वह अपने स्थान पर अपने नियंत्रणों द्वारा रक्खा जाता है तो वह अपने विचारों को प्रकट करने में

पूर्व रूप से स्वतंत्र होगा है। परिणाम एक एसी व्यवस्था है जिसमें अपनी समस्त दुर्बलताओं के होने हुए भी स्पष्ट गिना-निर्देश और हम दिना-निरत का पूरा विवेचन रहता है। य विद्यमान एसी है जिसकी वास्तविक महत्ता उनकी अनुपस्थिति में ही जाना होगी है।

(०)

मंत्रिमंडल उस एक या दोष की एक समिति है जिसका कॉमन-सभा में बहुमत रहता है। स भाग के अध्याय में उनके समस्त और सहायक की पद्धतियों पर विचार किया। यहाँ तो मैं ऊपर कह हुए हम दक्षिण के निष्कर्षों पर ही विचार किया कि समस्त सफलता का मुख्य कारण मंत्रिमंडल द्वारा कॉमन-सभा का नियंत्रण है। मंत्रिमंडल का सबसे प्रमुख काम एक समुचित कार्यक्रम को कार्यान्वित करना और उसके लिए सविधान के अनुसार एकर की उपचारिक कानूनी महत्ति प्राप्त करना है। मंत्रिमंडल की महत्त्व यह महत्ति प्राप्त की जाती याचना पर ही हमारे सम्पूर्ण शासनत्व की सफलता निर्भर है।

इस पद्धति का सम्पूर्ण मार उस क्षणों में निहित है जिसके अनुसार यह नियंत्रण संचालित होता है। मंत्रिमंडल को यह महत्ति निश्चयी धरनी है वह इसे वाग नहीं सकता। यह कन्वेंर हुआ ही व्यवस्था में आधारभूत है। मंत्रिमंडल को अपने काम चलाना की क्षमता के माध्यम करन पड़ता है। समाज कन्वेंर और बाहर जाने ही स्वाभाविक निरन्तर आशयता होती रहती है। उनकी समस्या यह है कि वह हम आशयता के बावजूद भी अपने समर्थकों की अत्यन्त प्रति निष्ठा कायम रखे। यह काम करना आसान नहीं है जिसका कि मान्य पड़ता है। मंत्रिमंडल को अपने समर्थकों के मत का प्रकाश जानना पड़ता है कि प्रत्येक नीति के निर्धारण में ऐसी कुछ सीमाएँ ह जिनके पर चले नहीं जा सकता। अगर भी भूल उनके बहुमत की अतिवादा का हिंसा सकती है। यदि वही निर्वाचकों की राय उनके विरुद्ध हो गई तो समाज में विश्वास की एसी माहना उत्पन्न हो सकती है कि उनका सम्मुख अधिक स अधिक अर्थगत क्षमता परकार को भी जानना पड़ता है। बहुमत का बनाए रखना कोई सुगम और सीधा कार्य नहीं है। अतःवाहनों का अनुमानित व्यक्तिगत विचारों का अपने मतारणियों के प्रति आकाशान्त नहीं है। इस अनुमानित के निर्माण में कई ऐसे सूक्ष्म मन्तव्यगतिक तरह सम्मिलित हो जाते हैं जिनका टीक-टीक सुझावन मंत्रिमंडल के जीवन के लिए आवश्यक होता है। समाज का बढोपना से संचालन अत्यन्त कठिन है। अत्यधिक गोरनीयता अतीव्य त्यागपत्र या विघ्न की अत्यन्त क्षमता बाहर कुछ लोचनन को जान करन की अत्यर्थता—ये सब बातें एसी हैं जो अत्यन्त विश्वास पैदा करनी हैं। मंत्रिमंडल उसी सीमा तक नियंत्रण रहता है जिस साक्षात् तक वह समाज द्वारा समर्थित नीति के विरुद्ध नहीं जाना। उस तरह जानना चाहिए कि जब सुचना उचित है और जान के साथ सुचना महत्वपूर्ण जाना है। वह मंत्रिमंडल को अपनी नीति को अत्यन्त रूप से कार्यान्वित करना चाहता है, अत्यन्त पतनोन्मुख होता है।

वहने का मार यह है कि मंत्रिमंडल की सफलता इस क्षण पर निर्भर है कि वह

लोकमत के प्रति वहाँ ठण संवेदनशील ह। यदि कोई मजिस्ट्रेट लोकमत के प्रति संवेदनशील नहीं ह तो चाहे उसके पास कितना अधिक बहुमत हो उसकी विफलता अवश्यमानाही है। १९३४ में श्री रिकॉर्डिंग को विद्याल बहुमत के होते हुए भी 'अनएम्प्लायमेंट एसिस्टेंस रेगुलेशन' के प्रश्न पर झुंका पड़ा बा। पुनरुच श्री बैरु विंग को १९३५ के मजीसीनिया-संघट में सर सीमअल होर ना त्याग करना पड़ा बा। श्री बैरुविंग को विद्याल बहुमत के होने हुए भी १९३७ के अपने शेरमल डिफेंस कंटीन्युशन के प्रश्न पर झुंका पड़ा बा। लोकमत की विरोधी नीति सदैव ऐसा रूप अपना कर देती ह कि नहीं वह मामामी साधारण निर्वाचनो म पराजय न किन्नारे और कोई संभव ऐसे मजिस्ट्रेट की अपीलता में जो यह न समझता हो कि यह उन्हें पराजय की ओर ले बा रहा है कान करना पसंद नहीं कर सजता। सर सीमअल होर ने त्याग पत्र देने के अक्षर पर कहा बा "यह एक कठोर संत्य है कि मैंने इस बेला में विद्याल बहुमत का समर्थन प्राप्त नहीं किया है और मैं समझता हूँ कि अन्य किसी बंरी की अपेक्षा विदेशी मंत्री के लिए यह अधिक आवश्यक है कि उसके पीछे उसके देशवासियों का सामान्य समर्थन हो। यदि श्री बैरुविंग मजीसीनिया के प्रश्न पर मजिस्ट्रेट के प्रस्तावो को बापिस लेना बस्वीकार कर देते तो यह निश्चित है कि उनके अधिवाध खात्री उनवे विरुद्ध मल देते और त्यागपत्र अपना विपटन अवश्यमानाही होता। सर सीमअल होर ना अवकाश-ग्रहण यह नातिकारी बलिदान बा जो उन्हें करना पड़ा।

संवेदनशीलता की यह आवश्यकता उस समय और भी बड जाती है जबकि घना में मजिस्ट्रेट का अल्पमत हो। तीसरे बल की प्रकृति सदैव अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए उसे रियायत देने को बाधित करने की होती है। यह बेला की यह क्ताना बाहता है कि मजिस्ट्रेट उसकी ब्या के कारण बाधित है। यही कारण है कि अल्पसंख्यक सरकार सदैव दुर्बल और अल्पजीवी होती है। एक सीमा ऐसी आ जाती है जहा वे रियायतें नहीं दे सजती क्योंकि इसका अमिप्राय फिर यह हो जाता है कि वे शासन करने के अधिकार से बाधित हो बाय। वे अपना काफी समय विपटन के लिए त्रिमी अन्ते बहाने की शोभ में लगाती है। श्री एम्बिबय के शब्दों में तीवरा बल १९२४ की संसद् में उदार बल की भाति यह समझता है कि उसने मजिस्ट्रेट को 'विभेदात्मक समर्थन' (Discriminating support) दिया है। लेकिन जो बन्तु मजिस्ट्रेट को ठीक रखने की एक चेष्टा मामूम पड़ती है वही बन्तु मजिस्ट्रेट के लिए विभाष्योस की तलवार है जो सरकार की प्रतिष्ठा को बोल पड़वाती है मजिस्ट्रेट सुपमतापूर्वक कितनी शीघ्र हो सकता है इन स्थिति से बचने की चाला करता है।

सामान्यतः आवश्यक बहुमत की सरकार बनती है। १८९८ के पश्चात् हमारे देश में ही बार अल्पसंख्यक सरकारें बनीं और वे बोलो बाग बसकल्ल हुईं। सामान्य स्थिति में बीछा कि मैं यह चुका हूँ मजिस्ट्रेट रामा का बिन्नास बनाए रखने की अपनी योग्यता द्वारा बाधित रखा है। लेकिन हमना यह अमिप्राय नहीं होता कि यह पराजय से बच सजता है। १८३४ में सर राबट पीस सघाट के भाग्य से सम्बन्धित एक संघोचन के प्रश्न पर पराजित हो गए थे। १९३४ के पश्चात् छः वर्षों में मेकबोर्न

सरकार को पराजित होता पड़ा। एबराहीन सरकार १८५३ में एक सप्ताह के भीतर ही तीन बार पराजित हुई। सी बम्बोर १९३ में सम्मरण मर्मिनि में पराजित हो गए। सी मैकडॉनल्ड की सरकार १८२४ के जनवरी और जनवरी मास के मध्य इस बार पराजित हुई थी। इसमें कोई संशय नहीं कि सरकार की प्रत्येक पराजय उसकी प्रतिष्ठित पर एक चोट होती है और इससे जनता में उसकी आलोचना निरन्तर बढ़ती जाती जाती है। लेकिन इस बात का निर्देष्टा मंत्रि-मंडल ही है कि वह अपनी विषय पराजय को त्यागपत्र या विघटन का सूचक माने। यह ठीक है कि अधिपत्य का सीमा प्रस्ताव या मंत्रि-मंडल की नीति के किसी महत्वपूर्ण पहलू पर सरकार की पराजय मानक ही समझी जायेगी। लेकिन यह संमतीय धारणा की विशेषता है कि इन दो अपवादों को छोड़कर इस बात का निश्चय सरकार ही करती है कि वह कब अपना पद छोड़े।

इस स्थिति का अर्थ यह है कि यह सारी प्रक्रिया कुछ इस तरह से संचालित होती है कि वह आसानी से साधारण निर्वाचन के लिए एक बड़ी तय्यारी मालूम पड़ती है। सामान्य परिस्थितियों में विरोधी दल सभा में मंत्रि-मंडल को उस समय तक पराजित नहीं कर सकता जब तक कि १८९९ की नीति मंत्रि-मंडल की नीति उसके अपने अनुयायियों में ही मेक पीना न करे। इस प्रकार क संघ का अधिपत्य यह होगा कि स्वयं मंत्रि-मंडल के अंदर ही फूट है। यह होमरूल अध्या १९११ के आधिक संघटन की नीति आधारभूत समझे जाने वाले मामलों के ऊपर मतभेद हो सकता है। या यह १८९४-९५ के राजघरेली मंत्रि-मंडल की नीति ऐसी मनोवैज्ञानिक बस गतियों का परिणाम हो सकता है जिनके कारण मंत्रि-मंडल में मिलाजुल का काम करने की वह ताकत उत्पन्न न हो सके या सूचारु कार्य संचालन के लिए आवश्यक नहीं है। सामान्य स्थिति यह है कि बहुमत होने पर मंत्रि-मंडल उन समय तक सत्ताकृत रह सकता है जब तक कि वह पक्ष न समझे कि जब निर्वाचन-क्षेत्रों का सफलता पूर्वक सामना करने का समय आ गया है। उसकी सफलता का काफी अंश इस बात पर निर्भर है कि वह उपयोग वाग का नहीं तब चुन पाता है।

सी ईस्टविन ने १९२३ में काफी बहुमत होने पर इस प्रकार का अपना मोक्ष लिखा था। परिणाम यह हुआ कि उनकी पराजय हो गई। १९३ में उन्होंने पना सत्य दुबारा फिर चुना। उस समय विरोधी दल में साम्यवादी फूट थी। परिणाम यह हुआ कि उन्हें आसानी से सफलता मिली। विरोधी दल के साथ का साम्यवादी महत्व सभा का विघटन करने के निश्चय में निहित है। यह निर्वाचन-मंडल का संचालन में विराम बंग करने की जरूरत पेट्टा करता है। वह सरकार की प्रत्येक मुक से काम उठाने का और इस प्रकार सफलता के महत्व को कम करने का प्रयत्न करता है। वह संसदीय पद्धति द्वारा निर्वाचनों को यह विराम दिखाने का प्रयत्न करता है कि वह अपने प्रतिद्वंद्वी की अज्ञेया शासन करने के अधिक योग्य है। इस सफलता को पाने के लिए उसे भी ठीक उन्ही विशेषताओं की आवश्यकता होती है जिनकी निश्चय सरकार को आवश्यकता होती है। यह आवश्यक है कि विरोधी दल के सदस्य

अपने नेताओं को पूरा समर्थन हैं। यदि विरोधी दल के अन्दर भी नीति के प्रश्नों पर कुछ मतभेद हो जाते ह तो इससे उसकी पक्षि इतनी शीघ्र हो जानी है कि वह उपयुक्त अवसर घान पर सरकार हथियान के योग्य नहीं रहता। एक स्वयं सरकार जब कि उसके विरोधी बापस में विभक्त हो न कबल काफ़ी समय तक सत्ताकत ही रह सकती है प्रत्युत वह अनुप्रायः द्वारा निर्वाचन भी जीत सकती है। यदि विरोधी दल उस कार्यक्रम के ऊपर जिस वह देश के सामन रखता ह, एकमत नहीं है, तो इस बात की प्रबल सम्भावना है कि वेस उसकी बात को विस्तृत नहीं समझता। एसी परिस्थितिया में यह स्वामाधिक सा ही है कि सरकार पुनः विजय प्राप्त करे क्योंकि निर्वाचक यह नहीं समझ सकते कि उसके प्रतिद्वन्द्वियों की विजय का यह अर्थ होया कि वे अपनी विजय का सफलतापूर्वक उपयोग कर सकें।

१८३२ के परचाए से राजनीतिक दलों का इतिहास यह बतलाता है कि इस संघर्ष में कुछ ऐसा महत्वपूर्ण परिवर्तन हो रहा है जिसकी ओर ध्यान देना आवश्यक है। संसदीय पद्धति में दल का जीवन साधारणतः इस बात पर निर्भर रहा है कि वह उचित समय में निर्वाचक का बहुमत कहीं तक प्राप्त कर पाता है। १८३२ के परचाए से कोई भी दल इस बर्ष से अधिक समय तक सत्ताकत नहीं रहा है। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि इसका अर्थ यह है कि जूकि दलों को इस बात का विश्वास होता है कि वे शीघ्र ही सत्ताकत होने वाला हैं अतः वे योग्य व्यक्तियों को अपनी ओर आकृष्ट करन में समर्थ होते हैं। दल अपनी महत्वाकांक्षा इस विश्वास के आधार पर पूरी कर सकता है कि निप्टा का पुरस्कार अवश्य ही मिलेगा। इस पद्धति की सफलता का आधार सत्ताकत होने की सम्भावना है। यद्यपि किसी दल को इस प्रकार की सम्भावना न हो तो उसके बने रहने में संदेह है। मनुष्य सामान्यतः उन्ही स्वार्थों और व्यवसायों की ओर आकृष्ट होते हैं जो उन्हें सफल जीवन की बाधा दिखाते हैं।

मेरे विचार से यह निश्चित है कि दल-पद्धति के इस पहलू का निर्माण हम आचार पर हुआ था कि राज्य के दोनो दल एक ही बुनियादों पर निर्भर थे और सम्पत्ति-विपदक उनके विचारों में बहुत कुछ समानता थी। उनमें से हर कोई दूसरे का बिना अधिक अघात किए ही मन्त्रि-मण्डल का निर्माण कर सकता था क्योंकि यह आधा ही जानी थी कि अधिक से अधिक एक या दो निर्वाचकों के परचाए द्वारा उसना स्वान ग्रहण कर लेया। एक दूसरे का सत्तरनिवाची हो सकता था क्योंकि एक ही पुरी के चारों ओर बसकर जगाते रहने के कारण उनकी नीति का क्षेत्र सीमित हो जाता था। एक व्यक्ति के लिए जैसा कि श्री जॉन्स का जीवन प्रकट करता है यह भी संभव था कि वह अपने बौद्धिक सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन किए बिना ही एक दल को छोड़कर दूसरे दल में सम्मिलित हो जाए और फिर दुबारा अपने पुराने दल में वापिस जा जाये। श्री जॉन्स उदाहरण दल के मन्त्रि-मण्डल में इतने ही प्रवृत्त और स्वामाधिक हंग से बोकठ से बितने कि अनुहारदल के मन्त्रि-मण्डल में। १८३२ के परचाए से मन्त्रि-मण्डल के नियन्त्रण को केवल एक ही बार १९१२-१४ में अस्टर के प्रस पर अनुवार दल ने चुनौती दी थी।

मंत्रि-मण्डल का नियन्त्रण सत्रक दल का पार्लियामेण्टिक है। यह इसलिए स्वीकार किया जाता है क्योंकि उसके नियंत्रण विरोधी दल को अधिक अधान्त नहीं करते। मोटे तौर पर यह उनकी परम्परागत प्रत्याशाओं को नष्ट नहीं करता क्योंकि यह जानता है कि मंत्री जिस बाजार पर अपने निर्वाचकीय बचनों को पूरा करते हैं, वह उनके अपने आधार से भिन्न नहीं है। अब तक निर्वाचक या विभिन्न दलों के बीच चुनाव करने की अपेक्षा एक ही दल के दो पक्षों के बीच चुनाव करते रहे थे। उनके बीच विभाजन की रेखा ब्यापारिक न होकर परिभाषारमक थी।

वहाँ तक युद्ध के पूर्ववर्ती समाजवाद के इतिहास का प्रश्न है क्यों ना यह स्वल्प यथावधि बना रहा। ब्रिटिश समाजवाद का बुटिकोप फ्रेडियम का और यद्यपि फ्रेडियम हमारी आर्थिक व्यवस्था के प्रक्रिय के बारे में उदारवादियों अपना अनुहार का दिया से मिल गूटिकोप रखते थे वे इस व्यवस्था के आधारों को बिना किसी कठिनाई के स्वीकार करते थे। वे यह मानते थे कि पूंजीवाद का वास्तविक आधार—सीमान्त उपयोगिता का सिद्धान्त अकार्य है। वे बर्ग सचर्च के मार्क्सवादी सिद्धान्त का प्रतिपाद करते थे। दक्षिण अफ्रीकी युद्ध के बीच में उन्होंने जो अपना प्रसिद्ध बोपना पत्र प्रकाशित किया था उसमें उन्होंने पूंजीवाद की समस्त आशयों को सत्य मान लिया था। उनका विचार था कि शक्ति प्राप्त करने का एकमात्र उपाय मतदान-मैत्री है। वे अपना एक पुस्तक राजनीतिक दल न बना कर वर्तमान राजनीतिक दलों में ही प्रवेश का प्रयास करते थे। यदि उनके सिद्धान्त कॉमन-समा में बहुमत को प्राप्त कर लेते तो भी उनका विद्वान्त था कि उन्हें दूसरे पक्ष की सहमति के बिना कार्यान्वित नहीं किया जा सकता। अधिकांश युद्ध के पूर्व उदारवादी तथा अनुहारवादी दलों में इसी प्रकार सम्मिश्रित हुए जिस प्रकार की उनमें से कुछ युद्ध के पूर्व समिक दल में सम्मिश्रित हुए थे।

इस वर्तन का महत्व युद्धपूर्व समिक दल की स्थिति से समझा जा सकता है। समिक दलों ने उसकी स्थापना १९ में किसी सामान्य सिद्धान्त के आधार पर नहीं प्रस्तुत कॉमन-समा में अपने लिए समिक प्रतिनिधित्व प्राप्त करने के विचार से की थी। उसको अपनी पहली सफलता किसी सामान्य सिद्धान्त के फलस्वरूप नहीं प्रस्तुत इस कारण किसी कि १९१ के टैट वेल्ड निर्णय न समिक दल आन्धोभन की मुरसा को अंतरा पहुँचाया था। १९१ से १९४ तक यह उदारवादी दल का उग्र पक्ष था और पूंजीवाद से कुछ ऐसी रियायतें मागता था जिन्हें देने के लिए पुराने दल तय्यार नहीं थे। लेकिन मैक्रान्ठिक दृष्टि से यह भी सौवध आर्ज जैसे उपायधियों से मिल गयी था। यह बात ही है कि १९११ तक भी जामट बाज ऐसी पुनर्विठित उदारवादी सरकार के बारे में जिसमें समिक दल के सदस्य भी अपना स्थान ग्रहण करते मोच रहे थे और भी मकडानकइ इस सम्बन्ध में उनसे बाधनीत करण के लिए तय्यार थे। सर आरिडन चेम्बरलेन के कुछ वाक्यों से यह संकेत मिलता है कि उन वर्ष सर्व बलीय सरकार के नियार्थ की संभावना थी कुछ तो वर्तन समिकवाद से निवृत्त के लिए और कुछ कॉमन-समा तथा अस्टर जैसे दृष्टि प्रदर्शकों को हल करने के लिए। —
कोई एक दल इन प्रश्नों को हल नहीं कर सकता था।

मेरे कहन का आशय केवल इतना ही है कि इस सिद्धान्त पर कि मंत्रियदल कॉमन-सभा का नियंत्रण करता है आचार्य संसदीय शासन इसलिए चलता रहा क्योंकि सभी दल उस आर्थिक व्यवस्था को स्वीकार करते थे जिसकी वह अभिव्यक्ति था। मनुष्य एक दल से दूसरे दल की ओर गिर सकते थे लेकिन वे अपने विचारों द्वारा स्वयं को सत्ता से सर्वत्र के लिए निष्कासित नहीं करते थे। दलगत संघर्ष इस विस्थापन के ऊपर संश्लिष्ट होता था कि बेर-सबेर प्रत्येक दल विजय पायेगा और उसका विरोधी प्रसन्नतापूर्वक परिणाम स्वीकार करेगा। वह ऐसा इसलिए करेगा क्योंकि उसका सफल प्रतिद्वंदी उसे इतना दुःख नहीं करेगा जिससे प्रतीत हो कि वह विजय का आत्यधिक दुःखयोग कर रहा है।

बैजहॉट ने लिखा था "हमारी शासन-व्यवस्था दलगत शासन को उबार बनाकर उसे अधिक से अधिक स्थायी और व्यावहारिक बनाती है।" उपायों से उसके दो अभिप्राय हैं। पहला तो यह कि दल अपने सिद्धान्तों में अति तक मही पहुँचते और दूसरे यह कि मंत्री सत्ताशक्त होने पर मध्यम मार्ग का अनुसरण करते हैं। मध्यम मार्ग यासांभव विरोधी दल के अनुकूल होता है परन्तु साथ ही साथ वह उन नीकियत तथ्यों के भी अनुकूल होता है जो उसकी अनिवार्यता सिद्ध करते हैं। लेकिन 'उदार शासन' से बैजहॉट का वास्तविक अभिप्राय यह भीति है जिसे प्रभुत्व स्वीकार करते हैं। वह अपने इस आशय से यह स्पष्ट कर देता है कि संसदीय शासन विद्युत् लोक-तन्त्रात्मक शासन के प्रतिरुद्ध है। उसका कहना था कि सार्वभौम मताधिकार का अभिप्राय यह है कि अधिक और कुटिलान् व्यक्तियों को कानून के ओर से निर्णय और भूल व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक मत नहीं मिलेगा। बैजहॉट को विश्वास था कि इससे संसदीय शासन गृह हो जायगा। उसने लिखा था "यदि यह सही है कि संसदीय शासन केवल सभी संभव हैं जबकि प्रतिनिधियों का अधिकार बहुमत उदार ही उसमें अधिक भिन्नताएँ नहीं वह बगलत पक्षपातों से भक्त हो तो वह विद्युत् लोकतन्त्रात्मक संसद उस शासन को नहीं बनाए रख सकेगी। उसमें प्रत्येक वर्ष अपनी ही भाषा बोलेगा प्रत्येक दूसरे के लिए दुर्बोध होगा और एकमात्र विजयी वर्ष उन अनैतिक प्रतिनिधियों का होना जो कुटिल पद्धतियों से चुने गए थे और जो सामर पद्धतियों में अगार्ड गईं पुरी पर काफ़ी मुनाफ़ा कमाएँगे।"

यहाँ बैजहॉट तीन बातें कह रहा है। संसद के सदस्यों को चाहे उनकी दलगत विचार धारण कौसी भी हो अंततः एक ही मत रखने चाहिएँ अन्यथा वे एक दूसरे के साथ समझौता न कर सकेंगे। सार्वभौम मताधिकार की स्थापना होने पर वे एक तरह के मत नहीं रखेंगे। उस समय समझौता अर्थात् हो जाएगा तथा संसदीय पद्धति गृह हो जाएगी। वे परिस्थितियों बिनाको उद्यम आशयक समझौता या मोटे तौर से १९१८ तक बनी रही थी। उस समय तक सार्वभौम मतक पुरुष मताधिकार नहीं था और इस प्रकार का स्वी मताधिकार उसके दस वर्ष बाद तक स्थापित नहीं हुआ। उस समय तक अधिक दल को भी कॉमन-सभा की संस्था-संस्था के पचासवें आय से अधिक पर अधिकार नहीं मिला था। दोनों पुराने दलों के अधिकार्य संस्था एक ही बन-

समाज से सम्बन्ध रखते थे। अविज्ञात व्यापारी और कभीक प्रत्येक दल में थे। बैंकहॉट के घबड़ों में वे एक ही माया बाँटते थे और एक दूसरे को समझने में समर्थ थे। ऐसी स्थिति में वे राज्य की शक्ति का एक से उद्देश्यों की सिद्धि के लिए प्रयोग करते थे। चाहे कोई दल सामनासूझ होता एक से हित उठाकर रहते थे क्योंकि उनको दोनों दलों में समान रूप से प्रतिनिधित्व मिलता था। फलतः वे मन्त्रिमण्डल का निबन्धन स्वीकार करते थे क्योंकि मन्त्रिमण्डल जो निरस्य देता था वह ऐसा नहीं होता था जिससे कि उसमें से किसी को बोर अर्न्तरीय होगा। बैंकहॉट के घबड़ों में मन्त्रिमण्डल अपने निर्वी-चकों की मन्त्रि पा लेता था। उसके सामान्य मित्रान राष्ट्र की सर्वश्रेष्ठ राय समझे जाते थे। बुद्ध के परचात् की परिवर्तित परिस्थितियों ने इस सिद्धान्त के ऊपर क्या प्रभाव डाला, हमें इस पर विचार करना है।

(३)

संसदीय शासन का समस्त अन्तर्भूत सिद्धान्त इस तथ्य पर आधारित है कि राज्य समाज में एक तटस्थ तत्त्व है। इकमत संघर्ष के अनिराम झूठापोह में कभी एक दल और कभी दूसरा दल सरकार बनाता है तथा इस प्रकार अपने प्राधिकार के प्रयोग का अधिकारी हो जाता है। चूंकि दोनों दलों के उद्देश्य एक से हैं अतः दोनों दल एक दूसरे की विजय को स्वीकार कर लेते हैं क्योंकि उसके परिणाम एक ही ध्येय की सिद्धि में अग्रते हैं। उक्त सामान्य कस्याय की जिसके लिए दोनों दल प्रयत्नशील होते हैं, वे व्याख्या भिन्न-भिन्न रीतियों में कर सकते हैं लेकिन यह व्याख्या इतनी मित्त कभी नहीं होगी कि एक दूसरे की व्याख्या की वैधता को इस सीमा तक अस्वीकार कर दे कि दूसरा उसकी अस्वीकृति पर अवैधानिक कार्यवाही करने तक को प्रस्तुत हो पाये। उदाहरणार्थ यह सकते थे कि अनुदाहरणार्थ सरकार देन का विनाश कर रही है अनुदाहरणार्थ महारानी विक्टोरिया को मांति श्री म्नेडमन्ट के बारे में यह साब मकते थे कि केन केन प्रकारेण इस 'मन्डर बुद्ध पुरय से छटनाय निबन्धा चाहिए। लेकिन हर कोई मानता था कि इस प्रकार के दण्डों को गम्भीरता से स्वीकार करने की आवश्यकता न थी। सामान्य कस्याय के लिए वे जो जो कुछ कर सकते थे उनको यह माम्यता थी कि उन्हें यह मुक्त रूप से करना चाहिए। जब यमिक दल कोमन सभा में उन कारणों से जितनी वे व्याख्या कर चुका है एक स्वतन्त्र दल बन गया उनमें भी वह सिद्धान्त स्वीकार किया जिसके ऊपर यह व्यवस्था आधारित थी।

यह हीना जिसके भीतर यह मित्रान नाम करता था और जो सम्पूर्ण व्यवस्था का उपनेशन बुझमन् है बैंकहॉट के 'मध्यम मार्ग' दून में निहित है। यह मुझ उस नीति का बोधक है जो चाहे उतथा तद्व कुछ भी हो व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्वामित्व में हस्ताने नहीं करवा। दल इस बात पर विचार कर सकती है कि सम्पत्ति के अधिकारों में इस तत्त्व को प्रपातता दी जाए वा उन तत्त्व को केवल वे स्वयं सम्पत्ति के अधिकारों के विषय में विचार करना संभव नहीं मानते। संसदीय शासन की सम्पूर्ण प्रवृत्तियाँ कामन-मभा की समस्त विधेयताएँ जितनी देने लगीं की हैं इस बात पर निमर है कि इस विचार को प्रयोग के क्षेत्र से बाहर नक्या जाये। उद्देश्यों का तथा

समर्थका का अपने दलों में बिप्लास सरब ही इस माम्बता के ऊपर आपाणित बा कि समाज की अतिम आबिक रचना के बारे में कमी प्रश्न नहीं उठाए जायेंगे। राष्ट्र एक ऐसी व्यापारिक संस्था की बिसने इस प्रश्न के ऊपर भाव्य के साथ अंतिय सौदेबाजी कर सी दी।

यही बैजहॉट के इन कथन का कि "संसद के अधिकार्य सरम्य उदार भावनाओं के होने चाहिए नहीं तो वे उग्र मंत्रालय को बुनें और उग्र कानून बनाएंगे" अर्थ है। "उदार" तथा "उग्र" से उतका मन्थन उन कानूनों से है जो उठे बरक के उदात्तित और धाम्बित्त अर्थसाम्बी के अनुहार बुनित राष्ट्र के "मर्बधेष्ठ मत" द्वारा बनित "निर्बत तथा मूर्खों" के मत के प्रतिबुद्ध "बनिका तथा बुद्धिमानों" के मत द्वारा अनुमोदित हो। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि राज्य का एक बल जो स्वयं बकस्विक सरकार ह पूजीवादी समाज की बुनियादों पर छिह करता है तो बैजहॉट इसे "सर्बमच्छ" मत के प्रतिबुद्ध समझता। यदि कोई मन्त्रालय ऐसा करता तो बैजहॉट कहता कि वह उग्र ब्यक्तिया से मिल कर बना है। बिन प्रस्तावा के लिए वह अपने को उत्तरदायी बनाने का तय्यार होता उन्हें बैजहॉट उग्र प्रस्ताव बताता। वह उनका मूल नियंत्र तथा मूर्ख जनता को दिए गए मताधिकार में निकाकता। वह मकम्मे की भांति ही यह तर्क करता कि साम्बीय मताधिकार तथा ब्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों में कोई साम्य नहीं है। वह सोचता कि यह मार्ग तो मीब ससदीय शासन के बिनाम की ओर के जाता है।

यही वह मार्ग है जिस पर इनन अपने कथन रख दिए हैं और हमारे लिए दलों के सिद्धान्तों के उन परिवर्तनों पर विचार करना आवश्यक है जिनका कौमन-सभा के सञ्चालन पर प्रभाव पड़गा। मुख्य रूप से परिवर्तन दो हैं। पहला परिवर्तन तो यह है कि उदार बल अब अनदार बल में विभिन हो गया है और दोनों का सम्भिकित रूप वह बल है जो उत्पादन के साधनों के ब्यक्तिगत स्वामित्व का समर्थन करता है। इनन परिवर्तन यह है कि ममिक बल जो अब राज्य में बकस्विक सरकार है उत्पादन के साधनों के सर्ब अधिक प्रमुख के सिद्धान्त का मूल रूप से प्रतिपादन करता है। इन परिवर्तनों का ससदीय शासन की उन विशेषताओं पर जो उसकी सफलता का रहस्य है क्या प्रभाव पड़गा ?

यह स्पष्ट ही है कि अब अनुहार बल अपनी उग्र विचार भूमि से जिसे बैजहॉट अपने समय में सुरक्षित समझता था काफी दूर हट गया है। चाहे अच्छा हो या कुछ हम एक समवायवादी समाज में रह रहे हैं और साम्बीय मताधिकार पर आधारित ससदीय शासन में यह माम्बता प्राबन्धिक महत्व की है कि उग्र बल को भी जो पूजीवादी की रक्षा करने के लिए है राज्य की सक्ति का प्रयोग सामाबिक और धार्मिक असमानता के परिणामों को दूर करने के लिए करना होगा। आज सम्पत्तिवादी बल बिठनी रियायतों के रहा है वे बैजहॉट की कल्पना से कहीं अधिक हैं। कमी और बुद्धिमान ब्यक्तिया के सर्बधेष्ठ मत ने जो १८१७ में समब समझा था वह समाज के उठी जल द्वारा १९१७ में समब समझ जान से बहुत भिन्न है।

केवल अनुहार एक जन सीमाका से बहुत पीछे रह जाता है जहाँ कि अधिक एक का निवास है। जन सीमाओं का अभिप्राय यह है कि अधिक एक संशयोय बहुमत के प्रयोग द्वारा उत्पादन क सामना पर सार्वजनिक प्रमुख स्थापित करना चाहता है। युद्ध के पदचाल अधिक एक की विचारवादा में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ है। उसके १९१८ के कार्यक्रम में कहा गया है "हम अधिक एक के वर्तमान विश्व संकट में यदि सम्मता का जंतु नहीं तो कम से कम विधिगत औद्योगिक सम्मता का जिसे अधिक फिर से बनाने की चेष्टा नहीं करेंगे परमोत्कर्ष और विनाश देखते हैं।" यह समान्य होने के बाद से यह विचार अधिक एक के मन में बराबर विद्यमान रहा है। वास्तव में यह कोई ऐसा भाषण नहीं था जिसके ऊपर एक ने जन विचार के निष्कर्षों के अनुकूल किसी नए दर्शन की रूपरेखा बनाने का प्रयास किया हो। पाया ही उसके कुछ नेता पूजीवाद की प्रामाणिकता में सन्देह करते हैं या यह और पूजीवाद का सम्मन्ध समझते हो। याद है उनके दो-एक सताओ विद्यपत्र संसद के नरस्यों में यह समझा हो कि काम्यनार राजनीतिक कोषणन के दबाव से पूजीवाद के उच्चार का मार्ग है। केवल एक ही ऐसा व्यक्ति था जिसने यह संदेह किया कि पूजीवादी समाज के पुनर्निर्माण को स्वीकार करने का अभिप्राय संशयोय पद्धति को जनीती देना हो सकता है। अधिक एक के अधिकार सरस्य वेद सम्पत्ति के दबाव में "जन जन बाद की अटक अस्पष्टता में विराम करने से। उनका विचार था कि काम्यन-समा में बहुमत होने पर अधिक एक अपनी सरकार का निर्माण करेगा। तब वह धीरे-धीरे समाजवादी विधान को पुरोस्थापित करेगा।" यदि यह अन्तर्गत की इच्छानुसार होगा तब उनका विदबाध था कि हम दूसरा एक भी स्वीकार कर लेगा। यह सम्मानना कि संशयोय घासन के सिद्धान्त इन उद्देश्यों के लिए अत्यावहारिक ही से जूमिल कर से ही उनके मन में जाती थी।

मर्चाई यह है कि अधिक एक और अनुहार एक की विचारवादा का बीच अब एनी चौरी कोई पैदा हो गई है कि उसे पाटा नहीं था सकता। अभी तक वह अंदर का कार्यों में छिपा रहा था। पहला कारण तो यह है कि अधिक एक अब तक दो बार धामनमता रह चुका है और उसका दोनों में से एक भी बार समाजवादी धाधनों को नार्पासिक करने का प्रयास नहीं किया। दूसरा कारण यह है कि पूजीवादी व्यवस्था के विरुद्ध अधिक एक का वर्तनीय नबल मठिक विद्रोह मात्र था। उसके पास पूजीवाधियों में पूरक कोई नार्बिक दर्शन नहीं था। यह मैं पहले ही कह चुका है कि ऐतिहासिकारी परम्परागत अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों को स्वीकार करते थे। उनका मुख्य उद्देश्य यह था कि पूजीवाद के अन्तर्गत मनुष्यों के साथ न्याय न हो सकेगा। वे व्यावहारिक पूजीवाद के कई दोष दिखता सकते थे। उनका विश्वास था कि मजदूर ज्यों ज्यों इन दोषों से परिचित होंगे वे उनके विचारण की मांग करेंगे। तब वे निर्वाचनों में अधिक एक को इन दोषों के निवारण की धमिक देंगे और संसद अधिक एक की छत्रछाया में धीरे-धीरे समाजवादी राग्य की धार बढ सकेगी।

इस दृष्टिकोण का अन्तर्गत सिद्धान्त यह था कि पूजीवाद जिसके पक्ष की अधिक एक स्वयं घोषणा करेगा या अपने पक्ष-नाक में भी अपनी प्रवृत्तियाँ नहीं त्यापवा।

दल का सम्पूर्ण मन संसदीय प्रक्रिया पर इस तरह केंद्रीभूत था कि ज्ञात होता था मानो उसे यह विश्वास है कि राजनीतिक कोष्ठक उम धार्मिक ढंघि से निकल भीतर उसे काम करना पड़ना है स्वतंत्र है। उमने यह नहीं देना कि पूंजीवाद के क अन्दर एक नतिजीसता है जो उसके दर्शन की अपनी आवश्यकताओं के अनुकूल साम्य की प्रेरणा देती है। पूंजीवाद मुताफ के यम पर जीता था। उसने समाज के बाधरण और प्रकृतिया को मनाफा कमाने की अपनी योग्यता द्वारा संकठित किया था। उसने राजकीय शक्ति का प्रयोग ऐसी परिस्थितियों के निर्माण में किया जिससे कि इस मुताफे की प्राप्ति निरन्तर होती रहे। कौन कम काम के बंटों और सामाजिक निवाओं के स्तर इन सबको पूंजीवाद की इस आधारभूत आवश्यकता के अनुसार बाता गया कि मनाफा बराबर मिलता रहे। पूंजीवादी समाज की यह नसदिक और स्वाभाविक प्रकृति थी कि वह राजकीय शक्ति का प्रयोग उन बाधामा का दूर करने में करे जो मनाफा कमाने के मार्ग में लड़ी होती थी। यही राज्य का प्रयोजन था और पूंजीवाद के अर्थ तथा दुरे, बुद्धिमत् तथा मूर्ख सम्बन्धी विचार राज्य के इस प्रयोजन के उदभ में ही निहित होते थे। व्यक्तिगत उद्यम को उन बाधकों से मुक्त करना जो मुताफा कमाने के अधिकार पर शोध करती हों पूंजीवादी समाज का अन्त मूठ सिद्धान्त है और यही सिद्धान्त उने राजकीय शक्ति को इस प्रयोजन की प्राप्ति का एक शक्य मानने को विवक्ष करता है।

यह सब धार्मिक दल से किया रहा है क्योंकि उसने परम्परागत अर्थशास्त्र को और राज्य के परम्परागत सिद्धान्त को स्वीकार किया है। अपरंच उमन राज्य को समाज में ऐसा उदस्व उदस्व माना जो संसद में बहुमत प्राप्त करने वालों के सिम्प्राय था। उमने अनुदारवादी तथा उदारवादी सरकारों के प्रति राज्य को उदस्व और उदारवादी दोनों रूपों में देख किया था और उमके पास यह मानने का कोई कारण नहीं था कि सरकार का निर्माण करण पर उसे भी यह अनुभव प्राप्त नहीं होगा। वह यह समझने में विफल रहा कि उदारवादियों तथा अनुदारवादियों के बीच राज्य की उदस्वता का कारण यह था कि दोनों ही दलों के उद्रेष्य एक से थे। दोनों ही पूंजीवादी समाज के अधित्व में विस्थापन रखते थे। दोनों ही उस समाज में पूंजीवादी व्यवस्था की इस तरह बलाना चाहते थे कि वह समाज बलत बना रहे। किन्तु धार्मिक दल ने उन उद्रेष्यों को और उस अधित्व को अस्वीकार कर दिया। उसने संसदीय पद्धति का पूंजीवादी उद्रेष्यों के लिए नहीं मत्पुठ इनसे उन्ने उद्रेष्यों के लिए सचामन करना चाहा। प्रयोजन के इस अंपरीत्य का परिणाम अनुदार दल के सामने है। किन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि धार्मिक दल ने ऐसा करना प्रारम्भ कर दिया है।

म यह कह चुका है कि संकटकाल में पूंजीवाद सामाजिक पालदंडों को उन परिस्थितियों के अनुकूल ढाँधने के लिए बाध्य है जिसमें कि वह मुताफा कमाता रहे। उमने न किबल अपने उपासकों के ही मन में मत्पुठ बनता के एक बहुत बड़े मात्र के मन में यह बात बठा दी है कि सामाजिक बुद्धिमत्ता उन परिस्थितियों का निर्माण है। उसके विधि और व्यवस्था सम्बन्धी विचार पूर्वतः इन परिस्थितियों के अनुकूल

है। चाहे कोई भी सरकार सत्ताह्वर ही बराबर बाधिम्य का कार्य बेतर्कों में सभी और बन्ध बाधिम्य का कार्य बेतर्कों में बुद्धि रहा है। औद्योगिक सभ्य के कार्यों में उदाहरण के लिए १ २९ का संकट के लीबिए व्यापारिया ने मरिच सरकार से यह मांग की है कि वह सामाजिक उत्थान का कोर् नाम न करे। धार्मिक दम की विचारवादा त सिद्धान्ता से मिल्न है। उनका कार्यक्रम उन सिद्धान्ता की स्वीकृति की शींग बनता है जिन्हें व्यापारी अध्यावहारिक बननाते हैं। धार्मिक दम इन सिद्धान्तों को संसदीय सासन क इति में बाधिमित करने के अपने अधिकार पर दम देकर बाधिम्य में पूजीपतिया को स्वय अपने विनाग में सहयोग देने के लिए आमन्त्रित करता है। इसी बात को पूजीपतिया की दृष्टि से देखा जाये तो कहा जा सकता है कि धार्मिक दम पूजीपतिया को दम के बाधिम्य विनाग में सहयोग त के लिए आमन्त्रित करता है।

और इन आमन्त्रण का आधार संसदीय सासन में सासन करने बात बहुमत का सम्मिलित अधिकार है। यह बाधा की जाती है कि धार्मिक दम को सरकार बनान की अनुमति दम अनुमान पर ही आयगी मानो यह अपने पूर्ववर्ती के काय को भाग बनने के लिए विन्मूख तय्यार हा। उसके विरोधिया का यथापूर्व जानी विवायन सामन जाने की अनुमति होगी दम यथापूर्व समस्रीय दार-निकारा की प्रतिया द्वारा पिलित हागा और पाँच वर्ष ध्यानी होक पर दम से फिर एक बार धार्मिक दम तथा उसके प्रतिष्ठी के बीच में से चुनाव करन के लिए कहा जायेगा। श्री एटली का कहना है कि और कोई वस्तु बसंभव है क्योंकि वे प्रकृत राजनैतिक जन "जिन्होंने यों तक व्यक्ति पर स्वतन्त्रता तथा राजनीतिक कोनन का अनुभव किया हो" साम्यवाद अथवा फ्रडी-वाद को अपने मनोकक नही पायया। श्री एटली के इस विरवाग का आधार हागा राष्ट्रीय धर्म तथा धान्ति की यह कमी परम्परा है या सभी हाक तक हमारी धार्मिक पद्धति की सफलता के कारण संभव हो सकी है।

मरिच संसदीय पद्धति द्वारा समाजवादी समाज के सत्तात्मक का अधिप्राय वेदम नही नही हागा कि स्यायी बारीया तथा संविधान के अधिमथया का पालन हा ही मर। इसका अधिप्राय यह भी है कि व्यापारिया को मिलन कई व्यवस्था में विरवास नही है अपने ऊपर समय रक कर इन प्रकार साधरण करला हागा मानो उन्हें विरवास हो। इसका अधिप्राय यह है कि परिवर्तन के लिए साधरदक सहमति का साधारण उन ध्यानीयों की ओर से हाता रहेदा जिन्हें अब तक अपने समस्त संघावर्ता को उसका नार्म बधरद करने में कहाया है। इसका अधिप्राय यह है कि धार्मिक सरकार द्वारा बाधिमित की गई प्रत्येक नीति उग रिगा में एक बरम हागा जो उनके विचार से न तो बुधक ही हागा और न सफल। इस प्रकार का साधरसयन उन्नीर भुगवाक में कमी नही विहाया है। श्री ताँ ने लिखा है, हमारे साधर-धर्म की यह विगपता है कि यह बार में दयालु बन्ध मुनंभृग शशी पन-सबक और प्रकृत इनके लिए प्रस्तुत है यह सबप्रथम इन बात के लिए हत संकल है कि उसके पास मुन्दर और दिष्ट जीवन ध्यानीय करने के लिए बाधी रपया हो और इस दामे क लिए यह कानून और व्यवस्था के नाम पर अपने हाधिया के बरकारों में भाग सया दना उह देव

देना जैसी तहकाती में उनसे काम करवाया उनकी हत्या कर देगा उन्हें पंजी देगा, उन्हें दुबा, बला और मृदु कर देगा।"

उक्त उद्घारण की भाषा शक्तिशाली है लेकिन वह तथ्यों से अधिक शक्तिशाली नहीं है। कॉमन-समा की समस्त विचारधाराएँ इस सिद्धान्त पर आधारित हैं कि बलों के मतभेद अंतिम विस्फेप में इतने छोटे हैं कि मनुष्य उनके सम्बन्ध में झुंके के स्थान पर उनके सम्बन्ध में समझौते की बातचीत और समझौते कर सकते हैं। १९८९ के पश्चात् से राजनीतिक शक्ति मुख्य रूप से एक ही बग के हाथों में रखी है और वह बर्न है उत्पादन के साधनों का स्वामी। कानून का एक मात्र उद्देश्य इस स्वामित्व के परिणामों को प्रमाणी करना रहा है। कानून की प्रत्येक भाषा में ऐसे विचार मरे पड़े हैं जिनका उद्गम यही उद्गम है और कुछ नहीं। कोई भी व्यक्ति इस उद्गम को एक घटापटी में १७९९ के कन्विनेशन एक्ट में तथा ब्रुसरी मतापटी में १९२३ के 'ट्रुड यूनिफन ऑ एम्बॉयट एक्ट' में देख सकता है। यह १८९५ में रुबलेस तथा उसके साथियों की निन्दा और १९३७ में माइकेल केन तथा उसके साथियों की निन्दा का कारण स्पष्ट करता है। जबकि एक प्रकरण ही बर्न पुराना है अतः शासक बर्न सॉर्ड मेरुबोर्न तथा उनके साथियों की कठोरता पर हमारी तरह रोष व्यक्त कर सकता है लेकिन उसने उस समय इस पर इससे अधिक रोष नहीं किया था जितना वाज का शासक बर्न माइकेल केन की विरुद्धारी से सहानुभूति रखता है। शासक बर्न वैधानिक शक्तिशाली के सिद्धान्तों का मूल्बाकन अपनी परिस्थितियों के सम्बन्ध में करता है और यदि वह उन्हें अपनी सुरक्षा के लिए खतरा समझता है तो वह उन्हें बिना किसी पश्चात्ताप के ठिठकृत करने के लिए प्रस्तुत करता है।

सच्चाई यह है कि जब अधिक दब विरोध में है तब संसदीय पद्धति के संचालन का आवरण एक बात है और जब अधिक दब को सरकार के रूप में काम करने का अधिकार हो तो उस समय उसका आवरण कुछ ही बात है। एक स्थिति में तो परम्परागत नियमकर्म में कोई विशेष अत्यन्त नहीं होता लेकिन ब्रुसरी स्थिति में एक आधारभूत विक्षेप उत्पन्न होता है। अधिक दब का वर्णन यह मानता है कि यह मतभेद महत्त्वहीन है। यह यह मानता है कि उन व्यक्तियों को निरर्थक स्वयं मित्रेया जिन्होंने घटा प्राप्त करने के लिए, विधका जब वे उपयोग करते हैं अन्ति तथा ब्रुसरी का मंत्र पूरका था। यह यह मानता है कि न्याय तथा अधिकार के सिद्धान्त उस समाज की सीमामों से परे हैं जिधमें उनका प्रयोग होता है। मनुष्य उनके बर्नों के बारे में उस समय भी एकमत ही सच है जब कि उन्होंने बीजहॉट के घट्यों में एक ही भाषा में बातचीत करना बन्द कर दिया हो। यह व्यक्ति जो हमारे साम्राज्य के इतिहास उद्घारणार्थ पूर्वी अफ्रीका की भूमि-व्यवस्था के बारे में तोड़ी गई प्रतिज्ञाओं को अचना भाष्ट के सिधु अधिक सचबाध या दावेस आम्बोहन को दवान के लिए प्रयुक्त अभ्यासयुक्त कानूनों को जानता है यह समझ देता कि वे व्यक्ति जो अपने विरुद्धाधिकारों को संघटायन देखते हैं, उनकी रक्षा के लिए मुड़करें। अधिक दब यह जानता है कि यदि वह सच का प्रयोग रोमन

कंपाणियों को उनकी वार्षिक स्वर्णपत्रा में बंदिन करने का लिए करे, तो चाहे उनके पीछे निर्वाचकों का बहुमत हो उनके इस कृत्य का प्रतिरोध होगा। लेकिन वह यह नहीं मान सकता कि यह निर्णय उन व्यक्तियों द्वारा किया जा सकता है जिनके लिए सम्पत्ति-यम इतना प्रिय है कि उनमें उन्हें प्रत्यक्ष सामाजिक सत्ता को अपनी सेवा में लाने का लिए मार मयार के मन्त्रण की प्रत्या ही हो।

कम से कम एक दृष्टि में यह वर्तमान व्यवस्था का रक्षक है। धार्मिक संगों की भांति धार्मिक दल भी उसके द्वेष के भीतर ही बसा है। मुदागर बाह के समस्त बह-बह संघर्षों में उभरा मिडालन यह रहा है कि पूंजीवादी धर्म का अनुशीलन देन को अपना उनका साथ समझौता करना धर्मकार है। किन्ती भी धार्मिक सरकार में ममात्रवादी कानून के निर्माण का माहम नहीं किया उन सामाजिक सुधार की संभव-शक्तियों पर निरर रणा धर्मिक ब्रह्मा समझा। यह तर्क कि अल्पसंख्यक सरकार होर के भाग उसे ममात्रवादी कानूनों के निर्माण का अधिकार नहीं या इस तथ्य का नून जाना है कि उस इन्हें पुरास्पावित करन का ही अधिकार या ही और यदि वह कर्मिण-समा में परावित हो जाती ता अपने प्रदान की अमिपुष्टि के लिए नए निर्वाचन करवा सुकर्नी थी। धार्मिक सभों ने बिना किसी तस्पाई के भाग हड़ताछ की। यदि यह हड़ताछ सरकार के लिए चुनोनी नहीं थी ता फिर इसका कोई अमिप्राय ही नहीं था। धार्मिक सभ की संगठन-शक्ति क इस विशाल प्रदान में यदि उन्हान कोई सबक सीना ता वह एरी था कि यह एक दिक्कत साधन है। मॉडर्नर सम्प्रदा में उन्हाने इस बात की चेत्ता की कि भिवोइकों के मान-भाय उन्हें भी मनाके के अविश्ट वारिण का पर मिण जाये। उन्हां अपनी अमकपता में यह निजय नहीं निकाला कि पूंजीवादी ममात्र के कर्म अधिकारी अपने द का त्यागन के लिए प्रस्तुत नहीं ह। भी स्वेथी न मुडोत्तर मू के बारे में किबा हे, धर्मियों के लतामा में धर्मिको की शक्ति का प्रयोग नहीं भी उन बायसों के बरते के लिए नहीं किया जिन्हें मजद की बडी बागते ही पायक पूंजीवादियों ने पूनन विररुत कर दिया। इस प्रकृति का सर्वोच्च उदाहरण यही है कि भी मॉयड जार्ड न कानों के राष्ट्रीयकरण विषयक पोंकी प्रन्दिेशन के अक्षररः कार्यान्वित करने का अक्षर दिया या सेकिन बाइ में उसका पोंरी न टूकरा दिया था। धार्मिक दल की मनीषा का समझने के लिए हमें यह नही मुक्तता चाहिए कि कहीं तो अपने १९२ में कल में विविध हम्पजर का प्रबंध विरोध किया या और कहा उनमें १९१९-२० में स्तेन में हम्पजर न करन का अक्षर बुधन और बीच प्रतिरोध दिया था। कानों विधियों में किपता संपन्न ह ?

धार्मिक संघट के कानों ने धार्मिक दल में एक ऐसा ईन दृष्टिकोण उत्पन्न कर लिया है जो संगरीय पद्धति का अनुशीलन के लिए वागन महत्त्वपूर्ण है। ये कर्न एम रहे हे जिनमें धार्मिक दल की घोषणाका और कानों में व्यापक अक्षर रहा है। एक और तो यह संघर्ष की र्क है कि ममात्र के पूंजीवादा बाधार को अक्षीकार कर दिया जायगा और इस अक्षीकरण के परिणामों को मूल रूप देने के लिए एक विविध कानों अम पर अक्षरण दिया जायगा। कानों बाइ एम बात की निररुत चेत्ता रही ह कि

पूजीवार के साथ समझौता करने की राहों की अधिक से अधिक रोज की जाये। इस रीति से हम यह समझ सकते हैं कि फ्रांसीसियों के सङ्घ में भी धार्मिक दल ने साम्यवादी दल के साथ मेल करना अस्वीकार कर दिया है तथा अपने सङ्घर्षों का प्लेटफार्म पर साम्यवादी समस्या के साथ प्रकट होने की अनुमति नहीं दी है। इसी रीति से हम इस प्रकार के कार्य समझ सकते हैं जैसे कि १९३० में 'ट्रांसपोर्ट एंड जनरल वर्कर्स यूनियन' ने अपने कुछ नेताओं का अपनी सङ्घस्यता में केवल इस आधार पर बहिष्कृत कर दिया था कि इङ्ग्लैण्ड के दिनों में उनका उसके प्रति अत्यधिक अनुग्रह या यद्यपि इस इङ्ग्लैण्ड की यूनियन का समर्थन प्राप्त था तथा उसका संचालन उद्योगी कार्यकारिणी ने किया था। 'वर्कर्स परिषद' जैसे संकेत कुछ सभा का साम्यवादियों को अपने संघटना के राष्ट्रीय सम्मेलनों का सदस्य न होना देना यदि साम्यवादी फ्रांसीसियों के पीड़ित व्यक्तियों की सहायता के लिए स्थापित किसी संघटना के सदस्य हो तो भी उन्हें उसमें भाग लेने से रोक देना और दल के समस्त प्रभाव को धर्म के अधीन के विवेचन में लबा देना आदि बातें बहुत महत्वपूर्ण हैं।

उनका आधार इंग्लैण्ड में एक ऐसे शोषणकारी समाज के अस्तित्व का विरोध है जो उस पूजीवादी समाज से जिसके बीच यह रहता है, व्यवहार में पूषक रहने में समर्थ है। इससे धार्मिक दल के नेताओं को यह निष्कर्ष निकलता मानना पड़ता है कि जब तक वे इस शोषणकारी समाज में अपना विश्वास बनाए रख सकते हैं वे अपने विरोधियों को यह विश्वास सभी प्रकार दिया सकते हैं कि सर्वत्र बहिष्कृत नहीं होना। वे यह कहते मालूम पड़ते हैं कि 'हम मूल्य बृद्धिमान व्यक्ति हैं। राजनीतिक दृष्टि से हम ऐसे व्यक्तियों को अपने दल में लेना अस्वीकार करते हैं जो हमारी तरह अपने को समाजवादी तो कहते हैं लेकिन वे इसमें सदेह करते हैं कि समाजवाद को धार्मिक पूर्णक प्राप्त किया जा सकता है। यद्यपि हम उत्पादन के साधनों के राष्ट्रीयकरण का समर्थन करते हैं, हम वर्तमान स्वामियों को पर्याप्त प्रतिफल देने के पक्ष में हैं। औद्योगिक क्षेत्र में हम अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ समझौते की चेष्टा करते हैं। हम पैर-अधिकारी इङ्ग्लैण्ड को अनुत्साहित करते हैं। हम उस धार्मिक सचवादिना को प्रत्येक संघटन में जहाँ तक हमारा बल चम्कता है, बंद देते हैं। हमारे राजनीतिक और औद्योगिक तथा विद्वान फ्रांसीसियों के विरुद्ध धार्मिक आशोकन को दबाव के लिए आपस में मिल तक गए हैं। हम बान्धु और व्यवस्था का पूर्ण रूप से समर्थन करते हैं। हम यह मान लेते हैं कि हमारे विरोधी भी हमारी तरह ही शोषणकारी प्रक्रिया की पूर्ण रूप से रखा करने के पक्षपाती हैं। हम यह विचार उस समय तक रखेंगे जब तक कि उनके कार्य हमें यह न दिखा दें कि हम, अस्ती पर हैं।

यद्यपि यह है कि धार्मिक दल की परम्परागत स्थिति का यह अर्थ विवरण है। इसकी मूल दुर्बलता स्पष्ट ही है। यह विस्तृत सङ्घ है कि धार्मिक दल के विरोधी भी उसके समान ही शोषण की रक्षा करने के पक्ष में हैं। यदि आन्तरिक समाजवादी नीति को वापसी करने का एक साधन ही जाता है तो धार्मिक दल के विरोधी उसकी रक्षा करने की परवाह नहीं करते। धार्मिक दल की मूल दुर्बलता उसका यह न

समझना है कि राज्य समाज में उस वर्ग के हार्थों का एक उपकरण है जिसका उन्हावन के साधनों पर नियंत्रण है और वह राज्य को उस समय तक जब तक उस दम के ह्रास में उन्हावन के साधन हैं अपने उद्देश्य को सिद्धि में प्रयुक्त नही कर सकता । यथिक एक इस कल्पनाओंक में शीलता है कि जहा उसे निर्वाचन में बहुमत मिला उसके विरोधी उसकी पू जीवाव की नैतिक निष्ठा को नोख मूड कर सिर माये बड़ा लेंगे । वह यह नही समझता कि सामूहिक रूप में मनुष्य के सामान्य सिद्धान्त इस प्रकार के नैतिक विचार नही होते । सामूहिक रूप म मनुष्य के विश्वास उसके बर्ष यत स्वार्थ से तथा समाज की एक नोम्यता से कि वह उसकी नैतिक निष्ठा पर आधारित परम्परागत प्रत्याशाओं को कहीं तक पूरा करता है उतमन होते है । हम अपने मूक विचारों को इसलिये नही बरछते, क्योंकि एक साधारण निर्वाचन का परिणाम हमारे प्रतिरूप यथा है । यह हमें तभी करते है जब कि इन दो बातों में से एक हो—या ता वह सिद्ध हो कि हमारी सहाए निर्भूक की या हमें अपनी प्रत्याशाओं में निश्चित सुधार माग्य करना चाहिए । सर एडवर्ड कार्लिंग और उनके मित्रों ने १९११ के दो साधारण निर्वाचनों से यह निष्कर्ष नही निकाला था कि उन्हें निर्वाचन की जनबरात इच्छा स्वीकार कर लेनी चाहिए । उनका तो विश्वास था कि वे उसकी पूर्ति उसके प्रयोग के बिना नही कर सकते थे । समय ने उसको सत्य प्रमाणित किया ।

बैरुंग का यह कहना ठीक ही था कि सत्ताकड् अधिक अपने उदारवापित्वो को जब वे विरोधी दम में होने ह पहल से भिन्न दृष्टि से देखते हैं । संसदीय भासन की यह विशेषता है कि वह बहुमत को जहाँ तक चले हो सकता है विजय की शक्ति का दुर्बपयोग करने से रोकता है । १९११ के संसदीय अधिनियम के प्रसन पर का सन्देह पैदा हो गया था उसके सम्बन्ध में यही हुआ था । उदारवादी बल कोई नया का उन्मुक्त काल में अपने अधिकार का प्रयोग कर सकता था । होमरूल के बाद विचार के सम्बन्ध में भी यही हुआ था । यदि किसी सरकार को अति की सीमा तक पहुँचने के उपकरण में पहलक की सम्भावना का अन्त हो, तो वह कोई भी अतिम निरन्ध करने के पूरे समझौते की समस्त सम्भावनाओं पर अन्ध विचार करेगी । कॉमन-समा की रचना में हमें इसका विश्वास दिलाने के लिए सत्ताधिक यनोनीमानिक तत्व है । सत्ताकड् एक ओर विरोधी दम के नेता सर्वत्र आपस में चढ़ते नही रहते । वे बैरुंग मित्र होने है और उनकी मित्रता से उपचार काय्ये हूव तक समाप्त हो जाता है । वे इस विचार के बन्धुस्त हो गए है कि सत्तामात्र या केना ही अपने में एक सकता है । श्री रैमजे म्योर ने १९२४ की यथिक सरकार को एक नमस्कार बढाया था । क्या राजनीतिज्ञ जिनके लिए यह सत्य से बन्धु बरिहापिठ है उसकी प्राप्ति को अपनी विजय क जनसर पर ही कुटिल करेंगे ? उनकी प्रकृति एसी नही है ।

वह समझने के लिए किसी विशेष अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता नही है कि यथिक सरकार को अपनी विजय के प्रयोग में संशय रखने के लिए विपुली शक्तिमती

काम में आवेगी। बल्गात मतभेदों की तीव्रता को दूर करने के लिए राजमुकुट की विपुल शक्ति का प्रयोग होगा जिस प्रकार कि उसका मुक्तकाश में प्रयोग हुआ है। समाचार-पत्रों तथा बर्षों की शक्ति भी इन कार्य में लयपी। विभाग भूक की मजफरता समय की मावस्यकृता और झुठ वचन के विस्फोटक स्वकण पर बल देंगे। मंत्रि-मंडल को यह माव रचना पड़ेगा कि देश क मातक में बुरे परिणाम हो सकते हैं। लाड-समा प्रत्येक क्कतिकारी कानून के विरुद्ध वचनकर मोर्चा लेगी और कान्य ग्करिक संकट के क्कतस्वरूप विकट अन्तर्राष्ट्रीय उलझनों खड़ी हा सकती हैं। जो व्यक्ति यह समझत हैं कि हम भाग से खेल रहे हैं उनम हिचकिचाहट हुआ स्वाभाविक है। वही उड़ोने अपनी विजय का एक बार कार्यान्वित करना प्रारम्भ किया फिर पीछे सीटना नहीं हो सकता। उनको यह ज्ञात होना ही कि इसने उस विरोध उत्पन्न होगा। उन्हें उस भावपूर्ण व्यक्तवसा की माव होयी ही जिसने १९३२ में उनके पूर्ववर्तियों को विफल मनोरथ कर दिया था। उनके लिए यह समझना आवश्यक है कि यदि वे स्वयं का मजदूर के अनुकूल सिद्ध नहीं करते तो वे अपने बल के विनाश का पतला मोस से लेते हैं। यह सम्भावना उस समय और भी अधिक होती है जब कि वे पतनशील कानिग्य काल में सत्तावड हो। ऐसी परिस्थितियों में समय को गुजार देने का प्रयोग भी बहुत अधिक होता है।

मेरा निवेदन यही है कि जब तक व्यक्ति सरकार ऊँची कोटि के संकट का सामना करने के लिए तय्यार नहीं है वे शक्तियाँ जो उसके सामने आवेगी उसे पूँजीवादी व्यक्तवसा के परिवर्तन के स्थान पर उसी के संशारक के लिए प्रेरित करेगी। सामाजिक सुधार के क्षेत्र में जिसके लिए वह समाजवादी कान्यजय पर आधारित किए बिना ही प्रयास कर सकती है इसका अधिक ध्यान है कि उसके लिए सामाजिक सुधार पर ही निर्भर रहने का प्रयोगन बहुत अधिक होता। मंत्रि-मंडल के सचार उपस्य कहेंगे "उसको बुड करना चाहिए। हमें अपनी पीछे देखा कानिग्याकी कौममत् रचना चाहिए जो इस ज्ञान से कि हमारे प्रथम कर्षी से उसे काम होगा हमारा समर्थन करे। बहुत से व्यक्ति बेरोजगार हैं। हम उनकी बचा सुधार सकते हैं। बूड और अयाहिज है हम उनको अधिक सुविचार्य है सकते हैं। हम जावास तथा शिक्षा सामाजिक स्वास्थ्य तथा मनोरंजन सम्बन्धी सुविचार्य बढ़ा सकते हैं। हम पाटुलष के पुनरुत्थान द्वारा विरोध नीति के क्कम को बरक सकते हैं। हम मजदूरी को प्रतिकर है सकते हैं तथा १९२० के ट्रेड युनियन का एमेंडमेंट एक् का रू कर सकते हैं। लोग हमसे इन वस्तुओं की मासा रखते हैं, वे उनका स्वागत करेंगे। जब हम इस प्रकार के कार्यों से जनता का पर्याप्त समर्थन प्राप्त कर लेंगे हम समाजवादी विद्या में ठोस क्कम उठा सकम। दुर्बलशित व्यक्ति सरकार वह क्कवापि नहीं बरेगी कि समा के कार्य में शक्ति की प्रता काल से यह सब कार्य पयावधि क प्रथम दो बर्षों के भीतर ही किया जा सकता है। उक्त विषयों से सम्बन्धित सभी कानून संघीय अधिनियम के अन्तर्गत संविधि-मुक्तक तक पहुँच सकते हैं। सब फिर नया समर्थन तथा मन्त्रि

द्वारा अपने विभागा के संचालन में गवा अनुभव वा ज्ञेय पर मंत्रिमंडल अपने कुछ कुष्ठर कार्यों को पूरा करने में अपसर हो सरता है।

यह निश्चित है कि दक्षयन सभ्य का स्वल्प धमिर इस को इस दृष्टिकोण की ओर प्रेरित कर देना और उसका राज्य विपयक सिद्धांत वह संदेह और पुष्ट कर देगा कि यह एक बुद्धिमत्तापूर्ण कदम है। इसके माय-माय दिखाने के लिए 'बैंक ऑफ इंग्लैंड का' राष्ट्रीयकरण भी हो सकता है जिसकी बजट से ज्ञेया कि श्री कौमल हमे चेतावनी देते हैं एक की पु बीगनि को अपनी राजि की नीर न छोड़नी पड़ेगी। इस नीति का फल क्या होगा ?

यह तो निश्चय ही है कि अधिक दल के विरोधी इस नीति का पहले-पहल सहर्ष स्वागत करेंगे। मंत्रिमंडल को उसके बर्तमान पर उसके व्यापक दृष्टिकोण पर बर्बाई दी जायेगी। लेकिन यह निश्चित केवल कुछ ही समय तक रहेगी। वह जो कारणों से चीझ ही कमल्य हो जायेगी। बहका कारण तो यह है कि जेमे ही अनुदार दल को धमिक सरकार की संपन्नता के बढते का मात होया वह कौमलसभा में धमिक सरकार का तीव्र विरोध करने ज्येया। यदि धमिक सरकार अपना कार्य बर्बाव गति से करती गई तो परिणाम यह होगा कि अनुदार दल को जायामी निर्वाचनों में पठजम मिलेगी और वह देर-सबर धमिक सरकार के अपस्यय बाधियम तथा प्रयोग पर उसके अत्यधिक भार आदि की बट बाधोपना प्रारम्भ कर देगी। यदि धमिक सरकार अपने कार्यक्रम पर बाधियम के विस्तार-काक में बाधरण मही करती तो इनका नैमविक परिणाम यह होया कि व्यापारिक विपनाम को चोप पहुंचेगी। व्यापारी कोप उन योजनाओं के कलस्वल्प दिनमें उनकी बास्ता नही होली बड़ने वाले कर-भार की कदापि पसंद नही करते। इनके जो सतरे हो सकते हैं। एक तो यह कि बजट में अस्थिरता का बाव और दूसरे यह कि ऐमा दक्षयन सभ्य प्रारम्भ हो जाते जिसमें अनुदार दल अनुकूल अवसर पर सर्व-समा की धमि नर बाध्यय से। दूसरा कारण यह है कि हमने स्वयं धमिक दल के अन्दर ही कौमल-सभा के भीतर भी और बाहर भी कुछ पद सभ्यी है। इसमें कोई संदेह नही है कि धमिक मंत्रिमंडल चाहे कुछ भी प्रस्ताव करे, धमिक दल का एक महत्वपूर्ण अंग धमिक सरकार से बड़ जाया रखता है कि वह समानवाद की दिशा में निश्चित और सीधी धारा करे। उनक विचार से इस प्रकार का सामाजिक सभार अधिरी के मुख्य ध्येय की निर्वाजनि है। वे इस प्रकार की वेष्टा की पठगोन्मुख बु बीवाद के रज्यार्थ पेश-बाजी समझते हैं। इस प्रकार की नीति से जिनकी मने कररेणा दी है दल में कुछ पद जायगी और हा सरता है कि हमसे सरकार को नीचा तक देखना पड़। इन 'पेश-बाजिवाद' समझा बायना तथा बजनी और बरती के बंगर से इतरा तीव्र सभ्य उठ पड़ा होगा कि वह कायमन के अन्दर सरकार के प्रभाव को घिचित कर देगा। यदि बहु नीति धमिकों के पर्याप्त मात को ही संतुष्ट नही कर सक्ती तो यह निश्चय है कि वह उनके पनुकों को संतुष्ट नही कर सकेगी। वह सरकार जिनकी बाधपलायकम्बी और बधियमभायकम्बी देला ही बाधोपना करते हैं स्वयं को सीध ही विपम परिस्थिति में पायगी।

अब कोई धार्मिक सरकार ऐसी स्थिति में नहीं है कि वह तीसरी अचक्रता को सहन कर सके। इसका सीधा निष्कर्ष यह है कि पूँजीवादी समाज का संघर्षन मजबूती प्रकार सभी हो सकता है जब कि यह उन लोगों के ऊपर छोड़ दिया जाय जो कि उसमें भाग्य रखते हैं। वे लोग जो कि समाजवाद की स्थापना के पूर्व उसके सिद्धांतों का बनाए रखने का प्रयास करते हैं उसका सफलपूर्वक संघर्षन नहीं कर सकते। यह कार्य उन व्यक्तियों द्वारा और भी कम सकता है किया जा सकता है जो इस तथ्य की उपेक्षा कर बैठे हैं कि पूँजीवादी समाज में उन व्यक्तियों का विस्थापन या जेना क्रिके हार्सों में उत्पादन के साधनों का नियंत्रण और संघर्षन है सफल मानने के लिए अत्यंत आवश्यक है। अनुशासकों और सशस्त्रों इस विस्थापन को पा सकते हैं क्योंकि वे उन नियमों का पालन करने के लिए बिन पर यह विश्वास अवलम्बित है प्रस्तुत है। समाजवादी अपने समाजवादी होने का दावा स्वयं बिना इस विस्थापन का नहीं पा सकते। व्यापारियों के लिए यह स्वाभाविक ही है कि वे धर्मिकों को अपना समर्थन नहीं देते। धार्मिक दल समाज में जाय ना इस दम से पुनर्निर्माण करना चाहता है जो पूँजीवादी अर्थशास्त्र के सिद्धांतों के प्रतिबन्ध है। "धार्मिक सुधार" सरकार के रूप में वह पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था की समस्याओं को वैदिक भावना की भाषा में हल करने की पूर्वतन मुक्तिहीन चेष्टा करती है। उसकी नीति विपक्ष समस्त सिद्धांत उन सिद्धांतों से निःसृत होते हैं जो सम्पत्ति विपक्ष अधिकांशों के पूँजीवादी सिद्धांत का धार्मिक अस्वीकार करते हैं। यह भी बीम्बरलेन के मुक्ति-जन (Random) के सुप्रसिद्ध सिद्धांत का ही प्रश्न नहीं है। यह एक जातिवादी के लिए जो पूँजीवादी विचारधारा के वाचकों को स्वीकार करता है, एक सुबोध सिद्धांत है। उस सिद्धांत का निष्पत्ति विषय यह प्रकार करता है, टीरी स्टीरलिनवादी द्वारा जो उन्नी भाषाओं को उचित मानता है, प्रचारित सिद्धांत के परिणाम से केवल परिभाषात्मक रूप से ही भिन्न है। लेकिन यह एक समाजवादी के हार्सों में जो अधिकांश का मुक्त सम्पत्ति को नहीं प्रस्तुत व्यक्तित्व को मानता है और इसलिए जो कार्यरहित स्वामित्व को अधिकार नहीं देता तथा यह धारण करता है कि उत्पादन सुगमों को दृष्टि से होना बोधगम्य नहीं रहता है।

इसलिए मैं यह विश्वास है कि धार्मिक सरकार के द्वारा एक ऐसी नीति के संघर्षन की चेष्टा जो उसके विरोधियों का विस्थापन प्राप्त कर सके निश्चय ही असफल होगी। यह नीति न तो उन्हे ही संतुष्ट करेगी और न स्वयं उसके अपने मित्रों को ही। यह नीति प्रयोग के विस्तार तक में कुछ समय तक चल सकती है लेकिन व्यवस्था के समय में निश्चय ही नष्ट हो जायेगी। इसके परिणाम स्वरूप सभित का प्रश्न पुनः एक बार मुंह फँका कर उठ खड़ा होगा। इससे या तो धार्मिक दल में १९३१ की तरह भेजिन उससे मजूरी फूट पड़ जायेगी या धार्मिक दल को विरिधित समाजवादी आचार पर अपनी नीति का पुनर्निर्माण करना होगा। धार्मिक दल अपने को समाजवादी कहता है लेकिन वह पूँजीवादी व्यवस्था से कोई सम्बन्ध-विच्छेद नहीं करता। इस स्थिति का स्वाभाविक परिणाम यह होगा कि जो समस्याएँ आज हमारे

सामने हैं वे अधिक में उम समय और विचटता से उठेगी जब समिक दल के एक बार और सलाहक रहने के पश्चात् यह सिद्ध हो जायगा कि उसका मूखोबादी लोकतंत्र से विचट्ट किती प्रकार भी नहीं एक सनता। वास्तव में समिक दल का वर्तमान दृष्टिकोण कार्य के रूप में राज्य के स्वरूप तथा उस स्वरूप से निरमृत होने वाले राजनीतिक शासक की समस्या का हल नहीं कर सकता उसे स्वमित ही कर सकता है।

समिक दल के लिए निर्वाचकीय अनुमान को प्राप्ति स्वयं राजकीय घणित की प्राप्ति है। वह यह मान लता है कि बुकि उसे अपने सवि-संघल द्वारा कामन-सभा के संभालन का अधिकार मिला हुआ है जब वे समस्त उपकरण ससही बाबा मार्तने बिनके द्वारा राज्य अपने किसी विरोध को दबाव के किये अपनी सत्ता का प्रयोग करता है। अपने तर्क की इस पलक मुस से कि विरोधी विचारधारकों के बीच में राजसन्नि तटस्थ रहनी है वह यह भ्रामक निष्कर्ष निकालता है कि लोकतंत्र चाहे उस सीते की अर्थात्क सपठन में क्यों न रहना पर सुरक्षित रहता है। लेकिन सम्पूर्ण साम्य से यही सिद्ध होता है कि राज्य-सक्ति हामी तटस्थ नहीं है। हमारे इतिहास में केवल एक ही बार ऐसा अवसर आया है जब कि राज्य-सक्ति को दो एंसी विरोधी विचार धाराओं में से शिर्द्धने अजना अस्वीकार कर दिया या एक का अमन करना पड़ा था। उस समय संयुक्त का स्यापना तभी हो सकती थी जब कि बृहस्पत और अन्ति ने यह निश्चित कर दिया था कि राज-सक्ति का प्रयोग किम प्रयोजनों के लिए होना। इसमें कोई संदेह नहीं कि इसके पश्चात् से राज्य-सक्ति में तटस्थता का प्रदर्शन किया है क्योंकि फिर उसे विरोधी विचारधारकों के बीच कुमाव करन का शिर्द्धने एक अनुने से इनकार कर दिया या कभी संयोग नहीं मिला है। जब जब कि पञ्जाबी लोकतंत्र का अस्वायी समझीना टूट रहा है राज्य-सक्ति की तटस्थता का अमन एमे किसी अन्वित सिद्धान्त पर नहीं प्रयुव अनुभव द्वारा सिद्ध पीबन के बठोर तथ्यों पर आधारित है।

इसलिए, मेरा तर्क लॉर्ड बम्फीर के उन सन्ने तक जाता है जिन्हें मैंने प्रारम्भ के एक अम्माम में उद्धृत किया था। उन्होंने लिखा था हमारा सम्पूर्ण राजनीतिक तंत्र पहले से ही इतन मजबूत की बनता था अस्तित्व मानकर चलता है कि वह पार स्परिक विचार मेद को सुकमता से सह सकता है। उसे अपनी महियुता के विषय में इतना प्रगाढ़ विश्वास है कि वह राजनीतिक संघर्ष के अन्त्य कोलाहल से कभी अधिक घाघ नहीं हंठा। अपने अनुसार यह विचार ठीक ही था क्योंकि हमारे वैदिकिक सवि-संघल समाज की बुनियाद के बारे में कभी मिल्ल मग नहीं रहे हैं। मने यहाँ यह निवेदन किया है कि यदि समिक दल का कार्यक्रम सच्चा है तो जब राज नीतिक दलों में इन बुनियादों के बारे में मतभेद है। जहाँ जगमें एक बार इन तरह का मतभेद होता है फिर राज्य में ऐसी कोई आधारभूत एवता नहीं रहनी जो दामत संघर्ष की बुनियादी नीक पर चलनी रह सके। इस आधारभूत एवता के विनोप के साथ साथ उन उदात्त मनोरथा को बनाए रखन की बीगना भी गल् ही जाती है

जो कि समझौते की शमता का रहस्य है और जब यह शोभ्यता मतमर्षों को पाटने की शक्ति के अभाव से विकसित हो जाती है तो वे समस्त पारस्परिक सम्बन्धों को अलग-अलग संसदीय शासन बरकत है स्पष्ट हो जाते हैं ।

इस दृष्टि से क्राउन-समा अथवा परिचित रूप में उक्त युग में जिसमें यह अपने बारे में पूर्णतः आत्मरत होती है पूजीवादी शोकात्मक की परम्परागत अविश्वसित बन कर सामने आती है । उसके राजनीतिक सम्बन्ध सामाजिक प्रवृत्तियों और प्रकिया का स्वरूप बाकि इस समय को व्यक्त करते हैं कि इनके अन्तर्गत यह जानते हैं कि अपनी अज्ञानता ऐसी श्रुति अज्ञानता है जिसमें किसी भी पक्ष के ऊपर घातक बाध नहीं हो सकते । एक अथवा दो छात्र कर १८३२ के पदपाव से सत्ताकृत होने वाला प्रत्येक एक यह जानता था कि वह बाहे जिस विधान को पास करे, उसे स्वीकार किया जायेगा । यह अथवा १९१४ का होमरूल एक्ट था जिसे विरोधी बल ने अपने लिए एक घातक बाध समझा था और जिससे देश को गृहयुद्ध के द्वार तक पहुँचा दिया था । जो बल मैं यहाँ विवेक कर रहा हूँ वह अन्य देशों के पूजीवादी शोकात्मकों के बारे में भी सही है । यह संयुक्त राज्य अमरीका के बारे में सही है जहाँ रिपब्लिकन और डेमोक्रेटिक एक समाज की बुनियादों के बारे में सर्वत्र एकमत रहे हैं और अमरीकी संविधान को उसकी समस्त अतिरिक्तियों के बावजूद भी बसाने में समर्थ हुए हैं । यह महत्वपूर्ण है कि अमरीका में बासला तथा वेष्ट-विश्व के ऊपर जहाँ एक बार मतभेद हुआ तो उसका परिणाम गृहयुद्ध था । यह अन्त के बारे में भी सही है । जहाँ तुर्की गणराज्य की स्थापना के बाद से किसी भी बुनियादी बात पर विचार नहीं उठता है । लेकिन जब फ्रांस में समाजवादियों ने संघर्ष के अन्तिम संगठन का प्रत्यक्ष अज्ञान किया तो जहाँ फ्रांसीसी का अन्तर्गत अज्ञान हो गया और वह भी तब तब तक जबकि सामग्री बलों ने आपस में समझौता करके समाजवाद के प्रत्यक्ष को स्थापित कर देने का निश्चय किया । यह स्कॉटलैंडियों की सामाजिक समाजवादी सरकारों के बारे में भी सही है । वे भी अपनी स्थिति को इसलिये बरत बनाए रख सकी हैं क्योंकि उन्होंने अपनी नीतियों द्वारा समाज की बुनियादों का पूनीवी देने का कोई प्रयास नहीं किया है । इन देशों के प्रधान सामाजिक मुद्दों की दृष्टि से काफी जगह बड़े हुए हैं । यहाँ समाजवाद के मुगोतर का संसदीय संस्थाओं पर क्या प्रभाव पड़ता है यह देखना अभी शेष है ।

क्राउन-समा की प्रवृत्तियों का मूल यह है कि यद्यपि बलों ने सरकार के कार्यों की अन्वेषण या बुराई का तो बल कर विवेकन किया है, लेकिन उन्हें राज्य के मूल उद्देश्य पर विचार करने का कमी अवसर नहीं मिला है । इसे उन्होंने स्वयंसेवक मान रखा है । उनके सम्मुख जीवन के महान् उद्देश्य तथा इन महान् उद्देश्यों को प्राप्त करने के साधन रहे हैं । वे जोड़ जो राज्य के मूल उद्देश्य को रचना करते हैं मुख्यतः समाज के एक ही सर्व-अन्वेषण के स्वामियों के वर्ग-से जाते हैं । वे एक दूसरे को जानते हैं क्योंकि उनकी विचारधाराएं एक ही रहीं हैं । उन्होंने एक ही विचारधारा और विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त की है । उन जैसे व्यक्तियों में ही सिविक सचिव सेनाओं पुलिस और

न्यायवाहिनी बाहि का संघासन किया है। वे ही बर्गों रेमों तथा बीमा-नम्पनियों बाहि क प्रधान रहे हैं। उनका बर्ग प्राचीन कुलीनों की नाति एक बर्जतमीक बर्ग नहीं था। लेकिन उनका बर्ग इस बर्ग में एक बर्जतमीक बर्ग का कि उसकी सभ्यता क्वत्र बड़ी स्थिति प्राप्त कर सकन वे जो कि उनकी विचारधारा को स्वीकार करत हों। उन्होंने अपनी भावना और आनन्दवताओं से सामाजिक मानदंडों लोकाचारों और रीति-रिवाजों बाहि को निश्चित किया है और उनकी जादों तथा आयप्यनताएँ उत्पादन के सम्बन्धों और स्वाभित्त से उत्पन्न हुई ह। यदि हम उनके जीवन को इस उत्पादन-सम्बन्धा स पृथक करवें तो वह निस्सार प्रतीत होगा। जब वह सगुम्न तथा बहु बुनिवाद जिम पर हमारा राजनीतिक ढांचा बना है चरमरा रहा है क्योंकि जब उत्पादन के वे सम्बन्ध टूट रहे हैं।

इन सम्बन्धों के टूटने का कारण यह है कि वे जब हमारी सभ्यता में उत्पादन की शक्तियों से पर्याप्त काम नहीं उठा सकते। फलतः दासक-बर्ग जब जनता का जो उसके ऊपर निर्भर है और जिसे संशुष्ट करने में वह असमर्थ है अपनी धमपक्ति बेचने के लिए विवश करवा है। मोटे तौर पर औद्योगिक बाहि के परकाष्ठ से यह जनता संघटन के तीन चरणों में से होकर गुजर चुकी है। पहला चरण यह था जब कि कारखानों का आधुनिक ढंग पर विकास होने लगा। उस समय अधिको ने स्वयं को औद्योगिक क्षेत्र में अनुचित दोषण से बचाने के लिए धार्मिक संघों की स्थापना की। लेकिन उन्होंने धीरे धीरे मह पामा कि औद्योगिक क्षेत्र में जीवन को परिस्थितियों का निर्माण राज्य-शक्ति द्वारा प्रस्थापित नियमों द्वारा निश्चित होता है। फलतः उन्होंने अपने हमारे चरण में बीरे-बीरे राजनीतिक रूप चरण करता प्रारम्भ किया। उन्होंने अपने मताधिकार के लिए संघर्ष किया और जब उन्हें यह मिक मया उन्हां अपने मता प्राप्त करने पर मह प्रभाव डालन का प्रयास किया कि वे विधान द्वारा उनके काम की शर्तों में सुधार करें। कुछ समय बाद उन्होंने यह समझ लिया कि इस प्रकार के परोसा बचाव से कुछ नहीं होगा। इसलिए उन्होंने अपने एक स्वर्ज्य इस का निर्माण किया जिस पर वे प्रत्यक्ष रीति से प्रमाने डाल सकते थे। जिम समय इस रूप का निर्माण हुआ मह विस्वास बस पकड़वा जा रहा था कि राजनीतिक संस्थाओं के ऊपरी ढांचे में कोई यकनी नहीं है प्रत्युत उन साम्यान्तरिक विद्यालयों में मसठी है जिमके ऊपर यह ऊपरी ढांचा टिका हुआ है। फलतः उनके इन में जब तीमरे चरण में पदार्पण किया। आज हम इसी युपसन्धि पर सखे हैं। हमारी पीढ़ी क मानने महत्त्वपूर्ण प्रसन्न यह है कि क्या उन राजनीति संस्थाओं का जो एक व्यवस्था के बर्ग सम्बन्धों की संशुष्ट करने के लिए उत्पन्न हुई थी इस प्रकार सुनारा जा सकता है कि उनके किष्कुर उन्टी व्यवस्था क बर्ग-सम्बन्धों को संशुष्ट किया जा सक।

मैं यह यह कहने का प्रयास नहीं किया है कि ससदीय पद्धति जीवन-समा जीते अपने विरोध प्रतीको के माध्यम से पूजीवादी सोरसन के प्रयोजना के अनुकूल नहीं थी। मेरा कहना दो यह है कि आज जब पूजीवाद बर्ग-सम्बन्धों की एक व्यवस्था के नाते उत्पादन की शक्तियों से पूरा काम नहीं उठा सकता उनका सुताप्य बनाने का

सिद्धान्त निश्चिततः खोदतप के इससे बिल्कुल उल्टे सिद्धान्त में मेल नहीं खाना । जब सामंतवाद का पतन होने लगा था और समाज नूतन सम्भावनाओं से पूरा काम उठान के लिए नई उपयुक्त संस्थाओं की खोज में लगा था सामंतवारी संस्थाएँ बिल्कुल निष्पत्ती प्रमाणित हो गई थी । ठीक इसी प्रकार आज जब टि पूजीवाद अपने-अपने ह्रास की ओर ही बढ़ रहा है संसदीय संस्थाएँ भी उसकी अभिव्यक्ति के लिए उचित साधन नहीं मान्य पड़ती । रोसह्वी और सनह्वी उदाधियों में मध्यम वर्ग ने यही किया था कि प्रमुख व्यक्ति का कड़ा समर्थ और विशेषकर कॉमन-सभा के पास स्थानान्तरित कर दिया था जिससे कि समाज की सर्वोच्च बल प्रवर्ती शक्ति उसके अपने हाथों में रह सके । राजनीतिक संस्थाओं का सम्पूर्ण तन इस केन्द्रीय शक्त के साथ गुम्फित कर दिया गया है कि उनके संचालन का उद्देश्य मध्यम वर्ग की सहायता बनाए रखना है । इस उद्देश्य के अधीनत्व पर उस समय तक कोई उल्टी नहीं उठी जब तक कि अधिक बग क इतिहास का तीव्र चरण विनाई नहीं दिया । इस समय प्रमुख-शक्ति का आवास में इतना महत्वपूर्ण और इतना निर्णायक परिवर्तन हो गया है जिसका कि उन समय हुआ था जब कि सामंतवारी अर्ध-व्यवस्था में पूजीवारी अर्ध-व्यवस्था का रूप बालक किया था । विचारणीय प्रश्न यह है कि क्या प्रमुख-शक्ति को जति क लिए प्रयत्नशील बना वर्ग उस पुठनी वर्ग की संस्थाओं का बिधे बट् अपहस्य करने की चेष्टा कर रहा है प्रमुख-शक्ति का आवास में परिवर्तन आज के लिए प्रयुक्त कर सकता है ? मैंने पूछा है कि क्या वह उस समय एता कर सकता है जब कि अपहस्य किए जाने वाले वर्ग की इत बटा का मनोबलानिक परिणाम राजनीतिक बुद्धि और सामाजिक शक्ति के उन समस्त मानदंडों का जिन्हे उसने उदाधिया के उपरांत बीरे बीरे बनाया है उत्सर्जन मान्य पड़ता है । परम्परा में इन मानदंडों को इन वर्ग की अतःपत्ता में समाविष्ट कर दिया है । इस परिवर्तन को सामे के लिए संसदीय शासन बर्तन तक समर्थ है, इस प्रश्न में हमारा विचार उक्त प्रश्न के उत्तर पर ही निर्भर है ।

(४)

राजकीय शक्ति के प्रयोग के अधिकार क लिए होने वाले स्वयं के परिणाम कॉमन-सभा के अधिकार को निश्चित करेंगे और उसके संगठन से सम्बद्ध समस्त समस्याएँ इस मूल प्रश्न के साथ जुड़ी हुई हैं । बत. इस दृष्टि से उन कुछ मुसाली का जो कॉमन-सभा के सुधार के विषय में किए गए हैं परीक्षण उचित प्रतीत होता है । निरीक्षकों के विचार से समा के ऊपर काम का अर्थविक मार रहता है । उन्हें इस बात का खेद है कि धना में व्यक्तिगत सहाय का महत्व कम होता जा रहा है । वे प्रवृत्त व्यवस्थापन की राज्य के विभागों को ही गई इस शक्ति की कि वे विनिश्चय के रूप में एता विचार निष्काक सकते हैं जिसे बिधि का बल प्राप्त हो सामोचना करते हैं ।

यहनी बठिनाई क लिए प्रस्तावित उपचार किसी प्रकार का अपहस्य (devolution) है । यद्यपि आस्ट्रिया और जर्मनी में इंग्लैण्ड से नहीं कम

जनसंख्या है फिर भी वहाँ कमरा सड़ और इस विधान-मंडल है। अमरीका की जनसंख्या इंग्लैंड से तीन गनी है फिर भी वहाँ उनका विधान-मंडल है। हमारी संसद की बुद्धिमत्ता का एक प्रमाण कारण यह बताया जाता है कि उसे इनका अधिष्ठ विधान पास करना पड़ता है कि उसे सम्पूर्ण विधान पर ठीक से विचार करने का समय नहीं मिल पाता। यदि हम इंग्लैंड और वेस्न के लिए पृथक विधान-मंडल बना दें तो हम संसद के कार में कुछ कमी कर सकते। उस समय यह समय हमारा कि हम वेस्टमिन्सटर में केवल अधिकाधिक महत्व के प्रश्नों पर ही विचार करेंगे।

यह समाधान देने पर पहले-पहल तो बहुत आश्चर्य का सामना करना है लेकिन जब हम इसकी गहराई से परीक्षा करते हैं तो मालूम पड़ता है कि यह दिव्य उपयोगी नहीं है। जिन विषयों का सम्बन्ध नहीं किया जा सकता वे सभी विषय एन है जिनके ऊपर समय का मुख्य समय खर्च होगा है। वैदेशिक मामलों साम्राज्यीय सम्बन्ध प्रति रक्षा कर्तव्य प्रयुक्त डाक स्वामित्व उद्योग तथा वाणिज्य का नियमन आदि सभी विषयों के ऊपर प्रशासन की एककता आधुनिक राज्य के लिए इतनी महत्वपूर्ण है कि स्थानीय सरकारों के ऊपर उनका सम्बन्ध नहीं है। सभी-कमी संसारिक शासन हमारे सामने उदाहरण के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। लेकिन समात्मक ध्यान की बहुत भी प्रशासनिक कठिनाईयों इष्टलिए उत्पन्न होनी है क्योंकि समात्मक विधान-मंडल उस विषय पर उदाहरणार्थ धार्मिक मामलों पर-निर्णय नहीं रख सकता जिसके सम्बन्ध में एककता आवश्यक हो गई है। यदि सार्वजनिक स्वास्थ्य शिक्षा और निर्जन-साहाय्य आदि जिन विषयों को सम्बन्धित किया जा सकता है उन्हें उन स्थिति सिद्धांतों के दायरे में काम करना होगा जिनके संभालन पर संसद का अन्तिम नियंत्रण रहेगा। स्पष्ट है कि इस स्थानीय विधान-मंडलों को इच्छानुसार कर लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। उन्हें जिनका प्राधिकार दिया गया है उसका बाहर निकलने की भी अनुमति नहीं दी जायेगी। पहली नीति का तो परिणाम यह होगा कि सम्पूर्ण योजना का अन्तिम नियंत्रण वेस्टमिन्सटर में होगा। दूसरी नीति का अन्तिम यह होगा कि स्थानीय विधान-मंडलों के अधिनियमों का स्थानिक पुनरीक्षण हुआ करेगा। फलतः स्थानीय विधान-मंडलों के वे सब अधिनियम कर्षात्मक हो जायेंगे जो स्थानीय संसद के अधिकार होंगे। इनके अनुसार ही स्थानिक पुनरीक्षण का सिद्धांत अपनाया आवश्यक हो जायेगा।

दोनों और भी वे एक उद्देश्य से सम्बन्ध यह सिद्धांत है कि यदि सम्बन्ध के ऊपर स्वीडन कॉन्सेंस के प्रस्ताव स्वीकार कर लिए गए तो संसद के समय में प्रायः आठ प्रतिशत की वृद्धि होगी। यह जोड़ सब ठीक वर्ण पुरानी है। यदि अब उस समय से वैदेशिक मामलों और बेरोजगारी का सन्ध यह गया है इसलिए मेरा अनुमान है कि यदि संसद का सन् १९३१-३३ की तरह प्रतिनिधिक हुआ तो समय की वृद्धि वेदल पास प्रतिशत होगी। यदि हम यह मान लें कि विभिन्न मामलों की विभिन्न विधानी नीतियों के परिणामस्वरूप उल्लेख वाली कठिनाईयों के ऊपर भी विचार होगा— उदाहरणार्थ एही स्थिति सामन हो सकती है जबकि वास्तव में तो समाजवादी विधान

मंजूर हो और बेस्टमिनिस्टर में अन्तर्जातीय सरकार हो—तो मुझे इस बात में सन्देह है कि हम संसद् के समय में तबतक भी बचत कर सकेंगे। संसद के समयों का अनुभव यह प्रकट करता है कि अभीतक विधान-मंडलों के विधान वैधानिकता के अगाधार एंगे प्रकृत लक्ष्य करन रखेगे दिन पर केंद्रीय संसद् में निर्णय और विधान की आवश्यकता हुआ करेगी। यदि यी समय में संसद् के अनुष्ठान नए विधान-मंडलों को शांति और व्यवस्था बनाए रखन का कार्य भी दीया जाता है, तो हमारे सम्बन्धित प्रश्न भी केन्द्रीय संसद् के सामने निरन्तर आते रहेगे। उदाहरणार्थ यदि दमिफो की हकतास के प्रति एक संसद् में हमारे क्षेत्र से भिन्न एक प्रश्न दिया गया तो निरन्तरतः यह मांग उठेगी होगी कि इस विषय पर सारे देश में एक ही नीति का पालन हो। यह स्पष्ट है कि यदि विभिन्न सरकारों न कर के सम्बन्ध में ही बचत रखें तो वेदांतरागम की कुछ ऐसी समस्याएं उठ लगीं होंगी जिन्हें केवल केन्द्रीय सरकार ही सुबधा करेगी।

तब यह है कि यह योजना तो 'मैंने कुछ और बना कुछ और' उक्ति को प्रतिपाद्य करती है। संसद के ऊपर कार्यभार बढ़ने का कारण यह है कि आधुनिक सरकारों का कार्यभार पहले की अपेक्षा बहुत अधिक बढ़ गया है। सरकारों का कार्यभार बढ़ने के मूल में दो प्रवृत्तियाँ—सार्वभौम मताधिकार की स्थापना और आर्थिक शक्ति का केन्द्रीयकरण—काम कर रही हैं। पहली का परिणाम यह है कि जनता सरकार के सामने अपनी आर्थिक से अधिक मांग रखती है और ये मांगें ऐसी होती हैं कि कोई स्थानीय संस्था उनकी पूर्ति नहीं कर सकती। दूसरी का परिणाम यह है कि आधुनिक सरकार की निरामक शक्ति आधुनिक औद्योगिक उद्योग के अनुकूल होनी चाहिए। सभ्यता के विकास के अनुभव से स्पष्ट है कि इसका अभिप्राय एकलपक्षी है। आज सम्पूर्ण संसार में सभ्यता का उद्योग का पन हो रहा है क्योंकि दक्षिणों का ऐसा विचार को महत्त्वपूर्ण विषयों को अभीतक विधान-मंडलों के हाथ में रखने देता है संसद के विकास को बुझ कर देता है जिससे वह अपनी समस्याओं को ठीक से नहीं सुझा पाता। यह कृपा देना कि इंग्लैण्ड को अर्थ-सहायक समाज बना देना उपयोगी होगा जब कि स्वयं संसद के सम्बन्ध में ही ऐसी ही संस्था लगी हो रही है अर्थानुसार है।

य यह मानना है कि इंग्लैण्ड में स्थानीय शासन के क्षेत्रों के शक्तिशाली पुनर्गठन के प्रकाश में उन्हें उपक्रम की आज से अधिक व्यापक शक्ति देना देन के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। यह पूर्वतापूर्व है कि उस प्रत्येक उपरपालिका को जो बचत कर बनाना या परिष्कार का शासन करीबना या भूमिद्वारा लगी जलाना चाहती है इन सम्बन्ध में शक्ति प्राप्त करने के लिए बेस्टमिनिस्टर जाना पड़े। स्थानीय प्राधिकारियों को ऐसे कार्य करन की अनुमति देने के सम्बन्ध में एक अधि नियम का निर्माण जिसके लिए शक्ति दत्त रूपों से बहुत जा रहा है आता है बुद्धि की बस्तु है। इस प्रकार का विरोध केवल हीन और से ही रहा है। एक तो यह बुरावाओं की ओर से ही रहा है। इसका स्पष्ट कारण यह है कि मुझीया सम्बन्ध व्यक्तिय यह नहीं चाहते कि भिन्न मुनिपालों का वे स्वयं उपभोग करते हैं के गरीबों को

भी मिलें। ब्रुसरा बहु स्थापित स्वार्थों की ओर में हो रहा है। इनका उदाहरण लंदन के झड़ी उद्योग का फुल्हम के म्युनिसिपल प्रयोग के विरुद्ध सच्य है। तीसरा बहु उन स्युक्त-स्वयं बंधों की ओर में हो रहा है जो यह नहीं चाहत कि कमिषन में सफल प्रयोग की अन्य स्वाधीय सस्थाओं में पुनरुत्पत्ति हो।

कॉमन यदि इस प्रकार का पुनर्व्यवस्था हो गमा ता भी मूल समस्या तो जहाँ की वहाँ रहेगी। जिस प्रकार समस्त काकठन्वात्मक राज्यो के विघात-मंडलों के ऊपर काम का बहुत अधिक बोझा है, इसी प्रकार सच्य के ऊपर भी कार्य का बहुत अधिक बोझा है। इसका एकमात्र कारण यह है कि उन अत्यन्त विस्तृत समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इन समस्याओं के ऊपर होने वाले बाद-विचार की सम्भीरणा का कारण यह है कि वे पक्कि की केन्द्रीय समस्या के लिए महत्त्वपूर्ण हैं। यदि कभी कोई आपाण सामन जा जाने तो ममद उद्योगे बड़ी वीद्यतापूर्वक और नये प्रवीयतापूर्वक निरूप सकती हैं। इनका सर्वोपेठ उदाहरण एबबड म्युम का सिहासन-त्याग है। बाद विचार लम्बा हो जाता है, समय का लक्ष अत्यावश्यक हो जाता है क्योंकि प्रस्तावित साधनों के ऊपर मत की अवधिक मिलता रहती है। सामान्यतः अनुसारवनीय सरकार १९२७ के "ट्रेड युनियनर्स एम्प्लोमेंट एक्ट" अथवा १९३४ के "इंसाइटमेंट टु डिसेम्प्लोसन् [एक्ट]" जैसे कानूनों को विरोधी एक्ट के विरोध को कुछ नर अबाधु न पाम नहीं कर सकती। ठीक यही बात १९१२ के पालियामेंट एक्ट तथा १९२४ के होमरूल एक्ट के बारे में उदारवादीय सरकार के ऊपर कायू होती है। समदीय शासन का यह सार है कि सरकार क आलोचकों को अपनी बात कहने का पुष्ट अवसर मिलना चाहिए। जितने अधिक उनके सरकार से मतभेद होंगे अपनी बात कहन की वे इतनी ही अधिक माग करेगे। कॉमन-समा के ऊपर काम का उतना ही अधिक बोझा होगा जितनी अधिक उद्योगे सामने में मायें होंगी। जितनी अधिक हमारी राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय कठिनाइया हागी उतनी ही अधिक वे मायें होंगी और इसलिए उतना ही अधिक यह बोझा होगा। हमारे समाज का स्वल्प इस बोझ को सम्मन्वीय होने की अनुमति नहीं देता। जहाँ प्रमुत्क-सक्ति का आवास होया निसर्वथा बही समाधान पाने का प्रयास किया जायगा।

व्यक्तिगत सदस्य का उपक्रम विस्तृत मिल प्रकार के प्रस्त सड़े करता है। मैं यह दिखाना चुका हूँ कि यदि उद्योगी पुनर्प्रतिष्ठ का अर्थ यह करना जाता है कि उसे महत्त्वपूर्ण विषयों में हल के नियन्त्रण से स्वतन्त्रता मिल जाये तो आधुनिक परिस्थितियों में उसका उपक्रम न तो संभव ही है और न वाछनीय ही। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि आज व्यक्तिगत सदस्य को जो इतना अधिक हीन कर दिया गया है वह आवश्यक अथवा वाछनीय है। समा की प्रक्रिया द्वारा उनके लिए जो स्थान निर्दिष्ट किया गया है वह इन कारणों का प्रतिफल है कि समा की सदस्यता उन व्यक्तियों के लिए जिनका मुख्य कार्य कॉमन-समा के बाहर है नि पुष्क उप-व्यवसाय है। अब जब संघर्ष के सदस्यों को बेतन दिया जाता है और समा का सत्तु शासन में भाग मारने तक लम्बा है, वह पारना उचित नहीं है। सचाई यह है कि व्यक्तिगत सदस्य के

कार्य के सम्बन्ध में हमारा विचार अब जो विचारविद्यालय के 'मद्र पुरय' की मासिका पर आधारित है। उसके सभा के संघटन के साथ सम्बन्ध को इस सभ्य के प्रकाश में कि मद्र पुरय का विचार अब सक्रिय राजनीतिक सिद्धान्त के रूप में उभारी नहीं है कभी सम्मीरता से उन्नीत नहीं किया गया है।

कम से कम तीन ऐसे महत्त्वपूर्ण काम हैं जिन्हें कॉमन-सभा के सदस्य कर सकते हैं तथा जिन्हीं अभी तक कोई व्यवस्था नहीं की गई है। इनमें से पहले कार्य की आवश्यकता के लिए 'आठ भासलस वमेटी ज्ञान डिनिस्टर्स पावर्स' में प्रबल विचारों की है। यह घोषणा है कि सदस्यों की एक परामर्शीय समिति राज्य के प्रत्येक विभाग के साथ सम्बन्ध कर ले जाये। यह प्रशासन की प्रक्रिया को देखेगी। नीति के सम्बन्ध में परीक्षण के लिए सुझाव देगी और विधायकों की सभा के सम्मुख पुरोस्थापना के पूर्व उनके सिद्धान्त पर गुप्त रूप से सम्मीरतापूर्वक विचार करेगी। इस कार्य में सफल होने से सदस्यों का कितना अधिक प्रविष्ट होना इस पर कुछ विरोध करने की आवश्यकता नहीं है। इससे कम से कम यह ही आशा है हो जायेगी कि इन व्यक्तियों को भी विभिन्न विभागों के सभी वर्गों में यह अनुभव हो चुका होगा कि प्रशासन का क्या जर्न होता है। मैं स्वयं यह चाहता हूँ कि कुछ सदस्य उस विभाग की जिसके साथ उनका संबंध रहा है विद्युत्-प्रक्रिया से सम्बन्ध हो जायें। इस पद्धति को इस प्रकार के तृतीय दल दल की प्रवृत्त आवश्यकता है। मैं एसी समितियों के निर्माण का सहाय नहीं दे रहा हूँ जिन्हें कि अधिकांशी कृत्य करने पड़ें। मेरा सुझाव यह है कि इन समितियों का केवल परामर्शीय समिति ही होना चाहिए और उन्हें मन्त्री के निर्णय के अधिकार में कभी हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। लेकिन यही यह निश्चित प्राप्त है कि वे सूचना प्राप्त करने तथा नीति का विवेचन करने की अपनी पद्धति के कारण नौकरशाही के ऊपर बहुत बड़ा काम करेंगी। पुनश्च चूँकि वे विधायकों की सभा में पुरोस्थापना के पूर्व उन पर गुप्त रूप से विचार-विनिमय कर लेंगी अतः इस विधायकों के ऊपर बहुत बड़ा काम का आवश्यक बाद-विचार एक जायेगा तथा सदस्यों को समझने-बुझने के लिए काफी सामग्री मिलेगी। अतः यह होना कि अब विवेक के ऊपर सार्वजनिक रूप से विचार-विनिमय हीना सार्वजनिक बाद-विचार का स्तर काफी स्पष्ट रहेगा।

ऐसी समितियाँ संसद् द्वारा विभागों को दिए गए अधिकार के अन्तर्गत कार्य तथा निम्न निष्कर्ष के सम्बन्ध में भी परामर्शीय समिता में कार्य कर सकती हैं। ऐसी उपस्थापना के ऊपर अधिकतर तो कोई प्रश्न नहीं उठेगा। लेकिन आधिकारिक रूपसे समिति की सभी तथा उसके अधिकारियों के लिए अव्यक्त मुख्यत्वात् बनी हुई बना रहे। लेकिन यदि हम प्रबल समितियों के संघटन के सम्बन्ध में पर्याप्त समझता के साथ काम करना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि सभा की एक स्थायी समिति हो जिसके पास सब प्रकार के आजादीय आवेदों का परीक्षण होने के पूर्व जायें। समिति के पास अपना एक अधिकार होना चाहिए जो इस बात की जांच करे कि क्या विनियम अपने वर्तमान रूप में स्वाभाविक मामूल पड़ते हैं। यदि इस विषय

पर कभी संदेह उत्पन्न हो तो समिति को यह अधिकार होना चाहिए कि वह मन्वड विभाग से व्याख्या माँग कर और वह उचित समझे तब विभाग द्वारा प्रस्तावित किसी प्रक्रिया की बार समा का ध्यान माहूँ कर सके। कृति समा मन्त्रियों को पक्षित देनी है अतः उन इस बात का पूरा आस्वादन मित्रता चाहिए कि इन पक्षियों का कुम्पन न होना होगा। इस प्रकार की समिति समा के प्रहरी के रूप में कार्य कर सकती है और समा का ध्यान इन बार माहूँ कर सकती है कि उनका द्वारा की गई पक्षितया का संशोधन-प्रकार प्रयास करते हैं। पुनरुक्त इस प्रकार की समिति विभागा की भौतिकगोही प्रवृत्तिया के ऊपर एक अच्छ-नास बहुस का कार्य करेगा।

मेरे विचार से व्यक्तिगत सदस्यो की सीमरा कार्य यह निम्ना चाहिए कि विभाग के सम्बन्ध में उन्हें और अधिक अवसर मिले। इस समय जवा कि सब को ज्ञात है व्यक्तिगत सदस्यो के विवेकपूर्ण पर अधिराध समय मष्ट होता है। पिछली पीढी में इन प्रकार के कवक हो ही महत्त्वपूर्ण विवेकपूर्ण विवेक-मुक्तक तक पहुँच सके हैं। समा में सुधार का मध्याह्न प्रायः सीरम दुस्त होता है क्योंकि उस समय प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि बाद-विवाद में कोई सम्मीरणा नहीं होती। फलतः सदस्य या तो उस समय अनुपस्थित रहते हैं क्या इस अवसर को उत्पन्न सा माग सते है। मेे जाहूँता है कि यह व्यवस्था कुछ इस प्रकार से पुनर्गठित हा कि 'ने अधीरता के विधान-संशोधन विवेकपूर्ण मेराचेस्टम के विधान-महक की माति अच्छी सफलता मिल सके।

इस प्रकार की व्यवस्था होने पर व्यक्तिगत सदस्य अपने लिए निश्चिन्त समय पर मात्र की ही तरह मत द्ये। कश्चिन् उनके विषयक 'टेल मिनिट्स' के अन्तगत या या सुधार का पुनोन्वायित किए जाने के स्थान पर, यदि उन्हें समा के कुछ निश्चित सदस्यो का समर्पण मिल गया तो प्रतिवेदन तथा परीक्षण के लिए एक प्रकर-समिति के पाम भेजे जायेंगे। यह समिति विवेकपूर्ण के ऊपर, जाहे तो विषयक मनु-वक के उम्मुक्त निम्नतम बतन की स्थापना अथवा विवाह-विधिया के सुधार के सम्बन्ध में ही मात्र पक्षित साध्य करी और समा विषयक के ऊपर बाद-विवाद समिति के प्रतिवेदन की स्वीकृति या अस्वीकृति के परचाय करेगी। मेरे विचार में इस व्यवस्था में बहुत गुण है। यह व्यक्तिगत सदस्यो की एक विभाक संख्या को अर्पित महत्त्वपूर्ण सामाजिक अनुसंधान में निरत रखती है। हमने उन्हें विवेकपूर्ण के सम्बन्ध में मोक्षमन की प्रवृत्तियो का निरन्तर परिषय मित्रता रखा है। हमने बहुत ही विचारधारण और प्रवृत्तियो प्रकाश में आ जानी है तथा उन पर उचित विचार हो सकता है। विन कायो ने १८५२ के 'जम्बिगत एक्ट' अथवा हमारे समय में भारतीय कानूनिक सुधार के सम्बन्ध में प्रकर समितियों के कार्य का अनुसंधान किया है उन्हें उनको उपयोगिता में लीई संदेह नहीं रह सकता। यदि अन्तर्गत विषय सामग्री बतमन वर्ष में विवाहसुधार भी हुई तब भी कम से कम इस प्रक्रिया के फलस्वरूप उन विषय के ऊपर काफी महत्त्वपूर्ण सामग्री पक्षित हो जायेगी। सुधार के विषयो

के ऊपर जहाँ कोई दम्भित विचार नहीं होगा वहाँ ऐसे अनुभवान से हम प्रकार का शोचनमय व्यापार होगा जो सरकार को इस दिशा में कुछ न कुछ काम करने के लिए बाध्य कर देगा। इस व्यवस्था का सबसे बड़ा फायदा यह होगा कि व्यक्तिगत सदस्य को काम करने का पर्याप्त क्षेत्र मिलेगा और यदि यह सरकारी हस्त से सम्बन्धित हुआ तो उस अनवरत विधोम से बचा रहेगा जो दम्भित निर्वाचन का नैसर्गिक परिणाम है।

सूत्रोपरान्त संसदीय प्रक्रिया की एक मुख्य विशेषता निश्चय अनुभव तो काफी पुराना है, प्रवृत्त व्यवस्थापन की वृद्धि है। संसद् के ऊपर कार्य का भार इतना अधिक है कि वह विनियमन की कैबल उपरेला माफ बनानी है और विस्तार की समस्त बातें सम्बद्ध विभागों के ऊपर छोड़ देती है। आजकल संसद् वर्ष में औसतन १ सत्र विधायी पास करती है और सम्बद्ध विभाग इसके पन्द्रह-बीस गुने अधिक विनियम बनाते हैं।

इस व्यवस्था की तीव्र आलोचना हुई है। हमें बताया जाता है कि यह संसद् के ऊपर नौकरशाही की विषय है। संसद् को इन विनियमों की अनवरत करने का अवसर नहीं मिलता और जब कभी उसके सामने कोई आलोचन जाता है सरकार अपने बहुमत के प्रयोग द्वारा मामल को जहाँ का तहाँ ठाढ़ कर देती है। कुछ विधेयकों में ऐसी धाराएँ होती हैं जो वैधानिकता के प्रश्न पर स्वायत्तियों के अधिकार-क्षेत्र का भी अति क्रमशः करती हैं। ऐसी स्थितियों में विभाग प्रमुखसम्पन्न संस्थाओं का रूप धारण कर लेंगे ह जिनके विरुद्ध नौकरशाही की कोई संभावना नहीं रहती। इंग्लैण्ड के एक सर्वोच्च नौकरशाही जस्टिस ने कहा है कि हम एक "नव अधिमायकवाद" की चक्री में हैं। श्री रैमने म्योर का कहना है कि संसद् में अपना प्राधिकार "उस नौकरशाही को सौंप दिया है जो आचरण के पीछे अपनी अनिष्ट वास्तविक शक्ति का प्रयोग करती है।"

यहाँ की प्रश्न अन्तर्गत है। पहला तो यह है कि क्या विभागों में वास्तव में शक्ति हथिया ली है? दूसरा यह है कि क्या यह व्यवस्था सिद्धान्ततः आपत्तिजनक है? पहले प्रश्न का उत्तर यह है कि सर्वोच्च नौकरशाही के समीप आन-वीत के परभाव यह निर्वर्ण निकाला जा कि इस व्यवस्था के बिना काम नहीं चल सकता और ऐसा नहीं मान्य पड़ता कि इसने शक्ति को हथिया लिया हो। कुछ आक्रामक आपत्तियों को छोड़कर विनियम काही शोच-विचार के उपरांत बनाए जाते हैं और उनके निर्माण में समस्त सम्बद्ध विभागों से परामर्श कर लिया जाता है। संसद् विनियमों को एक निश्चित अधिक के उपरांत ही न्यायिक करती है और इस बीच में यदि सम्बद्ध हित चाहे तो उनके विरोध में आवाज उठा सकते हैं। वैधानिकता का प्रश्न शक्ति अधिक शक्ति है और ये उस पर बार में स्वायत्तिका की स्थिति तथा शक्ति का विवेचन करते समय विचार करेगा। यहाँ यह कहना पर्याप्त होगा कि यद्यपि सर्वोच्च नौकरशाही के समीप वास्तविक शक्ति का अस्तित्व नहीं पाया है।

सिद्धान्त का प्रश्न कुछ अधिक रोचक विचार करने के योग्य है। प्रवृत्त व्यवस्थापन

वा विरोध ऐसे किसी अधिकाारी द्वारा जो रोमने के सम्बन्ध में नहीं हो सकता जिसके ऊपर संसद् का कठोर नियंत्रण न हो क्योंकि जो लोग यह मुक्ति उपस्थित करते हैं वे अधिकाारी प्राधिकार के कुछ सर्वांग्ण उदाहरणों तथा सचि या मूड बोधित करने के परामर्शिकार के सम्बन्ध में यह नहीं कहते कि उन्हें राजमकुट के हाथों से उतर संसद् के हाथों में सौंप दिया जाए। यह दावा ठीक नहीं हो सकता कि जब संसद् विधायों को कोई सक्ति देनी है तो विनाय स्वविवेक के अनुसार जो कार्य करेंगे उनके सम्बन्ध में संसद् को हर भार रिपोर्टें हैं। पेंशन बरोजगारी तथा स्वास्थ्य-इन्सुरेंस-अभिविद्यम आदि के बारे में तो यह स्पष्टतया जनमन है। इस समस्या को सुमझाने का रास्ता कुछ इस प्रकार की युक्ति पर आधारित है कि जब संसद् कार्यप्राधिका को कोई स्वविवेकी सक्ति देनी है तो उसे दो वस्तुओं का अधिकाार रहना है। एक तो उसे प्राधिकार के अन्तर्गत बनाए गए, किन्ती भी साधारण विधायियों के सम्बन्ध में किए गए आश्रय के बारे में पूरी जानकारी का अधिकाार रहता है। दूसरे, वह आन-इसकता पढ़ने पर विधायियों के प्रयोग के सम्बन्ध में किसी भी व्यक्तिगत प्रकरण की पूरी जानकारी वा सकती है। स्पष्ट है कि इन प्रयोजन के लिए कॉमन-सभा को एक ऐसी प्रक्रिया की आवश्यकता है जो यह संभव कर सके। संसद् के लिए उन सामान्य सिद्धान्तों के प्रयोगों और विस्तारों पर बहुत अधिक व्यवस्थापन करने में जिनके बारे में वह पहले ही व्यवस्थापन कर चुकी है अपना समय नष्ट करना मूर्खतापूर्ण है। उदाहरण के लिए यह कहना कि नुह-महात्म्य औपनि-परिषद् की मन्जना से उचित धरखना के अन्तर्गत विप को विप बोधित करे, मंत्रिमण्डल द्वारा संसद् के प्रति की गई इस माप से नहीं अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण यह है कि वह ऐसे प्रत्येक जनघर पर जब किसी सामाजिक पदार्थ को उसके विपान्त होने के कारण विद्यम से रोके जाना वाछनीय हो एक पुनर्क कागद बनाए।

मेरे विचार से यह मुक्ति प्रयासन के सम्पूर्ण क्षेत्र के ऊपर लागू होती है यद्यपि मेरी दृष्टि में किसी विधाय को ऐसे विधायन बनाने का प्राधिकार देना जिनसे कुछ विधान का विस्तार हो सके उचित नहीं है। इस प्रकार की क्षमताएँ ऐसी महत्वपूर्ण हैं कि वे संसद् के पास ही रहनी चाहियें। इसके अनिश्चित प्रवृत्त व्यवस्थापन द्वारा कहा किना तथा एकमान सारतून प्रत्येक संघाय्य दुरुपयोग के विरुद्ध संरक्षण प्राप्त करने का है। यहाँ कोई बड़ी बाधाएँ नहीं हैं। संसद् मंत्रियों से प्रत्येक कुछ सकती है और इस प्रकार जिस विषय पर चाहे सरकार से वाञ्छित सूचना प्राप्त कर सकती है। सभा की कार्यवाहियों का सर्वेक्षण यह प्रकट कर देना है कि इस सम्बन्ध में दो-आर ही व्यक्ति वा दिन ऐसे निकलेंगे जो अपने मायके में जानकारी मापने के लिए किसी सदस्य को न पा सकें। जहाँ तक स्वयं विधायियों के नियंत्रण का प्रश्न है, वर्तमान काल के संरक्षण पर्याप्त नहीं है। यदि मेरे बताए हुए दो मुद्दों पर आचरण लिया जाए, तो वे बड़ी सुयमता से पर्याप्त हो सकते हैं। कॉमन-सभा की एक समिति बड़ी सुयमता से प्रत्येक आदेश अथवा विधायन का परीक्षण कर सकती है और सभा के पास इसकी रिपोर्टें भेज सकती हैं। समिति इस बात को भली प्रकार

देख सकती है कि बिना में कहीं कोई बृद्धि तो नहीं रह गई है और उसको प्रभावी करने के पूर्व काफ़ी मन्त्रणा तो कर ली गई थी। विधाय की परामर्शीय समितियों के सम्बन्ध मन्त्रणा बचवा आलोचना के पूर्व प्राकृती को अपने सामने रख सकते हैं। इस सम्पूर्ण व्यवस्था में एक आवश्यक बात यह है कि इसके संघासन का काफ़ी प्रचार होना चाहिए और यह एक ऐसा मामला है जिसमें किसी प्रकार की कठिनाई नहीं है।

(५)

बिन संघोचनो का मेने ऊपर मुझा दिया है यदि उनको कार्यान्वित कर दिया जाये तो मेरा विचार है कि कामन-सभा अपने कार्य को करने के लिए एक बहुत ही उपयुक्त संस्था है। यह ठीक है कि कुछ और भी संघोचन बाध्यनीय है। सराहनाय यह कहा जा सकता है कि स्थायी समिति का और अधिक उपयोग होना चाहिए। यदि उसमें स्थायी संस्थाओं की इसी प्रकार की समितियों की सति सम्बद्ध अधिकारिता के उपस्थित होने और प्राबन्धकता पढ़ने पर ध्योरे की बातें समझाने की व्यवस्था हो जाये तो उनकी उपयुक्तता और बढ़ जायेगी। लेकिन मैं यह पुनः बोर के कर नहता हूँ कि संसदीय शासन की आवश्यकता बिरोपताएँ—विशेष कर महिमंडक के निर्बंधन द्वारा दक्षिण निर्बंधन में उसना प्रचार संसदीय शासन की सफ़लता के लिए जब भी उत्तना ही आवश्यक है जितना कि वह बैजहॉट के समय में था। यदि ये बिरोपताएँ नष्ट हो जाती हैं और मेरा विचार है कि वे या तो दलों की बृद्धि द्वारा या सन्तुपाठ प्रतिनिधित्व की पद्धति द्वारा नष्ट हो जायेंगी तो शासन-संघासन नाम की जैसा कम संतोपय रह जायेगा।

लेकिन यह याद रखना आवश्यक है और इस बात का हम जव्याय में बार-बार कहा गया है कि पलगत मतभेदों के पीछे एक सामान्य वर्णन का अभिरसाम है और वहीं इस बात का रहस्य रहा है कि सर्वों के बिना भी मतभेद रह सके हैं। मैंने यहाँ यह निवेदन किया है कि अब यह सामान्य वर्णन विद्यमान नहीं है। यह तो पूंजीवाद की उत्पत्ति विस्तार-बाध में अभिव्यक्त था और उसके बिरोप के साक्ष-साक्ष दलों की यह समता भी काफ़ी सन्वेहास्पद ही नहीं है कि वे समा को लोकतांत्र के एक उपकरण के रूप में प्रयुक्त कर सकेगा। मैंने यहाँ यह विचार का प्रयास किया है जहाँ एक बार स्थित बनियादी आधिकार रचना के मामलों में मतभेद रद्द न लगे हैं, वहीं दक्षिण मतभय भी उच रूप धारण कर लेता है। इसके फलस्वरूप भीति विपयक अभिव्यक्तता भी असम हो जाती है। जहाँ यह एक बार हुआ वह सट्टे बिन पर एक सरकार बनाने पूर्ववर्ती निर्णयों को स्वीकार करती है स्वीकृत हो जाती है। मैंने यह विचार का प्रयास किया है कि यही वह सभार है जिसके भीतर रह कर मनुष्य वैधानिक कार्यवाही के बारे में अपने विचारों का निर्माण करता है। ये विचार एक निश्चित सिद्धान्त तो कम ही होते हैं वे इस तथ्य की आध्यात्मिक अभिव्यक्ति ही अधिक होते हैं कि जीवन के महान सप्रेषण एक ही हैं। अभी तक यही वह मूल केन्द्र रहा है जिनमें कि सम्पूर्ण यंत्र का संघासन किया है।

मैंने यह विशेष रूप से निवेदन किया है कि इसी बात की अधिक सम्भावना है। बाहे तो अधिक सरकार सीधे ही समाजवादी विधान की रिया में अग्रसर हो सीधे बाहे यह सामाजिक सुधार के बड़े-बड़े प्रयासों द्वारा पहले विश्वास के संभारण की चेष्टा करे। मेरा कहना है कि एक-एक स्तर पर ये दोनों ही रास्ते पूजीवादी अर्थमान्य की अन्तर्गत आवश्यकताओं के लिए अक्षय सिद्ध होंगे। वे ऐसी परिस्थितियों का निर्माण कर देंगे जिन्होंने हमारे लिए तो १९३१ का आर्थिक संकट उत्पन्न किया और अगले में एक निम्न बरातक पर भी अर्थ को अक्षय कर दिया था। वे यह प्रकट करते कि राज्य सम्पूर्ण समाज का एक उपकरण नहीं प्रस्तुत उस वर्ग का एक उपकरण है जिसके हाथ में आर्थिक शक्ति है। मैंने यह तर्क किया है कि सम्भवतः अधिक इस राज्य शक्ति पर अधिकार किए बिना कौमन-समा का समाजवादी प्रयोजनों के लिए प्रयोग नहीं कर सक्ता और मैंने इस बात को बलीकृत किया है कि केवल निर्वाचनीय बहुमत को प्राप्त कर लेना राज्य-शक्ति को प्राप्त कर लेने के समान है। मैं यह बलीकार नहीं करता कि यह इस उद्देश्य के मार्ग पर एक महत्वपूर्ण कदम आधुनिक परिस्थिति में समाज सबसे महत्वपूर्ण कदम है। लेकिन इस अध्याय का प्रतिपाद विषय यह रहा है कि यह कदम अपने सम्पूर्ण महत्व के बावजूद भी विधाय कारगर नहीं है। मधुवीय व्यवस्था में बहुमत का शासन इसी सिद्धान्त पर आधारित है कि अल्पमत उसके विधायों को स्वीकार करेगा। मैंने यह दिखाने का प्रयास किया है कि वर्तमान परिस्थिति में यह मान्यता निरर्थक सन्देश है। मैंने निवेदन किया है कि राजनीतिक लोकतन्त्र सर्व ही सामाजिक और आर्थिक लोकतन्त्र होने का प्रयास करता है। राजनीतिक लोकतन्त्र जब तक पूजीवाद के संभार में अक्षय है वह सामाजिक और आर्थिक लोकतन्त्र का रूप नहीं धारण कर सक्ता क्योंकि पूजीवाद के आर्थिक सिद्धान्त कुछ ऐसे हैं जो सामाजिक और आर्थिक लोकतन्त्र के सिद्धान्तों के प्रतिद्वन्द्व हैं। यदि हमारी व्यवस्था के वर्ग सम्बन्धों के कारण राज्य-शक्ति पूजीपतियों के हाथ में है और यदि उनकी सम्पूर्ण शक्ति-शक्ति और इस शक्ति-शक्ति से संयुक्त समस्त विधायिकाएँ उनके राज्य-शक्ति के अधिकारित नियन्त्रण पर निर्भर हैं जहाँ यह मानने का कोई कारण नहीं है कि वे उनके स्वयं में अपने विरोधियों के साथ सहयोग करेंगे। इस प्रकार के सहयोग के अभाव का अर्थ उन वर्गों को बनाए रखने की असमर्थता है जिनके अर्थ कि संघीय पद्धति आधारित है। यहाँ और केवल यही उनके शक्ति की शक्ति समर्थता विद्यमान है।

यदि उन निवेदन सही हैं, तो वे समस्त प्रस्ताव जो राज्य-शक्ति की इस केन्द्रीय व्यवस्था का समाधान पाए बिना एक धार्मिक उपकरण के रूप में कौमन-समा का सुधार का प्रयास करते हैं वास्तव में हमारे समय के मुख्य प्रश्न के लिए तो अक्षय-सिद्ध ही हैं। कौमन-समा अपने नाम को उन समय तक ठीक-ठीक करनी रहेगी जब तक पूजीवाद अज्ञानता की मीलों को पूरा करने में अक्षय है। अतः के अनुसार वह जब वह पूरा करने में अक्षय नहीं है। यही आर्थिक संकट, युद्ध की आसना पदवीवाद की बुद्धि और व्यापक सामाजिक संघर्षों का कारण है। इसलिए पूजीवाद को या तो

ख्यात करना है या लड़ना है। संभावना यह है कि पूंजीवाद लड़ेगा। प्रतिनिधित्व प्रणाली के परिवर्तन अथवा मन्त्रिमन्त्रालय और कॉमन-सभा के सम्बन्धों के पुनर्गठन जैसे उपायों द्वारा इस गम्भीर संकट से छुटकारा पाने का प्रयास करना सर्वथा अपर्याप्त है। संसुपात प्रतिनिधित्व में धर्मनी की रक्षा नहीं की है और व्यक्तिगत सदस्य की अपनी इच्छानुसार सरकार को अचल करने की शक्ति में वैसे कि फ्रेंच में है, उस प्रश्न की गम्भीरता को जो हमारे सामने खड़ा है, स्वयित नहीं किया है। यदि कोई समाधान है तो वह इस प्रकार की विचारों में नहीं मिलेगा। यदि कॉमन-सभा को अपने वर्तमान रूप में ही बचाना है तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि महत्व की समस्त बातों में आन्तारभूत समझौता हो। यदि हम इस बात की खोज कर लें कि किस प्रकार यह समझौता हो सकता है तभी हम उसकी मूलकासीन परम्पराओं की महत्ता को अद्विष्ट में भी बनाए रख सकेंगे।

मंत्रि-मंडल

(१)

बहुमत मंत्रि-मंडल उस दल की या दलों के उस संघों की जो कॉमन-समा में बहुमत प्राप्त कर सकता है एक समिति है। इसमें कोई सम्बन्ध नहीं कि इस प्रकार का विचार व्यवहारिक होने की अपेक्षा धार्मिक ही अधिक है। यह मंत्रि-मंडल की उन कुछ विशेषताओं पर प्रकाश नहीं डालता जिन्हें इतिहास और संस्कार समान रूप से महत्व देते हैं। मंत्रि-मंडल एक दृष्टि से यद्यपि अब उसका कोई महत्व नहीं रहा है सम्प्रदाय की विधी शैथिल्य की जिसके पास राज्य-शास्त्र का अधिष्ठापी नियन्त्रण रहता है एक समिति है। एक दृष्टि से मंत्रि-मंडल शून्य समिति भी है। लेकिन इस तथ्य में अतिउपयुक्त का भय है। मंत्रि-मंडल का वास्तविक कार्य उन दल या उन दलों के नाम पर जो उसे कॉमन-समा में बहुमत प्राप्त करते हैं, देना का साधन करता है।

इसलिए मंत्रि-मंडल शासन की अधिष्ठापी और विधायी शाखाओं को संतुलन करने का एक साधन है। इस नियंत्रण का सबप्रथम संबन्धित में नियन्त्रण किया जा। मंत्रि-मंडल एक ऐसा विचार है जो शासन की विधायी शाखा को निर्बंध देता है। यह संसद को ऐसी नीति देता है जिसके ऊपर निर्बंध किए जाते हैं। यह राज्य की प्रमुख-संस्था से अनुमोदन करने के परवाना अपनी नीति को कार्यक्रम में परिवर्तन करता है। लेकिन यह यह अनुमोदन प्राप्त करने में इसीलिए सफल होता है क्योंकि यह एक बहुमत समिति है। इसके सम्बंध का अंश निर्वाचकों का एक नियंत्रण है कि शासन का सुख अधिकों के हाथों में नहीं प्रत्युत अनुशासकियों के हाथों में रहेगा। यह कॉमन-समा को अपने प्रयोजनों के लिए अनुशासित करके अपना उद्देश्य पूरा करता है लेकिन समा को अनुशासित करने के लिए यह आवश्यक है कि वह अपने को अनुशासित करे। यह कार्य उसकी दक्षमता रचना द्वारा सम्पन्न होता है। जिन विचारों को वह कार्य-निष्ठा करता है, वे मुनिविधित रूप से मर्यादित होते हैं। ये वे विचार होते हैं जिनके लिए उसके दक्षमता सम्बंध उससे यह मांगा करते हैं कि वह उन्हें कार्यान्वित करेगा। यह सर्वत्र परम्परागत भाषाओं की मर्यादा के अंदर कार्य करता है और यदि वह उनका उत्सर्जन करता है तो यह आवश्यक रहती है कि नहीं वह अपने बहुमत को और इन प्रकार अपनी सत्ता को न खो दे।

दल की उच्च व्यवस्था ही मंत्रि-मंडल की सफलता का आधार है। अपनी नीति की समस्त प्रमुख बातों की मर्यादा के लिए वह अपने अनुयायियों के सम्बंध पर निर्भर है। लेकिन मंत्रि-मंडल की सफलता का यह भी एक प्रमुख कारण है कि वह संसद का एक अविभाज्य भाग है तथा सबसे पृथक नहीं है। बहने का तात्पर्य यह है

कि क्रॉमवेल-समा मंत्रि-मण्डल को जीवन देती है लेकिन सामान्यतः स्वयं क्रॉमवेल-समा भी उसी समय तक जीवित रह सकती है जब तक कि वह मंत्रि-मण्डल को जीवन देने के लिए तय्यार है। क्रॉमवेल-समा संसद् को आत्मनाश के मूख्य पर भट्ट करती है। यदि मंत्रि-मण्डल समा में पराजित हो जाये तो इसके को परिणाम निकलते हैं। या तो संसद् का विघटन हो जाता है या मंत्रि-मण्डल को त्याग-पत्र देना पड़ता है। यदि मंत्रि-मण्डल त्याग-पत्र देता है, तो मंत्रि-मण्डल के त्याग-पत्र के कुछ समय के भीतर ही संसद् का विघटन अवश्यम्भावी है। १९११ में यही हुआ था।

मंत्रि-मण्डल विधान-मण्डल की एक समिति है। यह उन दो-तीन प्रमुख सिद्धांतों में से एक है जो हमारी पद्धति और अमरीका की पद्धति में भेद स्थापित करते हैं। हमारे लिए यह उचित है कि हम इस भेद के परिणामों पर ध्यान भर विचार कर लें। इन दोनों पद्धतियों के भेद का मुख्य तत्व यह है कि हमारे यहाँ विधान-मण्डल का कार्यपालिका से पृथक् कोई हिस्सा नहीं है, लेकिन अमरीका में उसका पृथक्करण विधान-मण्डल की एक पृथक हिस्से दे देता है। इसलिये, हमारे यहाँ विधान-मण्डल को या तो अपने संघाटक-मण्डल में बिस्वास रखना चाहिए अथवा एक नया संघाटक-मण्डल या एक नयी संसद् का निर्माण होना। लेकिन अमरीका में कांग्रेस की दक्षता रखना राष्ट्रपति और उसके मंत्रि-मण्डल के साथियों से पृथक् हो सकती है। यहाँ यह भी हा सकता है कि राष्ट्रपति का कांग्रेस के एक सदन में बहुमत हो वृत्ति में न हो। यदि राष्ट्रपति का दोनों सदनों में बहुमत हो तब भी यह आवश्यक नहीं है कि उसकी मन चाही हो। वह किसी भी सदन को सीधे नियमित नहीं कर सकता। उसके पास सदन का विघटन करने की शक्ति नहीं है। वह समझ-बुझा सकता है, फुसका सकता है, बमका सकता है, रिस्वत दे सकता है। लेकिन अमरीकी विधान-मण्डल का जीवन उसकी अजीबता से स्वतंत्र है। राष्ट्रपति कांग्रेस के पास अपने प्रस्ताव भेजता है। इस बात का निश्चय स्वयं कांग्रेस करती है कि वह इन प्रस्तावों का क्या करे। यहाँ तक नीति के निर्धारण का प्रश्न है, वैधानिक दृष्टि से कांग्रेस और राष्ट्रपति की शक्तियाँ समान हैं। यदि राष्ट्रपति उसके सदस्यों से अपना मतचाहा नहीं करता तब तो उसके पास ऐसा कोई उपाय नहीं है कि वह कांग्रेस के निर्णयों के विरुद्ध सीधा विवादात्मक-मण्डल से शीक कर सके। वह कांग्रेस को मजबूत कर सकता है, उसके साथ बर्बरता नहीं कर सकता। बरके में कांग्रेस भी उसे जब समय तक बाध्य नहीं कर सकती जब तक कि उसके सदस्यों का दो-तिहाई बहुमत उसके द्वारा आरोपित किसी विधेवा-विकार का उन्मूलन करने के लिए प्रस्तुत न हो।

यदि राष्ट्रपति के हक का दोनों सदनों में बहुमत हो तब भी यह निश्चित नहीं है कि वह अपनी मतचाही कर सकेगा। उसकी पराजय से उसके हक में कोई संकट पैदा नहीं होता। राष्ट्रपति की प्रतिष्ठा मंग होने से यह आवश्यक नहीं है कि उसके हक को कोई हानि पहुँचे। कांग्रेस अपने कार्य के लिए उसकी शक्ति से किन्तु स्वतंत्र होती है। बर्सेम की शक्ति पर उसने राष्ट्रपति किन्तु को मजबूत करने का विचार किया। १८१७ में राष्ट्रपति क्लेवेलैंड ने सर्वोच्च न्यायालय के गृहकार के लिए कुछ प्रस्ताव

रखने से। कांग्रेस ने इन प्रस्तावों के ऊपर राष्ट्रपति को मारी पराजय ही थी। सब को यह है कि कांग्रेस का संबोधन करना कॉमन-मन का संबोधन करने से किष्कुरुन मिल जाता है। एक तो कार्यपालिका पर अधिकार बढनी है और दूसरी विस्थापन। इसी कारण से अमरीका में राष्ट्रपति के चुनाव तथा इंग्लैण्ड में एक कानून के चुनाव की प्रक्रिया में अंतर है। राष्ट्रपति कप में स्थायित्व नहीं है। इसके कोई यह जानता है कि अधिक से अधिक बाठ बने परवान् उन्हीं कायकाक समाप्त हो जायगा। इसलिए, राष्ट्रपति जिम निष्ठावा की बाधन कर सकता है वे उन निष्ठाओं से किष्कुरुन मिल है जिन्हें ईश्वर्य में एक का गठ बाधन कर सकता है। राष्ट्रपति अपना पदाधिकार में एक को काफी प्रभावित कर सकता है। उसके मति-सम्बन्ध के कुछ मरत्य भी अपने व्यक्तिगत पुनों के कारण एक को प्रभावित कर सकते हैं। केवल यह बाधनक नहीं है कि वे एक के गठ हा या एक के नामको म उह काफी अनुभव हो। एक यह होता है कि कांग्रेस में व्यक्तिओं का एक ऐसा छाग-ना मण्ही भी होता है जो वास्तव में एक प्रकार का वैकल्पिक मति-सम्बन्ध होता है। यह बाधनक है कि नीति के निर्धारण में उसकी उपेक्षा न की जाय। इसी कारण एक अनावांश प्रथिमा का राष्ट्रपति ही लोकमत को अपने पक्ष में बनाए रख सकता है। कार्यपालिका और व्यवस्थापिका के पुनर्रचय में उत्तरदायित्व में भी व्यवस्था मा जाती है। अमरीका में यह बाधनक नहीं है कि नीति का निश्चय किष्कुरुन स्पष्ट हो जायि नहीं कई दिन नीति के निर्धारण के बाधनक होने से। इस उद्य का कि राष्ट्रपति को चुनने के लिए विचार किया जा सकता है अधिप्राय यह है कि स्वयं अपने एक म हो एक कई तत्व हो जो उसे चुनने के लिए विचार कर रहे हैं। सीने का यह मरत्य इस मतिविधि का नियंत्रण करता है कांग्रेस का यह मरत्य उन मतिविधि का नियंत्रण करता है। राष्ट्रपति के लिए बाधनक है कि वह दोनों के साथ मनसुता करे। यह मरत्य है कि केवलित सम्बन्ध में प्रभावशाली राष्ट्रपति तक किनी विवेक को कांग्रेस से ठीक सही रूप में प्राप्त न कर सके कि एक रूप में कि वह उसे प्राप्त करना चाहते थे। उन्हें बाधन के दो-बार प्रभावशाली मरत्यो की बाधनकनी एक बाग को हाना पडा या कपी दूसरी बाग को मरत्य करना पडा था। यदि वह इन बारे विचारों के विचार निर्वाचकों से अतीत नहीं कर सकता जन-उमे उनके नाम किती व किनी रूप में समझना करना हो सकता है।

राष्ट्रपति के दूसरे कार्यकाल में इसको पहले कार्यकाल की अपेक्षा अधिक मन्दा बना है। उसका प्राधिकार मितित होने अपना है। जो उन मरत्य कर रहे हैं उन्हें यह प्यल रहता है कि बार बने परवान् म्हाइए हाउस में एक दूसरा व्यक्ति मा जायगा। यदि वह कुछ करता है, तो उसकी तीव्र मानाचना होगी है। कांग्रेस का कोई प्रभावशाली मरत्य यह सुझना से सोच सकता है कि यदि वह इस मानाचना का नेतृत्व करे, तो संभव है कि उसे उत्तरदायित्व का अवसर मिल जाये।

द्वितीय मति-सम्बन्ध उक्त मरत्य कठिनाइयों और मरत्यो से मुक्त है। यह यह जानता है कि वह जिम चीज का प्राप्त करना चाहे प्राप्त कर सकता है। इसके फल-

स्वल्प नीति और उत्तरदायित्व में एकमुत्रता तथा निश्चितता रहती है। जब तक कि मन्त्रि-मण्डल ने कोई मस्यंकर प्रस्ताव न करे जाही ही वह यह जानता है कि वह अपने निर्णयों का पालन कर सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि ब्रिटिश कॉमन-सभा में भी बूढ़ मन्त्रियाँ और परामर्श तो चलते ही रहते हैं और उनका समाधान भी आवश्यक है। उदाहरणार्थ श्री जॉन्सन अपने प्रबंध साधियों सहित सरकार की भारत विषयक नीति पर आक्रमण करने के लिए सर्वत्र प्रस्तुत रहते हैं। लेकिन यह बहुत कम ही होता है कि इस प्रकार की अभिसन्धियाँ मन्त्रि-मण्डल को अपरहस्य करता चाहे या कर सकती हो। इसका अन्धे से अन्ध्या परिणाम यह हो सकता है कि वह हमारे पक्ष को सत्ताहीन कर दें। इसका बुरे से बुरा परिणाम यह हो सकता है कि उनके संरक्षकों के स्वाम आगामी साधारण निर्वाचनों में संकट में पड़ सकते हैं। वल विराम-गीय व्यक्तियों को पसन्द करते हैं और आमोचना के क्षेत्र में भी जॉन्सन जैसे सिद्ध बसाकार तक को कलात्मक आत्मामिभ्यक्ति की तुल्य में विरामनीयता की अपनी प्रतिष्ठा खोनी पड़ती है। व्यक्तिगत संरक्षक जब तक नीति की मोटी उपरखानों से संतुष्ट है वह विस्तार की बातों के बारे में अपने को अधिक परेशान नहीं करेगा। लेकिन जब मन्त्रि-मण्डल निश्चित मर्यादाओं का अतिक्रमण करने लगता है व्यक्तित्व संरक्षक उन्हें सत्ताहीन करने के लिए तैयार होता है।

इस पद्धति के विराम को लौच निकालना सुगम नहीं है। यदि हम इसका विकल्प खोजेंगे तो हमें अपनी पद्धति के मूख तक जाना होगा। चाहे इसका अर्थ यह होगा कि वलों का स्वाम छोट-मोटे गुण के से। इसका परिणाम एक ऐसी सभा होगी जो कॉमन-सभा के समूह न होकर प्रतिनिधि-सभा (सैम्बर ऑफ डिप्टीज) हो। इसमें कोई संदेह नहीं कि इनसे मन्त्रि-मण्डल के मूस पर व्यक्तिगत संरक्षक की शक्ति बढ़ जायेगी और इसका निश्चित अर्थ यह होगा कि सभा को विघटित करने का अधिकार सरकार के पास न रह जायगा। मेरे विचार से इसका अर्थ बहुत अधिक है। ऐसी सभा में पहली बात तो यह होगी कि फास की तरह गुणों की दुरभिसन्धियों के ऊपर निर्वाचकों का कोई नियंत्रण नहीं रहेगा। सरकार का निर्माण निर्वाचकों के निर्णयों के आधार पर नहीं प्रस्तुत सभा के अन्ध के अन्ध-प्रश्नों के आधार पर हुआ करेगा। दूसरी बात यह होगी कि यदि व्यक्तिगत संरक्षक की शक्ति बढ़ जायेगी अतः वह अवाञ्छनीय उपायों से अपने प्रभाव के विस्तार का प्रयत्न कर सकता है। जहाँ सरकार का जीवन अमरीकी कांग्रेस अथवा फ्रेंच सैम्बर की भाँति व्यक्तिगत संरक्षक की इच्छा के ऊपर निर्भर रहता है वहाँ संसदीय प्रणाली का सर्वत्र अर्थ है। यह अमरीका के "सीनेटोरियल वर्टिसी" जैसे उपाय के द्वारा हो सकता है। बड़े-बड़े स्वार्थ व्यक्तिगत संरक्षक के पास पहुँच कर अपना काम निकाल सकते हैं। हमारी व्यवस्था में ऐसा होता कठिन है। हमारी मन्त्रि-मण्डलीय व्यवस्था में और चाहे कितनी दुर्बलताएँ हो उसमें इस प्रकार की दुर्दृष्टताएँ कम से कम हैं। जिध किसी व्यक्ति ने इस व्यवस्था के विकल्प का

बेहद किया है वह इस काम को बहुत बड़ा मानेगा।

अमरीकी पद्धति से तुलना करने पर हमारी पद्धति में एक और गुण है जिस पर प्रकाश डालने की आवश्यकता है। यदि अमरीका का कोई प्रतिष्ठित राजनीतिज्ञ सीनेट का सदस्य है तो वह मन्त्रि-मण्डल की सदस्यता के लिए सीनेट की सदस्यता स्थापना पसन्द नहीं करेगा। कारण यह है कि वह सीनेट में काफ़ी हद तक स्वतन्त्र होता है और अपनी इच्छानुसार भाषण कर सकता है। मन्त्रि-मण्डल में वह राष्ट्रपति का अनुचर होता है और यदि वह किसी बात में राष्ट्रपति से सहमत न हो तो उसे अपना पक्ष छोड़ना पड़ता है। कदाचित् अमरीकी मन्त्रि-मण्डल कठिनाता से ही ऐसे सुने-सुनाए सार्वजनिक व्यक्तियों का एक निकाय होता है जो कि निकल-बुल कर एक टीम की तरह काम कर सकें। जब उनकी नियुक्तियों की घोषणा होती है तो उनमें से कुछ के नाम तो जनता के लिए विस्तृत अपरिचित होने हैं और जब वे वाशिंगटन छोड़ते हैं तो फिर एक बार जनता के लिए अपरिचित हो जाते हैं। यदि राष्ट्रपति भी विस्तृत या भी इन्वेस्ट की भाँति धक्कापानी हुआ तो उनमें से बहुत कम व्यक्तियों को अपनी नीति के विकास का प्रबन्ध मिलता है। बाह्य की स्थिति हो उनका उत्तरदायित्व बाधित ही होता है। बूकि बाह्य उत्तरदायित्व राष्ट्रपति का होता है तथा जनता की दृष्टि में सारा श्रेय भी राष्ट्रपति को ही मिलता है। इस लिए अमरीका में मन्त्रि-मण्डल के सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों के लिए सर्वश्रेष्ठ पारितोषिक नहीं माना जाता। उसकी श्रांति यहाँ सार्वजनिक सेवा का पुरस्कार होती है, यहाँ वह व्यक्तिगत सम्बन्धों का संयोग भी कम नहीं है।

ब्रिटिश मन्त्रि-मण्डल के सम्बन्ध में यह बात नहीं है। यहाँ मन्त्रि-मण्डल की सदस्यता सामान्यतः संसद में की गई सेवा का पारितोषिक होती है। मन्त्रि-मण्डल का सदस्य नहीं व्यक्ति नियुक्त किया जाता है जो राजनीतिक क्षेत्र में काफ़ी समय तक काम कर चुका हो। मैं यह नहीं कहता कि मन्त्रि-मण्डल में असाधारण व्यक्ति होने हैं, लेकिन मैं यह अवश्य कहता हूँ कि स्थान की प्रतिबोधिता प्रभूत्व प्रक्रिया की कठोरता और पारितोषिक की महत्ता से राष्ट्र को यह विदवाण होता है कि मन्त्रि-मण्डल में कुछ असाधारण व्यक्ति अवश्य होंगे। जब उनका निर्माण होता है, वह एक टीम होती है—ऐसी टीम जैसी कि अमरीकी मन्त्रि-मण्डल सामग्री ही कमी हो पाये। उनके अधिकार सदस्य ऐसे होते हैं या एक दूसरे को बर्षों से जानते हैं और निकल-बुल कर काम करने के अभ्यस्त होने हैं। यही नहीं उनमें से कुछ ऐसे होने हैं जिन्हें मन्त्रि-मण्डल के कर्म का पहले से अनुभव होता है। उनमें से अधिकतर ऐसे होते हैं जिन्हें जब वे विरोधी दल में से विभिन्न समस्याओं के ऊपर नीति निर्धारित करनी पड़ी थी। जब मन्त्रि-मण्डल में होने पर उन्हें उन्हीं समस्याओं पर विचार करना पड़ता है। मन्त्रि-मण्डल तक पहुँचने के लिए उन्हें खरिद व्यवहार-बुद्धि निर्दिष्ट तथा संघटन का सामना करने की दक्षिण भाँति कुछ विशिष्ट गुणों का परिचय देना होता है क्योंकि यही ऐसे गुण हैं जिनके ऊपर सफल प्रस्तावना की नींव खड़ी होती है। यदि यह कहा जाये कि विभिन्न सर्वोच्च की तुलना में जिनको वे नियमित करते

हैं वे अधिकेपत्र हैं तो इस संका के दो उत्तर हैं। पहली बात तो यह है कि किसी भी मन्त्री का अपने विभाग के कार्यों में विशेषज्ञ होना बहुत ही आवश्यक है क्योंकि इससे यह ज्ञात हो सकता है जैसा कि समस्त विशेषज्ञों के साथ होता है कि वह इच्छित कार्य को त्वरित रूप से और बाध की बाध निकासने के बन्दर में पूरा जाए। दूसरी बात यह है कि यदि वह मन्त्री है तो इसका वह जर्न कदापि नहीं है कि वह बरा-बरा ही बात पर माना-गन्धी करे। मन्त्री होने के नाते उसका कर्तव्य तो यही है कि वह अपने विभाग को एक सुनिश्चित निर्देश दे। एक ओर तो वह अपने विभाग के कार्यों में समुत्तम रखता है और दूसरी ओर विभिन्न विभागों के कार्यों में समुत्तम माने में सहायता देता है जिससे कि सम्पूर्ण मन्त्रिमण्डल एक समस्त नीति का निर्माण करने में समर्थ हो सके। राजनीतिज्ञ अपने कार्यों को किसी विशेषज्ञ की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह कर सकता है क्योंकि उसके ध्यान लोकमत को राजी करने की अपूर्व क्षमता होती है। यही कारण है कि सिविल सर्वेंट्स सिपाही नाविक और व्यापारी अपना काम तो बहुत अच्छी तरह कर सकते हैं, लेकिन उनका सफल मन्त्री होना दुर्लभ है।

(२)

मन्त्रिमण्डल का केन्द्र-बहु प्रमाण मन्त्री है। वह उसके निर्माण के लिए केन्द्रीय है, जीवन के लिए केन्द्रीय है, मरण के लिए केन्द्रीय है। मन्त्रिमण्डल के स्वल्प पर उसके व्यक्तिगत और कुटिल का व्यापक प्रभाव पड़ता है। इसका यह कारण नहीं है कि वह अपने मन्त्रिमण्डल का उसी प्रकार स्वामी है जिस प्रकार कि अमरीकी राष्ट्रपति अपने सचिवों का स्वामी होता है। ब्रिटिश प्रधानमन्त्री 'समकालीन प्रथम' से कुछ अधिक है लेकिन वह एक स्नेहाभासी से कुछ कम है। जैसा कि हम देखेंगे उसकी व्यक्तिगत प्रवृत्तियाँ विपुल हैं लेकिन उनके उचित प्रयोग के लिए यह आवश्यक है कि वह समय से नहीं प्रत्युत घात से काम ले। वह क्षति से कहीं तक काम निकाल सकता है इसी बात पर उसकी सरकार भी सफलता निर्भर है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह अपने किसी भी सचिव को स्वामन्त्र होने के लिए विवश कर सकता है लेकिन १८५१ में डॉर्बेन एसेल द्वारा डॉर्बेन पामस्टन की पराजय यह अच्छी तरह प्रकट कर देती है कि प्रधानमन्त्री की बाध्यताएँ प्रधानमन्त्री के सफल हैं। यही नहीं है बल्कि श्री लॉयड जार्ज ने कहा है कि सीवें पर सचयता नहीं होती वहाँ सब ही कोई न कोई ऐसा व्यक्ति प्रयत्न होता है जो उसका स्थान ग्रहण करने के लिए तय्यार, तय्यार ही नहीं प्रत्युत बचीर रहता है। यह और भी अधिक उही है कि प्रधान मन्त्री अपने बच्चे का नेतृत्व अपनी पीढ़ि की सफलता के द्वारा ही काममें रखता है। यदि मन्त्रिमण्डल के सदस्य बार-बार त्यागपत्र देते हैं तो इससे नीति की सफलता को गहरा बलगत पहुँचता है।

सिखास्त प्रधानमन्त्री का चुनाव सम्राट की इच्छा पर निर्भर है व्यवहारतः सम्राट की इच्छा दक्षिण राजनीति की आवश्यकताओं के कारण अत्यधिक समर्थित है। जहाँ जहाँ यदि कभी सरकार पराजित हो जाये और विरोधी बच्चे का अपना गता हो तो सम्राट के पास इसके अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प ही नहीं है कि वह

यह पद उसको प्रदान करे। या यह हो सकता है जैसा कि १९३७ में लॉर्ड बेन्डरिन के त्यागपत्र के समय हुआ था कि वह और लोकमत दोनों ही उचित उत्तरदायिताओं के सम्बन्ध में विशुद्ध स्पष्ट हों। ऐसी स्थिति में-सम्राट् को इस विचार प्रवाह का अनुमन करना ही पड़ता है। सम्राट् यह जानते हैं कि अन्य कोई व्यक्ति स्थायी सरकार का निर्माण करने में सफल न हो सकेगा। उदाहरणार्थ यदि सम्राट् ने १९३७ में प्रधान-मन्त्रित्व सर जॉन साइमन को दिया होता और सर जॉन साइमन उसे स्वीकार भी कर लेते तो यह निश्चित है कि वे अपने अनुदारवादी साधियों को अपनी कमीनता में काम करने के लिए राजी न कर पाते। वही पक्ष की इच्छाएँ स्पष्ट और राजनीतिक परिस्थितियाँ सामान्य हों परम्परा के अनुसार सम्राट् के लिए यह आवश्यक है कि वह वह की इच्छाओं पर आचरण करे।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि प्रधान मन्त्री का चुनाव करने में सम्राट् की इच्छा का वायदा बहुत सीमित है। यद्यपि संवैधानिक रूप से प्रधानमन्त्री के लिए सचद की किसी भी एक सभा का सदस्य होना आवश्यक है और १९२२ में लॉर्ड सैम्सबरी के त्यागपत्र के समय से ऐसा ही होता रहा है लेकिन अब यह निश्चित प्राय है कि भविष्य में वह कॉमन-सभा का ही सदस्य होगा। १९२३ में जार्ज पंचम को लॉर्ड क्रजन और सी बेन्डरिन में से एक व्यक्ति प्रधानमन्त्री पद के लिए चुनना था लेकिन जूकि लॉर्ड सभा में विरोधी बल का प्रतिनिधित्व नहीं था अतः सम्राट् ने प्रिन्स-प्रिन्स व्यक्ति को स परामर्श किया उन सभी ने यह उपाय ही कि अब कॉमन-सभा को प्रधानमन्त्री के लक्षण से उचित रचना उचित नहीं है। यह ठीक है कि सम्राट् इस पूर्वदृष्टान्त से भविष्य में क्या है लेकिन अब तक कि राजनीतिक परिस्थितियों में जायिकाटी परिवर्तन न हो जाये यह निश्चित है कि इस दृष्टान्त का पालन होगा। कॉमन-सभा ही अब एतन्नाम ऐसी सभा है जिसके प्रति मंत्रि मंडल उत्तरदायी है। कॉमन-सभा में बहुमत संघटन को कायम रखना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। उताकह वह वा नेता होने के लिये प्रधानमन्त्री के लिए यह आवश्यक है कि वह सभा के साथ वही महत्त्वपूर्ण निर्णय होने ह निरन्तर निष्कट सम्पर्क बनाए रखे।

हमें दो स्थितियों पर और विचार करने की आवश्यकता है। प्रधानमन्त्री इस बात की स्पष्ट साक्ष्य छोड़े बिना कि वह किसको उत्तरदायितायी बनाता चाहता है त्याग-पत्र दे सकता है। १८९४ में श्री ब्लैकस्टन ने यही किया था। इस स्थिति में सम्राट् जमा कि वहन अक्सर पर महारानी विक्टोरिया ने किया था कई संभव प्रत्याशियों में से किसी एक को प्रधानमन्त्री चुन सकता है। ऐसा करने का उसका अधिकार सर्वशुद्ध है। लेकिन यह अधिकार ऐसा है जिसका अल्प प्रयोग इस बात पर निर्भर है कि इस प्रकार चुना गया राजनीतिक शक्तिशाली सरकार का नहीं तक निर्माण कर पला है। उदाहरणार्थ १८८८ में लॉर्ड हाविंगटन उदारवादी बल के कॉमन-सभा में नेता थे प्रकाशित उसके लॉर्ड-सभा में नेता थे। लेकिन वह में श्री ब्लैकस्टन भी शामिल थे और यद्यपि उन्होंने १८७४ में बल के नेतृत्व से त्यागपत्र दे दिया था वे उन वर्ष की उदारवादी विजय के सर्वशुद्ध ही अधिकारिता समझे जाते थे और जनता को आशा थी कि डिप्लोमी के पश्चात् वही प्रधानमन्त्री होंगे। महारानी ने जो उन्हें त्यागपत्र करनी थी और उन पर अधिकार

करती थी इस चुनाव की आवश्यकता को टाकना चाहता। उन्होंने बायीं-बायीं से हाउसिंगटन और प्रेगवाइल से प्रधानमंत्री बनने का लिए कहा। उन दोनों ने ही उनसे यह कह दिया कि हम भी स्कैंडलिन के बिना सरकार का निर्माण नहीं कर सकते। भी स्कैंडलिन हमारी अधीनता में काम नहीं करेंगे और इन परिस्थितियों में एकमात्र नही संभव प्रधानमंत्री है। बाद में महारानी ने भी स्कैंडलिन को प्रधानमंत्रीत्व दिया। उन्होंने उसे स्वीकार कर लिया और सरकार का निर्माण किया।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सम्राट का निर्णय सामान्यतः बहुत दूर तक नहीं जाता। सम्भव प्रमाण-मंत्रियों की सख्या किसी भी समय एक के अन्दर एक की राय तथा बाहर लोकमत के द्वारा सीमित ही होती है। सम्राट इस सीमा का अतिक्रमण नहीं कर सकते। यदि वह ऐसा करते हैं तो उनके इस कृत्य का व्यापक विरोध होगा और यह कहा जाएगा कि वे जन अधिकारियों को गठन कर रहे हैं जिनके अन्दर एक का शासन आधारित है। सम्राट देखेंगे कि उनका मनीषित व्यक्ति सरकार नहीं बना सकेगा और यदि उसका सरकार बना भी सी तो वह उसे अधिक समय तक काममें नहीं रख सकेगा। उसकी असफलता का अन्तिम यह होगा कि सम्राट के निर्णय की आलोचना होगी और सम्राट के कर्मों के सम्बन्ध में यह आवश्यक है कि वे कुछ इस प्रकार के हों कि उस पर जनता आलोचना न कर सके।

दूसरी स्थिति यह कि सम्राट अपने निर्णय का प्रयोग कर सकते हैं वह हैं जिसमें कि समाज एक के एक-दूसरे कुछ ऐसे हों कि स्पष्ट सरकार का अनुमान न हो पाता हो। उदाहरणार्थ १८३२ के पश्चात् से ११ अल्पसंख्यक सरकारें और ३ संयुक्त सरकारें बन चुकी हैं। यहाँ हम यूनिवर्सिटि सरकार को जो १८९६ से १९०६ तक पदावधि रही थी सामान्य जनताद्वारा बर्हीमसरकार माने करते हैं। इन समस्त परिस्थितियों में ऐसे कई छिद्र रहते हैं जिनके कारण सम्राट अपने प्रभाव का उपयोग कर सकते हैं। लेकिन उनके लिए यह आवश्यक है कि वे मुनिश्चित परम्पराओं की सीमा के अन्दर रहते हुए काम करें। यदि पराजय होने पर सरकार त्याग-पत्र दे देती है, तो सम्राट से यह आशा की जाती है कि वे विरोधी दल के नेता को बर्हात और उसे सरकार बनाने के लिए आमंत्रित करें। डॉ. बेनिन्स ने इसकी बर्हीम प्रकार व्याख्या की है। उन्होंने लिखा है, 'सम्राट का कार्य केवल सरकार का निर्णय करना है, उस सरकार का नहीं जिसे जनता ने अनुमोदन करते हैं। यदि वे ऐसा करेंगे, तो पक्षगत राजनीति में फस जायेंगे। यह आवश्यक है कि जनता का सम्राट की निष्पक्षता में विश्वास बना रहे। इसके लिए सम्राट को न केवल निष्पक्षता से काम ही करना चाहिए प्रत्युत उसे निष्पक्षता से काम करते हुए प्रतीत भी होना चाहिए। इसकी स्पष्टतापूर्वक प्रवृत्ति करने का एकमात्र उपाय विरोधी दल के नेता को सरकार बनाने के लिए तुरन्त आमंत्रित करना है।'

एक यह है कि १८३९ के पश्चात् से प्रत्येक अवसर पर यही किया गया है। १८९६ में जब लॉर्ड सेन्सबरी ने त्याग-पत्र दिया था महारानी विक्टोरिया ने भी स्कैंडलिन के प्रति बुधा में उन्हें परम्परा से हटने की प्रेरणा दी। उन्होंने उन उपाय कारियों के साथ जिनके बारे में उम्मा करना था कि वे 'सौम्य राजमन्त्र तथा अनुप

देशमन्त्र हैं और जिनके हृदय में साम्राज्य और सिंहासन की जगहों का भाव है और जो उन्हें विनाश से बचाना चाहते हैं। काफ़ी समय तक पर्यंत जारी रहना या और जब उन्हें अपने प्रयत्न से सफलता नहीं मिली थी तब कड़ी धारण करना विनाश ठिकाने आया था। सम्राट को विरोधी दल के नेता को आमंत्रित करते समय अन्य किसी राजनीतिक के साथ संबन्ध नहीं करनी चाहिए। लॉर्ड सेल्सवॉरी ने १७८६ में महाराजा की विस्तृत निम्न राय दी थी। लेकिन यह स्पष्ट ही है कि इस प्रकार की मनशा यह उद्देश्य उत्पन्न कर सकती है कि सम्राट विरोधी दल के नेता के सरकार बनाने के अधिकार का अधिकार कर रहे हैं। जब कभी सम्राट ने किसी व्यक्ति के साथ विचार-विनिमय किया है जो विरोधी दल का मान्य नेता नहीं है तो वह व्यक्ति १८६१ के कंसर्वेशन प्रकरण की भांति लॉर्ड-मना में विरोधी दल का नेता रहा है। नर्व-शीत प्रकरणों में भी यही हुआ है। १९२४ में श्री बैल्लविन की पराजय और उनके त्याग-पत्र के परचात् सम्राट ने श्री रैमने मैकडॉनल्ड को आमंत्रित किया और १९३१ में श्री रैमने मैकडॉनल्ड और उनके मंत्रि-मंडल के त्याग-पत्र के परचात् श्री बैल्लविन को पुनः आमंत्रित किया।

१९१६ और १९३१ की संयुक्त सरकारें कुछ रोचक प्रश्न लगे कर देती हैं क्योंकि दोनों ही अवसरों पर सम्राट के विचार-विमर्श के उपरान्त एक ऐसा प्रश्न मन्त्री अवतरित हुआ जो या तो दल का नेता नहीं था या कम से कम उस समय दल का नेता नहीं था। यह निरिच्छत है कि १९१६ में परम्पराओं का शासन किया गया था। श्री एम्बिसय के त्याग-पत्र के परचात् सम्राट ने श्री बोलेर लॉ को जो सभा में बूढ़े सबसे बड़े दल के नेता थे, आमंत्रित किया था और श्री लॉयड जार्ज को प्रधान-मन्त्रित्व उन्हीं समय दिया था जब श्री बोलेर लॉ ने उसे बस्तीहृत् कर दिया था और सम्राट ने श्री लॉयड जार्ज के नाम की सिफारिश की थी। १९३१ की परिस्थितियाँ असाधारण हैं और उन पर तनिक विस्तार से विचार करने की आवश्यकता है। यह हम स्वीकार करते हैं कि प्रामाणिक प्रयत्नों के मनाह में हमें बहुत कुछ अनुमान था ही माध्यम केना पड़ेगा। हम यह जानते हैं कि अधिक सरकार न आधिक शक्तिशाली या कोई समाधान न निराक करने के कारण प्रधान-मन्त्री श्री रैमने मैकडॉनल्ड को बहु अधिकार दे दिया था कि वे २३ अप्रैल को त्याग-पत्र दें। हमें यह भी मातूम है कि सम्राट न प्रधान-मन्त्री के पगमर्ष पर अनुहार दल के नेता श्री बैल्लविन और असाधारण दल के नेता श्री हर्बर्ट समुद्रक से उनके दलों की स्थिति के बारे में ज्ञान प्राप्त करने के लिए बातचीत की थी। हमारे पास ऐसी कोई सार्वजनिक सूचना नहीं है जिससे हम यह मान सकें कि इस बैठक का अधिक सरकार के त्याग-पत्र या नई सरकार के निर्माण से कोई सम्बन्ध था। जब २४ अप्रैल को श्री मैकडॉनल्ड ने सम्राट को अपने मंत्रि-मंडल का त्याग-पत्र दिया उस समय उन्होंने सम्राट को पुनः यह परामर्श दिया था कि वे श्री बैल्लविन और सर हर्बर्ट समुद्रक को आमंत्रित करें। हम नहीं जानते कि इस बैठक में जिसमें मातूम पड़ता है कि श्री मैकडॉनल्ड भी उपस्थित थे क्या हुआ। श्री सिडनी वेब ने श्री मैकडॉनल्ड के

मन्त्रि-मंडल में उपनिवेश-मंत्री ने किया है यह कहा जाता है कि सम्राट् ने जिनके साथ प्रधान-मंत्री ने निरन्तर सम्पर्क बनाए रक्खा था उनमें से अपनी वैधानिक स्थिति से कभी बाहर नहीं गए थे उनसे इस बात की सक्तिवासी अपील की कि वे इस शान्ति सन्धि के समम सम्राट् के साथ रहे और अनुरार तथा उचार दलों के प्रमुख सदस्यों व शान्ति दल के उन सदस्यों के साथ जो उनसे सहयोग करें, मिलकर एक समुक्त राष्ट्रीय सरकार का निर्माण करें। विश्वास किया जाता है कि सम्राट् ने इसी प्रकार की एक शान्तिवासी अपील उचार तथा अनुरार दलों के नेताओं से भी की थी। प्रामाणिक रूप से हम केवल यही जानते हैं कि शान्ति प्रधान-मंत्री के रूप में त्याग-पत्र देने के तुरन्त पश्चात् ही श्री रिचर्ड मैकडॉनल्ड की राष्ट्रीय सरकार के निर्माण का आदेश मिला था।

केवल कुछ और भीजें बातें हैं (१) २३ अगस्त को शान्ति मन्त्रि-मंडल को यह नहीं मालूम था कि श्री रिचर्ड मैकडॉनल्ड उसके साथ विश्वासपाठ करने वाले ह। वास्तव उन चार मंत्रियों को जो मरण प्रज्ञापन में शामिल हो गए वे यह मालूम हों। तब तक था तो यही विचार था कि चूंकि श्री मैकडॉनल्ड त्याग-पत्र दे रहे हैं बात भी वैधव्य प्रमाण-मानी हो चायेंगी। (२) हमको यह मालना पड़ता है कि सम्राट् को यह बात था कि श्री मैकडॉनल्ड का अधिकार्य शान्ति-मंडल और अधिकार्य इस तरह असहमत हैं और केवल चार मंत्री ही उनका साथ देंगे। (३) हमें यह मालूम है कि सम्राट् को श्री हर्बरसन के साथ संभला करने का परामर्श नहीं दिया गया। श्री हर्बरसन शान्ति मन्त्रि-मंडल में उन व्यक्तियों के नेता थे जो श्री मैकडॉनल्ड से असंतुष्ट थे। श्री मैकडॉनल्ड के दल से निष्कासन के उपरान्त वे ही दल के नेता चुने गए थे। (४) हमें यह मालना पड़ता है कि श्री मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्री बने रहने का सुझाव सम्राट् की ओर से आया था और श्री वेल्डमिन तथा सर हर्बर्ट सैमुअल ने उसे स्वीकार कर लिया था। इसका कोई संकेत नहीं मिलता कि श्री मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्री पद पर कायम रहने का सुझाव भी वेल्डमिन या सर हर्बर्ट सैमुअल की ओर से आया था। न इसी बात का कोई संकेत मिलता है कि उनमें से किसी ने २४ अगस्त के पूर्व इस विचार को लेकर अपने दल के अन्य शान्ति-मंत्रियों के साथ सलाह-मसबत किया हो।

हमारे पास जो जानकारियाँ हैं उसको देखते हुए इस अवसर पर श्री मैकडॉनल्ड की व्यक्तिगत सम्राट् का वैयक्तिक सम्बन्धन मालूम पड़ता है। वह अपने दल के प्रतिनिधि होने के अर्थ में प्रधान-मंत्री नहीं थे। उनके लिए बहुमत सम्राट् ने दूसरे दलों के नेताओं से शान्तिवासी अपील करके प्राप्त किया था। उन्होंने जहाँ पंचम से शान्ति दल का जिसे उन्होंने छोड़ दिया था मत जानने की कोई सिपारिष नहीं की। यह बुद्धिम्य है कि शान्ति उन्होंने सम्राट् तथा सर हर्बर्ट सैमुअल की भेंट की सिपारिष की थी उन्होंने सम्राट् तथा श्री हर्बरसन की भेंट का सुझाव नहीं दिया। संयुक्त सरकार के प्रधान-मंत्री के रूप में उनकी उपस्थिति उठी प्रकार की एक प्रासाव-शान्ति मालूम पड़ती है जैसी कि १७९३ में डॉर्न स्मूट के प्रधान-मंत्री बनने पर मालूम पड़ी थी।

वेब और वा वेनिमि दोनों का कइता है कि सम्राट् का कार्य वैधानिक या । यह सत्य परत कभीका है । यदि उसे इत हीट्टि सं मान लिया जाये तो इसका बनिप्राय यह होगा कि सम्राट् उस समय तक जब तक कि उसका कार्य बाह के साधारण निर्वाचन द्वारा अनुमोदित होता रहे त्रिस किसी व्यक्ति को चाहें प्रधानमंत्री बना सकते हैं । इस सिद्धान्त के अनुसार तो एक दल के नेता को सम्राट् की बेगमनि के बाधियों की कभीक के नाम पर अपन साधियों को कोई मुबना विधि बिना विरोधी दल में सम्मिलित होने के लिए सम्यार किया जा सकता है । दल-पट्टनि की सम्पूर्ण सामान्य प्रत्याघाओं की ज्येसा की जा सकती है और इसक परिणामस्वरूप उत्पन्न होने वाली बध्यबस्था सं मए पटव्यजन के लिए निर्वाचनीय बहुमन प्राप्त करने की विधा में साथ उठया जा सकता है । इस सिद्धान्त का आचार यह मान्य पड़ता है कि सम्राट् दलों से नहीं प्रत्युत मनुष्यों से उनकी व्यक्तिगत क्षमता में सम्बन्ध रखते हैं और यदि निर्वाचक बाह म उनक इस कार्य का अनुमोदन कर दें तो वे ऐसा करने के बनिनारी हैं । यदि ऐसा है तो यहाँ यह बताना आवश्यक हो जाता है कि ऐसे किसी धार्मिक संघट में जहाँ कानाओं की विधा बनिर्वाचन हो सम्राट् को धार्मिक महत्व का तत्त्व माना जाना चाहिए । मैं इस हीट्टिको के निष्कर्ष पर बाह में विचार करूँगा ।

प्रधानमंत्री जुने जाने के परवान् अपनी सरकार का निर्माण करता है । यहाँ भी उसके कार्य की सम्मलता में दल का तत्त्व आचारभूत है । समस्त साधारण परिस्थितियों में वह प्रधान-मन्त्री है क्योंकि वह दल का नेता है और यदि वह इन सम्बन्ध के अनुसार आचरण नहीं करेगा तो उसे कार्य-मामा में बहुमन नहीं मिल सकेगा । उसके लिए आवश्यक है कि वह कुछ साधिया को जुने क्योंकि दल की सरकार में उनकी उपस्थिति की आधा है । उनमें से कुछ इनने महत्वपूर्ण हो सकते हैं कि वे अपने बाधित विधि पर के लिए भाष्य कर सकें । यह सुविधि है कि १९०९ में श्री मैकडॉनल्ड श्री आर्थर हडरसन की विरोध-मन्त्री नहीं बताना चाहते थे किन्तु यह मान होने पर कि श्री हडरसन अन्य किसी क्षमता में मंत्रि-मण्डल में शामिल नहा होने श्री मैकडॉनल्ड को विवस हाकर उन्हें यह पद देना पड़ा था । इनमें कोई सविह नहीं कि प्रधान-मन्त्री को कुछ म कुछ स्वाधीनता आवश्यक रखनी है किन्तु माने तीर पर यह उसी अनुपात में रहनी है जित अनुपात में उनका अपन अनुयायियों के ऊपर प्रभाव होता है । श्री वेस्टमिन ने १९२५ में श्री बचिल को अर्थ-मन्त्री बनाने का वा नियंत्रण किया उस पर संसार बचित हो गया था । उनके नियम के फलस्वरूप सर राबर्ट हार्न म मंत्रि-मंडल में शामिल होना बस्वीचार कर दिया था । स्पष्ट है कि उन चीज से व्यक्तिपों को छोड़ कर जो स्वयं को मनोनीत कर सने हैं साधियों का कुनाब प्रत्येक प्रधान-मन्त्री के लिए राष्ट्रीय सरकार का काम है और वे लोग जिन्हें बचित रक्का जाना है उन आचारों को भापर ही ठीक मानते हैं जिनके कारण कि दूधरों को सज्जीत हो जानी है । प्रधान-मन्त्री भी कुछ कर सकता है करता है । वह एक ऐसी संस्था के निर्माण का प्रयास करता है जिसके उद्यम्य एक दूसरे के कृत्यों के लिए सामुहिक रूप म पसरवायी हों । सामान्य रूप से यदि वह कोई मयंजर भूल नहीं करता है, तो उस

अपने दल का पूरा समर्थन मिलेगा। यह समर्थन उसे उस समय तक मिलता रहेगा। जब तक कि मधि-मंडल विषय शेषपूर्व प्रतीत न हो तथा कोमन-समा में विरोधी दल की आलोचना के फलस्वरूप उसे और शक्तिशाली करने की आवश्यकता न मामुम पड़े।

प्रधान-मंत्री को अपने निश्चय के लिए सम्राट का अनुमोदन प्राप्त कर लेना चाहिए। यदि वह शक्तिशाली व्यक्ति है और अपनी बात पर दृढ़ता से जमा रहता है तो उसे यह अनुमोदन अवश्य मिल जाता है। यदि सम्राट उसके निर्णयों को मानने के लिए तय्यार न हो तो वह स्वाम-मन दे सकता है और यह निश्चितप्राम है कि सम्राट मामले को इस सीमा तक नहीं बढ़ायेंगे। यह नहीं है कि सम्राट की राज का कोई बल ही न होता है। १८९२ में कार्ड बर्डी ने 'महादानी की सुविधित बर्पावनक भावनाओं के कारण कार्ड पामस्टन को विरोध-मंत्री नहीं बनाया था। महादानी १८९९ में श्री गोस्सेन को मधि-मंडल में रखने के विरुद्ध थी और उन्होंने लाइ रसल को इस बात के लिए राजी कर लिया। १८९८ में उन्होंने कार्ड क्वैरडन को विरोध-मंत्री बनने से रोकने के लिए अगौरप प्रयत्न किया था। १८८८ में उन्होंने श्री पैम्बरलेन की नियुक्ति कुछ शर्तों के अधीन करने की धिष्ठा की थी। १८८९ में उन्होंने मधि-मंडल के निर्माण के समय श्री रॉडस्टन से यह किया कि वे वास्तु वास्तु का मनोनयन स्वीकार नहीं करेंगे। इसी मधि-मंडल में उन्होंने श्री लेबाउथेयर की नियुक्ति तथा कार्ड रिपन की इधिया अफिस में नियुक्ति को रोकने में भी सफलता प्राप्त की थी। हमें बाद के दृष्टान्तों की कोई जानकारी नहीं है। इस क्षण से यह स्पष्ट है कि सम्राट का नियुक्तियों की विवेचना का अधिकार आभारमूठ है और इस विवेचना के अधिकार का कम से कम उस युग में जिसके कि दृष्टान्त उपलब्ध है वही के विवरण में पर्याप्त प्रमाण रहता है।

सम्राट की शक्ति प्रधान-मंत्री के प्रमुख शाही भी प्रभाव रखते हैं। यह ठीक है कि सिडान्ठल प्रधानमंत्री सर्वोच्च होता है। १८८२ में श्री पैम्बरलेन ने कहा था मैं तो प्रकाशन के पूर्व मित्रतायुक्त घोषणा कर देता हूँ और एक-दो विरोधकर द्वितीय चरण के नेताओं के साथ सहाह-मसबुद कर देता हूँ। इससे अधिक कुछ नहीं। मोटे तौर पर आज भी यही नियम है। १९२९ में अफिक दल की एक छोटी सी समिति ने जिसके अध्यक्ष श्री स्लोडन थी हैबरेसन मीकाइलेस और श्री जे एच बॉमस ने प्रधान-मंत्री के साथ वहाँ के विवरण के सम्बन्ध में काफी विस्तार के साथ बातचीत की थी। सचार्इ यह है कि अद्यपि प्रधान-मंत्री की स्वाधीनता व्यापक है फिर भी व्यक्तिगत सहबोधियों के साथ पठमर्घ करना अपरिहार्य है। उस कैबल एक टीम का निर्माण नहीं करना होता उसे ऐसी टीम का निर्माण करना होता है जो उन्हें संतुष्ट कर सके। यदि वह अपने विचारों को उनकी इच्छा के विरुद्ध उन पर लागू कराए, तो उसे स्वेच्छाचारी होना पड़ेगा क्योंकि इस बात का सर्वत्र अर्थ है कि कहीं वे एसी स्थिति में उसकी अधीनता में काम न करें। उदाहरणार्थ साधारण निर्वाचनों के कुछ समय पूर्व श्री रॉडस्टन श्री आस्टिन पैम्बरलेन और कार्ड बर्डी को विभाव-रहित मधियों के रूप में

अपने मंत्रि-मंडल में रखना चाहते थे लेकिन जब उनके कुछ छात्रों ने इस प्रस्ताव का विरोध किया उन्होंने इस पर साधारण नहीं किया। जब संयुक्त मंत्रि-मंडल का निर्माण होता है प्रधान-मंत्री के लिए यह आवश्यक है कि वह दूसरे दल के नेता को संतुष्ट रखे। परिवर्तन के अनुसार उसके लिए यह भी आवश्यक है कि वह लॉर्ड-सभा को अपने मंत्रि-मंडल में प्रतिनिधित्व दे। मोटे तौर पर यह कहना सही है कि प्रायः प्रायः मंत्रि-मंडल को अपने सदस्यों के दल में महत्व के कारण स्वयं ही मनोनीत जाता है और इनमें से प्रायः आने सदस्य अपने मतवाले पक्षों को पाने में समर्थ होते हैं। प्रधान-मंत्री को केवल नए कामों के सम्बन्ध में ही स्वतन्त्रता पड़ती है।

प्रधान-मंत्री सम्पूर्ण शासन-तंत्र का केन्द्र बिन्दु है। सामान्यतः वह बहुमत प्राप्त दल का नेता और बजट के पक्षों में कार्यपालिका के 'प्रवीण' भाग का प्रधान होता है। वह संसद् की स्वीकृति होने पर अपने किसी भी साक्षी से त्याग-पत्र को मांग कर सकता है। वह सम्पूर्ण महत्वपूर्ण राजकीय नियुक्तियों में निर्णायक साक्षात् करता है। उसे समस्त विभागों के ऊपर विचारकर अधिकारों का मामला में सतर्क दृष्टि रखनी पड़ती है तथा नीति में संतुलन बनाए रखना होता है। वह कौमन्-सभा का नेता होता है तथा बड़ा सदस्य विधेय कर कठिनायियों के समय में सही की ओर निहारते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर साधारण मंत्रियों के बिना उनी से अपील करते हैं। अतएव वह संसद् तथा मंत्रि-मंडल के बीच सम्पर्क बनाए रखने का साधन है। मटारली विन्गेरिया के पक्षों से यह मामला पड़ता है कि यदि संसद् अपने कर्तव्यों के बारे में सम्भीर है तो वह कार्य भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

यह स्पष्ट है कि प्रधान-मंत्री का पर प्रधान-मंत्री के व्यक्तित्व के अनुसार होता है। श्री लॉर्डस्टन के प्राधिकार को धारण ही उनका कोई छात्री भूती देना था। सर माइनेल हिकस के विवरण के अनुसार लार्ड लॉर्डस्टन अपने छात्रों को डीक से नियमित नहीं कर पाते थे और लार्ड लॉर्डस्टन ही अपने छात्रों को नियमित करने में विस्तृत ही अधमर्ष थे। योम्बना अधि-नीचिम्ब कोसल, मन्त्र कार्य की धमता महत्वपूर्ण तथा महत्व-हीन का भेद पहचानना इन समस्त त्रुटियों के अनुसार एक प्रधान-मंत्री तथा दूसरे प्रधान मंत्री के बीच काफी अंतर हो जाता है। डिजरीलो के बारे में कहा जाता है कि यदि उनके एक छात्री को डीक कर पत्र समस्त त्रुटियों को अपने विद्वत् होते थे तो भी बाद उसी की पड़ती थी। लोक समस्त विभागों पर दृष्टि रखने में धारण इसलिये समर्पण में क्योंकि उनके समय में प्रशासन का क्षेत्र मात्र की अपेक्षा काफी सीमित था। श्री एरिक्सन ने इस बात का प्रमाण तक करता इस आधार पर बस्तीकार कर दिया था कि यह विस्तृत अन्वयार्थिक है। कहा जाता है कि युद्ध के समय में मंत्रि-मंडल के विचार-विमर्शों में इतनी कम रधि सेते थे कि जब मंत्रि-मंडल किसी विषय पर विचार करता होता था वे पत्र किया करते थे और जब मंत्रि-मंडल विचार संभव कर देता था तो वे समझ लेते थे कि समझीया हो गया और अब दूसरे प्रश्न पर विचार किया जा सकता है।

यह निश्चित है कि आज का प्रधान-मंत्री अधिक से अधिक नीति की मोटी रूप रेखाया पर ही नियंत्रण रख सकता है। इनका अर्थ यह नहीं कि उसका प्राधिकार पहले से कम है। साधुनिक लोचन में निर्वाचन के प्रथम एक व्यक्ति से ही सम्पन्न होते हैं और मापारण निर्वाचन सामान्यतः वैयक्तिक प्रधान-मंत्रियों के बीच वगमठ महत्व होता है। फलस्वरूप उसका राष्ट्रीय महत्व ही जाता है और जब तक वह प्रधान-मंत्री रहता है उसका कोई छापी उससे टककर नहीं के सकता। उसने व्यक्तिगत के आधार पर ही दल का निर्माण होता है और जब तक उसका दल पर नियंत्रण रहता है अन्य कोई व्यक्ति उसके सामने धर नहीं उठा सकता। वह अपने साधियों को नियुक्त और परामर्श करता है। मंत्री अपनी कठिनाइयाँ लेकर सबसे पहले उसी के पास जाते हैं। विधेय-नीति के निर्धारण में उसका विशाल भाग होता है। वह विचारों के मतभेदों को सुझाता है और यदि उनका विचार मंत्री-मंडल का प्रथम बन जाता है तो प्रधान-मंत्री की आवाज उसे सुझाने में विशेष महत्व रखती है। वह साम्राज्यिक प्रतिष्ठा-समिति (Committee of Imperial Defence) का समापति होता है। वह मंत्री-मंडल की कार्यक्षमता निश्चित करता है। वह उपनिवेशों तथा राष्ट्र-सभ के सम्बन्ध में विशेष महत्व रखता है। कॉमन-मन्त्रा में उसका अत्यन्त महत्व होता है। इन सब बातों को देखते हुए उसके विरुद्ध विरोध काफी कठिन है। यह छापी हो सकता है जब कि उसने अपना काम को इतने परावृत्त से किया हो कि यह जायता व्यापक रूप से फेंक जाये कि वह अपने पद को उपयुक्त नहीं है।

यह कहना तो अतिशयोक्ति ही होगी कि साधुनिक प्रधान-मंत्री की स्थिति अमरीकी राष्ट्रपति के समान है। श्री एस्किन श्री लॉयड जार्ज और श्री रैमसे मैकडॉनल्ड इन सबके जीवन यह प्रकट करते हैं कि उसके प्राधिकार का मूल ब्रह्मण्ड संघटन में उसका प्रभाव ही है कि वह कि उसे वैधानिक रूप से कुछ निश्चित अधिकार प्राप्त ह। येरे विचार से अनुभव यह सिद्ध करता है कि प्रधान-मंत्री का अपने मंत्री मंडल पर शक्ति कुछ नियंत्रण होता उनमें ही सुचारु रूप से शासन संचालित होना। प्रधान-मंत्री के लिए यह आवश्यक है कि नीति के सम्बन्ध में उसके अपने कुछ विदित विचार ह। उनके लिए यह आवश्यक है कि वह अपने मंत्रियों के मन में यह बात पैदा करे कि वह उनकी कठिनाइयाँ में उनके लिए निश्चय कर सकता है। वह ठीक है कि अधिक हस्तक्षेप से उसकी शक्ति का ह्रास होता है और इससे उसके ऊपर दबाव भी बहुत अधिक पड़ सकता है, लेकिन उसका नतुल्य सर्वत्र सदेहासीत है। इस दल में तो कोई संदेह ही नहीं हो सकता कि वह मात्र ही कि वह दल का नतुल्य कर रहा है वम को ऐसी एतता और एकगुणता देता ह जो उसे अन्य किसी प्रकार से नहीं मिल सकती। इसका बल में उसकी प्रतिष्ठा बनी रहती है और दल का संघटन कायम रहता है और दल अपना संघटन बनाए रखने से ही देश के ऊपर अपना नियंत्रण कायम रखने में समर्थ होता है।

यह उक्त है कि इन प्रकार के पद का भार बहुत अधिक है। सम्पूर्ण मंत्री-मंडल कॉमन-मन्त्रा और बल-इत सबके साथ निरुत्तरता और इस दृष्टि से निरुत्तरता कि इन

सबके परिणामस्वरूप निर्वाचन-मंडल से सम्बन्धपूर्वक निवृत्त जा सके कोई सामान्य काम नहीं है। इसके लिए दिन गुणों की आवश्यकता होती है वे किसी साधारण व्यक्ति में नहीं पाये जाते। येरे विचार से वो अपचारों को छोड़कर वे कमी किसी साधारण व्यक्ति में नहीं पाये गए हैं। निर्वाचकों के ज्ञान-वर्द्धन के लिए एक "सरल अवेब" के रूप में लार्ड ईश्वरिन की सभ्य मुद्रा बनाई गई थी लेकिन उस सभ्य मुद्रा के अन्तर्ग यह बनेष्ट टीका है कि कोई भी सरल व्यक्ति कभी इण्डियन का प्रबन्ध-मंत्री नहीं हुआ। उसे यह भी अल्प-वृष्टि प्राप्त करने के लिए जो प्रशिक्षण लेना पड़ता है अकेले नहीं इस बात की काफ़ी गारंटी है कि कोई साधारण व्यक्ति इन पद तक नहीं पहुँच सकता। विवेक की एक मनुष्यों पर प्राप्त करने की प्रकृत विषयमयी व्यक्तिपत्तियों की पहचान प्रमाणकारी बलव्य देने की क्षमता ऐसा प्रतिमानात्मक निर्णय कि वह एक तथा लोकमत से आने ली आवश्यक हो लेकिन इतना ज्ञान न हो कि उसका अनुमानपूर्वक पालन न हो सके एक ऐसी महत्त्वानुशासा जो आने ली बचाए, पर साब ही आदर्शिकता के प्रदर्शन में सक्षम हो व्यक्तिपत्तियों या कार्यों के बारे में तात्कालिक निर्णय के समय अपाचित व्यपत्ता—ये सब ऐसे मुक्त है जिनके बिना किसी प्रबन्ध-मंत्री का काम नहीं चल सकता। वह कहना कोई अतिप्रयोजित नहीं है कि प्रबन्ध-मंत्री को नित्य ही माय-पत्नी करनी पड़ती है। प्रबन्ध-मंत्री के शक्तियों का निर्वाहन करना लक्ष्यार की धार पर चलना है। वह ऐसे किसी लक्ष्य-मंडलीय व्यक्ति के बस का नहीं है जिसके लिए प्रत्येक निर्वाचक मतदान हो। समय किसी की प्रतीक्षा नहीं करता और वह व्यक्ति जो निर्वाचक बल को नहीं भाव सकता प्रबन्ध-मंत्री के पद को नहीं सम्हाल सकता। बलव्य निष्कर्ष सम्बन्ध के द्वारा जीवित रहती है और वे प्रबन्ध-मंत्री जिनके पास सम्बन्ध का रहस्य नहीं होगा अधिक समय तक प्रबन्ध-मंत्री नहीं रहते। राजनीतिज्ञ पर चाहते हैं और कोई भी आधुनिक प्रबन्ध-मंत्री जो सभाकार से साधारण निर्वाचन हार चुका है एक का नेता नहीं रहता।

हमारी व्यवस्था में अविच्छिन्न रूप से असाधारण प्रबन्ध-मंत्रियों को उत्पन्न किया है यह मेरे विचार से क्रॉमन-सभा के प्रकृत बल का ही प्रमाण है। १८६८ के वाचन से सर हेनरी कैंपबेल-बैंगमैन को छोड़कर एक भी ऐसा व्यक्ति प्रबन्ध-मंत्री नहीं हुआ है जिसमें कि असाधारण बौद्धिक प्रतिभा न रही हो लेकिन सर हेनरी की व्यवहार-बुद्धि और सक्ष-निष्ठा इत सति की पुनः कर देती थी। इन सम्बन्ध में अमरीका के राष्ट्रपतियों के तुलना करना अत्यन्त विषयमय है। वहाँ यह-मुद्र के वाचन से ऐसे औरह राष्ट्रपति हुए हैं जिनके बारे में यह कहना सही है कि यदि उन्हें उन्हीं पदों का पालन करना पड़ता जिनका कि किसी प्रबन्ध-मंत्री को करना पड़ना है तो यह निश्चित है कि उनमें न केवल चार ही घण्टे हावम तक पहुँच पाते। प्रबन्ध-मंत्री जो जिन पदोत्तमा का मायता करता पड़ना है, वे अमरीकी राष्ट्रपति की पदोत्तमा से नहीं अधिक बलित हैं। अमरीकी राष्ट्रपति को त्याग-व्यत देने के लिए विवय नहीं दिया जा सकता। वह जाने यदि-मंडल का पूरा स्वामी होता है। उसे ऐसे किसी विपत्ती बल के नेता का सामना नहीं करना पड़ता जिसे कि सम्पूर्ण बल

उसके शासन का विनाश मानता हो। विदेश-नीति के सम्बन्ध में भी उसका कार्य काफ़ी सुगम होता है। दूर दृष्टि से देखन पर यह भी नहीं माकूम पड़ता कि उस अपने सब के साम्य तथा निर्विघ्न के लिए ब्रिटिश प्रधान-मंत्री के उत्तरदायित्वा का भार बहन करना पड़ता हो। अधिक से अधिक बाठ बपों के परभाव् शासन का सुख उसके हाथ से निकल कर दूसरों के हाथ में चला जाता है।

प्रधान-मंत्री के पर पर हमारा विचार करना उस समय तक अपुरा है जब तक कि हम यह न समझ लें कि उसका विकास संसदीय पद्धति की मज्ज्या का उत्तम प्रदर्शन है। वह अपेक्षित उत्तरदायित्व देता है लेकिन इसके साथ ही साथ उस उत्तरदायित्व के प्रयोग पर कुछ ऐसे नियंत्रण भी लगा देता है जिनका सब तक बड़ी कुशलता के साथ पालन हुआ है। उस प्रधान-मंत्री को जो अपने साथ अपनी टीम नहीं के आ सरता बाठ सेन्सबरी की भाँति पर छोड़ता पड़ता है। उस प्रधान-मंत्री को जिसके बारे में गलत या सही यह समझा जाता है कि उसमें अपने कार्य के लिए उत्तरदायिता का जमान है वही एक्किबन की भाँति अपरस्व कर दिया जाता है। यह कहना सायद अनुचित नहीं है कि १९३६ के प्रीम् में श्री मैकडॉनल्ड के स्थान पर श्री बैस्बकिन की स्थापना का मुख्य कारण यही था कि श्री मैकडॉनल्ड के नेतृत्व में राष्ट्रीय सरकार का भावी जीवन संकट में पड़ने की आशंका थी। कहने का सार यह है कि हमारी व्यवस्था में पर उसके चारक की इस कसौटी द्वारा परीक्षा कर लेता है कि वह जनता की मांगों को वहाँ तक सफलतापूर्वक पूरा कर सकता है। उस निष्ठा में जिसे प्रधान-मंत्री उद्बुद्ध कर सकता है बुद्धिमत्ता बचवा विवसता नहीं होती। यह ठीक है कि उसके अपने समाचार-पत्र उसे अतिमानव बनाने की चेष्टा करते हैं लेकिन दूसरे पक्ष के समाचार-पत्र इस आदर्शिकरण को मुबार देते हैं। यह ऐसे बाधावरण में घोषता बोधता और बाठ करता है जिसमें आलोचक को उसकी दुर्बलता प्रकट करने का प्रत्येक अवसर और कारण रहता है। उसके विरोधी जितन अच्छे रूप से यह कार्य कर सकते हैं उतने ही अच्छे रूप से व अपनी विजय की भूमि तम्मार करते हैं। लेकिन यह बात केवल उसके विरोधियों के साथ ही नहीं है। प्रधान-मंत्री की परीक्षा उसके अपने समर्थक भी काफ़ी निकटता से करते हैं। इस ज्ञान का कि वे उसकी सफलता द्वारा रहते हैं अतिप्राम यह है कि वह अपनी समस्त प्रतिभा सफल होन में बनाने के लिए विवस है। यह यह जानता है कि समस्त वैयक्तिक निष्ठाओं के बावजूद उसके अनुयायियों में एक न एक ऐसा व्यक्ति बचस्य होना है जो उसका स्थान लेने के लिए तत्पर, तत्पर ही नहीं तत्पर उत्सुक रहना है। यह यह भी जानता है कि एक दृष्टि से उसके विरोध से वे अहस्ताकार्जाएँ पूरी होंगी जो उसके सताएव रहने तक बचकर रहेंगी। कोई बैस्बकिन के नेतृत्व के विरुद्ध बड़े-बड़े समाचार-पत्रों के स्वामियों का आशोकन इस बात का एक उदाहरण है। कोई भी प्रधान-मंत्री कभीमें सफल की भाँति अपने पद के बारे में यह नहीं कह सकता—“यदि अब हमने पापनाही को लिया है, अब हमें जयना मजा सूना चाहिए।” डाउनिंग स्ट्रीट में पहला दिन ठो छेते इस बात का संतोष दे सकता है कि अच्छे बाव हमारे जीवन की एक बड़ी महत्त्वार्था पूरी

है। लेकिन यह विम्वरको सामाजिक धारि का भी अंशम विम्वर होना है। समुचीय पदधि का सुचालन इस महत्त्वपूर्ण सिद्धांत के अनुसार होना है कि कोई भी व्यक्ति अचरितार्थ नहीं है और इसका अंगिक परिचालन प्रचालन मंत्री का इस बात की निरन्तर परिचालना रहना है कि उसका साम्य इस सत्य की पर्याप्त पर ही निर्भर है।

(१)

प्रधान-मंत्री के पश्चात् मंत्रि-मंडल में महत्त्व की दृष्टि से वित्त-मंत्री तथा विदेश-मंत्रीका स्थान आता है। यह स्वाभाविक ही है। समस्त प्रधामनिक और विद्यापी अर्थव्यवस्था की सुंजी वित्त है और ब्रिटिश सिविल सर्विस की संरचना का मध्य रहस्य यह है कि प्रधान-मंत्री तथा मंत्रि-मंडल की असीमता से काम करना हुआ वित्त-मंत्री को वादा के साम्य से समस्त विभागों के ऊपर पर्यवेक्षण रहना है। विदेश-मंत्री की विरुद्ध स्थिति के अन्य कारण है वह सोपनीयता की एक पुरानी और अस्पष्ट परम्परा का परिणाम है। अंततः यह इस कारण भी है कि वित्त-मंत्रियों की मंत्रि-विभाग का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक रहना है और विभागों के प्रचालना के लिए यह मंत्र्य नहीं है कि वे इस समस्त मंत्रि-विभागों से स्वयं को परिचित रह सकें। वे केवल अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिपत्रों के फल का ही समय निगाह पाते हैं। उन्हें इसका अर्थकाय ही नहीं है कि वे विदेश-मंत्री की नीति का विस्तृत पर्यवेक्षण कर सकें। पुनश्च विदेश-मंत्री को बहुतना पुराने कार्यवाही करनी पड़ती है और मंत्रियों के पास इसके अनिश्चित अन्य कोई कार्य नहीं है कि वे अपने साथी के विवेक पर मरोमा रखें। ही यह अर्थव्यवस्था कि विदेश-मंत्रियों की मंत्रि-मंडल द्वारा निर्धारित नीति की अह्वारयोग्यता के अंगिक रहना ही कार्य करना चाहिए। वे सदैव एका नहीं करते। १८५१ में लार्ड पामस्टन का त्याग-पत्र यह प्रकट करता है कि यदि सविनयायी अस्मितक किसी बात पर अड़ जायें तो वह क्या कर सता है। कभी कभी वे स्वीकार भी कर सकत हैं और बाद में फिर लोकमन के दबाव से उन स्वीकृति का निताग्रति दे सते हैं। १९३६ में सर मैमुडल होर का त्याग-पत्र इस प्रकार का एक उदाहरण है। लेकिन वृत्ति विदेश-मंत्री प्रजात पंथी के निरन्तरम सहयोग से कार्य करना है और नीति की अंगिक अन्वेषणा पर मंत्रि-मंडल में विचार-विमर्श होना रहना है अतः उमक मात्री सामान्य रूप से यह जानते हैं कि विदेश-मंत्री क्या कर रहा है। इनके अनिश्चित मन्त्रिया को विदेश-मंत्री से मूचना प्राप्त करन का ता अविचार रहना ही रहता है यदि ऐसा कि भी लायक जाईं वे कहा है कि विदेश-मंत्री यह मूचना मंत्री द्विपरिचालक के साथ देता है।

वित्त-मंत्री तथा विदेश-मंत्री का छोड़कर मंत्रि-मंडल का अर्थ मरम्मा की स्थिति प्रायः एक ही होती है। यदि उनके प्रभाव में कुछ अंतर होता भी है तो वह उनके पक्षों के कारण नहीं अतः उनके अस्मितक के कारण होता है। मंत्रि-मंडल में दो प्रकार के पद होते हैं। एक तो विभाग होत है अिनक प्रधामनिक कार्य अत्यन्त विस्तृत रहते हैं दूसरे विभाग लोक और सैनिक की प्रेसीडेंसी अथवा होने हैं अिनके ऊपर प्रधामन का विशेष भार नहीं होता। यदि मंत्रि-मंडल में इस तरह के अ-नीति मंत्री भी रहते हैं तो वह अधिक अक्षी तरह काम करता है। इनमें मंत्रि-मंडल का उन

व्यक्तियों का परामर्श मिस्त्रा रहना है जो किसी नारणन प्रशासनिक नर्तकों के भार से नहीं बर्ह रहना चाहते। वह उन्हें विधान-मण्डल में ऐसे किसी छापी की सहायता के लिए नियुक्त कर देते हैं जिसके ऊपर किसी विधेयक को पास करवाने का बाधा हो। वे मन्त्रि-मण्डल की समितियाँ और सामान्य विचार-विमर्शों में भी उपयोगी होते हैं क्योंकि प्रधान-मंत्री की भाँति वे भी मंत्रियों की अपेक्षा अधिक विप्लव कृष्टि कोण ग्रहण कर सकते हैं क्योंकि मंत्रियों के लिए अपने मन्वीनरव विभाषों के हित को अधिक महत्व देना नैसर्गिक है।

मन्त्रि-मण्डल प्रभाषी के कुछ भाषीयकों का यह कहना है कि मन्त्रि-मण्डल के सदस्य वे व्यक्ति होने चाहिए जिनका विकास समय अपने-अपने विभाषों के कार्य में लगता हो। कुछ कोमो ने वी सॉयड बार्ज के मुद्रकासीन मन्त्रि-मण्डल की पृनरावृष्टि का समर्शन किया है। मुद्र-काल में वी सॉयड बार्ज ने मन्त्रि-मण्डल के सामान्य स्वरूप को स्वरिगत कर दिया था और उसके स्थान पर पाच उपस्थों का एक मन्त्रि-मण्डल नियुक्त किया था जिसमें विभाषीय कार्य अकेले विध-मंत्री के ही पास थे। यह कहा गया था कि साधारण मन्त्रि-मण्डल में वीस से सेकर पञ्चीस तक सदस्य होते हैं। वह इतना बड़ा होता है कि उसमें वीघ निर्णय नहीं किए जा सकते जब कि मुद्रकाल में वीघ निर्णय करने की प्रबल आवश्यकता होती है। विभाषीय मन्त्री अपने कार्य में ही इतने अधिक व्यस्त रहते थे कि उनके लिए नीति की रूपरेखा पर विचार करना वीच कार्य रह जाता था और जब वे इस महत्वपूर्ण विषय पर विचार भी करते थे तो क्सात मस्तिष्क सेकर। मुद्रकासीन मन्त्रि-मण्डल के उपस्थों के विभाषीय उत्तरदायित्व से मुक्त रहने से वो काम थे। पहला काम तो यह था कि वे तत्कालिक परामर्श के लिए हर समय मिल सकते थे और दूसरा काम यह था कि वे छाने-छोटे कार्यों के उत्तरनाप्रद दबाव से स्वतन्त्र रहते थे।

इसमें कोई संदेह नहीं कि वी सॉयड बार्ज की यह व्यवस्था मुद्रकाल में उपयोगी होगी। लेकिन साक्ष्य से यह भी सिद्ध होता है कि उसकी व्यावहारिकता केवल ऐसे ही काम के लिए सीमित है। मुद्रकाल में यह इसलिए बरकता है क्योंकि उस समय अन्य प्रश्न पीछे रह जाते हैं तथा मुद्र में विषय प्राप्त करने का उद्देश्य ही सर्वोपरि रहता है और कॉमन-समा में विरोधी दल अपनी प्रतिविधियाँ बहुत कुछ स्वरति कर देता है। नातिनाल में इस व्यवस्था की सकलता संदिग्ध है। वह इस सिद्धान्त पर आधारित है कि नीति को प्रशासन से पृथक किया जा सकता है। लेकिन यह सिद्धान्त मुद्र वीसी सकलनासीन नर्तियों को छोड़ कर अन्य कार्यों में अभाव्यारिक है। यदि विभाषीय मंत्रियों को अपने विभाषों का सुचारु रूप से संभालना करना है, तो उनका महत्व वीच नहीं माना जा सकता क्योंकि इसका परिणाम उत्तरदायित्व की भावना पर बुरा होता है। मंत्री वीसे महत्वपूर्ण व्यक्ति उस समय तक अपनी नीति ठीक से निर्णयित नहीं कर सकते जब तक कि उन्हें नीति के निर्धारण में भाग लेने का अवित अवसर नहीं मिस्त्रा। नीति को एतता जिसकी वह सिद्धान्त रूपना करता है विकल्प हो जाती है क्योंकि नीति उस गम्भीर विचार-विमर्श के संभव की अभिव्यक्ति है जिससे

अ-विभागीय मंत्री कोई सम्बन्ध नहीं रखता। उनमें एक विभाग की नीति का दूसरे विभाग की नीति में प्रतिष्ठ सम्बन्ध रहता है। फलतः मान में सप्ताह मानकर करता मन्त्रि-मण्डल के संचाल संचालन के लिए अत्यन्त आवश्यक हो जाता है। श्री मन्त्रि-मंडल के मानन-काल में प्रधान-मंत्री तथा विभाग मंत्री का मध्यम इस प्रकार की बहिष्कारिता की उचित रूप सम्बन्ध करता है। उक्त होता में विस्तृत नहीं पढ़ती थी। फलतः न्य इय में काफी समय तक दो विभाग नीतिपदी रही। एक ता प्रधान-मंत्री के माने थी मन्त्रि-मंडल के द्वारा में की और दूसरी विभाग-मंत्रियों के माने माने कर्तव्य के द्वारा में थी। एक नीति के बारे में दूसरे का पूरा ज्ञान नहीं रहता था और उनमें सम्बन्ध नीति को मिला मिला कर्मकाण्ठी बर्तन बर्तान्वित करता था। इनका परिणाम इतिहास का ऐसा घनामन्त्र्य या विमर्शके लिए कोई भीषण्य उत्पन्न नहीं किया जा सकता था।

इसलिए पुत्रनी पद्धति की ओर मानिस मीठता विज्ञान और अनुभव दोनों आधारों पर उचित था। जो लोग नीति के संचालन के लिए उत्पन्न होना ह उनके ऊपर ही नीति के निर्माण का उत्तरदायित्व होता चाहिए। इनका यह अभिप्राय रहा कि श्रेष्ठ मन्त्रि-मंडल बाध्यनीय नहीं है या उस प्राप्त करने के कुछ उपाय महा हैं। आधुनिक पद्धति की स्थिति को देखते हुए प्रतिगता के एक पृथक मन्त्रालय की आवश्यकता विज्ञान स्पष्ट है। लेकिन इसकी अभी तक स्थापना न मान का कारण यह नहीं है कि इसक पक्ष में युक्तिया नहीं है परन्तु यह है कि पृथक मन्त्रियां न स्थापित स्थापित की परम्परा पर अब नहीं पाई जा सकी है। फलतः एका कर्म के विवरण का लेकर जो विचार हुआ था वह हम कथन का जीवित प्रमाण है। उक्त नी मन्त्र है कि प्रधान मंत्रियों न इस प्रकार के एक मन्त्रालय का निर्माण मन्त्र की दृष्टि से देना है क्योंकि उनके प्रधान का व्यापक प्रशासनिक अधिकार मन्त्रि-मंडल में अपनी सर्वशक्ति शक्ति के लिए एक युक्ती हो सकता है। यदि हम प्रतिगता का छाह हैं तो भी मन्त्रि-मंडल के आकार की कम करने के कुछ उपाय हो सकते हैं। उदाहरणार्थ एक उत्पन्न मन्त्रालय का निर्माण किया जा सकता है और उनमें वाणिज्य-मन्त्र (बोर्ड बोर्ड गेट) तथा धर्म और इति-मन्त्रालयों के कार्यों को मनुष्य दिया जा सकता है। यह स्पष्ट है कि यदि ऐसा एकीकरण किया जा सता तो फिर मन्त्रि-मंडल के स्वर के एक स्वतंत्र परिष्कार-मन्त्रालय की कोई आवश्यकता नहीं रहती। यदि ये परिवर्तन हो जायें तो मन्त्रि-मंडल की सम्पूर्ण-मन्त्र्या मन्त्रालय रह जायेगी और फिर विभागीय कार्यों का तमिक अधिक सुविधमय प्रवर्धन हो सकेगा।

जाने मन्त्रि-मंडल से आ लाभ बनाए जाने ह उनमें से अधिकांश वर्तमान व्यवस्था द्वारा भी प्राप्त हो जाते हैं। आधुनिक मन्त्रि-मंडल विमर्शकर युद्धात्तर बनों में समितियों के द्वारा नाम करना है और समय ही एका कोई मन्त्रि-मंडल हो विमर्श प्रधान मंत्री के इर्द-गिर्द ऐसे कुछ साथी न हा जो उनकी वाप-वाकिया पर विषय प्रभाव न मान पाते हों। समिति-व्यवस्था अप्पन्न मूल्यवान् है। इनमें किसी भी विषय समस्या को विषय और व्यापक परीक्षण के लिए बोर्ड में मंत्रियों के पास भेज दिया जाता है। वे उक्त समस्या पर विस्तार से विचार कर सकते हैं सक्षिप्तों का परीक्षण कर सकते हैं

और विधेयकों का वि एसे अन्य व्यक्तियों की भी राय ले सकते हैं जिन्हें कि वे उपयुक्त समझते हों। इसके फलस्वरूप एक ऐसा प्रतिवेदन सामने आता है जिसे पूरा मंत्रिमंडल बिना किसी विधेय कठिनाई के स्वीकार कर सकता है। समिति में हो-एक सदस्य ऐसे होते हैं जिनको समझाए अन्तर्वेस्त प्रश्न से सीधा सम्बन्ध रचना है और किसी समझौते तक पहुँचने की सगकी योग्यता ही उनके साधियों के लिए इस बात की सूचक होगी कि कोई उचित समझौता हो गया है।

“आम्बान्तरिक मंत्रि-मंडल” के बारे में हमें प्रश्नों से दम आन मिलता है और औपचारिक अर्थों में उसका अस्तित्व नहीं है। लेकिन यह सही है कि प्रत्येक मंत्रि-मंडल में एसे पाच-छ मंत्री होते हैं जिनके ऊपर प्रधान-मंत्री विधेय विद्बाध करता है। वे नीति पर औपचारिक रूप से नहीं प्रत्युत प्रधान-मंत्री के अंतरंगों के भाते अर्थात् औपचारिक रूप से विचार करते हैं। वे व्यापक विचार-विधिमय के लिए पृष्ठभूमि तैयार करते हैं। वे उद्ये एसी एकता और सामता प्रदान करते हैं जिसे उनके व्यक्तिगत सम्बन्धा के अन्धाया अन्य किसी रीति से प्राप्त करना कष्टी कठिन होता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि यदि मंत्रि-मंडल को सुचारु रूप से कार्य करना है तो इस प्रकार के बर्ग समूह का अस्तित्व आवश्यक है। श्री सॉयड चार्ज ने लिखा है ‘प्रत्येक सरकार में एसे चार-पाच महत्त्वपूर्ण व्यक्ति आवश्यक होते हैं जो अपनी असाधारण प्रतिभा अनुभव और व्यक्तित्व से इस आम्बान्तरिक परिषद् का निर्माण करते हैं जो कि मन्त्रालय की नीति का निर्देश देती है। यदि किसी प्रधान के पास ऐसा बर्ग-समूह नहीं है तो वह शांति-क्रांति में तो साम्य बिना किसी बाधा के अपना काम चला से जाये लेकिन संकट काल में वह कुछ भी न कर सकेगा।’ सचार्ड यह ई कि अधिकांश परिस्थितियों में इस प्रकार का बर्ग-समूह ही मंत्रों को मिलता नहीं प्रत्युत मौलता है और उसके कारण ही महत्त्वपूर्ण निर्णय अचालक कर लिए जाते हैं व यह विद्बाध बना रहता है कि पूरे मंत्रिमंडल की सहमति बार में प्राप्त कर ली जायेगी। १९२९ में अमिक सरकार में एकता बने रहने का कारण धायर यही था कि प्रधान-मंत्री अपने मुख्य साधियों से प्रति सप्ताह ही मंत्रिमंडल के अन्धाया विभिन्न विषयों पर बातचीत करते रहते थे।

१९१७ के पश्चात् से मंत्रि-मंडल सचिवालय की स्थापना द्वारा मंत्रि-मंडल का कार्य काफी सुगम हो गया है। इसका अर्थ श्री सॉयड चार्ज को प्राप्त है। इसके धुजन के पूर्व न तो मंत्रिमंडल के कोई विवरण-वक्त्र ही होने थे और न यह जानने का कोई उपाय था कि क्या निर्णय कर लिए गए हैं और यदि वे कर लिए गए हैं तो क्या उन पर आचरण भी हुआ है। मंत्रि-मंडल सचिवालय ने गोपनीयता और औपचारिकता की परम्परा को समाप्त कर दिया है। वे सब प्रकृत जिन्हे कोई मंत्री बिलगित करना चाहता है उसके पास पहुँचने हैं। सचिवालय इस बात का प्रथम कर्ता है कि प्रधान मंत्री की स्वीकृति होने पर तथा बिल-पत्री को सूचित करने के उपरांत प्रत्येक बैठक की उपयुक्त कार्यविधि तय्यार हो। सचिवालय का प्रधान मंत्रि-मंडल के निर्णयों का विवरण सेन के लिए समकी प्रथम बैठक में उपस्थित रहता है। वह इन निर्णयों को सम्बन्ध विभागों के पास भेज देता है। इन व्यवस्था के काम इतने स्पष्ट हैं कि उन पर

विचार करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

अपराध यह नियम कि स्मृति-पत्र के वितरण तथा किसी विषय के कार्यावलि में उपस्थित होने के बीच पांच दिनों का अन्तरान आवश्यक रहना चाहिए, उन अनुपचारिक संस्थाओं का अन्तर प्रदान करता है जो प्रायः असाहसिकी की सम्भावनाओं को दूर कर देती है। चूंकि कार्यावलि प्रदान-मंत्री के नियमन में रहती है इसलिए वह ऐसे किसी प्रस्ताव पर जिसके बारे में उस सदेह हो किसी भी मंत्री के साथ विचार-विनिमय कर सकता है। यदि वह चाहे तो मंत्री के प्रक्रम में अन्य सामियों को भी सम्मिलित कर सकता है।

मंत्री-मंडल सचिवालय के बारे में किसी प्रकार का सदेह नहीं हो सकता। जहाँ पहले व्यवस्था रहती थी वहाँ अब व्यवस्था का मूल्य उस समय व्यप्ट हो जाता है जब हम यह स्मरण करते हैं कि मात्र मंत्री-मंडल का कार्य पचास वर्ष पहले की संस्था हीन-भार युवा अधिक हो गया है। यह समझ लिया जाता चाहिए कि सचिवालय का अर्थ बहुत कुछ इसी बात पर निर्भर है कि उसका कार्य अविचलता का है न कि परामर्शदाता का। यदि कहीं उसने परामर्श देना प्रारम्भ कर दिया तो वह मुचाद सामन के लिए एक संकट हो जायगा क्योंकि वह नीति का एक स्वतंत्र उत्स बन कर विभागों के विचार को और बड़ा देगा।

हा और तब मंत्री-मंडल के कार्य को वांछी हद तक हल्का कर देते हैं। माध्यमिक प्रारिखा-समिति (The Committee of Imperial Defence) जिसका सभापति प्रधान-मंत्री होता है मंत्री-मंडल को केवल बड़-बड़े सिद्धांत छोड़कर अन्य सब बातों के विचार से मुक्त कर देता है। समिति के माध्यम से विचार की समस्याएँ सम्बद्ध मंत्रियों तथा उनके विभागा द्वारा मूलभूत जा सकती हैं। मन्त्र के मंडलीय कार्य पर निर्भर हो जाने के उपरान्त मंत्री-मंडल की गृह-कार्य-समिति (The Home Affairs Committee of the Cabinet) विदेशों के अधिराज्य टेकनिकल व्योरो से निवृत्त होती है। पूर्ववर्ती मंत्री-मंडल इन टेकनिकल व्योरो से बहुत परेवान रहन व।

मंत्री-मंडलीय घासन का माहिर्य इस विषय पर भरा पड़ा है कि इस व्यवस्था में मंत्रियों के ऊपर बहुत अधिक दबाव पड़ता है। यह कहना उचित होगा कि यह आसन भार और उत्तरदायित्व में भेद नहीं करता। आजकल मंत्री-मंडल वर्ष में प्रायः पचास साठ बार मयवेत होता है और उसकी एक बैठक समाप्त हो जाने तक चलती है। उसके सामन कठोर पत्र-विषयों की कार्यवलि रहती है। इस कार्यवलि से सम्बद्ध स्मृति-पत्र प्रायः पचास पृष्ठों का होता है। नियम यह है कि अल्प राजनीतिकी सुविधा के लिए जिसके पास विस्तृत प्रुक्तिमाँ पढ़ने का समय नहीं है स्मृति-पत्र का बड़ी होमिपारो व साध्य तन्मार कर लिया जाता है। यह निदिधन ही है कि या ता प्रमत्त मंत्री प्रन्वैक प्रन्वैक ने तत्साय पर पहले से ही विचार कर केते ह या यदि वह सर्वथा नए विचारसपद प्रदान सदे कर देना है, तो उसे रिपोने के लिए समिति के पास भेज दिया जाता है। हममें कोई सदेह नहीं कि होर-अवेक प्रस्तावों को स्वीकार या अस्वीकार

करने अथवा १९२५ में क्षतिको के लिए राजनीय सहायता स्वीकार कर रणकी हड़ताक को स्वमित कर देने का उत्तरदायित्व बहुत बड़ा है। युद्ध जैसे कामों में तो इस प्रकार के निजय और भी अधिक लिए जाते हैं। इससे भी मंत्रि-मंडल के ऊपर काफी बचाव पड़ता है।

लेकिन मेरा विचार है कि मंत्रि-मंडल का बसली कार्य यदि उसे विभागीय और संसदीय कार्यों से बसम कर लिया जाय तो अधिक नहीं रह जाता। राजनीतिक क्षेत्र के अनुभवी व्यक्ति जैसा जीवन-यापन करते हैं, उससे उन्हें सत्वर निर्णय का प्रचाराय मिलता है। जिस प्रकार की दक्षयत आघाएँ उन्हें पूरी करनी होती हैं उन्हीं के अनुसार उन्हें अपनी नीति का निर्माण करना होता है। उनके पास जो विषय-वस्तु आती ह, विषय के कर्मचारी उसका अच्छी तरह से विश्लेषण और परीक्षण कर लेते हैं। यदि उनके ऊपर बचाव पड़ता है तो इसका कारण निजय का महत्व होता है न कि वह विषय-वस्तु जिसके आचार पर निर्णय लिया जाता है। मंत्रि-मंडल बहुत कम असहमत होते हैं यह इस बात का प्रमाण है कि नीति की मंजूनी कन्वेंशनों को मंत्रिमंडल के सदस्य प्राय मान ही लेते हैं। बचाव का कारण निर्णय करने की शक्ति या उनका विस्तार नहीं प्रस्तुत यह ज्ञान है कि हमारी राजनीतिक व्यवस्था में प्रत्येक निर्णय नए विचार का औपनेस होता है तथा संसद के भीतर और बाहर के राजनीतिक संबंध बहान बना देने वाले होते हैं। यह विस्तृत धन है कि ४ अक्टूबर १९१४ या १९१६ के सिंहासन-स्वयं जैसे अनुभव प्रधान-मन्त्री के लिए बड़ी चिन्ता और व्यपत्ता के कारण होते हैं। लेकिन यह तो बड़ निर्णयों की नैसर्गिक प्रवृत्ति ही होती है कि वे अत्यधिक बचाव डालते हैं तथा मंत्रि-मंडल-प्रधानी के सम्बन्ध में यह मानने का कोई कारण नहीं है कि वह उच्च अनावश्यक रूप से बड़ा देती है। मंत्रि-मंडल के कागजी नाम को अधिक नहीं बढ़ा जा सकता। मंत्रि-मंडल तथा मंत्रि-मंडल की समितिप्रा की बैठकों में संसद नाउठी कौचित्त जैसी किसी बड़ी संस्था के अधिष्ठायी प्रभाव को करने वाली बैठकों से अधिक नहीं होती। मंत्रि-मंडल पर जो बचाव पड़ता है, वह उतना आम्त्यरिक्त नहीं होता जितना कि बाह्य होता है। बचाव का मूल कारण तो मनोव्यक्तिक दृष्टि से यही है कि मंत्रि-मंडल का जिस विषय-वस्तु से सम्पर्क रहता है वह अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है।

यह मैं कह चुका कि मैं मंत्रि-मंडल एक गोपनीय निजय है और वह अपने निर्णयों के लिए सामूहिक रूप से उत्तरदायी है। गोपनीयता के महत्व को दुगमता से अतिरिक्त विषय या संरक्षा है। सिद्धांततः उसकी तीन उपायों से रक्षा होती है। प्रिबी कौंसिलर्स की धपय द्वारा आफीसल सिफैट्स एकट द्वारा और इस निजय द्वारा कि चूँकि मंत्रि-मंडल का निर्णय सम्पाद के प्रति परामर्श होता है अतः उसके प्रकाशन के पूर्व उच्च पर सम्पाद की स्वीकृति आवश्यक है। लेकिन इन सबसे महत्वपूर्ण यह है कि जिन व्यक्तियों को सामूहिक रूप से उत्तरदायी होकर जनता के सामने जाना है, वे मिल-जुल कर कार्य कर सकें तथा स्वतंत्र विचार-विमर्शों के विरुद्धों को अक्षत रख सकें। यदि कभी मंत्रि-मंडल में ऐसा बम्भीर मतभेद हो पाये कि एक

या दो मंत्रियों को त्याग-पत्र देना पड़े तो इस पर काम-गमना में मजबूत बाध-विचार होगा है और इन बाध-विचार में मंत्रि-मंडल के बहुत से रहस्य प्रकट हो जाते हैं। १९०१ में श्री मंत्रिण्ड के त्याग-पत्र और १९११ में मंत्रि सरकार के त्याग-पत्र के परचाणू यही हुआ था। मंत्रियों और मंत्रिपूर्व मंत्रियों ने मंत्रा में मंत्रि-मंडल के रहस्य प्रकट करके एक दूसरे के सम्मन कीचड़ उछासी। यही नहीं। मंत्रि-मंडल की अधिकान्त बैठकें एसी होती हैं जिनमें कि आचरितक प्रेस का भी कुछ न कुछ भाग सम्मन रहता है। मंत्री और कभी कभी प्रधान-मंत्री समाचारपत्रों का इस प्रकार की खबरें दे देते हैं जिनका उद्देश्य लोकजन को उसकी बाधित दिशा में भाव देना होता है। कुछ ही मंत्रि-मंडल ऐसे हुए हैं जिनके सदस्यों के किसी न किसी प्रसिद्ध पत्रकार के साथ बहिष्कृत सम्बन्ध न रहे हों। पुनश्च मंत्री अपने सम्मरणों को प्रकाशित कर देते हैं और दक्षिण गोपनीयता की परम्परा कभी तक कायम है कति महापुरुष जिनके समय के साथ ही कुछ ऐसे विवादास्पद विषय हों जिनसे हम सम्मन न हों।

सामूहिक उत्तरदायित्व एक अल्प विषय है। लॉर्ड मेन्सफी ने १८७८ में यह टीका की किताब "मंत्रि-मंडल में जो कुछ हुआ है, उसका प्रत्यक्ष सम्बन्ध ही उसका लिए निरपेक्ष रूप में उत्तरदायी है। उसे बाद में यह कहने का अधिकार नहीं है कि एक विषय में तो वह सम्मन हो गया था और दूसरे में उसके अधिकारों ने उस सम्मन बना कर टापी किया था।" इसलिये मंत्री के लिए यह आवश्यक है कि या तो वह मंत्रि-मंडल का निर्णय माने या त्याग-पत्र दे। यदि वह त्याग-पत्र नहीं देता तो उसके लिए यह बाध्यता है कि वह मंत्रि-मंडल के निर्णय को अपना ही निर्णय समझना चाहें मंत्रि-मंडल की बैठक में अपने उसका विरोध ही किया हो। इनका अर्थ यह है कि जिन संसद में उस निर्णय के पक्ष में मत देना चाहिए और आवश्यकता पड़ने पर संसद में सम्मन जनता के सामने उसकी प्रतिरक्षा करनी चाहिए। श्री मेन्सफी का या यह विचार था कि यदि कोई मंत्री जन-विभाजन के समय अनुपस्थित हो, तो उसकी निष्ठा की कमी चाहिए। यह बात उन जिनके मंत्रियों के लिए भी सही है जो मंत्रि-मंडल में नहीं होते। यही नहीं। मंत्री के लिए यह आवश्यक है कि वह मंत्रि-मंडल की नीति के विरुद्ध कोई आचरण न करे और यदि वह देना है तो उसे १९१३ में श्री मेन्सफी की भांति त्याग-पत्र देना पड़ेगा। यदि वह किसी मायाम में नीति की एसी घोषणा कर दे जिस पर मंत्रि-मंडल ने निर्णय किया हो तो उसके सामने दो विकल्प रह जाते हैं। एक विकल्प तो यह है कि उसे मंत्रि-मंडल के कुछ महत्त्वपूर्ण साधनों का सम्मन प्राप्त हो जो सम्पूर्ण मंत्रि-मंडल की स्वीकृति बाद में दिखता है। इनका अर्थ उदाहरण श्री लॉयड जॉर्ज का १९११ का सम्मन हाउस था। दूसरा विकल्प यह है कि यदि बाद में मंत्रि-मंडल उसकी किसी बात की अस्वीकार कर दे तो वह त्याग-पत्र देने के लिए प्रस्तुत रहेगा। इसका अर्थ उदाहरण १९२० में सर जॉनसन का यह मायम है जिनमें उन्होंने मंत्रि-मंडल में सम्मन लिए बिना ही यह कह दिया था कि वे २१ जनवरी की स्थिति को सम्मन का अधिकार मिल जायेगा। सम्मन मंत्रि-मंडल का सम्मन

एकता है और सामूहिक उत्तरदायित्व ही वह शासन है जिसके द्वारा यह एकता प्राप्त की जा सकती है। यह नियम न केवल हितकर ही है, प्रसूत आवश्यक भी है। इसके अतिरिक्त ऐसी अन्य कोई शर्त ही नहीं है जिसके अनुसार कि मन्त्रि-मंडल का टीम-काय बस सके। सामूहिक उत्तरदायित्व से पारस्परिक विश्वास एवं आदान प्रदान का भाव उत्पन्न होगा है। यह स्पष्ट है कि यदि कोई मन्त्री किसी बयनाम नियम के उत्तर दायित्व से स्वयं को पुचक कर के, तो मन्त्रि-मण्डल बस नहीं सकता। इसी प्रकार यह भी स्पष्ट है कि किसी मन्त्री को बड़े-बड़े विषयों जैसे गम्भीर विषयों पर भाषा-धर्य नहीं बोलना चाहिए क्योंकि इससे उसके साथी कठिनाई में पड़ सकते हैं। यह नियम कितना आवश्यक है यह १९३२ की दुष्टतापूर्ण 'असहमति-सचिवा' से प्रबल हो गया था। यह स्थिति कुछ ऐसी थी कि उसमें मन्त्रि-मंडल के शासन का बहुरत आकार नष्ट हो सकता था। यदि उन असाधारण परिस्थितियों को जिनके आकार पर कोई हेलियम ने रचनात्मक सिद्धान्त से अपना मतभेद उचित ठहराया था पूर्ण रूपान्त मान लिया जाय तो इसका अर्थ यह होता कि सरकार के समर्थकों को ठीक से समुष्ट करने का कोई उपाय ही नहीं रहेगा। इसका फल यह होगा कि या तो ऐसी दुर्बल और अल्पजीवी सरकारें बनेंगी जो संसदीय संस्थाओं का बयनाम कर देंगी या ऐसे समुक्त मन्त्रि-मंडल बनेंगे जिनमें कोई संवैधानिक एकता नहीं होगी। डॉ. जैनिंग ने यह ठीक ही कहा है कि इस रास्ते से तो जोय फरसीकारी राज्य तक पहुँचते हैं। इसका अर्थ तो यह हुआ कि हम व्यक्तियों के सिद्धान्तों की ओर ध्यान दिए बिना ही विश्वास की माँग करते हैं। यह विश्वास ऐसा है जिसका बल-व्यक्ति निवेश करती है। यही कारण है कि जब कोई तानाशाह संसदीय शासन को नष्ट करता है तो वह सबसे पहले राजनीतिक दलों का विनाश कर देता है।

उक्त विवेचन पर निष्कर्ष यह है कि समस्त सामान्य परिस्थितियों में सामूहिक उत्तरदायित्व का रहस्य यह तथ्य है कि मन्त्रि-मंडल का आकार बहुरत शासन है। बहुरत शासन ही मन्त्रि-मंडल को प्रयोजन की एकता देता है। बहुरत शासन ही ऐसे शासन प्रस्तुत करता है जिनसे प्रयोजन की एकता वापस रहती है। बल-व्यक्ति के कारण ही मन्त्रि-मंडल में ऐसे व्यक्ति रहते हैं जिनकी एक ही विचारधारा होती है एक से उद्देश्य रहते हैं और जो एक से बुद्धिबोध से सामने आई हुई समस्याओं पर विचार करते हैं। बल-व्यक्ति के कारण ही मन्त्रि-मंडल के लिए एंथी नीति का अनुसरण करना संभव होता है जिसे कि क्रॉमवेल-समा में बहुमत का निरन्तर समर्थन मिलता रहता है। इसी कारण डिबरसी का यह कहना ठीक था कि इंग्लैंड समुक्त मन्त्रि-मंडलों को पसंद नहीं करता। जब अभी समुक्त मन्त्रि-मंडल पर निर्माण होता है हमारे राजनीतिक जीवन के सामान्य सिद्धान्तों को भोटे पहुँचती है। यही कारण है कि हमारे देश में समुक्त मन्त्रि-मंडल अधिक संभव लग नहीं सकता। या तो वह सीधे ही नष्ट हो जाता है और इस स्थिति में राजनीति का सामान्य प्रक्रम पुनः शालू हो जाता है। यदि १९३१ की राष्ट्रीय सरकार की तरह संसदीय मन्त्रि-मंडल काही समय तक चलता है तो यह स्पष्ट

हो जाता है कि या तो बसों में एबतानता जाए (इस स्थिति में सम्पूर्ण मंत्रि-मंडल समाप्त हो जाता है) या दल गट हो जायेंगे। लेकिन दलों को गट करना प्रति निषिक्त शासन को गट करना है क्योंकि दल उसके जीवन के सक्रिय विद्यान्त है। इस दृष्टि से मंत्रि-मंडल का सामूहिक उत्तरदायित्व हमारी संसदीय व्यवस्था के सम्पूर्ण मंत्रि का अन्वयित्व ही जाता है। इसको चोट पहुँचाने का अर्थ सम्पूर्ण व्यवस्था को और प्रकारान्तर से इस व्यवस्था के कामो को चोट पहुँचाना होगा।

(५)

मैं जाने के एक सम्भाव्य में अपनी शासन-व्यवस्था में सभाद की स्थिति पर विचार करूँगा। लेकिन यहाँ पर संघेय में मंत्रि-मंडल और राजसूक्त के सम्बन्ध का विस्लेषण कर केना उचित होगा। विद्यान्त जिस प्रकार मंत्रि-मंडल कौमल-समा और देश के सम्मुख एक इकाई है तथा उसके प्रति सामूहिक रूप से उत्तरदायी है उसी प्रकार सामूहिक उत्तरदायित्व ही उसका राजसूक्त के साथ सम्बन्ध निश्चित करता है। लेकिन इस सम्बन्ध के उपासन में ऐसी कुछ कठिनायें और दुष्कार्य हैं जिनके सम्बन्ध में कतिपय निषिक्त नियम हैं।

यह स्पष्ट ही है कि सभाद को मंत्रि-मंडल के परामर्श के अनुसार काम करना चाहिए और यदि वह ऐसा नहीं करे तो मंत्रि-मंडल त्याग-पत्र दे सकता है। कौमल-समा में परामर्श न होने पर भी मंत्रि-मंडल के त्याग-पत्र देने का अर्थ यह हीमा कि दलगत संघर्ष में सभाद अन्वयित्व है। यदि सभाद एक बार अपना विचार रखे और मंत्रि-मंडल उसे न माने तो सभाद को अल्पकाल तक काम करना चाहिए।

लेकिन इन दो बातों के बीच में भी काफी गुंजायश है। सभाद का नीति के समस्त महत्वपूर्ण पहलुओं के सम्बन्ध में प्रधान-मंत्री के निरन्तर सम्पर्क बना रहता है। यह सम्भाव्य मंत्रियों से भी निरन्तर विद्ये ही रहते हैं। मंत्रि-मंडल की समस्त कार्यवाहियाँ तथा अनुभव सरकारी प्रलेख भी उनके पास रहने हैं। जिस प्रस्तावों पर मंत्रि-मंडल निर्णय लेता है उनके अगुएँ पहले से ही जान रहता है। उन्हें उन पर टिप्पणी देने का तथा निर्णय के पूर्व मंत्रि-मंडल को अपने विचारों की पूरी जानकारी देना का अधिकार है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि यदि सभाद चाहे तो शासन के प्रथम में महत्वपूर्ण भाग ले सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि जतना यह प्रभाव बहुत कुछ उनकी बुद्धि तथा चरित्र पर निर्भर रहेगा। एकराई संशय जैसे बीरमूत्री सभाद महादानी विक्टोरिया जैसी परिषदी साम्राज्य की अपेक्षा बहुत कम प्रभाव रख सकते हैं। लेकिन प्रश्नों से यह स्पष्ट है कि कार्य अनुसार जैसे प्रकार सभाद और उनके उत्तरदायिकारी जैसे मंत्रि सभाद भी मंत्रि मंडल के शासन-कर्म में कुछ न कुछ प्रभाव तो रखने ही ह।

मैं अन्वयित्व का विचार का कि प्रधान-मन्त्रि को मंत्रि-मंडल के विचार-मंडल की सभाद को सूचना नहीं देनी चाहिए। उनके विचार से प्रधान-मंत्री के लिए यह आवश्यक है कि वह मन्त्रि-मंडल के प्रभाव का कम न करे, उसमें कूट न जाने

तथा अपने साधियों का सम्राट की वृष्टि में नीचा न गिराए। यदि वह इन नियमों के पालन से तनिक भी इयमबाठा है या अपने महान् अवसरों का अपना प्रभाव बढ़ाने में या ऐसे कार्यों को करने में जिनसे उसका साथी सहमत न हों प्रयोजन करता है तो यदि वह उन्हें अपहस्य करने के लिए तय्यार नहीं है तो न केवल नियम ही मंग करता है अप्रसृत विस्वासाघात तथा नीचता का भी काम करता है। यद्यपि श्री मीडस्टन का यह कहना सही है लेकिन सार्वजनिक सिद्धान्त के प्रतिभूत ही जाता है। लॉर्ड मेल्बोर्न लॉर्ड रसेल डिक्लेरी तथा सेस्सबरी महाराजनी विक्टोरिया को मनि-मंडल की सहायता देते थे। १९-९ के मासिक प्रावधानों के सम्बन्ध में भी एक्सिप्ट ने भी यही किया था। अन्य मन्त्रालयों में भी कुछ विद्विष्ट मंत्रियों ने सम्राट को ऐसी सूचना दी है जो उन्हें अन्य प्रकार से नहीं भिन्न सकती थी। लॉर्ड ग्रेनवाइस और लॉर्ड रोडबरी दोनों ही इस प्रकार कार्य करते थे और कम से कम एक अवसर पर तो लॉर्ड मार्ले तक ने ऐसा किया था। अपने इन व्यक्तिगत सम्बन्धों के कारण सम्राट कई बार मनि-मंडल ने एक पल के विद्वेष बुरे पक्ष के ऊपर अपना प्रभाव डालने में समर्थ हुए हैं। अमिक सरकार के शासन-काल में १९२९ में एक अवसर पर सम्राट जार्ज पंचम ने विदेश-मंत्री से यह कह कर कि प्रधान-मंत्री उनके विचार से सहमत हैं मनि-मंडल न सम्मूक्त एक प्रस्ताव न रखने की अपील की थी।

यह स्पष्ट है कि श्री मीडस्टन के वृष्टिकोण से तनिक भी होने में एका यह है कि सक्तिघाती विचारों का सम्राट मनि-मंडल के अन्दर पक्षयज करने लभ जायेगा। मैं जाने के एक अध्याय में यह दिखाऊंगा कि पक्षयज की यह सम्भावना इस तथ्य से और भी बढ़ जाती है कि प्रत्येक सम्राट के अपने ऐसे निजी और बोधनीय परामर्शदाता होते हैं जिनके अपने व्यक्तिगत राजनीतिक सम्पर्क होते हैं। इस प्रवृत्ति का एक परिणाम यह होता है कि सम्राट विभिन्न मंत्रियों के बीच घेर जाव करने लगते हैं। यह निश्चय है कि सम्राट की विचार-विद्या का ज्ञान मनि-मंडल के विशेषकर उम मनि-मंडल के जिसकी एगता संकटापन्न हो कार्य को कठिन कर देता है। यहाँ यह अप्रासंगिक है कि सम्राट का विचार सही हो सकता है। यहाँ मुख्य विषय यह है कि जैसे ही वह अपने विचार का समर्थक एक घट पा देता है वह उस तटस्थता को विभावधि दे देता है जो उसकी स्थिति का सार है। मनि-मंडल के अन्दर पक्षयज करने के बाद विरोधी दल के साथ पक्षयज करना बुरा करम है। मैं जाने यह दिखाऊंगा कि महाराजनी विक्टोरिया यह जयम उठते नहीं हिचकिचाई थी।

सम्राट न केवल मनि-मंडल के प्रस्तावों की टीका ही कर सकते हैं, वे उसके सम्मूक्त विचार के लिए प्रसन्न भी बने कर सकते हैं। उन्हें यह भी अधिकार है कि किसी विषयक अपना सार्वजनिक आच-पडताल की योजना के पूर्व उनकी राय ले ली जाये। महाराजनी विक्टोरिया इससे भी जावे बढ़ गई थी और (विरोधी दल के नेता लॉर्ड सेल्डबरी से परामर्श करने के उपरांत) उन्होंने कहा था कि कोई भी मंत्री किसी भी बड़े प्रसन्न पर उनसे विचार-विनिमय किए बिना नहीं बोल सकता। सम्राट एडवर्ड सप्तम को भी लॉर्ड जार्ज से इस बात की सिफारिश थी कि वे लॉर्ड-सभा की बातों

बना करते हैं और स्त्री-मताधिकार के समर्थक हैं। सम्राट का समस्त विभागों का महत्त्वपूर्ण प्रवेश देखने का और उनके ऊपर टीका करने का भी अधिकार है। एडवर्ड सप्तम् ने यह किया था 'सम्राट ने मुझ यह बताने का निर्देश दिया है कि उन्हें समस्त महत्त्वपूर्ण प्रवेशों विधेयकर उन प्रवेशों को जो नीति-परिवर्तन से सम्बन्ध रखते हैं देखने का अधिकार है। इस प्रकार के विषयों पर अंतिम निर्णय उन्हें प्रवेश विभाग के उपरांत ही किया जाना चाहिए। १९१९ में यह निर्दिष्ट हुआ था कि भारत मंत्री की संयन्-स्मित इंडिया-नीति में कुछ भारतीय सदस्य भी नियुक्त किए जाय। लॉर्ड मोर्ले के संस्मरणों से हमें इस बात की अच्छी जानकारी मिलती है कि इस सम्बन्ध में एडवर्ड सप्तम् को राजी करने के लिए क्या-क्या प्रयत्न करने पड़े थे।

उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि मंत्रि-मंडल के सम्बन्ध में सम्राट की पक्षि वास्तविक है। इसका प्रयोग सम्राट तथा मंत्रि-मंडल दोनों के अर्थ पर निर्भर है। डिबरेली ने सम्राट को अपने उद्देश्य की सिद्धि का एक साधन-मान बना लिया था। कहने का धार यह है कि किसी भी स्थिति में सम्राट का प्रभाव उपेक्षणीय नहीं है। बुद्ध प्रबाल-मंत्री होने पर यह सतराफ हो सकता है मंत्रि-मंडल की स्थिति अनिश्चित होने पर यह महत्त्वपूर्ण हो सकता है और समा में दसा की स्थिति समाप्त होने पर यह दुरगामी हो सकता है। यह प्रभाव उन लोगों तक पहुँच जाता है जो सत्ताकाय एक के विद्यते हैं। यह स्वामाधिक ही है कि इसका उन लोगों के ऊपर प्रभाव पड़ता है। हम चाहे किसी दृष्टि में देखें मंत्रि-मंडल के सम्बन्ध में अधानिक सम्राट की स्थिति धरमन्त कठिन और अल्पि माग्ला है। ऐसा कि वे बागे चल कर विद्याय्या इसकी सफलता के कारण सम्राट नहीं प्रसूत मंत्री हैं।

(५)

✓ श्री रैमजे म्योर ने लिखा है 'मंत्रि-मंडल में अधाबुध अपने ऊपर एते महान् उत्तरदायित्व के लिए हैं किन्तु वह निर्बल नहीं कर पाता किन्हीं वह संयत् को नहीं उठाने देता और जो कमी पूरे नहीं किए जाते। ही घोड़े से दायित्व एने अधस्य होते हैं किन्तु मंत्रि-मंडल के सर्वप्रमुख के आचरण के पीछे नीकरपारी चल कर केनी है।' उनके विचार से ये उत्तरदायित्व अबोधित है (१) "सम्पूर्ण प्रशासनिक तन्त्र का सर्वोत्तम" (२) "विभिन्न विभागों के कार्य में सामञ्जस्य माना और विनायका के बोध दूर करना"। श्री म्योर के अनुसार इन उत्तरदायित्वों का मंत्रि-मंडल के पाम से संसद के पास हस्तांतरण संसदीय व्यवस्था के मुखाक मन्त्राज्ज के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

प्रशासनिक प्रश्नों के ऊपर मंत्रि-मंडल का निर्णय इस कारण रहता है क्वानि अधिकार मंत्री जो विभागों के प्रधान होते हैं मंत्रि-मंडल के सदस्य होते हैं और वे विभागीय मामलों के बारे में जो भी निर्णय करते हैं उनका पीछे मंत्रि-मंडल की पक्षि रहती है। वे मंत्रि-मंडल के सामन ऐसा कोई भी प्रदन का सकते हैं जो उन के विचार से उसकी स्वीकृति सेन कायक होता है। उनसे यह आशा की जाती है कि वे मंत्रि-मंडल के सामने ऐसा कोई प्रदन अधस्य कार्यमें जिसमें नीति-विषयक

अन्यथा ही रीयजे मैकडॉगल्ड थे। इस निकाय का समापति प्रमाण-मंत्री था। उनके सरस्य भी निश्चित होते थे तथा उन्हें प्रमाण-मंत्री चुनता था। इसका एक छोटा लेकिन स्थायी सचिवालय भी था। इसके सरस्यों में सर जोसिया स्टाम्प सर वास्टर सिट्टाइन तथा श्री बैकिन जैसे प्रसिद्ध व्यापारी एवं प्राबेसर पीमाओ तथा श्री जी डी एच कौल जैसे अर्थशास्त्री भी थे। यह दो तरह से कार्य करती थी। कुछ समस्याएँ तो पूरी समिति के पास तथा कुछ उसकी उप-समितियों के पास भेजी जाती थीं। इन उप-समितियों के सरस्य विशेषज्ञ होते थे। इस समिति ने कई प्रतिवेदन प्रस्तुत किए तथा इनकी उप-समितियों का कुछ कार्य उनके दमों का बतारा जाता है। १९३१ के पश्चात् इसका प्रयोग बहुत कम होना लगा तथा ऐसा नहीं मान्य पड़ता कि हाल के वर्षों में इसका पुनरुत्थान की कोई शक्यता की गई हो।

मेरे विचार से यह स्पष्ट है कि आर्थिक परामर्शीय परिषद् श्री मैकडॉगल्ड के प्रयोजनों की सिद्धि के लिए उपयुक्त नहीं थी। एक मिले-जुले बड़े निकाय से यह मांगा जाता कि वह उन विद्यालय-साधारण प्रश्नों के ऊपर जिनके मूलाधारों तक के बारे में वह सहमत न हो कोई सर्वसम्मत निष्कर्ष निकाल सकेगा व्यर्थ ही था। अतएव इस प्रकार के एक साधारण परामर्शीय निकाय को जिसका अपनी छात्रों के लिए कोई प्रशासनिक उत्तरदायित्व नहीं था उस सिविल सर्विस के ऊपर रखना जो कई विभागों में पहले से ही अपना द्विगुणित कार्य कर रही थी एक बूझ थी। न तो परिषद् और उसकी समितियों में ही और न परिषद् एक विभागों में ही कमी बनिष्ट सम्बन्ध स्थापित हुआ। वास्तव में यह एक ऐसे स्थायी राजकीय भागीय की तरह थी जिसके सदस्य सब तरह के लोग थे और इसलिए जो किन्हीं भी आचारभूत मामलों पर सहमत नहीं हो सकते थे। पुनरुत्थान जब कभी उसे रिपोर्ट देनी होती थी वह ऐसा परामर्श देती थी जिसके लिए आश्चर्य था कि मन्त्रि-मंडल के सम्मुख उपस्थित किए जाने के पूर्व उसका विभागों में प्रशासनिक दृष्टि से परीक्षण हो। यह सरसनात्मक सुझाव जैसी समस्या की छान-बीन के लिए जो १९३१ में महत्वपूर्ण हो गई थी एक आदर्श निकाय थी। यह स्पष्ट कि मन्त्रि-मंडल ने यह समस्या परिषद् के सामने नहीं रखी इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि उठने हमारी प्रशासनिक पद्धति में कमी महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त नहीं किया।

हाल में सर बिक्लिम बैररिज ने इस समस्या का एक 'आर्थिक सामान्य कर्मचारी मंडल' (Economic General Staff) के उपाय प्राप्त मूलकामों का प्रयास किया है। इस उपाय को मूल्य भी एक ही हैडरसन ने सामने रखा था। यह कहा जाता है कि जित प्रकार सामान्य कर्मचारी-मंडल (Imperial General Staff) ब्रिटेन के सैन्य की समस्याओं का घातिकात्मक में समाधान करता है वही प्रकार हमें अर्थशास्त्रियों के एक ऐसे निकाय की आवश्यकता है जो सरकार के लिए उन बड़ी समस्याओं का समाधान कर सके जिनका समाधान करने लिए न तो मन्त्रि-मंडल के पास ही और न विभागीय अधिकारियों के पास ही समय होता है। ऐसा मान्य पड़ता है कि आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल स्थायी अधिकारियों का एक ऐसा निकाय

हैं जिसके विभागीय कर्तव्य नहीं हैं। कृहन का अभिप्राय यह है कि वह समझे समय के लिए नियोजन और भवेयमा करने के लिए स्वतंत्र है। यह ठीक है कि वह एक परामर्शीय निकाय है लेकिन उसके पास इस बात का पर्याप्त अधिकार रहेगा कि वह अपनी खोजों के प्रति सरकार का ध्यान आकृष्ट कर सके। इस प्रकार हमें यह मान लेना है कि सरकार उन सब विद्यालय औद्योगिक परिवर्तनों जराहुरणार्थ जन्मार्थ (Birth rate) की गिरावट से उत्पन्न समस्याओं से परिचित हो जायेगी। इस समय न तो सरकार ही और न उसके परामर्शदाता ही इस प्रकार की समस्याओं की ओर पर्याप्त ध्यान दे पाते हैं।

ऊपर से देखने पर तो यह चीज आकर्षक मालूम पड़ती है लेकिन यह कठिनाता से ही कहा जा सकता है कि उसका प्रवर्तक न अत्यंत प्रशासनिक समस्याओं के बारे में गम्भीरतापूर्वक विचार किया है। क्या इस बात का निश्चय आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल को करना है कि वह कितने प्रश्नों के बारे में छान-बीन करेगा या उसे उन प्रश्नों पर विचार करना है जो मंत्रिमंडल उसके पास भेजेगा। शोनी ही स्थितिना में यह स्पष्ट है कि उसकी खोजों का मुख्य इस बात पर निर्भर रहेगा कि मंत्रि-मंडल उनकी व्यावहारिकता के सम्बन्ध में क्या दृष्टिकोण रखता है। यह कुछ तो मंत्रि-मंडल की तात्कालिक आवश्यकता और कुछ सत्तास्वरूप सरकार के राजनीतिक पठन पर निर्भर है। जब विभिन्न विभाग इस बात का परीक्षण करते हैं कि इन खोजों का स्वयं उनके ऊपर क्या प्रभाव पड़ सकता है तो उनकी व्यावहारिकता के सम्बन्ध में ज्ञान हो सकता है। जराहुरणार्थ जन्मार्थ के पठन का एक दृष्टि से तो यह अभिप्राय हो सकता है कि कम विद्यालयों और कम अध्यापकों से काम चल सकता है। एक अन्य दृष्टि में इसका अभिप्राय यह हो सकता है कि यदि प्रत्येक कक्षा में कम विद्यार्थी रहें, तो अध्यापकों की वर्तमान संख्या को बनाए रखने से काम चल सकता है। इसका अर्थ यह हुआ कि आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल की खोजों के सम्बन्ध में निर्भर उन विदेशी और सामाजिक विचारों के ऊपर आधारित होने चाहियें जिनके सम्बन्ध में आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल की राय बहुत कुछ अप्रसन्न हो। सब तो यह है कि इस प्रकार की सामान्य खोजें स्थिति संबंधित के भीतर और बाहर, राज्य के बिना किसी अर्द्ध-विभाग की व्यक्ति के अर्थ प्राप्त करने के लिए ही कर रहे हैं। हमारी समस्या आज के नए अनुसंधान की गती प्रस्तुत हम नए ज्ञान को सरकारी कार्य के लिए उचित रूप देने की है।

यह समझना कठिन है कि सर निरुद्धम बेबरिज ने इन प्रश्नों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने की चेष्टा की है। उनकी योजना में यह नहीं कहा जाता कि आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल न उपयुक्त सरकारी विभागों के साथ संबंध स्थापन करे। वह जो भी विचारों को उचित जगहों पर भी विचार अत्यंत ही होय और यह समझना कठिन है कि उनकी विचारों राजकीय आयोग की विचारों से किस प्रकार अधिक उपयोगी हो सकती है। न ये ही समय में नहीं जाना है कि आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल को अपनी खोजों के प्रति ध्यान आकृष्ट

करने का अधिकार किस प्रकार मिल सकता है। यदि वह एक सामान्य सरकारी विभाग है तो उसे मंत्री के प्रति जो विधान का प्रधान होता है, परामर्शीय ही होना चाहिए। वह उसे अपने विचारों पर कार्य करने के लिए उसी प्रकार विवश नहीं कर सकता जिस प्रकार कि अधिकारियों का कोई विभाग मंत्री को ऐसा करने के लिए विवश नहीं कर सकता। उसके सदस्यों की स्थिति ऐसी ही यह बात विभिन्न सर्जिस की निष्पक्षता के विचार के प्रतिबल पड़ती है। यदि वह "स्टेट्यूटरी अल्यूमिनेट्स कमेटी" जैसी एक संस्था होती है जिसकी स्थिति अर्द्ध-स्वतंत्र हो तथा जिसे अपनी खोजों को प्रकाशित करने का अधिकार हो तो वह स्पष्ट है कि अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करने की उसकी शक्ति कुछ तो सार्वजनिक समर्थन पर तथा कुछ सत्ताशुद्ध बल के विचारों की साम्यता के ऊपर निर्भर रहेगी। उदाहरणार्थ आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल १९२५-२६ के समुच्चय कमीशन की मांति कोयला-उद्योग के पुनर्व्यवस्था के लिए अच्छे मुसाब दे सकता है। वह चाहे जिसकी अच्छी रिपोर्ट दे इस बात की पारखी न तो है और न हो ही सकती है कि वर्तमान सरकार उसकी खोजों स्वीकार कर लेगी। यदि आर्थिक विशेषज्ञ किसी बात पर सर्वसम्मत हों तो उनकी बोझी तक इस बात की अधिकारी नहीं हो जाती कि राज्य की प्रमुख-शक्ति उसके हाथों में सीप सी जाये।

सचार्थ यह है कि "आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल" (Economic General Staff) की "साम्राज्यिक सामान्य कर्मचारी-मंडल" (Imperial General Staff) से तुलना नहीं की जा सकती। दूररे विचार तथा प्रशासन के सम्बन्ध में उसकी धारणा विस्तृत पकड़ है। साम्राज्यिक सामान्य कर्मचारी-मंडल अथवा "साम्राज्यिक प्रतिरक्षा-समिति" (Imperial Defence Committee) के सामने कुछ निश्चित और मर्याद समस्याएँ होती हैं। उन्हें यह बता दिया जाता है कि हमारे विदेश नीति के ये-ये उद्देश्य हैं, उनकी पूर्ति के लिए हमें इतने प्रतिरक्षा-बलों की आवश्यकता है जिससे यदि कभी उनके विरुद्ध शक्तियों का पठर्नपन हो तो उनकी रक्षा की जा सके तथा इन प्रतिरक्षा-बलों को सर्जिसों की विभिन्न शाखाओं के बीच किस प्रकार सर्वोत्तम रीति से बाटा जा सकता है। युद्ध की समस्या के बारे में महत्त्वपूर्ण बात यह है कि विदेश-नीति के उद्देश्य सेना के संयोजन और आकार आदि को निश्चित कर देते हैं। नौसैनिक विरोध साम्राज्यिक संचरणों तथा नौसेना के लिए आवश्यक अस्त्रास्त्रों के संचारण से सम्बन्ध में निष्कर्ष निकालते हैं। निश्चित आकार के भीतर ही भीतर व प्रत्येक प्रकार के बहाजों की सन्धा के बारे में जो बाधित पक्ष प्राप्त कर सके सिपायियों करते हैं। सेना तथा वायु-बल के सम्बन्ध में भी यही सत्य है। वस्तुतः यह असम्भव नहीं है कि सामान्य कर्मचारी-मंडल ने विरोध अपनी सिपायियों के आर्थिक निष्पक्षों के अनुमान में अधिकपत्र होते हैं। यह एक ऐसा प्रश्न है जो उनके प्रयत्न के बारे में रोचक प्रश्न सके कर देता है। इस सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि यदि उनकी सिपायियों सर्वसम्मत भी हो—और जो दुर्लभ है—तो भी मंत्रि-मंडल को एक ओर उनके ध्येय का मूल्यांकन करना पड़ता है और दूसरी ओर उनके सामा-

विक्रम व आर्थिक परिणामों पर विचार करना पड़ता है। जब तक मंत्रि-मंडल चलके बारे में कुछ निश्चित नहीं कर लेता वे सिपायियों ही रहती हैं। यदि ऐसा न हो तो मेना देव की उसी प्रकार नियता हो जाये जैसी कि वह जापान और जर्मनी में है।

स्पष्टतः इस प्रकार के काम में और घर चिकित्सक वैदरिज द्वारा प्रतिपादित आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल के कार्य में बहुत कम समानता है। आर्थिक सामान्य कर्मचारी मंडल का कार्य उन प्रश्नों के बारे में जिनका व्यापक परीक्षण यदि उन्हें कार्यान्वित करना है तो विभाग करते हैं कुछ प्रारम्भिक बातें तय करता है। यदि प्रस्तावित सामान्य कर्मचारी-मंडल विस्तृत परीक्षण का प्रयास करेगा तो उस या ता बहुत से कर्मचारियों की आवश्यकता होगी या उसे विभिन्न विभागों के मूल्यवादी-उपविभागा के ऊपर निर्भर रहना पड़ना। बातों ही स्थितियों में परिणाम सचय तथा कार्य का बनावस्यक विगुणन होगा। सर चिकित्सक वैदरिज के मन में जिस प्रकार की गहरेपना है, निम्नतः वह बहुत ऊंची कोटि की है। लेकिन वह उस प्रकार की निश्चितता नहीं है जैसी कि साम्प्रदायिक प्रतिरक्षा कर्मचारी-मंडल बनना साम्प्रदायिक प्रतिरक्षा-नियमि द्वारा की जाती है। वह मूर्त नहीं है वह निश्चित नहीं है वह नीति के निर्माण के लिए भूमिका-याम है। इसके विचार उत्तरदायित्व से विहीन होकर मूल्य में बनन है क्योंकि कर्म उन व्यक्तियों के कार्य को जिन्हें नियम करने होने के प्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट कर देता है। उसकी मूल्य यह है कि वह सरकारी अनुसंधान की विगुणन बौद्धिक उत्कृष्ट-विक्रम मान लेती है। पहले कार्य के महत्व पर बल देने की आवश्यकता नहीं है। उदाहरणार्थ तिवरपूक विरभविद्यालय ने गर्डीसाइड सम्बन्धी अपनी रिपोर्ट में लंदन स्कूल ऑफ इकोनॉमिक्स एंड पोलिटिक्स छाईस ने लंदन के जीवन तथा काम-सम्बन्धी अपन सर्वेक्षण में तथा मैनचेस्टर विरभविद्यालय ने बालकों के काम-सम्बन्धी परीक्षण में जो कार्य किया है वह सर्वोच्च महत्व का है और जिनका ही अधिक यह किया जायेगा उनका ही विस्तृत उस मान का आधार होगा जिसके ऊपर नीति निमित्त होती है। लेकिन इस सारे काम का सार यह है कि वह नीति की भूमिका है स्वयं नीति नहीं। ऐसी रिपोर्टों को पाने वाली सरकार के पास इस प्रकार की सामग्री रहनी है जिनके आधार पर कि कार्य किया जा सके। उसे इन सामग्रियों की ऐसी अन्य सहायिक बातों में भी संगति बँधानी पड़ती है जिन पर बौद्धिक धोषक विचार नहीं करते हैं क्योंकि उन्हें ऐसा करने की आवश्यकता ही नहीं है। लेकिन ये बातें ही सरकारी नीति के निर्धारण में महत्वपूर्ण होती हैं।

एक छोटा सा उदाहरण इस बात को स्पष्ट कर दगा। साम्प्रदायिक सामान्य कर्मचारी-मंडल सेना की भरती में बन्दी हुए बल कर संश्लिप्त हो सकता है। वह अपनी शक्ति व्ययक्त माध्यमा से मंत्रि-मंडल के सामन व्यक्त करता है और व्यक्तियों की भरती बढ़ाने के सचय उपाया पर प्रभाव डालता है। वह अनिर्धार्य भरती का मुद्दाव दे सकता है वह गैरकर्मियों के लिए सेवा की भरती भरती का मुद्दाव दे सकता है वह प्रारंभिक काम में अनिर्धार्य भरती का मुद्दाव दे सकता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इन समस्त मुद्दावों के बारे में मंत्रि-मंडल के लिए वह विचार करना रह जाना है

कि इन मुद्दों को न्यायनियत करण के सामाजिक राजनीतिक और मनोवैज्ञानिक परिणाम क्या होंगे। यदि-मदम का कार्य केवल यह नहीं है कि वह विरोधों की कोई रिपोर्ट ले ले और उस पर कुरल्ल ही या न कर दे। पहले तो उसे उन बातों के बारे में जिनके ऊपर निष्कर्ष निगम होते हैं कुछ विवरण कल्ला होता है फिर उसे उनके परिणामों पर अपनी राजनीतिक नीति के प्रकाश में विचार करना होता है और तदनुसार बड़ी तक उससे हो सकता है उसे इस बात का निश्चय करना होता है कि प्रस्तावित निष्कर्षों द्वारा इस प्रकार निमित्त उसकी नीति का मोक्षमत्त के ऊपर क्या प्रभाव पड़ेगा। पुनश्च यह भी हो सकता है कि सनी विधायकों की राय एक ही न हो। श्री बी ए स्पेन्से ने लिखा है "युद्ध के दौरान में मॉन्टेग्यू के मामले यह बठिनाई रहती थी कि वे विभिन्न विरोधी और प्रतिद्वन्द्वी सैनिक योजनाओं के बीच में किसको स्वीकार करें और स्वीकृत योजना का निम्न-राष्ट्रों की नीति के साथ किस प्रकार सामंजस्य स्थापित करें। प्रत्येक सैनिक योजना के पीछे उच्च कोटि की विशेषज्ञ-सलाह रहती थी। यदि-मदम में चाहे जिस प्रकार के परिवर्तन हो यह नहीं माना जा सकता था कि वे सक्रिय और प्रबुद्ध व्यक्ति जो परिणामों का उत्तरदायित्व स्वीकार करते हैं, उसमें के बर्तक-भाव ही रहेंगे या अपने कुछ विचारों को व्यक्त करने में रह जायेंगे।

नहने का सार यह है कि सर विनियम बैरिडज बक को इस प्रसिद्ध उक्ति का महत्व धूल यह है "राजनीति की आदर्श-रेखाएँ यथित की माध्यम देखाया की भाँति नहीं होती। वे सम्झी होम के साथ साथ चोरी और सधुरी भी होती हैं। फलतः उनसे विचार तथा प्रशासन के सम्बन्ध को समझने में तकली हो गई है। राजनीति के अन्त में ऐसे कोई तत्त्व नहीं होते जो निश्चिततः किन्ही बटल निष्कर्षों की ओर संकेत करते हों। उनमें सर्वत्र ही ऐसे 'यदि और परन्तु' अवश्य रहते हैं जिनकी बाहुर से पूर्ण करनी होती है ताकि उनका मूल्यांकन हो सके। आर्थिक सामान्य कर्मचारी महत्त्व उसी सीमा तक मूल्यांकन हो सकता है जिस सीमा तक कि वह इस प्रकार के 'यदि और परन्तु' का मुन्धार कम से विवेचन और मूल्यांकन करे। केवल वह यह मुन्धार कम से तमी कर सकता है जब कि उनमें ऐसे व्यक्ति हो जो कि इस विवेचन और मूल्यांकन के लिए उत्तरदायी हों। फलतः उनमें उन संश्लेषों तथा विषयों की प्रभावों को रजना पड़ेगा जो प्राप्त होने वाले तथ्यों के आधार पर निर्णय करें। जिस प्रकार युद्ध में राजनीति के सिद्धान्तों को उन हृदयों से निरन्त नहीं किया जा सकता जो उन्हें बल देते हैं ठीक इसी प्रकार शासन के प्रक्रम में विचार को कर्म के उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं किया जा सकता।

आर्थिक सामान्य कर्मचारी-संज्ञन की बहना के मूल में न्यायमूर्ति होम के अनुमान "जो प्रबुद्ध व्यक्ति विचार" है। सर विनियम बैरिडज ने "न दोनों में से किसी का भी ठीक से परीक्षण नहीं किया है। पहला विचार जो यह है कि ऐसा कुछ विशेष ज्ञान है जिसे राजनीतिक उपयोग के लिए प्राप्त होना चाहिए। दूसरा विचार यह है कि राजनीतिक इस विशेष ज्ञान का महत्व उस समय तक नहीं समझ

सकता जब तक कि उसका अर्थ एक विद्युत प्रकार के सोचक द्वारा उसके सामने इस प्रकार स्पष्ट न किया जाये जिससे कि वह उसके निष्कर्षों को टाल न सके। सर विलियम डेवरेज की दृष्टि में वह सोचक ऐसे वस्तुपरक सत्य या सैदा है जिनकी सैदा पदों के ज्ञान की साम्यता के आधर में कर्म के लिए बाध्य करती है। इनमें से कोई भी विचार सविद्य अर्थ-सत्तों से अधिक नहीं है। सामाजिक ज्ञान का ज्ञान प्राकृतिक ज्ञान के ज्ञान से विस्तृत मिल्न होता है। उदाहरणार्थ जलसक्या सम्बन्धी नीति के निर्धारण में हम जिन बातों का ध्यान रखते हैं वे उन सिद्धांतों से मिल्न होती है जो पुरु के भोसाधी सहाय के गररर के सम्बन्ध में प्रयुक्त होते है। सामाजिक ज्ञान के क्षेत्र में विशेषज्ञता हमें बहुत दूर तक नहीं ले जाती। उसका अर्थ तो विशेषज्ञता की प्राप्ति की अपेक्षा हृदय और मस्तिष्क के उस पुन द्वारा कही अधिक समझा जाता है जिसे में विवेक कहता है। कही कारण है कि कई हास्टेन एक महान् मन्त्र-मन्त्री से और कई क्रिचनर नहीं थे। कई हास्टेन में विवेक का अनिर्वचनीय गुण था। कई क्रिचनर इससे बचित थे। सामाजिक ज्ञान के वस्तु परक सत्य भी नीति के निर्धारण में हमारी अधिक सहायता नहीं करत। ब कठ सिद्धांतों पर आधारित होते हैं और उन सिद्धांतों की सहारणीयानी में ही उनका विकास किया जाता है। उनकी सैदा उन सिद्धांतों के समान ही होती है उनसे अधिक नहीं जिसके ऊपर कि वे आधारित रहते है। जलसक्या की समस्या का सम्बन्ध यह दिखा सकता है कि यदि इन्सिडर में यही स्थिति कायम रही तो एक सामाजिक के परभाव देस की जलसक्या बाधी रह जायेगी। लेकिन यह गणना इन सम्बन्ध पर आधारित है कि वर्तमान परिस्थितियाँ कायम रहेगी। स्पष्ट है कि यह मानने का कोई कारण नहीं है कि ये परिस्थितियाँ कायम रहेगी।

यही मेरे कथन का यह अनिश्चय नहीं है कि सामाजिक नीति के परिचारा को मन्त्र-मन्त्र के सामने धाना महत्वहीन है। निश्चिततः यह महत्वपूर्ण है। जिनका ही अधिक अर्थ-मन्त्री को भी कीम्स के तबीन विचारों का या स्वास्थ्य-मन्त्री को डा कुम्बीस्की की कोमो का ज्ञान होना जतना ही अधिक वे कोय इस बात का प्रयास करेंगे कि नीति का निर्धारण उनके निष्कर्षों पर विचार कर लने के उपरान्त हो। इस स्थिति का समर्थन करना एक बात है और यह कहना कि यह प्रयोजन सर विलियम डेवरेज द्वारा प्रतिपादित सत्ता द्वारा प्राप्त किया जा सकता है, दूसरी बात है। सर विलियम डेवरेज द्वारा प्रतिपादित संस्था इसलिये अनुपयुक्त है क्योंकि वह उत्तरदायित्व को भाषना से बंचित है। यदि वह जिन समस्याओं पर विचार करना चाहे उन पर स्वतंत्रतापूर्वक निर्णय करे तो यह निश्चित है कि यदि वे समस्याएँ तात्कालिक महत्व की नहीं हुईं तो वह स्वयं को मध्य प्रयोजन से बिल्कुल कर देंगी। यदि वे समस्याएँ महत्व की हुईं तो भी वह अपनी उत्तरदायित्वहीनता के कारण पहले से ही जलजान सोप-सत्ताओं की अपेक्षा कम महत्वपूर्ण मानी जायेगी। यदि वह मन्त्र-मन्त्र द्वारा ही यही समस्याओं पर अनुसंधान करती है तो उसे नारदर होने के लिए विभागों के साथ और विभागों के बाध्य से काम करना पड़गा। उन

समय उसे पता चलेगा कि यदि वह अपनी बात को उचित ढङ्ग बिलाना चाहती है तो उसके लिए आवश्यक है कि वह विभागों के कर्मचारियों को अपने पास रखे। यह स्मर्तव्य है कि जहाँ एक बार अधिकारियों न इस प्रकार की संस्था में अपने पर अपना, वह भी अपनी एक ऐसी नीति का विकास कर लेगी जो अपने हाथों से बाहर की भिन्न दायों को धुलना तक पसंद न करे। जिस प्रकार यूरोप के देशों में ईसाईयत का अर्थ-विभाग की कार्यकालों का प्रविष्टि सांख्यिक कार्यों की बड़ी बड़ी योजनाओं के विद्यमान हैं उसी प्रकार नाबिक सामान्य कर्मचारी-मण्डल यदि वह सरकारी विभाग की प्रति प्रतिष्ठित किया गया स्वयं अपने "बाह" विकसित कर लेगा तथा उन दूसरे "बाह" के विद्यमान हो जायगा जो उसके अपने दृष्टिकोण से भिन्न होंगे। इस दृष्टि से विगत मण्डल उसका कर्मचारी-मण्डल होगा उसकी ही अधिक कठिनाई वह उन नूतन विचारों के लिए खड़ी कर देगी जो मणि-मण्डल के पास पहुँचने चाहिए क्योंकि नए सिद्धान्तों का समर्थन करने के लिए अपने प्राधिकार का प्रयोग करने का उसका प्रयोजन अधिक होगा। दूसरी ओर, यदि वह अपने विचारों को मणि-मण्डल के सामने रखने के लिए स्वतन्त्र नहीं होती तो उसकी स्थिति वैसी ही हो जायेगी जैसी कि प्रतिरक्षा-मन्त्रालय में है जहाँ मणि-मण्डल को विशेषज्ञों के विरोधी विचारों के बीच चुनना करना होता है। स्पष्ट है कि वह कोई नवीनता नहीं होगी। लेकिन यह समझना कठिन है कि इसके परिणाम कहीं होंगे जो कि नाबिक सामान्य कर्मचारी-मण्डल के समर्थकों के मन में ह।

सुचारु यह है कि विचारों का नीति से सम्बन्ध उलट कहीं भिन्न और अधिक उचित है जैसा कि सर विलियम बैचरिज न समझा मानना पड़ता है। सामाजिक राज नीति के क्षेत्र में नए सिद्धान्त उस प्रकार सफल नहीं होते जिस प्रकार वे प्राकृतिक विचारों के क्षेत्र में होते हैं। उदाहरणार्थ यदि भी आईस्टीन कोई खोज करते हैं तो उसका अपना सामाजिक महत्त्व ही कुछ ऐसा होता है कि अत्याम्य नीतिक शास्त्री उस पर विचार करने के लिए तुरन्त तन्पर हो जाते हैं। वी एम् स्मिथ की किसी पुस्तक या वी वीन्स के बकिंगहाम्पी सिद्धान्त की बात दूसरी है। उसे राजनीतिक महत्त्व प्राप्त करने के पूर्व एक निम्न दुनिया से होकर गुजरना पड़ता है। आईस्टीन के सिद्धान्त की बात भी अन्तर्गत के व्यवहार को समझने का एक प्रयास है लेकिन आईस्टीन के सिद्धान्त के प्रतिफल सरकार द्वारा उसकी स्वीकरोक्ति के लिए यह आवश्यक है कि सरकार उसने अपनी नीति को अनुकूल परिवर्तन कर सके। इस प्रकार के विचारों को स्वीकार करते समय बिल भागों का ध्यान रखा जाता है वे उन बातों से भिन्न होती हैं जो प्राकृतिक विज्ञान के क्षेत्र में लागू होती हैं। संसदीय पद्धति में सरकार ऐसी सामाजिक नहीं होती या अपने विचारों को अन्तर्गत की ओर रचना भी ध्यान दिए बिना कार्यान्वित करने के लिए तन्पर हो जाये। उसे अपने प्रस्तावों को कार्यान्वित करने के लिए समर्थन प्राप्त करना पड़ता है। उसे यह समझना पड़ता है कि यदि उसे वह समर्थन प्राप्त करना है तो उसे अपने बल की जायजा को पूरा करना पड़ेगा। उसके लिए महत्त्वपूर्ण मामलों के सम्बन्ध में यह कहना कि बल की जायजा पूरी नहीं होगी

बड़ी कठिन बात है। सरकार के सामने वो ही विकल्प रहते हैं। या तो वह अपने समर्थकों को अपने विचारों के अनुकूल बनाए या वह अन्तर्गत समस्या को त्याग दे। यदि समस्या टालकात्मिक महत्व की है तो उसके विवेचन से विरोधियों को यह बाधा करने का अवसर मिल जायेगा कि सरकार का इस समस्या के समाधान में असफल होना इस बात का प्रमाण है कि सरकार अपने पद के अनयोग्य है। इस बाध के फलस्वरूप ऐसा सार्वजनिक विचार-विमर्श उठ खड़ा होगा जो विचार प्रसन्न मन को इन महत्व का बना देना बहुत विचार नीति का रूप धारण कर लेता है। सामाजिक संघर्ष के समस्त महत्वपूर्ण परिवर्तनों के सम्बन्ध में चाहे वे सुस्त या अन्तर्गत औद्योगिक नियमन या मर्म-निरोध की समस्याओं से सम्बन्ध रखते हों यही हुआ है। उनका अवसरम विषय प्रकार का विचार-मंडल उत्पन्न कर देता है वह ऐसा होना चाहिए जो सरकार के ऊपर इसके पुन कि वह उनकी बहुत वास्तविकता के बारे में विविधम वेम्ब के अनुसार "धीरे धीरे" रक्त, निर्धम की आवश्यकता आरोपित कर दें।

यह स्मरण रखना सबसे अधिक आवश्यक है कि सामाजिक नीति का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं है जिसमें विधेयकों के पास ऐसे कुछ नीपनीय तत्व हों जिन्हें राजनीतिक न समझ पाते हों या यदि समझ भी पाते हों तो शक्यत हितों की आवश्यकताओं के कारण बाध देते हों। अधिकार्थ विधेयकों का विचार है कि उनके पास हमारे सामाजिक रोगों के ऐसे उपचार होते हैं जिन्हें सामाजिक उत्थार ठीक से नहीं समझ पाती। उनमें से अधिकार्थ यह सोचते हैं कि यदि वे उन्हें महि-मंडल की दृष्टि में का सक या यदि वे स्वयं ही मंत्री होकर उनका उपयोग कर सकें तो संसार की रक्षा काफी सुकर जाये। अतुन- ऐसा कोई नीपनीय तत्व नहीं है और वह विधेयकों जो इस बात का बाध करता है कि सरकार को "विचार" की सहायता की आवश्यकता है सामान्यत यह मानता है कि राजनीतिक विचारों को उतना महत्व नहीं देते जितना कि वह उन्हें देना है। लेकिन वहाँ वह वह निर्धम करता है, वह विधेयकों नहीं रहना। उस समय वह विचारों के मुख्य का एक अनुक्रम तय्यार करने लगता है तथा यह एक ऐसा मामला है जिसमें विधेयकों नहीं प्रत्युत विवेक अधिक काम जाना है। हमारे उस शीघ्र ध्यान का यह मुख्य तत्व है कि विचारों के मुख्य के इस अनुक्रम का उत्तरदायित्व महि-मंडल के पास रहे। इसका विरुद्ध हम धारण-व्यवस्था को नष्ट कर देना क्योंकि वह धर्मोपस्था कार्य का उत्तरदायित्व उस स्वतः पर रख देना वहाँ से वह संघर्ष तथा निर्वाचक-मध्यक द्वारा निर्धारित न हो सकेगा। इसका अन्तिम परिणाम अधिनायकता होता है चाहे वह जितना ही प्रबुद्ध क्यों न हो। क्योंकि उसका आधार यह धारणा है कि लोगनत चाहे कुछ भी हो उसे जमनी भलाई के लिए विधेयकों के नियम को स्वीकार करना चाहिए। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस विचार के बध में बहुत कुछ कहा जा सकता है लेकिन यह विचार उन परम्पराओं के प्रतिकूल है जिनके ऊपर इस देश की धारण-व्यवस्था निर्भर है।

1) येरा अपना विचार है कि महि-मंडल-के संवाकन-की इन आलोचनाओं में जो

बुद्ध सत्याय है उसे इन विकल्पों में से किसी को अपेक्षा जिनका हम परीक्षण कर चुके हैं "कमेटी ऑन सिविल रिसर्च" जैसी किसी बुद्धि द्वारा अधिक आसानी से ठीक किया जा सकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रकार के प्रयोग का मुख्य प्रमाण मंत्री की इच्छा तथा शक्ति के ऊपर निर्भर है। लेकिन यह बात अन्य दोनों प्रयोगों के ऊपर भी तो लागू होती है। उसके समिति के सभापति होने से इस बात का आश्वासन गढ़ता है कि यदि वह समिति की जाँच से प्रभावित हो जाये तो मंत्रि-मंडल उनके परिणाम पर उचित रीति से विचार कर ल्या। प्रधान-मंत्री के सभापतित्व से ही महत्त्वपूर्ण बातों की पारटो रहती है। पहली बात तो यह है कि समिति साक्षात् जम्ही समस्याओं पर विचार करती है जिनका नीति से सीधा सम्बन्ध होता है। दूसरी बात यह है कि बाहर के विद्वानों को अथवा जिन लोगों को मंत्रालय के लिए आमंत्रित किया जाता है वे ही अपने मंत्रियों की अधीनता में रहते हुए समिति के निष्कर्षों को कार्यान्वित करने के लिए उत्तरदायी होते हैं। १९२९ में लार्ड बैस्विकिन न जो प्रस्ताव उपस्थित किया था वह प्रशासनिक दृष्टि से अब तक प्रस्तुत किए गए अन्य समस्त प्रस्तावों से अच्छा था। लार्ड बैस्विकिन द्वारा प्रस्तावित समिति ऐसे किसी संकट से मुक्त होगी जो श्री मैकडोनाल्ड की आर्थिक परामर्शीय समिति (Economic Advisory Council) के अन्दर है तथा उसके लिए बातक है। इसका कारण यह है कि यह परिपक्व तो एक ऐसा प्रकीर्ण या निकाम है जो सीधी गवेषणा करने में असमर्थ है तथा यदि वह गवेषणा कर भी ले तो उसकी रचना कुछ ऐसी है कि वह उस गवेषणा के मुस्यमान के बारे में किसी समझौते पर नहीं पहुँच सकती। वह आर्थिक सामान्य कर्मचारी-मंडल की बुद्धिमत्ता से भी बची रहेगी क्योंकि वह गवेषणा तथा प्रयासन को एक बूझते से बिलय नहीं रखेगी। जिन माध्यमों से उसके परिणाम मंत्रि-मंडल का पाठ पहुँचेंगे वे माध्यम ऐसे हैं जो उनके उत्तर को उचित महत्त्व दे सकते हैं।

इस सम्बन्ध में एक बात कहनी और आवश्यक है। इस प्रकार की संस्था अपना काम उस समय तक ठीक से नहीं कर सकती जब तक कि सरकार विभागों के भीतर और बाहर गवेषणा के प्रति तनिक उदार दृष्टिकोण न रखे। आधुनिक इतिहास में सरकार का दृष्टिकोण ऐसा नहीं है। यह स्पष्ट है कि बहुत-सा महत्त्वपूर्ण कार्य विशेष कर आकड़े एकत्रित करने का कार्य उन विधियों से नहीं हो सकता जो कि सामाजिक परीक्षण के लिए वर्तमान समय में उपयुक्त है। उदाहरणार्थ ज्ञात हुआ है कि सरकार की जीवन-मूल्य योजना विष्कुक पुरानी पड़ गई थी फिर भी उसका संशोधन करने के निरन्धय में एक पीढी लग गई। हमें इस क्षेत्र में "जीविकीय अनुसंधान-परिषद्" (Council of Medical Research) जैसी संस्था की आवश्यकता है जो ऐसी गवेषणा-संस्थाओं को जो इस समय अर्थात्मा के कारण बड़ी-बड़ी योजनाओं को विशेष कर "अधन के सर्वेक्षण" जैसी योजनाओं को जिनमें कोई अकेला व्यक्ति पूरा नहीं कर सकता अपने हाथ में नहीं ले सकती प्रतिबर्ध विस्तृत अनुदान दे। यदि ऐसी समिति की प्रतिबन्ध पाँच लाख पाठक का अनदान मिल जाये और वह "कमेटी ऑन सिविल रिसर्च" के सहयोग से पाँच या दस वर्ष कार्यक्रम का अनुसंधान योजनाकृत गवेषणा करे, तो इस

बात में कोई सन्देह नहीं है कि वह अत्यन्त महत्वपूर्ण एक प्राप्ति कर देगी तथा सरकार का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ होगी। आबास जनसंख्या अधिकता के प्रतिफल और इति के पुनर्स्थापित धारि की बहुतायती समस्यार्थ ऐसी है जिनके बारे में हमें बहुत कम ज्ञान है और जिनके बारे में अभी हमें और अधिक जानने की आवश्यकता है। इसीसे अबहोला का पारण यह है कि यद्यपि अन्य क्षेत्रों में राज्य का हमारे ऊपर हस्तक्षेप दिन प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है यद्यपि वा के क्षेत्र में अभी तक हम 'व्यवस्थापनीय' (Laissez faire) के पुराण हैं। हम समझते हैं कि व्यवस्था तो कुछ ऐसे शौकिया लोगों का काम है जो अनासक्त भाव से ज्ञान के अनुसंधान में रत होंगे। हम जैसे राज्य के कार्यक्षेत्र का एक अधिकृत अंग नहीं मानते। कुछ अर्थ तक यह भी सही है कि हमारे शोधकों में बड़ी अद्यतनता और अल्पवस्था फेरी हुई है। आज हमें इस भावना का अभाव दिखाई देता है कि यदि ज्ञान को कारगर बनाना है तो उसे सामाजिक प्रयोजनों के साथ समुक्त करना आवश्यक है। इन दृष्टिकोण का सर्वसंगत उदाहरण यह तथ्य है कि हमारी कानूनी संस्थाओं के पारने में ऐसा कोई नियंत्रण नहीं है जिसका कार्य कानून के संचालन के परिणामों पर तथा इन परिणामों के सम्बन्ध में उससे सुधार पर समीक्षापूर्वक विचार करना हो। इतना ही जैसा देश में सामान्य जनसंख्या-साक्षर और अक्षर-साक्षर का अभाव इन बात का अच्छी तरह से सूचित है कि हमारी आवश्यकताओं तथा उनकी पूर्ति के साधनों के बीच कितनी बड़ी सामाजिक खाई है। अब तक हम इन प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रयास नहीं करते जो कि विध्यात्मक राज्य के सिद्धांत में बंभित हैं मंत्रिमंडल प्रस्तुत समस्याओं का संकल्पपूर्वक समाधान नहीं कर सकता।

(१)

श्री रैमसे स्टोर ने मंत्रि-मंडल की जो मर्तना की है, उसके दूसरे अंग में यह कहा गया है कि मंत्रि-मंडल विभागीय समन्वय स्थापित करने में तथा "विभागीय कार्य के क्षेत्र" को दूर करने में अत्यन्त है। वास्तव में यह एक आम योद्धा है। हमें बताया जाता है कि अब मंत्री अपने विभागों में जाते हैं उन्हें उनके बारे में बहुत कम ज्ञान होता है। वे औरजनपर-सेवकों (civil servants) द्वारा माहित होते हैं और उनके हाथों में लिखित बन जाते हैं। अत्यन्त नीति की मोटी बप-देखाओं के नीतर नहीं बड़ी करते हैं जो कि अधिकारी अपने करने के लिए कहते हैं। मंत्री अपने विभाग में केवल कुछ ही बपों तक रहता है। वह अधिकृत होता है जब कि अधिकारी अपने अपने लक्ष में पारण होते हैं। मंत्री इस बात के लिए जो उत्सुक होता है कि वह पत्रिका न करे और यदि वह पत्रिका से बचना चाहता है तो उसके लिए अधिकारियों पर निर्भर होना आवश्यक हो जाता है। इसका परिणाम अधिकार में यह होता है कि जिस नीति को वह स्वीकार करता है वह वास्तव में उनकी नीति होती है। सभी मंत्रि-मंत्रि अर्थ-विभाग के दृष्टिकोण से अनुमानित हो जाते हैं और मंत्री नी-नेता-मंत्री नी-नेता के विचारों को अपना लेते हैं। श्री स्टोर ने लिखा है "अधिकार विधियों में मंत्री को अपने पत्रिक और व्यापक कार्य का कोई विचार नहीं होता।"

जैसे वन अधिकारियों से निवृत्तता पड़ता है जो उद्योग नहीं अधिक योग्य होते हैं और अपना धारा समय पत्रपर भी समस्याबा के साठिपूर्व अनुशीलन में देते हैं जबकि मंत्री या तो समाज में अपना स्थान बनाम में या प्लेटफार्म पर जोसीके भाषण देने में संलग्न होता है। मंत्री के सामने एसी सहायिक जटिल समस्याएँ साते हैं जिनके बारे में वह कुछ भी नहीं जानता। वे उसके सामने अकाद्य मुश्किलों तथा तर्कों से समर्पित सुझाव रखते हैं। क्या यह स्पष्ट नहीं है कि जब तक या तो वह अपनी योग्यता के बारे में बहुत अधिक गहनपढ़ाई न करता हो या बसाधारण प्रतिभा बुद्धि और साहस का व्यक्ति न हो (और सफल राजनीतिज्ञों में ये दोनों ही कोटिका बसामाग्य होती हैं) वह सी में से नियतबदे स्थितियों में उनके विचार को स्वीकार कर लेगा तथा अंशित देखा पर हस्ताक्षर कर देगा ? संसद में प्रायः सर्वत्र ही 'रफ़्तार' की नीति की अव होती है। उसकी साठिपूर्वक उद्योग करने तथा चुपचाप कामा डाकने की शक्तिवाँ तथा समस्त तर्कों पर उसका अधिकार बसाधारण शक्ति के व्यक्ति को छोड़कर अन्य सबके लिए अप्रतिष्ठित होता है।"

सचही तौर पर यह बुद्धिकोष विचारणीय माकम पड़ता है। लेकिन इसके पूर्व कि मैं इस पर उस दृष्टि से विचार करूँ जिससे इस अन्वय का सम्बन्ध है एक बात कह देना उचित होता। श्री म्योर ने गौरवसाही शक्ति के इस संकट का जो उपचार बताया है वह यह है कि मंत्री-मंडल के ऊपर संसद् की शक्ति पुनः स्थापित की जाये। लेकिन यह विस्तृत स्पष्ट है कि यदि कॉमन-सभा का शक्तिशाही प्रवृत्त्य-प्रक्रम (selective process) ऐसे पर्याप्त व्यक्तियों को सामने नहीं लाता जो अधिकारी-वर्ग को नियंत्रण में रखने की क्षमता रखते हों (चाहे उन्हें वह उपचारिक शक्ति मिली हो) तो सभा के अंग सदस्य जिन्हें नेतृत्व के लिए नहीं चुना गया है क्योंकि वे अपना बल को वह विश्वास नहीं दिला सके हैं कि उनमें से कुछ हैं इन मुश्कों का प्रचरण नहीं करेंगे। यदि श्री रैमज म्योर की मुक्ति सच है तो इसका अभिप्राय यह ही जाता है कि या तो हम ऐसी अवस्था को पार कर नए हैं जहाँ कि कोई व्यक्ति सिविल सभित पर नियंत्रण रख सके या उस पर नियंत्रण ऐसे लोग रखें जिनमें नियंत्रण रखने के आवश्यक गुण हों। कहने का धार यह है कि या तो मंत्री-मंडल सिविल सभित के ऊपर साधोपाग नियंत्रण रखें या विस्तृत ही नियंत्रण न रखें।

हमारे सामने यह सफ़्त नहीं जायेगा क्योंकि जिस रूप में श्री रैमज म्योर ने उसे रक्खा है, वह तर्कों से बहुत दूर है। उनके कथन में कुछ सत्य अवश्य है। अधिकशय विभागों की अपनी एक नीति होती है जो बर्षों के अनुभव के उपरंत निरर्गत विकसित होती है ठीक वही प्रकार जैसे कि कलक अपनी धमी क्षमिता अपनी ताकतमिता तथा शक्तिरसक अनुकूल औपधि का निर्माण कर लेते हैं। योग्य व्यक्ति और श्री रैमज म्योर के विचार से अधिकशय अधिकारी योग्य व्यक्ति होते हैं। बर्षों तक एक विषय पर काम करते रहने के फलस्वरूप उसके अन्तरे से अच्छे संभालन के सम्बन्ध में निरर्गत अपना कुछ विचार बना लेते हैं। साथ ही वह भी सही है कि प्रत्येक मंत्री अन्तरे में ऐसे कुछ मंत्री अवश्य होते हैं जो या तो विषय योग्य नहीं होते या उनके मन

में एसी कोई निश्चित दिशा नहीं होती जिसकी ओर वे अपनी नीति को ले जाना चाहें। दोनों प्रकार के मंत्रियों में ही यह प्रकोपन कि वे अधिकारियों के सुझाव पर निर्भर रहें बहुत अधिक होता है। वहाँ ऐसे मनों विभागों के प्रधान होते हैं जिनके अधिकारियों के सुझाव बहुत अधिक हैं।

यह स्पष्ट है कि वास्तविक अन्तर्प्रसन्न प्रश्न को तब तक दूर रखना आवश्यक है। मूलतः इस प्रश्न के दो पहलू हैं। क्या कोई मंत्रिमंडल जो कोई नीति कार्यान्वित करना चाहता है और जिसे कॉपील-समा तथा देश में आवश्यक समर्थन भी प्राप्त है वांछित नीति को अधिक-मुस्तक तक पहुँचा सकता है? दूसरे, क्या कोई मंत्री जिसका वह निश्चय कर लिया है कि उसे क्या करना है अपने विभागीय अधिकारियों के ऊपर अपना व्यक्तिगत आरोपित कर सकता है? मैं पहले दूसरे प्रश्न पर विचार करूँगा क्योंकि इसका उत्तर सरल और सीधा है। मेरे विचार से ब्रिटिश प्रशासन के इतिहास में यह विस्तृत स्पष्ट है कि यदि किसी मंत्री ने किसी काम को करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है और उसके पास संकल्प-शक्ति है, तो वह अपने अधिकारियों का नियंत्रण करने में समर्थ हुआ है। स्वयं हमारे समय में लॉर्ड हार्डेन तथा श्री लॉर्ड जार्ज बकिंघम और श्री डीटके सर किम्बल बूड और श्री हर्बर्ट मोरीसन आदि के बारे में यह विस्तृत सही है। मोटे तौर पर मंत्रियों का तीन वर्गों में बाटा जा सकता है। कुछ तो मंत्री ऐसे होते हैं जो एक सम्हालते समय अपने मन में एक निश्चित नीति रखते हैं। कुछ लोग ऐसे होते हैं जो कोई विशेष नीति नहीं रखते प्रत्युत मंत्रियों के रूप में काम करना चाहते हैं। तीसरे वर्ग में वे लोग आते हैं जो स्वयं को मंत्रिमंडल में पाकर धारण कर लेते हैं और वे बिना किसी छाहसिकता के प्रदर्शन के जैसे-जैसे अपने बिल पूरे कर लेना चाहते हैं।

पहले वर्ग के मंत्री का उदाहरण दिए हैं। श्री जार्ज हार्डसन का विशेष मंत्रित्व भी इस रूप का एक स्पष्ट उदाहरण है। इनमें से प्रत्येक स्थिति में ऐसा कोई प्रश्न नहीं उठा है कि मंत्री ने अपने अधिकारियों को नियंत्रित करने की चेष्टा की हो। मंत्री यह जानता था कि वह क्या पाना चाहता है और जो वह पाना चाहता है उसे किस प्रकार पा सकता है। अतिम तीन स्थितियों में सबसे मंत्री को अधिकारियों की ओर से "ठूठ और बाधा" का जिसकी भी स्मरण करना करते हैं, सामना करना पड़ा था लेकिन उसे उन पर अपना पाने में कोई कठिनाई नहीं हुई। लॉर्ड हार्डेन का नांड विधेय रूप से प्रसिद्ध है। उन्होंने अपना शासनकाल (१९-१९११) में अपने अतीतस्य यज्ञ-विभाग को अन्तर्गतता बदल दी। पहले यह विभाग ऐसे व्यक्तियों से मरा हुआ था जो मुख्यतः व्यावसायिक परम्परा से अनुप्राणित थे। इस प्रकार के व्यक्तियों को बदलना सबसे कठिन होता है। लेकिन लॉर्ड हार्डेन ने इन व्यक्तियों को उन मई प्रवृत्तियों के जिनके अनुसार उन्होंने विभाग का पुनर्व्यवस्था किया था अनुकूल रूप में सफलता प्राप्त की। विशेष महत्त्व का प्रधान शायद ही कभी कोई ऐसा व्यक्ति रहा हो जो उसकी पुरानी परम्पराओं से भी हार्डसन की भांति भिन्न हो। श्री हार्डसन को कुछ प्राप्त करना चाहते थे उसका अधिकार उनके विभाग की नीति के प्रतिबन्धक पड़ता था।

अपित यह सुनिश्चित है कि श्री हेंडरसन ने अपने पद को इतनी प्रतिष्ठापूर्वक निभाया कि वे हाल के वर्षों के और कुछ लोगों के मत से तो वायनिक इतिहास के सर्वश्रेष्ठ विद्वानों में से एक माने जा सकते हैं। मैंने श्री रॉबर्ट मोरग्न को यह कहते सुना है कि किसी विभाग में श्री अजिस की उपस्थिति मात्र ही अधिकारियों की मन्तरारमा को बरक देती थी। उनकी उपस्थिति से व्यक्ति का एक नया आभास होता था तथा यह उत्सुक भावना पैदा होती थी कि कुछ महत्वपूर्ण कार्य करना है। श्री स्टीलने के बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने भी अष्टादश शताब्दी के अपने समस्त कार्यकाल में विभाग को इसी प्रकार की नई उत्प्रेरणा दी थी। यदि कोई व्यक्ति डाक-विभाग में श्री क्रिस्मसे बुड के रिफार्ड की उनके पूर्ववर्तियों के रिफार्डों से तुलना करके देखे तो वह समझ सकेगा कि न तो इतनी ही और न बाधा ही किसी उस्ताही मंत्री को जिसने बुड निरन्तर कर दिया है, अवरुद्ध कर सकती है।

हैं यह मन्त्र है कि इस प्रकार के सभी राजनीतिक क्षेत्र में दुर्बल ही है। यह बात आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि किसी भी राजनीतिक पदस्थि में इस प्रकार अद्भुत प्रतिभाशाली व्यक्ति कम ही होते हैं। मैंने मंत्रियों के जिन वर्षों का उल्लेख किया है उनमें दूसरे वर्ष से मंत्री काफी मिलते हैं। इस प्रकार का मंत्री कुछ करना अवश्य चाहता है लेकिन वह इस बारे में विस्तृत स्पष्ट नहीं होता कि वह ठीक-ठीक क्या चाहता है। यदि वह कुछ सफलता चाहता है तो यह स्पष्ट है कि उसकी नीति का अधिकार या विभागीय परम्परा के अनुसार निर्मित होना चाहिए। प्रत्येक योग्य विभाग के पास ऐसे कुछ कार्यक्रम होते हैं जिन्हें वह पूरा करना चाहता है। वह यह समझता है और ठीक ही समझता है कि उसका प्रशासनिक कार्य इन कार्यक्रमों के बिना मुश्किल से गड़ी चल सकता है। अधिकारियों के लिए यह विस्तृत स्वाभाविक है कि वे अपनी इच्छाएं मंत्री के सामने प्रकट करें और मंत्री के लिए विस्तृत स्वाभाविक है कि यदि वह अपनी प्रतिष्ठा चाहता है तो वह विभाग की नीति को अपनी नीति कहकर स्वीकार कर ले तथा उसे सविधि-युक्तक तक पहुँचाने का प्रयास करे। सहायक कार्य यह कहा जाता है कि गृह-मन्त्रालय ने मुझे उत्तर वर्षों में क्रमानुगत मंत्रियों से "कैबिनेट-एक्जूस" के सद्योपन की प्रार्थना की है। गृह-मन्त्रालय के लिए ऐसा करना विस्तृत नहीं है और वह गृह-मंत्री को इस मुद्दे का महत्व नहीं समझ सकता यह नहीं समझ सकता कि इस मुद्दे से लोगों को कितना लाभ पहुँचिगा सचमुच ही बुद्धिहीन व्यक्ति हैं। विभाग की नीति के लिए मंत्रियों का समर्थन प्राप्त करना अधिकारियों का दायित्व है। विभिन्न सचिव के अधिकारी का यह प्रमुख कर्तव्य है कि वह अपने राजनीतिक प्रभाव का ध्यान उन व्यक्तियों के अभाव की ओर दिला दे जिन्हें वह प्रशासनिक प्रयत्न के मुद्दे सहायक के लिए आवश्यक समझता है। यदि वह नीकरवाही है, तो ऐसा कोई राज्य नहीं है जो उसके बिना चल सके।

इस प्रकार का मंत्री जो अधिकारिता या पूर्णतः अपने अधिकारियों के हाथ में रहता है, प्रत्येक मंत्रि-मंडल में होता है। वह मंत्रि-मंडल में इसलिए हो सकता है क्योंकि प्रभाव-मंत्री न उसे चुना है। वह एक "प्रतिनिधिक" व्यक्ति हो सकता है क्योंकि

श्रमिक प्रधान-मंत्री किसी बूढ़े श्रमिक सब अधिकारी को इस आचार पर बन सकता है कि उस व्यक्ति को सरकारी मान्यता मिलनी चाहिए और मंत्रि-पर से भींचे का पर वह व्यक्ति स्वीकार नहीं करेगा। यदि अनारक्षणी सरकार सत्ताकंड हुई तो ऐसा व्यक्ति किसी प्रख्यात बनने का सरस्य हो सकता है और सरकार उसे मंत्रि मंडल में स्वागत देकर श्रमिक दल के प्रभाव को बढ़ा सकती है। यह स्मरण्य है कि प्रत्येक प्रधान-मंत्री एक एमी टीम बनाने का प्रयास करता है जो एक इनाई की तरह कार्य कर सके। यदि मंत्रि-मंडल में सभी व्यक्ति एक से हो और एकजिहवाही हो तो मंत्रि-मंडल मुबारक रूप से कार्य नहीं कर सकता। लॉर्ड रोबर्टी के १८९४ के मंत्रि मंडल के साथ यही कठिनाई थी। जहाँ एक बार भी एग्जिस्टन का शक्ति घाली हाथ घालन हुआ प्रधान-मंत्री का प्राधिकार अपन पर के अनुकूल सिद्ध न हो सता। फलतः प्रधान-मंत्री की बास्तविक समस्या केवल ऐसे व्यक्तियों को प्राप्त कर लेना नहीं है जो राज्य के प्रत्येक विभाग में एक विभागत कार्यक्रम लागू करना चाहते हों। जनता की पावन-शक्ति तथा कामन-समा का काम-विभाग इसे सहन न कर सकेगा। उसे कुछ तो एस सापी चाहिए जो बड़ी-बड़ी योजनाओं को सोच सक और उन्हें कार्यान्वित कर सकें ताकि प्रसन्न समर्पन बना रहे तथा कुछ ऐसे सापी चाहिए जो अपेक्षाकृत गीच विवति से संतुष्ट हों तथा अपन विभागा को सामान्यतया मुबारक रूप से चला सकें। मंत्रि-मंडल को उनकी महत्त्वपूर्ण देन यह होती है कि उनमें व्यवहार-बुद्धि होनी है तथा वे अपने साक्षियों के सामने ऐम निर्णय रख सकते हैं जो प्रजासिद्ध होने पर लोचनत तथा विशेषकर दल के विचारा के अनुकूल सिद्ध हों। यदि किसी मंत्रि-मंडल में ऐसे बर्जण ऐसे व्यक्ति न हो तो उसमें संतुलन का अभाव रहेगा तथा धीम्र ही उसका ऐरो मत से सम्पर्क मिल जायगा जो उसके लिए आवश्यक है। असाधारण व्यक्तियों के मंत्रि-मंडल में इस बात का सर्वैष लक्षरा रहता है कि चूकि उनके सरस्य असाधारण हैं अतः वह अनसाधारण के विचारों को समझने में असमर्थ हो सकते हैं। वे अनसाधारण के विचार-विचित्र से दूर जा पड़ने हें। चूकि वे अपने ही विचारों में अत्यधिक मग्न रहने हैं अतः वे यह नहीं समझ पाते कि हमारे काम उनके बारे में क्या सोचते हैं और क्या कहते हैं। शास्त्रि-बान्धों में मन्वीच पद्धति को ऐसे बीच व्यक्तिता की विशेष आवश्यकता है जिससे कि मंत्रि-मंडल अपने निर्वाचन-क्षत्र की शिन्के ऊपर कि वह निर्भर है संतुष्ट रख सके तथा उनका भागो न बढ़ जाये।

त्रिणिच मंत्रि-मंडलों में इस प्रकार के कई उदाहरण मिलते हैं। लॉर्ड एल्फर थी वास्टर लॉय लॉर्ड विजयन म सब इसके श्रेष्ठ उदाहरण थे। इनमें से किसी क नाम के मंत्रिशील कुछ नहीं थे जिन्हें हम एग्जिस्टन या विवरको भी समझ पाय या भी व्यक्ति के साथ संयुक्त करते हैं। इनमें से प्रत्येक की मन्त्र बड़ी विशेषता यह थी कि वह अपनी पीढ़ी में जीवन कामन-समा का सर्वप्रथम रूप था। उसमें व्यवहार बुद्धि थी अनुप्राई थी तथा महत्त्वपूर्ण प्रतिनिधिक क्षमता थी। वह जो कुछ कहना या करना या उनका अपना कोई महत्त्व नहीं था लेकिन वह अपने अधिक मंत्रिशील

साक्षियों की प्रतिधीन नीतियों के बारे में जो कुछ कहा या करता था वह बहुत कम था। नी की लाबिया की टीकाओं के अनुसार होता था। कोई भी प्रभाव-मन्त्री ऐसे व्यक्तिओं की उपेक्षा नहीं कर सकता।

यह स्मर्तव्य है कि हमारे इतिहास में सबसे अधिक सफल मन्त्रि-मंडल वे हुए हैं जिनमें प्रतिधीन व्यक्तिओं तथा यौन व्यक्तियों का इत प्रकार का संयुजन रहा है। नी पीब्लस्टन के पास कार्ड हाटिंगटन ने नी डिबरीकी के पास बस से। मूड के पूर्व नी लॉयड जार्ज और नी एन्किबक का जोड़ इतना ही उपयुगी था जितना कि १९१७ के पश्चात् नी लॉयड जार्ज तथा नी बोत्तर लॉ का। यही कारण है कि साधारण युग में सबसे अधिक सफल प्रधान-मन्त्री वह (नहीं होगा जो असाधारण प्रतिभावाली हो जो कि सामान्य रायों का असामान्य व्यक्ति हो। बीजहॉर्न के समकालीन कार्ड बीम्बलिन इस कथन के वेस्ट उदाहरण हैं। संसदीय व्यवस्था में सरकारी विभाग की नीति ऐसी नहीं होती जिसकी नीतिक अपरेषणें प्रत्येक नए मन्त्री की नियुक्ति के साथ नए सिरे से बनाई जायें। उसकी जापारयुत धारणा सामान्य सिद्धान्त की अधिकान्यता है। कलकत्, ऐसे प्रत्येक विभाग में जिसमें कोई अतिरिची सुधार न करने ही ऐसे यौन व्यक्तियों की ही आवश्यकता है जिनकी नी म्योर जैसे आलोचक इतनी भर्त्सना करते हैं।

सर विलियम हारकोर्ट के एक महान् कथन का जिसकी ओर बहुत कम ध्यान दिया गया है यही वास्तविक अर्थ है। उन्होंने कहा था विभागों के राजनीतिक प्रधान सिविल सर्विस को यह बताने के लिए कि बगल इसे सहन नहीं करेगी, आवश्यक है। साधारणतः यह वह कार्य है जिसे अनूप लॉय और डिबर्मेन जैसे व्यक्ति नहीं कुशलता से करते हैं। वे स्वयं विचारों के बोध से बने नहीं होते। लॉयन वे अपनी शिक्षा स्थिति और अनुभव से दूसरे व्यक्तियों के विचारों पर निर्भर होने और उनके बारे में आदेश देने के अभ्यस्त ही जाते हैं। सत्ता का प्रयोग उनके लिए आराम की वस्तु नहीं है। उनमें गम्भीरता और चतुरता होती है। नीकरप्लाही के बोध उनके ऊपर छा नहीं सकते। उन्हें लोगों से निबटने का बुरा अभ्यास होता है। वे यह मनी भाति जानते हैं कि व्यक्ति जीवन में एक दूसरे के साथ कैसे व्यवहार करते हैं। मैं यह नहीं समझता कि उन्हें आसानी से बंध में किया जा सकता है। उन्हें अधिकारियों की 'मुकुटा' स्पष्टता का अभाव तथा अधिकारियों का बाध एक प्रकार की दृष्टता मालम पत्र सकती है जिसका धन किया जाना आवश्यक है। मैं नहीं समझता कि उस व्यक्ति ने जिसने कोई डिबर्मेन का अधिकारियों के प्रति व्यवहार देखा हो, उन्हें सर्वश्रेष्ठ अधिकारियों के मानसिक वर्ग में समझा हो लेकिन मैं यह भी नहीं समझता कि किसी व्यक्ति को इस बात का सम्बेह रहता हो कि यदि उन्होंने किसी बात को करने का निश्चय कर लिया हो तो वे यह जानते थे कि जिस प्रकार अपना आदेश पालन करवाया जाने।

मुझे ऐसा मामुम पड़ता है कि आलोचक मन्त्रि-मण्डल शासन तथा उसके परिवर्तनों के मुलापारों के संबंध में ही गलत धारणा रखते हैं और इसलिए वे उसके बारे में जो भी निष्कर्ष निकालते हैं वे अतिशय्य होते हैं। वे मान लेते हैं कि मन्त्री को भी अपने

विज्ञान के बारे में यदि उसे उसका अच्छी तरह ध्यान करना है। ठना ही विद्यमान होना चाहिए जितना कि वे अधिकारी होते हैं जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन उन विज्ञान में व्यतीत किया है। यह बात ठीक नहीं है। वास्तव में सर्वप्रथम सभी संसार का यह बुद्धिमान व्यक्ति होता है जो अपने सम्मुख प्रस्तुत बनेरुमुष्ठी प्रस्ता के बारे में धीमे-धीमे तथा क्रमबद्धता से विचार कर सकता है। उनका पहला गुण तो व्यवहार बुद्धि है और दूसरा गुण मनुष्यों को परामर्श की कला है। उस यह ज्ञान होना चाहिए कि किस प्रकार आरोग्य विधि चार्ज तथा उनका किस प्रकार पालन कराया जाये। राज नीतिक शक्ति के लिए जितना कठिन सचयं बलना है। उससे हमें इस बात का विश्वास है कि अधिकतर मामलों में वे गुण रहते हैं और जब कभी आवश्यकता है वे स्वयं को किसी भी महान विज्ञान के सहायक कार्य के अनुकूल कर लेते हैं। मेरे कहने का यह अभिप्राय नहीं है कि प्रत्येक मणि-मंडल में ऐसे मूर्खों से हीन व्यक्ति नहीं होते। सच तो यह है कि कुछ मणि-मंडलों में अज्ञान भी पाये जाते हैं। लेकिन यह अपमान-मान है। स्वर्णयुग लॉर्ड वेस्टमोरे इतके एक उदाहरण है। इन व्यक्तियों में ऐसे मण्डल नहीं होते जिनकी ऐसे कार्यों के लिए आवश्यकता है। और तो और जब कोई नया बर्म उदाहरण चार्ज अधिक बल ढंका राजनीतिक पद प्राप्त करता है। उसके सबस्य भी अपने धार्मिक संघों स्वामीय परिवर्तों तथा चर्चों के सासन में जो ईगलड में वास्तविक महत्व का विषय है मूल्यांकन प्रविष्टि प्राप्त किए होते हैं।

आलोचकों की भ्रमणी चारणा यह मान्य पड़नी है कि इन क्षेत्र में सिविल सर्विस के अधिकारी असाधारण प्रतिभा के व्यक्ति हैं, वे अपने-अपने क्षेत्रों के विशेषज्ञ हैं और आर्थिक सहायक हैं। उन्हें सोचे-सारे राजनीतिज्ञों से व्यवहार पड़ना है। वे राज नीतिक इन क्षेत्रों में निपट करे होते हैं और सिविल सर्विस के अधिकारी उनके सामने जो प्रस्ताव रख देते हैं उन्हें मान्य मान कर लेते हैं। यह कथन सचाई से बहुत दूर है। इनमें कोई संदेह नहीं कि सिविल सर्विस के कुछ अधिकारी असाधारण रूप से महत्वाकांक्षी होने हैं तथा उनमें सत्ता प्राप्त करने की इच्छा इतनी बलवती होगी कि वे अपने स्वयं को प्राप्त करने में कोई कसर नहीं रखते। इनमें भी कोई संदेह नहीं है कि कुछ राजनीतिज्ञ भी इनके बालुकी और अयोग्य होते हैं कि वे सिविल सर्विस के अधिकारी उनके सामने जो कुछ रख देते हैं, उसे बेवजाय की तरह स्वीकार लेते हैं। लेकिन वे दोनों ही प्रकार के व्यक्ति अन्यायपूर्ण हैं। विचारों के प्रधान जिनके साथ राजनीतिज्ञों को निबटना पड़ता है इन वर्ष में विशेषज्ञ नहीं होने जिन वर्ष में कि कोई महान् भौतिक शास्त्री महान् सज्जन या महान् सम्पादक विद्यमान होता है। वे ऐसे क्षेत्र में नहीं रहते जहाँ कि सामान्य व्यक्ति प्रवेश ही न कर सकता हो। उनका जीवन ऐसे प्रकृमा के व्यवस्थित व्योरे तय्यार करने में व्यतीत होता है जिनकी योग्य-रक्षाएँ नित्य ही कर्म-मन्त्रा में प्रत्येक महत्त्वपूर्ण राजनीतिज्ञ के हाथ में रहनी हैं। उनका गण विस्तार की बातों में प्रयत्न उसका गुण है। आवश्यकता पड़ने पर राज नीतिक इन विस्तार की बातों का बड़ी मृगमता से ज्ञान प्राप्त कर सकता है। सर्वप्रथम तुलना प्रथम शक्ति के वैरिस्टर के साथ है। जिस किसी व्यक्ति ने हमारी पीढ़ी में सर

जिन सादरमन या सर स्टेनोर्ड क्रिप्ट जैसे अधिकारियों को देखा है जो अटिच से अटिच अधिकारियों को हुम्नामकनवत् हूक करने में सिद्ध हू बहु इस बात को यही प्रकार समझ सकता है कि ऐसे लोगों को विभिन्न सचिव के स्मृति-पत्रों से निबटन में कोई बटिनाई नहीं होती। धीरे धीरे बुद्ध-बोध परखने की दृष्टि उन प्रभाव को अनुभव करने की सोचता जो यह सब बाहर की दुनिया पर डालेगा क्योंकि यही दुनिया न्यायाधीश है वे वे मुक्त हैं जिनकी मनी को अपने विभाग के सबब में आवश्यकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि इन गुणों का उपयुक्त रीति से प्रदर्शन एक महान् कला है। लेकिन यह कोई ऐसा रहस्य नहीं है जिसमें साधारण जन प्रवेश नहीं कर सकता। यदि साधारण जन को भी ऐसा अनुभव मिल जाये जो उसे इसके प्रबंध के लिए शिक्षित करे, तो वह बड़ी सुगमता से इसे कर सकता है।

और हमें यह भी समझ लेना चाहिए कि बहु राजनीतिक जो मंत्री बन जाता है जिन अधिकारों नहीं होता। मंत्री बनने के पूर्व वह कई वर्ष कॉमन-समा में व्यतीत कर सकता है और वहाँ राजनीतिक समस्याओं की मोटी बपरेखानों के बारे में व्यस्त रहता है। मंत्री बनने पर उसे उनके बारे में बहुत कुछ ज्ञान से विचार करना पड़ता है जिस इम से कि वह अपनी सदस्यता के काम में करता था। यह भी अर्थमय नहीं है कि वह विरोधी बहू की अधिम पक्ष का सदस्य रह चुका हो और इस समय में उसने अपन साक्षियों के साथ मिल कर ऐसी नीति के निर्माण का प्रयास किया हो जिससे मनि-मंडल के निर्णयों के विरुद्ध के रूप में प्रस्तुत करें। वह संसद् के बाहर के जन रिक्तों के अनवरत संपर्क में रह चुका होता है जो संसद् में अपन विचारों की अभिव्यक्ति करते हैं विशेषकर उन समय जब कि वे सत्तास्थ सरकार के विरुद्ध होते हैं। सब तो यह है कि वह उन तन्मो तथा विचारों से नहीं प्रकार परिचित होता है जिनके सम्बन्ध में उसे तार्किक प्रयोगों के लिए बहुत कुछ मनी की जाति ही निर्णय करने होते हैं। में यह नहीं कह रहा कि अनुभव से उठ ज्ञान की अधिपूर्ति हो जाती है जिसे एक व्यक्ति किसी बड़े राजनीतिक विभाग के प्रमाण के माते प्राप्त करता है। मेरे कहने का आशय यह है कि बहु राजनीतिक जो मंत्री बन जाता है, प्रशासनिक मामलों में अच्छी तरह से अनुभवी होता है और य मामलों उसके लिए निर्णय की ऐसी पद्धति का निर्माण कर देता है जो तुलनात्मक दृष्टि से ज्ञानी प्रकार की होती है जिसकी उसे मनि-मंडल का सदस्य बनने पर आवश्यकता होगी।

यहाँ एक बात यह देना और आवश्यक मामल पढ़ना है। मनि-मंडलीय पद्धति के आलापना से बहु मान सिवा जान पड़ता है कि कॉमन-समा में प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती है उनमें तथा राज्य के किसी विभाग को सुचारु रूप से चलाने के लिए जिन गुणों की आवश्यकता होती है उनमें बहुत कम सम्बन्ध है। श्री रैमसे स्मोर ने लिखा है "तब-निपुणत यंभी न अपन इस पक्ष को राजनीति के सामान्य शोध में अपनी सफलताओं के कारण प्राप्त किया है इस कारण प्राप्त किया है क्योंकि वह अच्छा प्रचारक है या अच्छा संसदीय नेता है या प्रमुख अभिक संघ अधिकारी है या समाज में उसका प्रभाव है।" हमें यह तर्क करने की आवश्यकता

नहीं है कि इनमें से कोई मुग प्रमाणितिक शक्ति की पारन्ती है। लेकिन यह बापह करना भी समान महत्व का है कि न बचक न उसकी प्राप्ति के प्रतिकूल ही नहीं है प्रत्युत उनके लिए यह विद्वान्सा दिशाना भी असम्भव नहीं है कि उनके प्राप्तिकर्ता में प्रशासनिक क्षमता की उचित जागा की जा सनगी है। एक व्यक्ति कामन-सभा में श्रेष्ठ बकता उस समय तक नहीं बनता जब तक कि उसके पास कुछ कहने के लिए न हो। यही नहीं। प्रभावशाली समक्षीय बकता की निर्णय तथा भाषोचना-सक्ति की सर्व्व परीक्षा होती रहती है। यह मशी के रूप में उसके परचावर्ती कार्य के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण तन्पायी हो जाती है। रिशी महत्वपूर्ण धमिक संव भविष्कारी क बारे में भी यही सही है। राजनीतिक पर सम्हालने क पूर्ण उनका अभिजात काम लोगों को समझाने-बुझाने का तथा अपनी बात को इस तरह कहने का होता है जिसमें लोकमत के ऊपर सफल प्रभाव पड़ सके। क यह सफलता प्राण बनने की अपनी योग्यता द्वारा ही रहते हैं। मझे सचेह है कि आलोचक यह भूल जाते हैं कि यह बला भोवतवारम्क व्यवस्था के सञ्चालन क लिए आवश्यक है। यह दृष्टिकोण कि यह एक अनहता है और हमें प्रारम्भ से ही मशी की योग्यता पर मन्दह करना चाहिए क्योंकि वह उन परी सामा में सफल निष्ठा है जिनका राजनीतिक को सामना करना ही पड़ता है एक दृष्टिकोण है जो स्वयं लोकजन को ही नकारता है। क्योंकि इसका अर्थ तो यह हो जाता है कि वे मुग जो किसी व्यक्ति को सफल राजनीतिक नेता बनाने में सफल शासन के लिए अनर्हता है। वे ऐसे किसी सादय को नहीं आकता जो इस विचार का समर्थन करता हो।

और यह तनिक ध्यान देने की बात है कि हमारा सिविल सर्विस के प्रशासनिक कार्य विन्सास विन कर्तों के ऊपर आधिन ह के उन दुर्गों से बहुत निम्न नहीं है जिनमें हम राजनीतिकों को परगठ हैं। इस विषय-विभावमें व्यक्तियों का इसलिए मज्जै ह क्यों कि उनका दृष्टिकोण व्यापक होना है इसलिए नहीं येबते कि वे सिविल सर्व्वशास्त्री होते ह। यही बात कृपि-संशास्त्र तथा विद्या-संशास्त्र के बारे में सही है। प्रशासका के रूप में उनका महत्व इसलिए नहीं है कि उन्हें किसी टेकनिकल विषय का विशेष ज्ञान है प्रत्युत इसलिए है कि उनकी पिछा उन्हें निर्णय तथा उपक्रम के एमे वन प्रदान करती है जिनके बिना कोई भी सरकार सफलतापूर्वक नहीं चल सकती। कविन ठीक इन्ही वर्षों की एक राजनीतिक को यदि उसे पर प्रारुत करने के सर्व्व में सफल होना है आवश्यकता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि उसे इसका प्रयोग एक भिन्न पराठक पर करना होता है। उसे सिविल सर्विस के अधिकारियों के विचारों को उस विद्या से सम्बद्ध करना पड़ता है जिसमें वह (तथा उनका दल) देग को से जाना चाहते ह। सर विवियम हाफको के उस बाधपाठ का जिनको मने पहले उदुठ किया जा यही अर्थ है। अधिकारी के निर्णय और उपक्रम पर उनका राजनीतिक प्रधान के निर्णय और उपक्रम का अधिकार रहता है। राजनीतिक प्रधान सफल भी हो सनगा है और असफल भी लेकिन हमारी शासन-प्रवृत्ति उसे इस बात के लिए बाध्य करनी है कि वह दोनों का प्रयोग करे। वह उससे इस बात का प्रभाव मांग कर कि उसे पर प्राण

करने की शर्त के रूप में ये भुज प्राप्त हैं उसे इस प्रयोजन की शिक्षा देती है। वह उसे भूमि के लिए बंध देती है और उससे यदि कोई बड़ी भूल हो जाये तो उसका (यही है, एस माटेम्सु की भाँति) सारा जीवन नष्ट हो सकता है। यह ठीक है कि राजनीतिक शासक ही महान् व्यक्ति हो। लेकिन वे जो राजनीतिक मिलन प्राप्त करते हैं उससे इस बात का आश्वासन मिलता है कि वे उस कार्य को अच्छी तरह से कर सकेंगे जिसे उनसे करने के लिए कहा जाता है।

मेरे कथन का यह अतिप्रामाण्य नहीं है कि वे सिविक सर्विस के अधिकारियों का प्रभाव अस्वीकार करता है। मैं केवल यही कहना चाहता हूँ कि उसे उचित सर्विस में रोकना चाहिए। जहाँ यह अधिक होता है उसके ऐसा होने के कई ठोस कारण होते हैं। (१) मंत्री के सामने प्रस्तुत की गई नीति ऐसी हो सकती है जिसको कार्यान्वित करने के लिए सर्विस के व्यापक प्रभाव की आवश्यकता हो। (२) प्रस्तुत की गई नीति चाहे वह विध्वंसक हो या निष्पात्मक ऐसी हो सकती है जिसके बारे में सम्बन्ध मंत्री या उसके अन्य सचिवों का कोई विशेष दृष्टिकोण न हो। यदि वे सिविक सर्विस के अधिकारियों की सुविधों से अनुपेक्षित हो तो वे प्रस्तुत किए गए निर्णय को बदलने का कोई कारण नहीं देखते। (३) प्रस्तुत नीति स्वीकार करनी पड़ती है इसलिए नहीं कि मंत्री उसका हृदय से समर्थन करता है प्रस्तुत इसलिए कि वह अन्य किसी विकल्प के लिए उद्यम नहीं होता। वह विकल्प बहुत अधिक व्ययसाध्य हो सकता है, वह विरोध के ऐसे संकेत छोड़ कर सकता है जिनके लिए वह उद्यम न हो वह उससे अधिक समय की मांग कर सकता है जिसके लिए उसके सामी असहमत हों। इसमें सबसे अधिक जिस वस्तु की आवश्यकता है वह यह है कि मंत्री को स्वयं अपने मस्तिष्क का ज्ञान होना चाहिए। जहाँ उसे एक बार अपने मस्तिष्क का ज्ञान हो जाता है वह अपने अधिकारियों को नियंत्रित कर सकता है। यदि वह अनिश्चित होता है तो या तो उसे सिविक सर्विस के अधिकारियों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है या उसे कुछ ऐसी जानकारी एकत्रित करनी पड़ती है जिससे कि उसे कुछ ऐसे आचार मिल जायें जिनके अनुसार कि वह अधिकारियों से जिन निश्चय कर सके।

लेकिन वे जो बातें ही गईं। इसका पहला अर्थ तो यह है कि मंत्रि-मंडल को पर प्रह्व करके समय यह जाठ होना चाहिए कि वह क्या करना चाहता है और उसके प्रमाण-मंत्री को पता का कितरण इस प्रकार करना चाहिए जिससे कि ऐसी टीम बन सके जो इस प्रयोजन को सिद्ध करने में समर्थ हो। इस सम्बन्ध में मंत्रि-मंडल की दुर्बलता का कारण यह है कि या तो मंत्रि-मंडल इस बात का कुछ निश्चय नहीं कर पाता कि उसे क्या करना है या जो कुछ वह करना चाहता है उसका ऐसा तीव्र विरोध होता है कि मंत्रि-मंडल को अपना विचार बदलना पड़ता है। इस प्रकार मूल्य यह प्रत्यक्ष मंत्रि मंडल तथा संसदीय सौषट्म के बलगत आधार से सम्बन्ध रहता है। यदि किसी सत्ताशुद्ध दल में यह निश्चय नहीं कर लिया है कि उसे क्या-क्या करना है तथा वह अपने इस कार्य क्रम को किन क्वांटो से पूरा कर सकता है तो यह विस्तृत भी आश्चर्यजनक नहीं है कि उसके मंत्री अपने अधिकारियों के सर्वश्रेष्ठ परामर्श को मान लेंगे। या यदि १९२९ के

अधिक संवि-संज्ञक के बहुत से संविनों की प्राप्ति यह देखें कि वे अपनी बचनबद्ध नीति को कार्यान्वित करने के लिये उद्यम से हिचकते हैं तो यह स्वामाधिक है कि इस नीति का स्वान अधिकारियों द्वारा प्रत्युत की गई नीति से से। उदाहरणार्थ यदि किसी युव-संज्ञी ने जेठ सम्बन्धी सुधारों के बारे में कमी बिचन नहीं किया है तो यह नैतिक है कि जनता की ओर से उनके सुधारन की कार्य महत्त्वपूर्ण मान गहने पर वह यही मान लेता कि हमारी बर्णों की पुराना परम्परा को ही आगे बढ़ाया जा सकता है।

यहने का धार यह है कि वह को यह मानना चाहिए कि वह नहीं जाना जाता है यदि वह विधिक संवि से यह जाया करना है कि वह उसके गतावा के साथ नहीं जाने में सह्याप करे। और यह हमारे विचार को जग देता है जिसे प्यार में रखना आवश्यक है। मभी वह के निर्णय होल पर या अपनी कुछ व्यक्तिगत नीति होने पर उन परिवर्तनों का संवि से सक्ता है जिन्हें वह करना चाहे। यह अधिकारियों का काम है कि वे मभी को उन समस्त परिणामों में अवगत करा दें जो ऐसी नीति को कार्यान्वित करने से सामन जा सकते ह। यह विचार इच्छा मेरीस आयोज की रिपोर्ट में बहुत अच्छी तरह व्यक्त किया गया है। उसमें कहा गया है "अधिकारी का कर्तव्य त्याग-मन बना नहीं है प्रत्युत अपने विभाग के प्रबान का तथा आवश्यकता पड़न पर मंत्रालय के दूसरे सदस्यों को अपन विचारा से अवगत करा देना है। यह फिर यदि पर्याप्त संवि-विचार के परचाण इन विचारों को न माना जाये तो उसे सरकार की नीति को कार्यान्वित करने का अधिक से अधिक प्रयास करना चाहिए वह स्वयं व्यक्तिगत रूप से उस नीति से सहमत न हो। आवश्यकता से अधिक राजमन्त्रि विचार-स्वातन्त्र्य को गण कर देनी है और विभिन्न विभागों के संघीय प्रबानों को उस स्वल्प सहायता से बचिन कर देनी है जिन्की काना रखना उठका अधिकार है और जो कमी कमी अनुदानन के ऊपर आधारित जामी समझते से नहीं प्रत्युत व्यक्तिगत तथा गिष्ट विरोध से अधिक मिच्छी है।

यदि मंत्री तथा उसके अधिकारियों में नृजनात्मक बौद्धिक सहयोग जाना है तो येरा विचार है कि यह एक आकृष्य ह और हमारी व्यवस्था के सबसेठ परिणाम इन रूप्य के परिणाम रहे है कि योग्य मंत्री तथा सर्वप्रथम अधिकारियों के बीच इनी प्रकार का सम्बन्ध रहा है। उदाहरणार्थ स्वार्थि सर रॉबर्ट मार्लन तथा सर अन्वर जावे अपने विचारों को पूरी दक्षिणता से अपने राजनीतिक प्रबाना क नामने रखने कमी नहीं हिचकितते से। लेकिन इनमे एक बुरा प्रण भी उठ नड़ा जाता है जिसका अकार देरा विचार है कि आलोचका को अपने पक्ष के कर्मचन में बहुत सामधी मिठ जानी है। जो स्थितिवा ऐसी ह जिनमें किसी को अपने विभाग से निरन्तन समय निम्नान्देह बढिनाई का सामना करना पड़ता है। पहली स्थिति उन समय सामन जानी है जब कि वह किसी नवीन कार्यक्रम को विगाण पमान पर बड़ी धीग्रतापूर्वक पूरा करता चाहे। दूसरी स्थिति उन समय सामन जानी है जब वह किसी ऐसी नीति पर आचरण करता चाहे जो उसके अधीनस्थ विभाग की परम्परा क प्रतिबन्ध हो। उन समय

कठिनाई और भी बढ़ जाती है जब कि ये दोनों स्थितियाँ किसी अवसर पर एक में मिल जायें।

आइये। हम उन पर प्रथम बल्लन विचार करें। यदि किसी मूल्य कार्यक्रम की विद्यालय पैमाने पर सीमापूर्वक लागू करना है तो इसके लिए योजना की विस्तृत रूपरेखा आवश्यक होगी। यह आवश्यक है कि प्रस्ताव आर्थिक और प्रशासनिक दृष्टि से ठीक हो। उस प्रस्ताव पर प्रत्येक दृष्टि से मनोव्यक्तिक दृष्टि से भी विचार करना पड़ता है। विभाग को यह बात होता है कि जब नीति विधेयक का कार्य पारण करती है और उसके कुछ दृष्टियाँ रह जाती हैं तो उसकी प्रतिष्ठा को गहरा बरखा पहुँचाने की आशा होती है। फलतः, वह विधेयक को सामने आने में डर काठा है जिससे कि जब विधेयक सामने आये तो बहुत ठक हो सके वह साबोपाय हो। वह सामग्री की सान्नीय करना चाहता है वह प्रभावित होनेवाले हितों की राय ले लेने का प्रयास करता है, उसे प्रमुख तय्यार करने का बौद्धिक काम करना पड़ता है। मजिस्ट्रेट की दृष्टि में वह विद्यमान बड़ा खतरनाक हो सकता है। वह अपने "जातकमय" युग के कामों से संबंधित हो सकता है। यह युव किसी भी सरकार के लिए विरोधकार कामगरी सरकार के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होता है। विद्यमान के विरोधी दल को तथा उन अर्थ-राजनीतिक हितों को जो विधेयक के विरुद्ध होते हैं विधेयक के ऊपर आक्रमण चला देने का समय मिल जाता है। केवलमात्र विद्यमान का तय्य ही संसदीय कार्यक्रम में विधेयक के महत्व को हीन कर देता है। वह मुश्किल है कि १९२९ की आर्थिक सरकार द्वारा इन आचारों पर विज्ञान-विधेयक का स्वयं संसदीय अक्षमता का प्रधान कारण था। सरकार उसकी पुनर्स्थापना को स्वयं करने के लिए तय्यार हो गई इसके परिणामस्वरूप उत्प्रेरणा में कमी आ गई। जब दूसरे वर्ष वह सामने आया उसके विरोधियों को उसके प्रति अपना विरोध व्यक्त करने लिए पर्याप्त समय मिल चुका था।

हम कठिनाई से बचने का केवल एक ही उपाय है और वह यह है कि जब एक न नया पदावधि हो उसके प्रस्ताव विस्तृत तय्यार होना चाहिए जिससे कि इस प्रकार के विद्यमान का कोई प्रश्न ही नहीं उठे। एक उदाहरण से यह बात स्पष्ट हो जायेगी। यदि किसी आर्थिक सरकार को आवास का कोई विद्यालय कार्यक्रम सीमा से पूरा करना है तो यह आवश्यक है कि जब वह पदावधि हो उसके पाम न केवल सामान्य सिद्धांत ही हो प्रत्यंत नीति से सारे व्योरे भी तय्यार करने चाहिए जिससे कि प्राथम तय्यार करने का कार्य सुरक्षित ही प्रारम्भ किया जा सके। उसे उन आर्थिक सीमाओं के बारे में निश्चय करना पड़ना जिसका सारे में रह कर वह काम करने के लिए तय्यार है। उसे यह भी समझना पड़ेगा कि वह स्थानीय आधिकारियों के समर्थन पर बहुत ठक निर्भर रह सकती है। उसे स्वयं अपने मन में यदि वे अतिव्यक्त विद्यमान निर्माण-आर्थिक क्षेत्रों में अपने सम्बन्ध तथा निर्माण-सामग्री के सम्बन्ध में अपनी मुख्य-नीति आर्थिक के बारे में भी तय करना पड़ेगा। यदि मजिस्ट्रेट इनमें से प्रत्येक विषय पर विद्यालयी निरीक्षण विभागों के पर प्रत्यक्ष करना है तो इनका अर्थ यह होगा कि यह-यह करके

के उपरान्त सिविल सर्विस की सुदृढ नीति निर्माण करने की दृष्टि पर विचार किया जाये। इसका अर्थ यह होगा है कि नीति-निर्माण का कार्य विभागों के ऊपर न्याय किया है और बिनामो को काफी मात्रा-यन्त्री करने और समय लगाने के उपरान्त ऐसे सामान की खोज करनी पड़ती है जो मनीष नीति को ठोस शब्दों में आच्छादित कर सके।

यहाँ यह स्पष्ट है कि संघीय व्यवस्था में देश के संघटन का अधिकांश के विभागों के सिविल निर्देशन से अनिच्छित सम्बन्ध है। यह निर्देशन उक्त समय तक नहीं हो सकता जब तक कि कन्स्टीट्यूट के भाषण के पीछे न केवल इरादों की घोषणा तथा वाञ्छित उद्देश्यों की पवित्र इच्छा हो प्रकृत पहल से ही की गई ठोस सज-बौन भी हो जिसके परिणामस्वरूप कि अधिकतर अपनी यात्रा आरम्भ करने के लिए हर तरह से तैयार हो। इसने यह प्रमाण होता है कि आधुनिक राजनीतिक दल के पास स्वयं अपनी सिविल सर्विस जैसी कोई वस्तु रहनी चाहिए। उनके पास केवलमान्य ऐसे ही व्यक्ति नहीं होना चाहिए जो कि ओरदार प्रभावशालक सिद्ध सिद्ध हों। उदाहरणार्थ यदि उसे जहाँ में सुधार करना है तो उसके पास न केवल सुप्रसिद्ध हाँहाउस-बोर्ने रिपोर्ट का ही ज्ञान होना चाहिए, प्रत्युत उसके पास कुछ ऐसे वास्तविक प्रमाण भी होने चाहिए जिसका वह गूढ़-मयी ज्ञान पालन किया जाता जाये। कहल का धार यह है कि मनीष के मन में न केवल एक योजना ही होनी चाहिए, प्रत्युत उसे उनसे अनुप्राणित होना चाहिए, उसे उसके परिणामों पर इस सर्वाङ्गीय दृष्टि से विचार करना चाहिए कि वह उसके सम्बन्ध में सिविल सर्विस के समस्त संशोधन का सम्पन्नापूर्वक समाधान कर सके। इसका अर्थ यह है कि उसे परीक्षण के लिए नहीं प्रत्युत कर्म के लिए तैयार होना चाहिए। उसके पास एसी योजना होनी चाहिए जिसकी कि मान्यता हो सके। उसके पास ऐसा निश्चय नहीं होना चाहिए जिसका कि अनुप्राणन करना पड़े।

पहली स्थिति का यह विशेषण दूसरी स्थिति की समस्यामा से अनिच्छित सम्बन्ध रखता है। प्रत्येक योग्य विभाग के पास अपनी एक नीति होती है। बोध्य व्यक्ति जब किसी प्रमाणनिक प्रश्न का बहुत समय तक समाधान करने में उसे उसके संज्ञान के बारे में एक विशिष्ट दृष्टिकोण का निर्माण कर ही सके है जैसा कि डॉनमीड बायोप की रिपोर्ट में कहा गया है, कि वे मनीष के सम्मुख अपने विचारों का महत्त्व स्पष्ट कर दें उसे मूल्य मात्र से बता दें कि यदि उसने उन विचारों का स्वीकार नहीं किया तो उसके सामने वे धरने और कठिनाइयाँ आ सकती हैं। लेकिन उन इन बात का भी ज्ञान रखना इतना ही महत्त्वपूर्ण और आवश्यक है कि इन प्रकार के निर्देशन से मूल में कुछ हमें भी सिद्धांत ही मचने है जो परीक्षा होने पर उन विचारों के प्रतिद्वन्द्व हों जिन्हें मनीष के ज्ञान आरोपित करता समया कर्तव्य है। इसमें कोई संशय नहीं है कि सिविल परम्परा में ऐसे कुछ विभाग अद्यतन है जिसका डॉनमीड रिपोर्ट का सामन करने हुए भी मनीषों की ज्ञान राजनीतिक विचार के सिद्धांतों के अनुप्राणन करने में अग्रणी समया का परिचय दिया है। यह विवेक संशालन विज्ञान-संशालन और प्रतिरक्षा-संशालन के सम्बन्ध में विशेष रूप से मध्य है। इसका कारण कुछ तो यह है कि इन विभागों को बिना समस्यामा का सामना

करना पड़ता है, वे विधेय बुझू होती हैं और कुछ यह है कि इन विधायों के सामने जो सामग्री आती है वह काफी बटिक डोरी है। पिछले ही वर्षों से इंग्लैण्ड का अर्ध-विभागा अपने परम्परामिष्ठ विचारों को जमानुसत वित्त-मंत्रियों के ऊपर वित्त र्थ से आरोपित करन में समर्थ रहा है, वह आधुनिक प्रशासनिक इतिहास की एक अद्भुत घटना है। इसका कारण यह नहीं रहा है कि वित्त-मंत्रियों का व्यक्तिगत उन अधिकारियों के उत्साह तथा साग्रह की तुलना में जिनके साथ उन्हें मिलना पड़ता है, दुर्बल रहा हो।

यह समझना सुगम है कि किस प्रकार परम्परा आरोपित की जा सकती है। नया मंत्री उलटाविचार में 'असीन सीट' नहीं पाता। पर-ग्रहण के दिन से ही उसे उन नीतियों पर निर्भर करने पड़ते हैं जो पहले से ही संघामित हो रही हैं। उनमें से बहुत सी नीतियाँ ऐसे विधेयों से सम्बन्ध रखती हैं जिनके बारे में उसे कोई बालकारी नहीं होती या जिनके बारे में उसके बहुत सामान्य विचार होते हैं और वे विचार महत्वपूर्ण प्रश्नों के बिना सम्बन्ध के निर्मित होते हैं। उसे ये निर्भर शीघ्रतापूर्वक करने होते हैं और वेता कि ये वह चुका हैं वह इन निर्भरों को उन बोध्य व्यक्तिओं के साथ विचार-विमर्श करने के उपरान्त करता है जिन्हें अपनी विद्या-निर्देश का पूरा विश्वास होता है क्योंकि वे सम्बन्ध समस्याओं से काफी जल्दी समय में परिचित होते हैं। यदि उसका मन उनके साथ-साथ चलता है तो उसकी समस्या काफी आसाम हो जाती है। यदि उसके निर्णय को जमीनी ही जाती है तो वह संघर्ष में उसकी इस समस्त प्रतिभा तथा शक्ति से रक्षा कर सकता है जिसे सिविल सर्विस के अधिकारी उसकी सेवा में प्रस्तुत कर सकते हैं। यदि सिविल सर्विस अधिकारियों का यह विचार हो कि मंत्री जो निर्णय करना चाहता है उसमें बदले है तथा वह देश के लिए घातक है तो मंत्री की स्थिति काफी कठिन हो जायेगी। स्पष्ट है कि ऐसी स्थिति में मंत्री को अपने बारे में काफी विश्वास होने की आवश्यकता है। उसे केवल भावना के आश्रय में नहीं रहना चाहिए। राजनीति के क्षेत्र में विनास के अनेकसुखी मार्ग हैं और कोई भी मंत्री किसी नूतन कार्यक्रम को विघातक पैमाने पर बाधित करने का उस समय तक अधिकारी नहीं है जब तक कि वह अपने आपार के बारे में पूर्ण रूप से आश्चर्य न हो।

एक उदाहरण परमिष्ठ होगा। मान लीजिए कि जिस समय कोई विधेय-मंत्री पर ध्यान करता है उसके सामने एसी कोई समस्या आती है जैसी कि १९३३ में सर जॉन माइसल के सामने आपात द्वारा मंचुरिया पर आक्रमण की आई थी। उसे राष्ट्र संघ के बोधना-यत्र में विश्वास है और वह इराय से यह चाहता है कि इन बोधना यत्र के अन्तर्गत उसके देश न जो शामिल ठठाए है, वह उन्हें पूरा करे। वह सुझाव पूर्व की राजनीति का विषयक नहीं है। उसकी कठिनाई आता है कि यदि वह आपका पत्र के अनुच्छेद १९ के अनुसार तीन को उद्घातना देता है तो इसके परिणाम स्वयं इंग्लैण्ड की आपात के साथ लड़ाई छिड़ सकती है। उसने और बेकर कहा जाता है कि इन लड़ाई से सुझावपूर्व में इंग्लैण्ड के महत्वपूर्ण हितों को यह हानि पहुँच सकती है। नाविक और र्थनिक समस्याओं की सम्पूर्ण अटिकता उसके

सामने काफी बारीकी से रखा भी जाती है। वह धीमे-धीमे समझ लेता है कि यह युद्ध विश्व युद्ध का रूप धारण कर सकता है। तथा इसके परिणाम काटि और न जाने क्या क्या हो सकता है। यदि वह चाहे तो जिनेवा में पूरी सन्धि से नेतृत्व कर सकता है। उसे इस बात का विश्वास नहीं हो सकता कि राष्ट्र-संघ उसके नेतृत्व का बकाब सहन कर सकता है। उससे कहा जाता है कि वह-अंगूर पूर्व के सब से शक्तिशाली राज्य का दुर्भाव व्यक्त कर लेगा और इससे उसके अपने देश को कोई लाभ नहीं होगा। इसमें कोई संदेह नहीं कि इस प्रश्न पर राष्ट्र-संघ की दृष्टि से भी बहुत कुछ कहा जा सकता है। लेकिन यह तो बहुत कच्ची दुनिया है जिसमें विदेश-सन्धियों को यथार्थवादी होना पड़ता है। मंत्री को बताना जाता है कि राष्ट्र-संघ को नीति अपनाते के खतरे बहुत अधिक हैं। इस समय तनिक-सा यथार्थवादी बकाई की रोक सकता है। वह उन ब्रिटिश हिन्दो के सम्बन्ध में जिन्हें बोट पहुँचाना कठिनता है आपात का सम्मान प्राप्त कर लेता। यह सर्वथा अनिश्चित है कि ब्रिटिश जनता भीम की ओर से भी गई इस कामवाही का जिसमें ब्रिटिश जन-जन की हानि हो सम्बन्ध करेगी। अधिकार ब्रिटिशों का कारण आपात नहीं प्रत्युत भीम की अराजकता है। यह भी माना जा सकता है कि मंगूरिया में पश्चिमासी सरकार की स्थापना ब्रिटिश साम्राज्य के लिए हितकर हो सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी न किसी दिन संशोधनों (Sanctions) की नीति का परीक्षण अवश्य होना चाहिए। लेकिन क्या इस परीक्षण के लिए ऐसा कोई प्रकरण चुनना उचित नहीं होगा जो सम्पूर्ण लोकमत को सरकार के पीछे खड़ा कर दे ठीक उसी दृष्टि से जिससे कि १९१४ में बेल्जियम के प्रश्न के ऊपर सारा लोकमत एतन्त्र सरकार के पीछे खड़ा था। विदेश-मंत्री को यह याद आयेगा कि जैसे ही बेल्जियम की उदरस्थता के प्रश्न पर विचार-विमर्श होना आरम्भ हुआ उदरस्थता की भावना जो बुलाई के दिनों में इसी पश्चिमासी की विधि प्रकार समाप्त हो गई। मंत्री को बताना जाता है कि क्या यह वह सच्चा आदर्श नहीं है जो उसे समझना चाहिए? क्या राष्ट्र-संघ के अन्दर विश्वास रखने का वह अभिप्राय है कि इन पर्यन्त आपदाओं की संभावना से यह मोड़ किया जाये। क्या इस प्रकार की विशेष परिस्थिति में क्याकचित् लेकिन अनिश्चित राष्ट्र-संघ की नीति के अन्तर्गत ना निवारण करना बुद्धिमत्ता नहीं होगी?

यह ठीक है कि मैंने एक नास्निक व्यक्ति का आशय किया है। लेकिन यह समझना बड़ा सुख है कि इस प्रकार का आग्रह होने पर एक विदेश-मंत्री यह मान नहीं सुखता से मान लेता कि हाँ यह समय उसके विचारों के परीक्षण का नहीं है। उसे यह स्पष्ट लक्ष्य हो सकता है कि वह पकटी पर है और दूरदृष्टि से काम नहीं ले रहा। वह सोचने लगेगा कि विदेशीय विचारों के विषय जो मुझमें रखा जा रहे हैं क्या उनमें भी इतना ही बल और आग्रह है। योंच राजनीति में यह परम्परा है कि जब कोई नया मंत्री पर सम्झौता है वह अपने सब अपने सब के अबका अपने विचारों के कुछ ऐसे अनिश्चित अभिप्राय लाता है जिनके बारे में उसका विश्वास होता है कि उन्हें उसके विचार की समझाओ वा विचार शान होना है। ये व्यक्ति सरकारी

अधिकारियों की श्रेणी से अलग होते हैं और मंत्री उनके साथ विभिन्न सम्मयाओं का मुक्त भाव से विवेचन कर सकता है। मेरा विचार है कि इंग्लैण्ड में भी इस पद्धति का अपना उपयोगी होगा। इस प्रकार का सबब इस देश में मंत्री तथा उसके व्यक्तिगत सचिव के बीच अत्यन्त विकसित हुआ है। उदाहरणार्थ श्री एस्किव तथा सर वाठमन मैथ या विस्काउट प्रे तथा लॉर्ड टिरेल के बीच इसी प्रकार का सम्बन्ध था। लेकिन मेरे विचार से इस प्रकार का सम्बन्ध उदाहरण श्री बार्बर हर्बर्टन के विरोध-मन्त्रित्व का है। उन्होंने १९२९ में जब विरोध-मंत्री का पद सम्हाला उनके सामने कुछ निश्चित उद्देश्य थे और उन्हें इस बात का भी स्पष्ट ज्ञान था कि वे इन उद्देश्यों को किस प्रकार प्राप्त करेंगे। उन्हें यह भी जान्ना था कि उनके अपने सिद्धान्तों तथा उनके अधीनस्थ विभाग के सिद्धान्तों के बीच काफ़ी अन्तर है। उन्होंने यह भी समझ लिया था कि यदि वे विभाग में अकेले रहे तो अपने सिद्धान्तों को रक्षा न कर सकेंगे। उक्त वे अपने साथ विभाग में ऐसे तीन व्यक्ति से गए जिन्होंने न केवल वैदेशिक मामलों का सम्भार अध्ययन ही किया था प्रत्युत ही ऐसा कि उन्हें शीर्षक निष्ठा से ज्ञात था उनके ही विचार रखते थे। वे उनके उद्देश्य की पूर्ति में अमूल्य सहायक हुए। उन्होंने उन्हें न केवल उनकी सामान्य नीति के बारे में आम्नासन ही दिया प्रत्युत वे अधिकारियों के सुझावों को स्वयं अधिकारियों की ही सम्मता से ही अर्पण में भी अर्पण थे। उन्होंने विस्तार की उन बातों के बीच में जिनमें एक विरोध मंत्री बड़ी सुपमता से खो सकता था एक सामान्य नीति का सार्वजनिक संभव कर दिखाया। यह सुनिश्चित है कि श्री हर्बर्टन ने विरोध-मंत्री के पद पर कार्य करते हुए अत्युत्पूर्व सफलता प्राप्त की। इसमें कोई संदेह नहीं कि इसका बहुत कुछ श्रेय उनकी अपनी अटल निष्ठा और श्रेष्ठ व्यवहार-बुद्धि को है फिर यह वे स्वयं स्वीकार करते थे कि उनका विशेष सचिवालय उनकी सफलता का किये अपरिहार्य था।

मेरा विचार है कि इस प्रकार की पद्धति मंत्री के लिए उस सूक्ष्म-सूक्ष्मता में से अपना अमीष्ट मार्ग जोर निकालने के लिए जिसका उसे सामना करना पड़ता है हर प्रकार से उपयोगी है। हो सकता है कि हार्बर्टन जैसे एक-दो मंत्रियों को इसकी आवश्यकता न हो लेकिन किसी औसत मंत्री को इससे सदैव ही सहायता पहुँचेगी। यह ठीक है कि इसमें कुछ कठिनाइयाँ भी हैं। इसकी परम्परा नहीं रही है और अधिकारों का इस अधिकारिता तथा समूह की दृष्टि से देखेंगे। इसका उत्तर यह है कि प्रत्येक नवीन ज्ञान के साथ ही प्रारम्भ भ एना होता है। प्राचीन परम्परानिष्ठ सिपाहियों ने साम्राज्यीय प्रतिरक्षा-मन्त्रिण को आपस में किया था। सिविल सर्विस के प्राचीन परम्परानिष्ठ अधिकारियों ने मन्त्रि-संरक्षणीय सचिवालय की आलोचना की थी। हम जानना था यह मनमय कदापि नहीं है कि हम सिविल सर्विस के वर्तमान अधिकारियों की सामना में अधिकारिता करते हैं। इसका मतलब तो केवल यही है कि मंत्री के पास कुछ ऐसे व्यक्ति रहें जो अधिकारियों की सिपाहियों और सुविधा पर विभाग की दृष्टि न नहीं प्रयुक्त मंत्री की दृष्टि से विचार कर सकें। फल में इस पद्धति को

को सफलता मिली है उससे हमें यह मानने का पूरा अधिकार हो जाता है कि इस पद्धति को यहाँ भी सफलता मिलेगी। वास्तव में विभागीय प्रबानों की शोच्यता का उल्लेख ही उसके अपमान के एक बहुत बड़ा कारण हो जाता है। इससे मंत्री को काफी सहाय मिलता है। इससे मंत्री को अधिकारियों के दावरे के अलावा भी जिसमें उसे मन्त्र पढ़ना पड़ता है एक ऐसा संघटन मिल जाता है जो यथा कि राष्ट्रपति कन्वेंशन जैसे व्यक्तियों के अनुभव से बताया है आधुनिक परिस्थितियों में अत्यन्त आवश्यक है। इसके द्वारा मंत्री तथा इस के अन्तर्गत सभी अधिकारी-सर्व के माध्यम से मुक्त रूप से संघासित नहीं हो सकते ठीक बने रहते हैं। इससे यह भरोसा हो जाता है कि मंत्री जो भी काम करेगा उसे उसके समस्त परिणामों पर विचार करने के उपरान्त करेगा। अब भी पुनः अपने आधुनिक उदाहरण पर सीटता है। सर जॉन साइमन अपनी आपात-विषयक नीति को सर्वोत्तम की अन्तिम-परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात् अपनाते हैं कि श्री हैडवर्ग के समय-काल में अवश्य होता तो इस बात का विरोध हो सकता था जो अन्य किसी में संभव नहीं था कि उसे स्वल्प दृष्टि से अन्तरे विस्लेषण के उपरान्त ही अपनाया गया है। मेरा विचार है कि विभागीय नीति का इस प्रकार से विस्लेषण करना मंत्री तथा अधिकारियों दोनों के लिए उपयोगी है। वास्तव में यह हमारे घातक की एक बहुत बड़ी दुर्बलता है कि उसमें इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं है।

मेरा विचार है कि अल्प मुक्तियों के अनुसार संवि-संज्ञकीय व्यवस्था की समस्त आलोचनाओं का समाधान किया जा सकता है। मेरे कहने का यह आशय नहीं है कि संवि-संज्ञ केवल असाधारण व्यक्तियों को छोड़ कर अन्य किसी के लिए अत्यधिक बोझा नहीं रहेगा। पीछे से लेकर कोई वैयक्तिक एक विचित्र व्यक्ति न यह पर ध्यान दिया है, जब सभी का धारण यह स्पष्ट कर देता है कि अब कोई निष्कर्ष संभव ही नहीं है। अन्तिम मौला-सारा उत्तर यह है कि जिन व्यापक हितों का अधिकारों को धारण करना पड़ता है इनका अन्य कोई परिणाम हो ही नहीं सकता। अब मुझ या घातक उनके निष्कर्षों पर निर्भर रहनी है, जब कोई विषयक एम मामा जिस परिवर्तन कर सकता है जैसे कि उदाहरणार्थ "केरोइगारी इन्प्लोयमेंट अविनिषय" (Unemployment Insurance Act) ने कर दिए थे जब संवि-संज्ञक को आज हृदयक जैसे विफट प्रश्न का समाधान खोजना पड़ता है, बोस्नेनस्प्लर्न की यह प्रसिद्ध उक्ति कि "मनुष्यों के धामन में टॉप बढ़ाने की अपेक्षा बरबाहा होना तथा अपनी मर्दें बरतना अधिक बेव्यक्त है" तुरन्त ध्यान में आ जानी है। एसी कोई संस्थापक मुक्तियाँ नहीं हैं जो मंत्री को अधिक में साम्प्रित से ऐसी नीति पर विचार करने का अवसर दे सकें जिसे कि उसे अधिक के बाहर ही तय कर लेना चाहिए था। एसी भी कोई मुक्ति नहीं है जो जिनके की हम जाना करते हैं, उनमें आने में अधिक प्रयासिक कार्यरत को प्राप्त कर सक। हमारी समस्याओं की व्यापकता और गहनता ही कुछ ऐसी है कि यह हमारी समस्याओं को हमसे कम अवधारण्य विषय कराने की अवधि नहीं देनी। उत्तरदायित्व के साथ मनुष्यों का

शासन करना सर्वैव ही पकाने वाला कार्य है और जितना ही अधिक मातृ एक मनी होगा उतना ही अधिक वह उस व्यवस्था से परिचित होगा जो उसकी भासार्थों को उसकी सफ़लता से पूरक करता है।

बाल्फोर को ने मंत्रि-मंडलीय व्यवस्था की जो दुर्बलताएँ बताई हैं मीने निवेदन किया है कि वे ऐसी कम हूँ जिन्हे सत्पावत युक्तियों से दूर किया जा सके। वे तो वास्तव में ऐसी कठिनाइयाँ हूँ जो मनुष्यों का शासन करने की कठिन बला में गिहित हैं। इस पद्धति में कार्यो का निर्देशन की चाहम बालास के सभों में "अनुपदिष्ट तथा अस्वायी राजनीतिज्ञो के एक निवास तथा स्वार्थी और विद्याभिमानी नीकरसाही के बीच" इस प्रकार विभाजित नहीं है बीना कि बहुत से बाल्फोरों ने मान रखा है। अपनी समस्त दुर्बलताओं के बावजूद भी अधिर्वास राजनीतिज्ञ अपन विश्वास के अनुसार लोक-व्ययाम की चेष्टा ही नहीं करते हैं प्रत्युत इस चतुस्त्र में सफ़लता प्राप्त करने के लिए बराबर कठिन परिश्रम भी करते हैं। सिविल सर्विस की परम्परा कुछ ऐसी है कि जितना ही अधिक उसका अनुभव किया जाये उतनी ही अधिक उसकी प्रशंसा करली पड़ेगी। मंत्रि-मंडल की बन्धीर चित्त का समय नहीं मिलता इसका कारण मन्त्रियों की दुर्बलता "विभावनाय के बोधो" की इस दुर्बलता के कारण से अधिक नहीं है। हम अधिक से अधिक इसी बात की व्यवस्था कर सकते हैं कि जब मंत्रि-मंडल अपना पत्र सम्माले वह क्या सम्भव इस बात से परिचित हो कि वह क्या करना चाहता है तथा उसके तद्विषयक निर्णय व्यापकतम बौद्धिक आचार पर निर्मित हों। लेकिन एक बार नीति निर्दिष्ट कर देने के उपरान्त साहसपूर्वक उसका पालन करना भी इच्छे कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। संसदीय लोकतंत्र अन्य बहुत-सी वस्तुओं का सामना कर सकता है लेकिन यदि उसके सासकों में साहस का अभाव है तो वह अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता। साहस उन समस्त संस्थाओं में जिनके द्वारा संसदीय लोकतंत्र जीवित रहता है ऐसी सक्ति तथा ध्येय-निष्ठा फूँक देता है जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र का नैतिक बरातल ऊँचा हो जाता है। अष्ट सरकार सर्वैव ही साहसी सरकार होनी है। लेकिन शासन में साहस केवल यह इच्छा करने का ही मामला नहीं है कि क्या नहीं है, वह यह भी जानने का मामला है कि किया ही इच्छा करना चाहिए।

जिस रूप में हमने संसदीय पद्धति को प्राप्त किया है उस रूप में वह कम से कम उस आचार को ही प्रदान करती ही है, जिसके अन्तर् कि इस ज्ञान को मुक्त बनाया जा सकता है। एक के सभर्न में स्थित होने पर वह चारणा के क्षेत्र से नर्म के लक्ष में प्रवेश करता है। इस पद्धति भी स्वयंसेवा को देखते हुए अन्य कोई सभर्न उचित रूप से उतका स्थान नहीं कर सकता। यदि हम प्रतिनिधिक शासन के दमगत सगठन की समस्त दुर्बलताओं को स्वीकार कर में तब भी एकमात्र नहीं जगता के ऐसे सगठन की व्यवस्था कर सकता है जो बरीयताओं के संयोग (articulation of preferences) की अनुमति दे सकता है। बहने का सार यह है कि वह न कबल विद्यापीठों को नर्म से संयुक्त करता है, प्रत्युत ऐसे विद्यापीठों को नर्म से संपन्न करता है जिनके पीछे सत्त्वा की प्रेरक शक्ति रहती है। मंत्रि-मंडल

इस प्रश्न का उत्तर ना दुसरी है। उसकी दृष्टीश्रिष्ट का विश्वास ही वह आधार है जिसके ऊपर वह संविमंडल बनता है और मूलतः उसकी घासन करने की शक्ति इस विश्वास के बने रहने से ही निर्धारित होती है। यहाँ भी जैसा कि संसदीय प्रक्रिया के प्रत्येक चरण के सम्बन्ध में सही है विश्वास का रहस्य उस सीमा पर निर्भर है जहाँ तक दली का पारस्परिक विश्वास बना रहता है। जैसा कि मैं कह चुका हूँ उनके लिए यह आवश्यक है कि वे एक ही भाषा बोलें। अर्थात् संवि-संघर्ष के रूप में उन्हें वही भाषा बोलनी चाहिए जो कि उनकी विभिन्न शक्तियों के अधिकारी बोलते हैं। पारस्परिक सहयोग के इस ताने-बाने के ऊपर ही पद्धति की अपने विभिन्न भागों के बीच वह सम्भाव बनाए रखने की शक्ति जिसके बिना उसका काम नहीं चल सकता निर्भर है।

अब तक जोटे धीरे पर यह सम्भाव बना रहा है। लेकिन अब उसके सामने कुछ ऐसे खतरे हैं जो उसकी अविच्छिन्नता को अत्यंत खतरा कर देते हैं। इन खतरों की अस्वीकार करना मुश्किल है। मैंने निवेदन किया है कि ये खतरे स्वयं घासन तंत्र के अन्तर्गत नहीं हैं। यह वास्तविक निराधार है कि मूलतः संवि-संघर्ष तथा कॉमन-समा का सम्बन्ध क्या है या संवि-संघर्ष तथा विभागीय का सम्बन्ध क्या है। पद्धति में सुधार सम्भव है और वे बाँकीय भी हैं लेकिन वे ऐसे सुधार नहीं हैं जो किसी भी स्तर पर पद्धति के मेकअप को स्पर्श करते हों। मैंने यह विचार रूप से निवेदन किया है कि संवि-संघर्ष का संघर्ष के ऊपर जो नियंत्रण है उसे समाप्त करने के पक्ष में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह कहना भी विरुद्ध निराधार है कि मंत्री अपने अधिकारियों के हाथों में अत्युत्तम मान बन कर रह गया है। वे बोलें ही मुक्तियाँ हमारे आशाकरण से विरुद्ध विमल आशाकरण की ओर झूट चलने की अच्युत इच्छा पर आधारित हैं। यदि हम इन बोलों मुक्तिपों को मान लेते हैं तथा उनका प्रयोग करते हैं तो इसके परिणामस्वरूप हमारी व्यवस्था गूँथ प्रण हो जायेगी। आधुनिक संविमंडल को मुख्य शक्ति यह है कि इसी के बीच अब तक जो सम्भाव बना रहा है वह अब उनके उद्देश्यों की भिन्नता के कारण संकटापन्न हो गया है। मैं इस बात को फिर कहता हूँ कि इस आई को सातुपात प्रतिनिधित्व जैसी निर्वाचकीय मुक्तियों से नहीं पाटा जा सकता। इसका कारण वह भेदभाव है जो उत्पादन की शक्तियों तथा उत्पादन के सम्बन्धों की विषमता से हमारे समाज में उत्पन्न कर दिया है। अब तक यह विषमता समाप्त नहीं होती संसदीय लोकतन्त्र के अन्तर्गत यह भेदभाव भी समाप्त नहीं हो सकता। इसका समाधान जैसा कि ब्रिजहॉट ने कहा था केवल उदार व्यक्तियों के संवि-संघर्षों की रचना से नहीं होया। इस सिद्धान्त का अर्थ यह है कि यह मंत्रियों को ऐसे कार्यों के निवारण का आग्रह देना है जिन्हें वे अपने सिद्धान्तों के अनुसार करने के लिए बाध्य हैं। इस प्रकार की नीति में यह भासा रहती है कि घाबर ऐसे कार्यों की तिलाञ्छति से सामाजिक शांति का कोई सुब सोचा जा सके। इस प्रकार का सिद्धान्त केवल आधुनिक विस्तार के ही सुगों में अब कि पूजीवादी विश्वास बनता के लिए रियासतों की बुद्धि की अनुमति देना है संभव हो सकता है। जहाँ

शासन करना सदैव ही बचाने वाला कार्य है और जितना ही अधिक मायुक्त एक मंत्री होगा उतना ही अधिक वह उस व्यवधान से परिचित होया जो उसकी बाधाओं को उसकी सफलता से पूरक करता है।

बालोचकों ने मंत्रि-मंडलीय व्यवस्था की जो दुर्बलताएँ बतलाई हैं वेने निवेदन किया है कि वे ऐसी कम हूँ जिन्हें घस्यागत युक्तियों से दूर किया जा सके। वे तो वास्तव में ऐसी बटिनाइया हूँ जो मनुष्यों का शासन करने की बटिनाइया में निहित हैं। इस पद्धति में कार्यो का निर्बन्धन श्री साहम बालास के सम्यों में "अनुपविष्ट तथा अस्वामी राजनीतिज्ञों के एक निवाम तथा स्वार्थी और विद्याजिमाणी नीकरसाही के बीच" इस प्रकार विभाजित मंत्री हैं कि वे बहुत से बालोचकों ने मान रखा है। अपनी समस्त दुर्बलताओं के बावजूब भी अधिकार राजनीतिज्ञ अपने विश्वास के अनुसार सोच-बन्धाव को चेटा ही नहीं करते हैं प्रत्यत इस छद्म्य में सफलता प्राप्त करने के लिए बचकर कठिन परिश्रम भी करते हैं। सिविल सर्विस की परम्परा कुछ ऐसी है कि जितना ही अधिक उसका अनुभव किया जाये उतनी ही अधिक उसकी प्रशंसा करनी पड़ेगी। मंत्रि-मंडल को मन्मीर जितन का समय नहीं मिलता इसका कारण मनुष्यों की दुर्बलता "विमामभाव के दोषों" की इस दुर्बलता के कारण से अधिक नहीं है। हम अधिक से अधिक इसी बात की व्यवस्था कर सकते हैं कि जब मंत्रि-मंडल अपना पद सम्हाले वह यथा सम्भव इस बात से परिचित हो कि वह क्या करना चाहता है तथा उसके तद्विपर्यय निर्णय व्यापकतम बौद्धिक आचार पर निर्मित हो। लेकिन एक बार नीति निश्चित कर लेने के उपरान्त साहसपूर्वक उसका पालन करना भी इससे कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। संसदीय नीतयंत्र अथ बहुत-सी बस्तुओं का सामना कर सकता है, लेकिन यदि उसके आसको में साहस का अभाव है तो वह अधिक समय तक जीवित नहीं रह सकता। साहस उन समस्त संस्थाओं में जिनके द्वारा संसदीय नीतयंत्र पीषित रहता है ऐसी अल्पिन तथा ध्येय-निष्ठा पूंछ देता है जिससे सम्पूर्ण राष्ट्र का नतिक बचावस ऊँचा हो जाता है। अष्ट सरकार सदैव ही साहसी सरकार होती है। लेकिन शासन में साहस केवल यह इच्छा करने का ही मामला नहीं है कि क्या सही है वह यह भी जानने का मामला है कि किसकी इच्छा करना सही है।

जिस रूप में हमने संसदीय पद्धति को प्राप्त किया है उस रूप में वह कम से कम उस आचार को तो प्रदान करती ही है जिसके ऊपर कि इस ज्ञान को मुख्य बनाया जा सकता है। एक के सभर्न में स्थित होने पर वह धारणा के क्षेत्र से बर्न के क्षेत्र में प्रवेश करता है। इस पद्धति की अपरेखा को देखते हुए बर्न कोई संभर्न जचित रूप से उसका स्थान नहीं ले सकता। यदि हम प्रतिनिधिक शासन के दक्षत संकटन की समस्त दुर्बलताओं को स्वीकार कर लें तब भी एकमात्र बही जनता के ऐसे संकटन की व्यवस्था कर सकता है जो बरीयताओं के सम्यो (articulation of preferences) की अनुमति दे सकता है। बहने का सार यह है कि वह न केवल सिद्धांतों को बर्न में संयुक्त करता है प्रत्यत ऐसे सिद्धांतों को बर्न से संयुक्त करता है जिनके पीछे सत्या की प्रेरक शक्ति रहती है। मंत्रि-मंडल

इस प्रकार सक्ति का दुस्ती है। उसकी दुस्तीयिण का विस्वास ही वह माना है। इसके ऊपर वह संवि-संरक्ष बनता है और मूलतः उसकी धारणा करने की सक्ति इस विस्वास क बने रहने से ही निर्धारित होती है। यहाँ भी जैसा कि संसदीय प्रक्रिया के प्रत्येक संघ के सम्बन्ध में सही है, विस्वास का रहस्य उस सीमा पर निर्भर है जहाँ तक वहाँ का पारस्परिक विस्वास बना रहता है। जैसा कि मैं कह चुका हूँ उनके लिए वह आवश्यक है कि वे एक ही भाषा बोलें। अर्थात् संवि-संरक्ष के रूप में उन्हें वही भाषा बोझनी चाहिए जो कि उनकी विधिक सक्ति के अधिकांश बोलते हैं। पारस्परिक सहयोग के इस ताने-बाने के ऊपर ही पद्धति की अपने विभिन्न भागों के बीच वह सद्भाव बनाए रखने की सक्ति इसके बिना उसका काम नहीं कर सकता निर्भर है।

अब तक मोटे तौर पर यह सद्भाव बना रहा है। लेकिन अब उसके सामने कुछ ऐसे खतरे हैं जो उसकी अधिभिक्ष्यता को अन्वेषण कर रहे हैं। इन खतरों को अन्वेषण करना मुर्खता है। मैंने विवेचन किया है कि वे खतरे स्वयं धारण करने के कारण नहीं हैं। यह बात विस्मयक विचार है कि मूलतः संवि-संरक्ष तथा काम-समा या सम्बन्ध फलतः ही या संवि-संरक्ष तथा विभागों का सम्बन्ध फलतः ही। पद्धति में सुधार सम्भव है और वे वांछनीय भी हैं लेकिन वे ऐसे सुधार नहीं हैं जो किसी भी स्तर पर पद्धति के मेकरान्ड का स्पर्श करते हों। मैंने यह विचार कर से विवेचन किया है कि संवि-संरक्ष का संरक्ष के ऊपर जो निर्भर है उसे समाप्त करने के पक्ष में कुछ नहीं कहा जा सकता। यह कहना भी विस्मयक विचार है कि यही अपने अधिकांशियों के हाथों में अत्युत्तम मात्र बन कर रह गया है। ये दोनों ही युक्तियों हमारे वातावरण से विस्मयक विचार वातावरण की ओर लौट चलने की आवश्यकता पर निर्धारित हैं। यदि इन इन दोनों युक्तियों को मान लेते हैं तथा उनका प्रयोग करते हैं तो इसके परिणामस्वरूप हमारे व्यवस्था मण्डल भ्रष्ट हो जायेगी। वास्तविक संवि-संरक्ष को मुख्य बनना यह है कि वहाँ के बीच अब तक जो सद्भाव बना रहा है वह अब उसके उद्देश्यों की विभक्तता के कारण संकटापन्न हो गया है। मैं इस बात को फिर कहना हूँ कि इन खतरों को धारण प्रतिक्रिया जैसी निर्वाचनीय युक्तियों से नहीं पाटा जा सकता। इनका कारण वह मेरमान्ड है या उत्पादन की सक्तियों तथा उत्पादन क सम्बन्धों की विषमता से हमारे समाज में उत्पन्न कर दिया है। अब तक यह विषमता धारण नहीं होती संसदीय लोकतन्त्र के अन्तर्गत यह मेरमान्ड भी धारण नहीं हो सकता। इसका समाधान जैसा कि मैंने कहा है वह एक प्रकार व्यक्तियों के संवि-संरक्षों की रचना से नहीं होया। इस विचार का अर्थ यह है कि यह सक्ति को ऐसे कार्यों के निवारण का सामन्त देता है जिन्हें वे अपने विद्यालय के अनुसार करने के लिए बाध्य है। इस प्रकार की नीति में यह बाधा रहनी है कि धारण ऐसे भागों की विचारक से सामाजिक धारण का कोई नुक़ा खाया जा सके। इन प्रकार का विचार केवल वास्तविक विचार के ही भागों में अब कि पूर्णकारी विचार बनता के लिए विचारों की वृद्धि की अनुमति देता है, संरक्ष ही संरक्ष है। यहाँ

ऐसा नहीं हो पाता इस प्रकार की चेष्टा का सीधा फल यह होता है कि पूँजीवादी विश्वास स्थिर हो जाता है। इंग्लैण्ड अमेरिका तथा फ्रांस के उदाहरण यही सिद्ध करते हैं। कहने का सार यह है कि एक समाजवादी एक पूँजीवादी सोवियत का सफलतापूर्वक संचालन नहीं कर सकता। वह उसका संचालन उसके विरोधी सिद्धान्तों के आधार पर ही कर सकता है। फलतः, उसका मन्त्रि-मण्डल उन परिस्थितियों को ध्यान में अग्रमूर्त्त है जिनमें वह यह जान सके कि वह क्या करना चाहता है और उसे किस प्रकार साहसपूर्वक कर सकता है। फलतः, वा तो वह बुर्जुअ सरकार का रूप धारण करता है या यदि वह साहसपूर्वक अपने विश्वास के अनुसार आचरण करता है अपने सद्देश्यों में पूँजीवादियों के उस विश्वास को स्थगित कर देता है जो उस अविच्छिन्नता को बनाए रखने के लिए उसकी संसदीय लोकतन्त्र मन्त्रि-मण्डल के संचालन के लिए माय बनता है आवश्यक है। मुझ इस संकट से बचने का कोई मार्ग नहीं दिखाई देता। संसदात्मक स्मरेखा के छोटे-बहुत सम्बोधन द्वारा ही इस संकट से बचने का कोई मार्ग पाया ही नहीं जा सकता। इस स्थल पर भी हम ऐसा कि इस पुस्तक के पहले अध्यायों में दिशाने का प्रयास किया है समाज की बुनियादों पर आ जाते हैं। हम उसके संस्थागत ढांचे पर तब तक सहमत नहीं हो सकते जब तक हम उन बुनियादों के स्वल्प के बारे में सहमत न हो जायें।

अध्याय ६

सिविल सर्विस

(१)

इसमें सब से सिविल सर्विस का प्रभाव अपेक्षाकृत नई चीज है। जब छत्तर वर्ष पूर्व बैजहोत्र ने अपना विद्वेषण किया था, उसने अधिकारियों के प्रभाव का विवेचन करता आश्चर्य नहीं समझा और सर सिडनी डी लॉ कि रोचक पुस्तक जो अब प्राम एन पीडी पुस्तकी है उनकी बेवकूफ बर्बादी करके रख जाती है। मेरे विचार से भी सिविल की "गवर्नमेंट जॉब इण्डरटैकिंग" जो सबसे पहले १८ में प्रकाशित हुई थी इसी राजनीतिक पद्धति पर बहु पहली महत्वपूर्ण पुस्तक है जो सिविल सर्विस के अहित महत्व को स्वीकार करती है। इस तीस वर्षों में जो उसके प्रथम प्रकाशन को हो चुके हैं यह कहना गलत नहीं है कि सिविल सर्विस ने सचिवालय का अर्थ किसी काम की अपेक्षा टीकाकारों का ध्यान अपनी ओर अधिक आकृष्ट किया है।

सिविल सर्विस का यह महत्व कई कारणों से है। पहला कारण तो निम्नलिखित स्वयं सिविल सर्विस का ही बड़ा हुआ कारण है। त्रिपेक्षात्मक राज्य से विध्यात्मक राज्य के परिवर्तन ने सार्वजनिक कार्य-व्यवहार में इतना अधिक विस्तार कर दिया है कि सभी प्रमुख नीति के बड़े बड़े निर्णयों के अतिरिक्त अब कुछ अपने अधिकारियों के ऊपर छोड़ने की साम्य हो गया है। वे दिन जब कि सर रॉबर्ट पील प्रधान-मंत्री के नाम समस्त विभागों की आम्बन्धितिक नामवाही का ज्ञान प्राप्त कर सकने से या लार्ड सेलसबरी विदेश-मंत्री के नाते समस्त महत्वपूर्ण पत्रों को स्वयं ही लिख सकते थे जब सर्वे के लिए बीस चुके थे। दूसरा कारण सर्विस के मग में अर्थव्यवस्था बढ़ि है। जब से १८७० में श्री मॉइन्स्टन ने अपने सुप्रसिद्ध सपरिषद आदेश (गार्डर इन कोन्सिडर) द्वारा सचिवालय की पद्धति (patronage) को हटा दिया सिविल सर्विस अपनी ओर ऐसे नोब्य व्यक्तियों को आकृष्ट करने में समर्थ हुई है जैसे कि इस देश में जीवन के अर्थ किसी क्षेत्र में पाये जा सकते हैं। उनके व्यवहार के मानक ही ही सारे संसार के लिए आदर्श बन गए। वे शिष्टाचार से दूर थे। वे सत्तारूढ़ सरकार की भाँड़े बसना स्वरूप कोषा भी हो समाज जल्पाह से सेवा करते थे। उन्होंने प्रशासन के संघासन के लिए ज्ञान का सपठन एक ऐसे मराठम पर कर दिया जो पूर्वजाम म विन्नुक विन्नु था। मेरे विचार से यह कहना सही नहीं है कि उन्होंने जानबूझ कर अहित प्राप्त करने की चेष्टा की। यह कहना अधिक सही होगा कि युवधर्म (zeitgeist) के अहित प्राप्त करने के अवसरों का निर्माण किया जिनसे बूकि ने नोब्य व्यक्तियों से उन्होंने कुछ लाभ उठाया। यह तथ्य कि वे अपनी योग्यता का परिचय देते से कुछ विधि में प्रगट होता था जिसका उन्हें धामना करना पड़ता था। १८७० के

परचाट् से इंग्लैण्ड में नागरिक प्रशासन की स्थापना ही ऐसी थी एक समस्याएँ हीं जिनमें कि सफलता मिली हो। अधिकारियों ने प्रायः प्रत्येक समस्या का ही अत्यंत योग्यतापूर्वक समाधान किया है। इस योग्यता के भाव से उन व्यक्तियों तक में जो राजकीय कार्य करने के विवेक के बारे में संदिग्हास्पद थे वह भाव उत्पन्न हो गया कि अधिकारी अपने कार्य को करना जानते हैं। जब १८९७, १८८४ और १९१८ में नए निर्वाचकों ने राज्य से यह मांग की कि वह सामाजिक सुविधाओं के विस्तार द्वारा उनके भार को कम करे, इन मांगों की पूर्ति के लिए इन व्यक्तियों के ऊपर निर्भर रहना स्वाभाविक हो गया। जब सिविल सर्विस के अधिकारियों ने सफलतापूर्वक इन मांगों की पूर्ति कर दिखाई, जनता में यह विश्वास बस पकड़ गया कि यदि कहीं कठिनाई है तो राज्य के पास इन कठिनाई को दूर करने के साधन हैं।

इसमें कोई संदेह नहीं कि नियोजनमय राज्य से विधायक राज्य का यह परिचय कुछ अंश तक स्वयं सिविल सर्विस के अधिकारियों के प्रयत्नों का फल है। वेल्सेले के समय में सिविल सर्विस के प्रत्येक योग्य अधिकारी में "कर्मठता की प्रवृत्ति" होती है। प्रायः जब किसी योग्य व्यक्ति में शिक्षा सार्वजनिक स्वास्थ्य कारखानों के व्यवस्थापन और जालों की सुरक्षा जैसे प्रश्नों के समाधान के लिए कहते हैं तो इसके दो परिणाम अवश्यम्भावी हैं। उससे तथ्य खोजने के लिए कहना उससे निष्कर्ष बनाने के लिए कहना है और यह तथ्य ही कि वह निष्कर्षों की रिपोर्ट देता है निश्चितता नर्म के एक सिद्धांत को प्रयत्न करता है। यह समर्थन है कि जन्नीसबी घटनाओं में समाजवादियों ने इंग्लैण्ड की औद्योगिक स्थितियों की जो तीव्र मर्सना की है उसका अधिकार भाव सरकारी प्रयोगों की खोजों के ऊपर आधारित है। मंत्री उस ज्ञान के बर्ष से बच कर नहीं निकल सकते थे जिसके प्रकाशन के लिए वे स्वयं उत्तरदायी थे। और वहाँ उन्होंने यह समझना प्रारम्भ कर दिया कि इससे बचकर निकलने का कोई मार्ग नहीं है, वे उन व्यक्तियों की संस्था को सुनने के लिए विवश हो गए जो उस ज्ञान को प्रकाश में लाए थे जिन्होंने उस ज्ञान को नमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया था जिन्होंने उसके परिणामों पर विचार किया है और उसके बारे में वास्तवता का एक ऐसा भाव विकसित किया है जो जेडो के अनुसार उस ज्ञान में जो व्यक्तित्व का सजीव अंश बन जाने चाहिए अन्तर्भूत होता है। मेरे विचार से यह कहना सही नहीं है जैसा कि सिविल सर्विस के कुछ व्याख्यातकों ने कहा है कि उसके अधिकारियों में सदा प्रान्त करने की तुलना होती है। यदि वास्तव सत्य है यदि सार्वजनिक स्वास्थ्य के स्तर को ऊँचा करना है यदि कुछ ऐसे वाजिब्य है जिनमें बैठन बहुत ही कम है यदि जनता कारखानों में कुछ निम्नतम स्वच्छता तथा सुरक्षा की मांग करती है तो ज्ञान का ऐसा संभव होना संभव है जो नर्म की अनुमति दे सके। कर्म के कुछ शिक्षाओं का निरन्वय होना चाहिए और सिविल सर्विस का अधिकारी जिसने सम्पूर्ण जीवन इस ज्ञान के आराधन में व्यतीत किया है स्वभावतः इन शिक्षाओं पर परामर्श देगा। किन्तु, चूंकि उसमें योग्यता है, अतः उसके विचार भी अवश्य होंगे और

बहु मंत्री के निर्देश को बिना विचार-विमर्श के स्वीकार नहीं करेगा। मंत्री को यह बता देना कि उस नीति के बिचके लिए मंत्री उत्तरदायी होना चाहता है ये ये परिणाम हो सकते हैं उसका कर्तव्य है। उसे मंत्री को स्पष्ट रूप से बता देना चाहिए कि असुर नीति से हानि की और असुर नीति से काम की सम्भावना है। निश्चय मंत्री को ही करना चाहिए। लेकिन बहु उम समय तक बुद्धिमत्तापुत्र निश्चय नहीं कर सकता जब तक कि वह अपने अधिकारियों के अनुभव से लाभ नहीं उठाता। इसमें पड़सम्ब बंसी कोई बात नहीं है। यह तो सामान्य व्यवहार-बुद्धि है। बहु नीति को अधिकारियों के अनुभव से पृथक् होनी निश्चिततः पूर्वतापूर्वक और अधिकतर विभाजक होगी।

संक्षेप में सिबिल सर्विस का प्रभाव इसलिये है क्योंकि यह प्रभाव राजनीतिक मोक्षजन में यमित आवश्यकताओं का तरस्थानी है। जहाँ एक बार मार्बनीम मना-धिकार हुआ राजनीतिक दम स्वभावतः अधिक से अधिक मठ प्राप्त करने की चेष्टा करते हैं। वे धनिक से अधिक लोकमत को जानी और जाहृष्ट करने के विचार से अपने कार्यक्रमों का निर्माण करते हैं। जब धनिक प्राप्त करने के उदरगत उन्हें अपने कार्यक्रमों को व्यावहारिक रूप देना पड़ता है। सचक प्रघासन का जर्ब यह होता है कि वे अपनी नीति का निर्माण उम मान और अनुभव के अनुसार करें जिसके लिए वे पूर्वत तो नहीं लेकिन मुख्यतः विभागों के ऊपर निर्भर होते हैं। किसी भी एमे समाज में जो परम्पराओं से बचा हो तथा कतिपय जीवन रीतियों का सम्बन्ध हो अनिवादी परिवर्तन के अतिरिक्त धर्म किसी उपाय से मुबार नहीं हो सकता। हमारी जैसी व्यवस्था जिसका धर्म व्यवहार की एकक्यता तथा परम्परादिष्ठ प्रयासों की तुष्टि प्रदान करना हो एक ऐसे बानरे क अन्दर ही नवीन कार्यक्रमों को सहन कर सकती है जिसकी बचरेस्ताए शात हा और स्वीकृत हो। बानरे के अन्दर महत्त्वपूर्ण परिवर्तन सफ़रतानुर्भक तमी लिए जा सकते हैं जबकि जनता का मानस उमकी आवश्यकताओं के विचार से आत्मनिष्ठ हो गया हो। सिबिल सर्विस का वास्तविक कार्य सरकार को एक बचते हुए प्रतिष्ठान के रूप में बनाए रखना है। बहु लोक-निर्वाचनों के लठरे उसके परिणामों को एक ऐमे माध्यम के आविष्ट करके जहाँ अन्वेषणात्मक बात कर्म का रसात्मक आच्छादन हो बुर करती है। बहु जनता की इच्छा को जिसे कि सत्ता कड दम प्रतिबिम्बित करता है लिप्लत तथा निरात्मक अनुभव के साथ सम्बन्धित करके व्यावहारिक आचार देती है। उसका प्रायिकार प्रभाव का है, धनिक का नहीं। बहु परिणामों की ओर सचेत करती है बहु आदेश आरोपित नहीं करती। जो निर्णय सामने जाता है बहु मंत्री का निर्णय होता है। उसका काम तो एसी सामग्री प्रस्तुत कर देना है जिसकी सहायता से उसके विचार में सर्वश्रेष्ठ निर्णय किया जा सक।

मेरा विश्वास है कि पिछले सत्तर वर्षों में सिबिल सर्विस के सभी प्रमुख अधिकारियों ने अपना काम इसी भावना से किया है। उनके कार्यों के स्वरूप में परिवर्तन कुछ तो परिवर्तित निर्वाचकोय प्रत्याघाओं के परिणाम के कारण है तथा कुछ इत कारण है कि सिबिल सर्विस विधायक पृष्ठ के बचपाद विभागों की एक अहम्भय गुंथका नहीं रही है, प्रत्यत अपने एक एकीकृत प्रघातनिक तंत्र का रूप धारण कर

दिया है। पहला उच्च निर्वाचकों के विस्तार का हीरा उल्टा है। आज जिन्हें सम्पुष्ट किया जाता है उनकी मारें उन मांगो छ भिन्न है जिन्हें रखेक या पीस लैडस्टन या डिजरेली पूरा करने का प्रयास करते थे। दूसरे का कारण यह है कि चुनाव प्रघासन की आवश्यकताओं के उल्लेखरूप विभाग स्वयं को सर बारेन टिप्पर के अनुसार "एक सुमम्बद्ध तथा सम्पूर्ण अवयव के घटक" मानने को बिबस हो गए हैं। पिछली पीढ़ी में हमने "विभागीय सिद्धान्त के स्थान पर सेवा-सिद्धान्त" का भी विकास देखा है। यह अभी पूर्ण नहीं है। प्रतिस्था के तीन विभागों का संघर्ष इसका एक प्रमाण है। लेकिन अब यह मग समीप आता जा रहा है जबकि सामान्य प्रघासनिक नीति की कपरेबाएँ विभागों के प्रधानों के पारस्परिक और अविच्छिन्न सहयोग का परिणाम हुआ करेगी। आजकल प्रघासन एक छे प्रयोजन की पूर्ति के लिए पूर्वकाल की अपेक्षा नहीं अधिक बेप्टासीस है।

(२)

सिबिल सचिस अपन आधुनिक रूप में प्रथम सत्तर वर्ष पुरानी है। इस समय इसका जो स्वरूप है, उसे भी लैडस्टन ने १८७७ में ट्रेबेकियन गार्बकोर्ट रिपोर्ट की सिपारिजों को कामास्थित करके तथा उसमें प्रवेश के लिए "मुक्त प्रतियोगितामूलक परीक्षाओं" की स्थापना करके निर्धारित किया था। स्वभावतः इसक पश्चात् से उसकी कपरेबा के म्यूनाधिक पुनर्वर्धन होने रहे हैं। लेकिन १८७७ के पश्चात् के प्रत्येक परीक्षण ने भी लैडस्टन के निर्णय को बढिमता को पुष्ट किया है। इसके कारण हमने कपरेबा के प्रमुख बोधो का ही अस्त नहीं किया है। इन बोधो का अस्त हो जाने से एक ऐसी सिबिल सचिस अवतीर्ण हुई है जो अष्टाचार से बहुत दूर है तथा जो अपेक्षा इत बोज छे पारितोपिक के बरक में भी इस देश के कुछ सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ हुई है।

मैं यहाँ ऐसे जटिल प्रश्न के मगठन और संभालन का बर्भन तक नहीं कर सकता। यहाँ सचिस की मुख्य विधेयताओं की ओर ध्यान आकृष्ट करना पर्याप्त होया। मेरे विचार से इनमें से दो विधेयताएँ बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। पहली विधेयता तो यह है कि सचिस की विभिन्न अविर्भा देश की शिक्षा-मण्डलि के विभिन्न स्तरों के साथ जुड़ी हुई हैं। दूसरी विधेयता यह है कि प्रवेश के लिए परीक्षा की पद्धति किसी विज्ञाप विभाग के लिए निर्गुनी विधेय अर्हताओं की परीक्षा नहीं है अप्त बहु सामान्य बुद्धि की परीक्षा है जिसे निमुक्ति के पश्चात् उन समस्याओं के व्यावहारिक परिचय द्वारा जिनका उसे समाधान करना पड़ना प्रतिष्ठित व अनुज्ञासित किया जाता है।

यह समझना सुयम है कि पहले सिद्धान्त के प्रति प्रेरणा जितनी स्वाभाविक थी। लेकिन उसके परिणाम उससे कहीं अधिक व्यापक थे जिनकी कि उसके निर्माताओं ने कल्पना की थी। उसने वास्तव में जो दिया वह यह था कि सिबिल सचिस को चार बड़ी श्रेणियों में बाँट दिया। ये चार श्रेणियाँ मोटे तौर पर सामान्य जनसंख्या के सामाजिक संघटन की व्यक्त करती थीं। सबसे नीचे बरातक पर बहु श्रेणी थी जिसका सारा जीवन मूल्यक कार्य में व्यतीत होता था। इस श्रेणी को प्रयोग और

पुस्तक का तो ध्यान रखना पड़ता था लेकिन वह उपक्रम और उत्तरदायित्व से विमुक्त रहित थी। इसी से ही कर्क-प्रतिकारियों की थी। इसे अधिकतर नैतिक कार्य करना पड़ता था और केवल सिद्धि के कुछ लोगों को छोड़ कर इससे पही भाषा की जाती थी कि वह परम्परागत नियमों को नहीं सामग्री के ऊपर काट कर दे। इससे ठीकी अधिसासक-येही थी। यह येही उत्तरदायी प्रवृत्त थी लेकिन इसका अधिकांश समय नीति के लिए सामग्री तैयार करने में जाता था न कि नीति के सम्बन्ध में पहुँच करने में। अतः उनमें ऊपर प्रशासकों की श्रेणी थी। ये लोग विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किए होते थे मन्त्रियों को पंजना बैठे थे और नीति के निर्माता होने थे। उन पाँच साक्ष्य व्यक्तियों में से जो किसी न किसी रूप में सिद्धि सचिब के अधिकारी हैं ३३ व्यक्ति तो शास्त्रात्मक नानागतों तथा शास्त्र के अतिरिक्त प्रायः २५ व्यक्ति विभिन्न विभागों में निरीक्षक हैं और प्रायः ७ ऐसे व्यक्ति हैं जो व्यावसायिक तकनिकस तथा वैज्ञानिक कार्य करते हैं। इनमें दिल्ली इंस्टीट्यूट, नीतिकशास्त्री और चिकित्सक आदि अपने-अपने विषयों के विद्यार्थी सम्मिलित हैं।

इस अपरेखा से विद्यार्थी मुद्दोगर बयों में कुछ बस्तुएँ तुरन्त ही सामने आती हैं। सिद्धि सचिब में वास्तविक दक्षिण प्रशासनिक शक्ति के पास हैं। वह येही सम्पूर्ण शासन की प्रेरक शक्ति है और यही ऐसे नियम करती है जिसका महत्त्व होता है। इस शक्ति के व्यक्ति विश्वविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किए हुए होते हैं। उनमें से अधिकांश डॉक्टरेट्स तथा कॅम्ब्रिज से आते हैं। प्रशासनिक श्रेणी की सामाजिक रचना का विश्लेषण यह प्रकट करता है कि उसके सबस्य ऐसे व्यक्ति परिवारों से सम्बन्ध रखते हैं जो अपने पुत्रों को बड़े सामाजिक विद्यालयों में भेज सकते हैं। यह विश्व-विद्यालय के सम्बन्ध में विद्यार्थी रूप से सत्य है। यद्यपि कर्क-येही के कुछ लोगों की तो अधिसासक श्रेणी के पदों उन्नति कर दी जाती है, लेकिन अधिसासक श्रेणी और प्रशासनिक शक्ति के बीच इस प्रकार का सम्बन्ध बहुत कम रहता है। अधिसासक श्रेणी के प्रशासनिक शक्ति के पदों पर बर्षों में धायक पचास व्यक्तियों की उन्नति हो पाती हो। कहने का अभिप्राय यह है कि इस संघटन की विभिन्न श्रेणियों के बीच कुछ ऐसी दूरियाँ हैं जो धायक ही कभी मिट पायें। केवल दो-चार अपवादों को छोड़कर एक व्यक्ति जिस श्रेणी पर सिद्धि सचिब में प्रवेश करता है वही येही उसके प्राथकीय जीवन को निर्धारित करती है। केवल चूकि उसकी प्रवेश-येही प्रायः पूर्ण रूप से उपाधी वैज्ञानिक मुविधार्थों से निर्धारित होती है और ये वैज्ञानिक मुविधार्थों परकी परिवारिक परिस्थितियों से निर्धारित होती है अतः एक व्यक्ति का प्राथकीय जीवन उस वन द्वारा निर्धारित होता है जिसमें कि व्यक्ति कार्य करता है।

यह कहा जा सकता है कि यह सब सिद्धि सिद्धि सचिब के स्वरूप की अनुचित व्याख्या करता है। जो उस पर धायक करते हैं, वे मुख्यतः उही वर्ग से सम्बन्ध रखते

किया है। पहला तथ्य निर्वाचनों के विस्तार का सीधा फल है। आज जिन्हें सम्पूर्ण किया जाता है उनकी मर्मे उन माबो से मिलते हैं जिन्हें रसेल या पीस प्लैंडस्टन या डिब्रैकी पूरा करने का प्रयास करते थे। दूसरे का कारण यह है कि सुधात प्रशासन की आवश्यकताओं के फलस्वरूप विभाग स्वयं को घर बारेत फियर के धनसार "एक सुमन्वय तथा सम्पूर्ण व्यवस्था के अन्तर्गत" मानने को विवश हो गए हैं। पिछली पीढ़ी में हमने "विभागीय विद्यालय के स्थान पर सेवा-विद्यालय" का भी विकास देखा है। यह अभी पूर्ण नहीं है। प्रविद्या के तीन विभागों का संघर्ष इसका एक प्रमाण है। लेकिन अब यह मन समीप आता जा रहा है जबकि सामान्य प्रशासनिक नीति की अपेक्षाएँ विभागों के प्रशासकों के पारस्परिक और अनिच्छित सहयोग का परिणाम हुआ करेगी। आवश्यक प्रशासन एक से प्रयोजन की पूर्ति के लिए पूर्वकास की अपेक्षा नहीं अधिक भेद्यशील है।

(२)

विविध सचिव अपने आधुनिक रूप में प्रायः सत्र वर्ष पुरानी हैं। इस समय इसका जो स्वरूप है उसे श्री प्लैंडस्टन ने १८७ में ट्रेडेस्मैन नावकार्ट रिपोर्ट की विचारों को कार्यान्वित करके तथा उसमें प्रवेश के लिए 'मुक्त प्रतियोगितायुक्त परीक्षाओं' की स्थापना करके निर्धारित किया था। स्वभावतः इसके पश्चात् से उसकी अपेक्षा के न्यूनताविक पुनर्गठन होने रहे हैं। लेकिन १८७ के पश्चात् के प्रत्येक परीक्षण ने श्री प्लैंडस्टन के निर्णय की बख्शिता को पुष्ट किया है। इसके कारण हमने मरलाह के प्रमुख बोया का ही अन्त नहीं किया है। इन दोषों का अन्त हो जाने से एक ऐसी विविध सचिव बचती है हुई है जो अन्तःकार से बहुत दूर है तथा जो अपेक्षा इतनी ही से पारितोषिक के बखल में भी इस देश के कुछ सर्वश्रेष्ठ व्यक्तियों को अपनी ओर आकृष्ट करने में समर्थ हुई है।

मैं यहाँ ऐसे अतिरिक्त प्रश्न के समझन और संभावना का बर्नन तक नहीं कर सकता। यहाँ सचिव की मुख्य विद्यपताओं की ओर ध्यान आकृष्ट करना पर्याप्त होगा। मेरे विचार से इनमें से दो विद्यपताएँ बहुत महत्वपूर्ण हैं। पहली विद्यपता तो यह है कि सचिव की विभिन्न भवियाँ देश की विद्या-यज्ञ के विभिन्न स्तरों के साथ जोड़ी हुई हैं। दूसरी विद्यपता यह है कि प्रवेश के लिए परीक्षा की पद्धति किसी विशेष विभाग के लिए किसी विशेष अर्थताका की परीक्षा नहीं है। अन्तुत यह सामान्य बुद्धि की परीक्षा है जिसे नियुक्ति के पश्चात् उन अवस्थाओं के व्यावहारिक परिचय द्वारा जिनका उसे समाधान करना पड़ेगा प्रशिक्षित व अनुशासित किया जाता है।

यह समझना सुबम है कि पहले मिडलान्ड के प्रति प्रेरणा विद्यता स्वाभाविक थी। लेकिन उसके परिणाम उससे कहीं अधिक व्यापक थे जिनकी कि उसके निर्माताओं ने कल्पना की थी। उसने वास्तव में जो किया वह यह था कि विविध सचिव को बार कड़ी श्रेणियों में बाँट दिया। ये बार श्रेणियाँ भेजे तौर पर सामान्य जनसंख्या के सामाजिक संघटन को व्यक्त करती थी। सबसे नीचे बचतल पर वह श्रेणी थी जिसका साथ जीवन शैल्यक कार्य में व्यतीत होता था। इस श्रेणी को प्रयोग और

मुद्रता का तो ध्यान रखना पड़ता था लेकिन वह उपक्रम और उत्तरदायित्व में विस्तृत व्यक्ति थी। दूसरी श्रेणी कर्म-प्रतिकारियों की थी। इसे अधिकतर नैतिक कार्य करता पड़ता था और केवल चित्त के कुछ लोगों को छोड़ कर इसमें यही भाषा की जाती थी कि वह परम्परागत नियमों को नई सामग्री के ऊपर लागू कर दे। इससे ऊँची अधिगामक-श्रेणी थी। यह श्रेणी उत्तरदायी प्रवृत्तियों की लेकिन इसका अधिकार समय-समय के लिए सामग्री तैयार करने में जाता था न कि नीति के सम्बन्ध में वक्तू करने में। अतः उनमें ऊपर प्रयासकों की श्रेणी थी। ये लोग विरहविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किए होने से मजिबों को मंजपा देठ से और नीति के निर्धारण होने से। उन पाँच साज्ज व्यक्तियों में से जो किसी न किसी रूप में त्रिविध सविन के अधिकारी हैं ११ व्यक्ति तो शास्त्रात्मक भाषणों तथा शाब्दिक जैसे औद्योगिक प्रतिष्ठानों में लगे हुए हैं। शेष में से प्रायः ७ व्यक्ति कर्म-श्रेणी के १५ अधिगामक श्रेणी के तथा १३ • प्रशासनिक श्रेणी के हैं। इनके अतिरिक्त प्रायः २५ व्यक्ति विभिन्न विभागों में निरीक्षक हैं और प्रायः ७ ऐसे व्यक्ति हैं जो व्यावसायिक तकनिकस तथा वैज्ञानिक कार्य करते हैं। इनमें चिम्पी वैरिण्ट, प्रौद्योगिकशास्त्री और चिकित्सक आदि अपने-अपने विषयों के विशेषज्ञ सम्मिलित हैं।

इस दृष्टिकोण से विधायक मुद्रोत्तर श्रेणी में कुछ बस्तुएँ सुरक्षित ही सामने आती हैं। त्रिविध सविन में वास्तविक गति प्रशासनिक श्रेणी के पास हैं। यह श्रेणी सम्पूर्ण धारण की प्रकृति गति है और यही ऐसे नियम करती है जिसका महत्त्व होता है। इस श्रेणी के व्यक्ति विरहविद्यालयों में शिक्षा प्राप्त किए हुए होते हैं। उनमें से अधिकांश डॉक्टरों तथा कर्मिन्त्र से आते हैं। प्रशासनिक श्रेणी की सामाजिक रचना का विशेषण यह प्रकृत करता है कि उसके सदस्य ऐसे व्यक्ति परिवारों से सम्बन्ध रखते हैं जो अपने पुत्रों को बहु-सांख्यिक विद्यालयों में भेज सकते हैं। यह विशेष विभाग के सम्बन्ध में विज्ञापन रूप से सत्य है। यद्यपि कर्म-श्रेणी के कुछ लोगों की तो अधिगामक श्रेणी के पक्षों उन्नति कर दी जाती है, लेकिन अधिगामक श्रेणी और प्रशासनिक श्रेणी के बीच इस प्रकार का सम्बन्ध बहुत कम रहना है। अधिगामक श्रेणी से प्रशासनिक श्रेणी के पक्ष पर वर्षों समय पचास व्यक्तियों की सम्पत्ति हो पायी है। कहना कि अधिगाम यह है कि इस संघटन की विभिन्न श्रेणियों के बीच कुछ ऐसी दूरियाँ हैं जो धारण ही कभी बित पायें। केवल दो-चार अपवादों को छोड़कर एक व्यक्ति विद्व श्रेणी पर त्रिविध सविन में प्रवेश करता है, यही श्रेणी इसके धारणीय जीवन को निर्धारित करती है। लेकिन चूँकि उसकी प्रवेश-श्रेणी प्रायः पूर्ण रूप से उगरी वैज्ञानिक मुविभागों से निर्धारित होती है और ये वैज्ञानिक मुविभागें उक्तकी पारिवारिक परिस्थितियों से निर्धारित होती हैं अतः एक व्यक्ति का धारणीय जीवन उक्त वर्षों का निर्धारित होता है जिसमें कि व्यक्ति प्रवेश करता है।

यह कहा जा सकता है कि यह सब त्रिविध सविन के स्वरूप की सन्तुष्टि व्याख्या करता है। जो बात पर धारण करते हैं वे मुख्यतः उसी वर्ष से सम्बन्ध रखते

है जो कि कॉमन-समा पर ध्यान करता है। मुख्यतः वे एक से विद्यालयों और विश्वविद्यालयों में सिखा पाते हैं और सचिव में प्रवेश करने के उपरान्त एक से कम्बो के सदस्य बनते हैं। उनके विचार या यह कहना चाहिए कि वे भारतीय जिनके ऊपर वे विचार निर्भर होते हैं, उन लोगों की ही हैं जिनके हाथ में उत्पादन के साधनों का नियंत्रण है। सिविल सचिव के नामे उनकी सफलता मुख्यतः इसी तथ्य के ऊपर आधारित है। सामाजिक नीति के सम्बन्ध में उनके विचार बहुत कुछ उन मजदूरों के समान ही होते हैं जो कि उनके लिए उत्तरदायी होते हैं। वे जिस समाज की कल्पना करने हैं वह न्यूनाधिक रूप से उसी प्रकार का समाज होगा है जिसकी वे मानी जिनके साथ उन्होंने सहयोग किया है कल्पना करते हैं। उनके अनुभव में ऐसी कोई बात नहीं होगी जिससे वे मानावरण का निर्बंधन कुछ इस प्रकार करने चाहें कि उनके मन में उन भारतीयों के प्रति राका उत्पन्न हो जाये जिनके ऊपर कि हमारी व्यवस्था निर्भर है।

मेरे विचार से यही वह कारण है कि इन साठ वर्षों में नवो सिविल सचिव अपनी तटस्थता बनाए रख सकी है और नवों उसकी सिपारिसें बीलों ही वक्तों के मन्त्रि मन्त्रियों को समान रूप से स्वीकार्य हुई है। यह तन्त्र्य इसलिए रह सकी है क्योंकि उसके कार्य सम्बन्धी सिद्धान्त बही रहे हैं जिनके ऊपर नि युद्ध के पूर्व इस देश के राजनीतिक दलों की नीति निर्भर की। जूनि १९२९ के परचाय से बोर्ड की धनिक सरकार व्यावहारिक दृष्टि से इन सिद्धान्तों से नहीं हटी है अतः सिविल सचिव की तटस्थता के सम्बन्ध में कभी कोई शका नहीं उठी है। नीति के सम्बन्ध में भी यही बात सच है। प्राथमिक सिविल सचिव के मन में किसी भी सरकार से ऐसे कार्यक्रमों पर आशय नहीं किया जिनसे कि राज्य की बुनियादों पर सन्देह उठता। जनवर्तों सर कार माना में मिश्र रही है। सिविल सचिव की तटस्थता ऐसी नीति का समर्थन करने की आवश्यकता द्वारा परीक्षित नहीं हुई है जो समाजवादी दल की नीति की भाँति उन परम्परागत विचारों को कुनीनी देती हो जिनका कि उसने सब तक साथ दिया है।

मेरे कहने का यह अन्तिमप्राय वदयि नहीं है कि सिविल सचिव इस प्रकार की परीक्षा में सफल नहीं होगी। मैं केवल यही कह रहा हूँ कि अब तक ऐसी आवश्यकता नहीं उठी है। मैं यह अवश्य निवेदन करता हूँ कि उसकी अनुर्व सफलता का एक मुख्य कारण यह है नीति की बुनियादों के ऊपर राजनीतिक दलों में एकरत रहा है। इसके कलस्वरूप मजदूरों तथा अधिकांशों में प्रेमपूर्ण सहयोग बना रहा है। इस सह-योग का आधार यह है कि वे दोनों नीति के ऐसे बड़े सिद्धान्त कार्यान्वित करने के लिए जिन्हें वे समान रूप से स्वीकार करते हैं एक साथ हैं। वास्तविक समस्याएँ तो सभी भारतीय होगी अब कि यह स्थिति नहीं रहेगी। उदाहरणार्थ क्या सर पॉरिस हैकी जिनमें राजनीय आयोग के सामने यह कहा है कि वे सरकार-उद्योग के राष्ट्रीयकरण का चाणक मानते हैं उस पब्लिक सरकार के साथ सहयोग कर सकते हैं जो कि इस नीति के ऊपर अटक है? क्या सर्व-विश्राय जो सार्वजनिक विभागीय-भागों की बनी नीति

के बराबर विरुद्ध रहा है ऐसे मंत्रि-सम्बन्ध के साथ सहयोग कर सकेगा जिसकी इस विरोध से कोई सहानुभूति न हो। क्या वह विरस-विभाग जो होर-तावत प्रस्तावों के लिए इतना अधिक उत्तरदायी है पूरी शक्ति से ऐसे किसी मन्त्री का साथ देना जो अपनी सारी नीति सामूहिक सुरक्षा के सिद्धान्तों की समाजवादी व्याख्या के ऊपर आधारित करता हो।

इस समस्त प्रश्नों का 'हाँ' में उत्तर देना कठिन है। यह सही है कि तिविल सचिस के विभाग ने मन्त्रिमो के साथ सम्बन्ध हृदय से सहयोग करने की एक सक्तिशाली परम्परा का निर्माण कर दिया है। लेकिन यहाँ एक महत्वपूर्ण अंतर विचारणीय है। एक ऐसी नीति को कार्यान्वित करना जिसके सिद्धान्तों को आप स्वीकार करते हैं एक बात है। लेकिन एक ऐसी नीति को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करना, जिसकी बुनियादों को आप वास्तव मानते हैं एक दूसरी बात है। ऐसी स्थिति में उपरोक्त प्रभूति सामने आने वाली बाधाओं का अधिक-सं-अधिक बढ़ा लेनी। यह दृष्टिकोण संकल्प-शक्ति को नष्ट कर कर देता है तथा इसका महत्व समझना अत्यन्त आवश्यक है। सम्बन्ध मन्त्री के ऊपर भी इसका बहुत बरा प्रभाव पड़ता है। वह उन सबेहों तथा खतरों की ओर देखने लगता है जो कि उसकी नीति में काफ़ी बड़े पैमाने पर अन्तर्निहित हो सकते हैं। उसे अपनी नीति पर सब ओर से विचार करके देखना पड़ता है। क्योंकि उसकी ठनक सी भूक से अत्यन्त घातक परिणाम निकल सकते हैं। उसके अधिकारी भी इस सारी शर्तबाही में पूर्वतः ईमानदार होते हैं। वे वैधानिक दृष्टि से भी सही होते हैं। वे यही तो करते हैं कि जब तक मन्त्री अपनी सही नीति पर ठाढ़-आँधी दृष्टि से विचार न कर से वह आचरण की विद्या में प्रवृत्त न हो। वे यह नहीं चाहते कि मन्त्री कोई भूल करे। उनका कार्य मन्त्री के लिए सुगम-तम संभव मार्ग खोज निकालना है। यहाँ वह समझना महत्वपूर्ण है कि अन्तर्गत समस्या ऐसे किसी परिणामात्मक समन्वय की नहीं है जिसकी कि हमारी व्यवस्था को आवश्यकता है। वह सब प्रमुख सिद्धान्तों के संघर्ष के कारण मुभात्मक है। हम सब समय तक यह नहीं जान सकते कि तिविल सचिस की उत्पत्ति क्या है जब कि हम उसकी शरीरता मुभात्मक बरातक पर न कर सें।

यहाँ एक ह्वाश आता है, आइड हाल में इस प्रकार की उत्पत्ति पर्याप्त मात्रा में नहीं है। हमारा राज्य अस्तर-संघट में सेवा के रूप से सम्बन्ध रहता है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सेवा की परम्पराएँ और मनोविज्ञान सैविक अधिकारियों की परम्पराओं और मनोविज्ञान से विस्कृत भिन्न होना है। लेकिन इन प्रश्नों में यह सचमुच अत्यन्त महत्व का है कि सर हेनरी विलसन ने जो बुद्ध-संज्ञात्म में सैनिक कार्य बाहियों के निर्देशक से अपनी सरकार के विरुद्ध जिसकी वे सेवा कर रहे थे उन अधिकारियों के साथ जिसकी वह सरकार आदेश दे रही थी और विरोधी बल के नेताओं के साथ जो इसी प्रकार के मह्यत्नों से सरकार की योजनाओं को नष्ट करने की कुचेष्टा में रत थे पर्यन्त करना अपनी सरकारी स्थिति के प्रतिकूल नहीं समझा। वह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि सर जॉन बॉब ने जब वे पंग में प्रचार

सेनापति ने अपने विचारों को उस सरकार के ऊपर लागू करने के उद्देश्य से जिसने उन्हें बर्खास्त किया था समाचार-पत्रों के द्वारा प्रदर्शन किया था। मैंने केवल दो ही उदाहरण लिए हैं। सर हेनरी बिस्सन की डायरी और श्री सॉयड जार्ज के बुद्ध-संस्मरणों के पाठक जानते हैं कि वे बहिर्देशीय नहीं हैं। वे जिस सम्मिलित समस्या को सहा करते हैं, वह समस्या सेना के उन अधिकारियों की है जिनके बुद्ध विचार उस सरकार के विरुद्ध हैं जिसकी कि वे सेवा करते हैं। यदि हम संसदीय व्यवस्था की परीक्षा को स्वीकार करते हैं जैसा कि संसदीय शासन में स्वाभाविक है तो क्या सरकार कठिन परिस्थितियों में अपने अधिकारियों की अधिकतम निष्ठा के ऊपर निर्भर रह सकती है। क्या वह उनके बर्खास्तियों को याद रखते हुए वह याद रखते हुए कि कुछ जर्मनी इटली और स्पेन में इन बर्खास्तियों का क्या अर्थ रहा है एसा कर सकती है? ये बहुत जटिल और भयावह प्रश्न हैं। यह ठीक है कि वे ऐसी सीमाओं पर हैं जिन तक राजनीतिक बाह्य विचारों से कोई नहीं पहुँचाना चाहेगा। लेकिन बूकिंग स्ट्रैट के समय बर्खास्तियों तक पहुँच हो जाती है, अतः कोई भी व्यक्ति जो राजनीतिक शक्ति के प्रश्नों पर विचार करता है उन पर ध्यान रखना नहीं भूल सकता।

यह ठीक है कि असमर्थ अधिकारी की सिखा-बीसा ही कुछ ऐसी होती है कि उसका दृष्टिकोण निरासक्त होता है तथा वह कुछ ऐसे विचारों में रुचि लेता है जो सैनिक अधिकारियों के लिए नहीं अधिक दुर्लभ होते हैं। इसका कारण यह है कि हमारी सेना अब भी बैलिगटन के समय की भाँति मुख्यतः बग-सेना है। श्री सॉयड जार्ज ने इसके बारे में लिखा है सेना में योग्यतम व्यक्ति सर्वोच्च पदों पर नहीं पहुँचते। सेना में पदोन्नति के मुख्य उद्देश्य परीक्षा तथा सामाजिकता है। विभाज्य का भी इसमें बहुत हाथ रहता है। पदोन्नति के मामले में बहिर्देश का स्थान चौथा आता है। जैसी बौद्धिक शक्तियों के व्यक्ति ऐसी बृत्ति को पसन्द नहीं करते जो उनकी शक्तियों के उपयोग का इतना कम अवसर देती हो तथा जिसमें पारितोषिक वित्तीय विषय समता से कोई सम्बन्ध न रखते हो। यह केवल एक आधिकारी प्रदान-पत्री का ही निर्णय नहीं है। इसे कई एकर जैसे एक अनुभवी व्यक्ति ने भी प्रगट किया था। उन्होंने इस सम्बन्ध में उन पदों की तुलना की जिनकी कमान सेना तथा नौ-सेना की सेवा में आवश्यकता होती है। उनका कहना था कि नौ-सेना की सेवा में शक्ति तथा प्रतिभा के सर्वप्रथम गुण प्रकाश में आ जाते हैं। सेना की सेवा में यह बात नहीं है। ये आलोचनाएँ अल्प परिमाण में बहिर्देशीय सेवाओं के ऊपर भी लागू होती हैं। अब बाइट की तरह यह कहना ठीक नहीं है कि विदेश-सहाय्य ब्रिटिश अभिजात-वर्ग का बहिर्देश-विभाज्य है। १९१९ के बाद से उसकी भरती की प्रक्रिया में जो परिवर्तन हो गया है उसके फलस्वरूप अब वे लोग भी जोड़ा बढक गए हैं जहाँ से उसका बर्खास्तियों की भरती होती है। लेकिन यह बात अब भी सदेहात्मक है कि अजिजान-वर्ग और शासन का सम्बन्ध बिच्छुर जो आज अधिकतर राज्यों की विशेषता है विदेश-विभाज्य अथवा बहिर्देशीय सेवाओं की प्रवृत्तियों में दृष्टिगत होता है। विदेशों में ब्रिटिश दूतावास के लिए

“सर्वोच्च सामाजिक गुप्तो” के बाहर व्यापक और अनवरत सम्पन्न बनाए रखना सर्वथा कठिन है। यदि विवेक-विमर्श के कर्मचारियों का सर्वोत्तम क्रिया जामे तो पना अरुमा कि उनके गुणाव का मुख्य आधार अब भी यह विचार है कि ईश्वरकर्म में प्राप्त ६२ प्रतिशत नैसर्गिक कटनीतिक प्रतिभा वहाँ के व्यापक प्रमुख सार्वजनिक विद्यालयों में ही वेष्टित है। श्री माइटिलक ने लिखा है, “सुधारों के बावजूद वातावरण के साम साम्यविधायी और व्यवसायिक वर्गों के पक्ष में ही अधिक पड़ते हैं।

कहने का सार यह है कि सार्वजनिक सेवाओं के बाह्य में नैसर्गिक सेवाएँ हैं या नैसर्गिक सेवाएँ ही सभी प्रमुख अधिकारी समाज के एक अत्यन्त सङ्कुचित वर्ग से आते हैं। कुछ व्यक्तिगत अपवादों को छोड़कर उनका दृष्टिकोण यह रहता है कि वर्तमान समाज-व्यवस्था के मुक्त मिश्रण बाह-विचार की परिधि से बाहर है। फलतः वे विद्यालय उनके विचार के विस्तार को और उनके निर्णयों की सीमाओं को निर्धारित करते हैं। कुछ इसमें संदेह नहीं है कि इन अधिकारियों की अल्पदृष्टि काफी भीत्र है। जिन लोगों ने स्वास्थ्य-नीमा-भोजना बरोजगारी बीमा सचिस और मन्त्रालय निरीक्षण पद्धति का समूह किया है उन्हें अपने लिए धना यापन की कोई भाव बसकना नहीं है। लेकिन इन अधिकारियों की वास्तविक परीक्षा तक होगी है जब उन्हें वर्तमान समाज-व्यवस्था के मिश्रणों के क्षयों में तभी प्रस्तुत उत्तम बाहर नाम करना पड़े। उस समय वना स्थिति सामने आयेगी इस सम्बन्ध में हम केवल कल्पना ही कर सकते हैं क्योंकि अभी तक सचिस के किसी अंग का ऐसी अन्वि-परीक्षा में न होकर नहीं गुजरना पड़ा है। हो सकता है कि सचिस के अधिकारी इस परीक्षा में उत्कृष्टतार्थक उत्तीर्ण हों। लेकिन हमें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि अभी तक हमारी पद्धति की मरुभूता का मुख्य कारण यह है कि अभी तक इस परीक्षा का सामना करने की आवश्यकता नहीं पड़ी है।

यै इन क्षम्याय में जाय चल कर उन कुछ आलोचनाओं का विवेचन करने का जो अधिकारी-वर्ग की प्रवृत्तियों के संबंध में काफी हद तक सही है। यहाँ एक अन्य बात पर जिसकी ओर मैं पहले मकल कर चुका हूँ बल देना उचित होगा। विविक्त सचिस की एक प्रमुख विशेषता अचोत्साहन है और यह मेरे विचार से उस प्रक्रिया के कारण है जिसके अनुसार प्रमाणनिक वय के सदस्य चुन जाते हैं। उन्नीसवीं शताब्दी में प्रमा-सचिस पद्धति को नैकसि की इस अन्तर टि से बड़ी धन्य कोई देन नहीं है कि विविक्त सचिस में गुणाव का आधार विज्ञान प्रविद्यमान नहीं प्रस्तुत सामान्य ज्ञान होना चाहिए। यह ठीक है कि इस समय परीक्षा-विषयों पर जो बल दिया जाता है बहु वैज्ञानिक दृष्टि में बहुत कम व्यावसायिक है। वा अनुभव का यह बहना भी ठीक है कि सचिस प्रयोगियों के गुणाव में मौखिक परीक्षाओं को आवश्यकता से अधिक महत्व दिया जाता है। मेरा विचार है कि स्नातकोत्तर स्तर के कुछ प्रमाधिकियों को इस आधार पर कि उन्होंने सामाजिक विज्ञानों को कोई मौखिक देन ही है उदाहरणार्थ उन्होंने डास्टोट के लिए कोई अच्छा प्रबंध किया है विविक्त सचिस में के लिया जाना चाहिए। यह माना कि वर्तमान व्यवस्था में काफी सुधार किए जा सकते हैं लेकिन इसका मुख्य सिद्धान्त पूर्ण रूप से सही है।

प्रशासनिक प्रक्रम के नियन्त्रण के लिए जिस नीति की आवश्यकता है, वह सामान्य मस्तिष्क है विशेषतः मस्तिष्क नहीं। फलतः मेरी दृष्टि में विभागों के सर्वोच्च पर उन व्यक्तियों के हाथों में रहना जिन्होंने मानववारी शिक्षा प्राप्त की है, सबिष के लिए अत्यन्त सुम तिष्ठ हुआ है। मेरे कहने का यह अर्थिप्राय नहीं है कि विद्यपत्र में ये गुण हो ही नहीं सकते। मेरे कहने का आशय केवल यही है कि विशेषज्ञ के साथ यह व्यवस्था रहता है कि वहाँ व दृष्टि की महारहि पाता है दृष्टि की व्यापकता को देता है। यह कोई उपाय नहीं है कि संतिक तथा नाबिक प्राप्त ही कभी अच्छे मनी रहे हो इनी प्रकार यह भी कोई सबोग नहीं है कि इंजीनियर, डाक्टर और अध्यापक साथ ही कभी सफल राजनेता रहे हो। विभागों के सिद्ध पर स्थित यदि किसी बड़ अधिकारी को सफल होना है तो यह आवश्यक है कि वह एक सफल राजनेता हो। उसे न केवल बही देवता पड़ना है कि सामग्री कितर से जाती है उसे इसका भी विचार करना पड़ता है कि इस सामग्री को उस सौरमय क साथ किस प्रकार प्रकार समुक्त किया जाये जो सामग्री के सबिषियों के रूप में जाने पर प्रभावित होनी। प्रशासनिक के रूप में इसका कार्य यह है कि वह जिस कृच्छता से प्रासंगिक जुताव करता है तथा महत्त्वपूर्ण जाता पर बल देता है। मेरी धारणा है कि सो-एक अपवारा को छोड़कर साथ ही किसी विशेषज्ञ में यह सुक्त हो। मेरा विचार है कि यह पुक्त सर्वश्रेष्ठ मानववारी शिक्षण से ही उत्पन्न होता है। इसका यह अर्थ नहीं है कि मानववारी शिक्षण इस पुक्त को उत्पन्न करने की कारणी है। इसका अर्थ केवल यही है कि ऐसे को व्यक्तियों में से जिनमें से एक तो विशेषज्ञ हो तथा दूसरे ने लॉन्गवैल्यू के मानववारी विद्यालय (Lateral Humanities) में शिक्षा प्राप्त की हो दूसरे के सफल प्रशासक होना की अधिक समावना है।

इस प्रकार, साथ ही देवते हुए मेरा यह विचार है कि मानववारी शिक्षण विशेषतः मस्तिष्क शिक्षण की अवेक्षा दृष्टिकोण की अधिक उदारता तथा व्यापकता उत्पन्न करता है। विशेषज्ञ क साथ व्यवस्था यह है कि वह अपने विषय क्षेत्र से सम्बन्धित सब को निष्कर्षों की दृष्टि से उससे नहीं अधिक व्यापक मान लता है जितना कि वह तन्मो के अनुधार वास्तव में होता है। वह अपने सिद्धान्तों को स्वयंसिद्ध मानता है और यह सुक्त सा जाता है कि प्रशासन की कला अपनी सर्वोच्च स्थिति में सिद्धान्तों के परीक्षण में निहित है। मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह उस सुक्त परिवर्तन के अच्छी तरह समझना या समझना है जितने पिछली मतावली में राजनीतिक अर्थशास्त्र को अर्थ-विज्ञान के रूप में बदल दिया है। एक में बीसा कि मिल बचवा मार्शल के पाठक प्रत्येक पुक्त पर जान जाते हैं केवल को दोनों ही कस्तुओं का—अपनी उपवस्था की दुर्बलता का जहाँ से वह प्रारम्भ करता है तथा उस सीमा का जहाँ तक इन्हें अपने निष्कर्षों की सुपूर्त कर देना है जान रहता है। दूसरे में केवल एक एही क्रमबद्ध प्रतिक्रिति विपमन-रीति से एक ऐसे सब को रखने की कैप्ता करता है जिसमें मानव-वृष्टि वर्तमान सम्पति-व्यवस्था के बालूनी सम्बन्धों, राज्य-मन्त्र की सर्वोच्चता तथा ऐसे ही सुक्त और दूसरे मामलों

को स्वयंसेवक मान लेता है। इसलिए जब वह अपनी स्वयंसेवक प्रतिवृत्ति के दिवसों को नव्य तन्त्रों के वास्तविक समार में समाहित करता है तबसे दिवसों की सम्मेलनात्मक व्यवस्था विस्मयान्तरक होती है। यह व्यवस्था प्लोबोव स्पोलिय के एक उदासीन विस्मयी क को कोपनिहम की उपासना को मानना अस्वीकार करता है विचार मान्य पड़ते हैं।

यह विचार है कि सचिव के सिद्धान्त को अपने अनुसार का आधार मानने से निवृत्त सचिव इस अन्तरे से बच पाई है। कथित सबसे यही पर्याप्त नहीं है। मेरे विचार से दो तर्क एक और है जिनकी ओर विद्यते मत्तर क्यों में पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया है। पहला तर्क तो यह है कि निवृत्त सचिव के व्यवहारों एक बहुत ही सीमित रूप में घाटे हैं। कथन यह है कि उनमें उच्च अनुभव को विवक्षित उन्हें कामना करना है अतस्तय करने की कामना नहीं होगी। उनकी जीवन-नीतियों विचार-व्यवस्थाओं की विभागीय परम्पराएँ एक ऐसे मानसिक माना बरत की प्रतीक हैं जो उन मानसिक वातावरण से जिसके परिणामों के लिए उन्हें काम करना पड़ता है विस्तृत मिले होते हैं। वे अपने इस कार्य को सफलतापूर्वक कर सकते हैं, वह एक सीरी पूर्व की अपेक्षा मात्र कम निवृत्त है। इन्फ्लुएन्स १९३४ में 'अनाप्योवॉय एमिलिय बोर्ड' के नए अनुमान विचारित करने में निवृत्त सचिव के व्यवहारों की तरह अत्यन्त हुए थे। दर-नुसार के सम्बन्ध में भी वे इसी तरह से अत्यन्त हुए हैं। कार्यों के निरीक्षण को व्यवस्था के कार्यों में ही इसी प्रकार की अत्यन्तता हाथ लगी है। इसको मैं बोधके की सार के ऊपर को बोधनीय घटना हुई है वह इस बात का प्रमाण है। ऐकनिक और मानसिक पिता के विकास में यदि अत्यन्तता न मानी जाये तो भी इतना अवश्य है कि निवृत्त सचिव की ओर से अत्यन्त उद्योग का अभाव रहा है। मैंने केवल कुछ एसी बड़ी-बड़ी समस्याओं को ही उदाहरण के लिए चुना है जो मुख्यतः क्यों में हमारे सामने आई है और निवृत्त सचिव के व्यवहारों विवक्षित सीक से समाधान नहीं कर सके हैं। साथ ही सबसे दुरन्त समस्या अधिभूत लोगों की है और ऐसा मानना पड़ता है कि निवृत्त सचिव ने न तो इस समस्या की दृष्टि को ही समझा है और न व्यवस्था बोधता को ही।

क्यों ? हम यह जाने लेंगे हैं कि निवृत्त सचिव के व्यवहारियों को अपने प्रस्तावों पर राजनीतिक संभावनाओं के अनुसार ही विचार करना पड़ता है। हमें यह भी मान लेना चाहिए कि जो सिद्धि ली है, उसे ली ही बनाए रखना भी सार्वजनिक

१ प्लोबोव स्पोलिय ईसा की दूसरी शताब्दी में विश्व के एकसेवकिय नगर के निवासी प्लोबोव द्वारा प्रवृत्त स्पोलिय व्यास है। इसके अनुसार पृथ्वी एक चक्र गृह है। तथा पूर्व व अन्त्य पृथ्वी-व्यासि उलके चारों ओर प्रवृत्त करते हैं।

२ कोपनिहम का स्पोलिय विश्वके अनुसार पृथ्वी पूर्व तथा अन्त्य पृथ्वी-व्यासि पूर्व के चारों ओर घूमते हैं।

प्रशासन की कक्षा का एक महत्वपूर्ण भाग है। इन सीमाओं को मान लेने पर भी यह स्पष्ट है कि अधिकारियों का अधिकार क्षेत्र इस तथ्य से सीमित रहता है कि उनके अनुभव उन्हें हमारी समस्याओं की गुंथी समस्याओं की सामर्थ्य नहीं देते। उस प्रकार की धैर्यता जिसका मैं विचार कर रहा हूँ बैरोन्गारी के खर्चों के प्राथमिक सम्पर्क अधिक सब के लिए-मोडक की भेंट कॉमन-सभा के अधिक सदस्यों और उच्च अधिकारियों की मित्रता से भी उत्पन्न नहीं होती। वह इस तथ्य से भी उत्पन्न नहीं होती कि विभिन्न सर्विस के उच्च अधिकारी ने छ मास तक टॉयन्बी हाँस में निवास किया है। हमारी विभिन्न सर्विस में सबसे बड़ी कमी इस बात की है कि एक वर्ष बुरे वर्ष के अनुभवों की ठीक से नहीं समझना। ब्राह्म बाकास ने लिखा था कि 'उच्च अधिकारियों के स्पष्ट प्रशिक्षण की व्यवस्था यह है कि उन्हें उस प्रकार के कार्य का अनुभव बिना कार्य जो कि उन्हें करना है।' अभी तक हमने समुचित रूप से इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं की है।

यद्यपि सचत सुझाव काफी महत्वपूर्ण हैं लेकिन प्रबल इससे भी बहुरा है। वह इस रोचक प्रस्ताव से भी (जिसके लिए हम मुक्त की ब्राह्म बाकास के श्रेणी है) अधिक यहुरा है कि अधिकारियों को पूरे वेतन पर अनुपस्थिति की छुट्टी मिल जाने जिससे कि वे विभाग के बाहर ऐसा ज्ञान अर्जित कर सकें जो उनके कार्य में उपयोगी हो। प्रश्न ऐसी मानसिक प्रवृत्तियों का प्राप्त करने का है जो द्रुत परिवर्तन के वय में बिना किसी भय के परम्परा की बदलावों तक जा सकें तथा उनके परीक्षण के प्रकाश में नवीन सुधारों की आवश्यकता का पूरा महत्व समझ सकें। विभिन्न सर्विस के समस्त युवकों का मानते हुए भी मुझ इसमें सन्देह है कि उसकी एनी प्रवृत्ति है या वह ऐसी प्रवृत्ति के अनुकूल है। मेरे विचार से इसका कारण प्रत्येक विभाग की परम्परा तथा उस सीमित बर्ष-बोध का जिससे अधिकारी जाते हैं अन्तर्भाव्य है।

प्रायः प्रत्येक स्थिति में ही विभाग की परम्परा यह रहती है कि नीति की अधिक विष्णुता को वायव्य रखा जाये। फलतः वह द्रुत परिवर्तन के युग में नवीन सुधारों के ऊपर एक अनुभव का कार्य करती है। वह वर्तमान अवस्था अधिक या विचार करने की अपेक्षा अनीति का विचार करना अधिक श्रेयस्कर समझती है। जब उसके लिए विचार जाये वह इस बात की चेष्टा करती है कि उन्हें वर्तमान समाज-व्यवस्था के अन्दर ही कैसे रखा जाये चाहे आवश्यकता इस व्यवस्था में परिवर्तन करने की हो। यही नीतिरहाही का सबसे बड़ा कारण है। वह उस समस्त नए कार्यशुद्धों को जिन्हें जगने स्वयं प्रारम्भ नहीं किया है सन्देह की दृष्टि से देवनी है। इस देश में समाज सुधार का इतिहास इस सन्देह का बरफ़ी तह से पुष्ट कर देता है। इस सम्बन्ध में तो प्रत्येक भी विद्यमान है। यह कारण-विषयक सुधारों के सम्बन्ध में भी सही है। छोटे-मोटे परिवर्तनों को छोड़कर मेरे विचार से, यह कहना सही है कि इस देश में पुरु-सुधारों की प्रत्येक बन्धीर योजना गृह-अवकाश के अन्दर नहीं प्रत्युत बाहर उठी है। यह इस तथ्य से भी प्रकट है कि तीस वर्षों के बाद भी नवयुवकों के प्रतिफल सम्बन्धी

नियम ज्यों के त्यों बने हुए हैं और घय-संवात्म्य को निर्बाह-व्यय-वेधता (cost of living index)के संशोधन में प्रवृत्त करने में प्रायः एक दशक तक व्यावृत्त करना पड़ा था। मेरा विचार है यद्यपि यह बात काफ़ी विवादास्पद है कि वित्त-विभाग भी किसी बड़े सार्वजनिक निर्माण के कार्यक्रम का सर्व्वेष्ट कर विरोध करता है। बिजली पानी की सप्लाई, मार्गों और आवास आदि के क्षेत्र में काफ़ी सुधारों की आवश्यकता है। लेकिन वित्त-विभाग के विरोध के कारण इन सुधारों की प्रत्येक चेष्टा निष्फल हुई है। उपर्युक्त वैदेशिक साधन को देखते हुए यह सन्देह कि क्या वित्त-विभाग के निदान इतने ही सन्तोषप्रद हैं जैसाकि जलरोधक मंत्री मानते आते हैं स्वामयिक है।

लेकिन मेरा विचार है कि इस प्रसंग में बहू सीमित श्रेणी जिससे प्रशासनिक कार्य जाता है और अधिक महत्वपूर्ण है। उच्च अधिकारी परिष्कृत होते हैं तथा वे अपने वैयक्तिक कार्य में व्यस्त रहते हैं; वे कोय एक सा जीवन व्यतीत करते हैं। उनका सम्पर्क अधिकतर अपने समान जीवन व्यतीत करने वाले लोगों से रहता है। वे समस्याओं को गहरी और सानो में नहीं संदे मन्त्रालय और गिर्व्वनीय विद्यालयों में नहीं प्रत्युत उन स्कुल प्रसेधों में देखते हैं जो उनके पास अनन्त मति से जाते रहते हैं। इस स्थिति से यह तो स्पष्ट ही है कि उनका कार्य उन्हें बुनियादी के उस परीक्षण की प्रेरणा नहीं देता जो हमारी पीढ़ी के लिए इतना महत्वपूर्ण है। वे बास्को की रोजगारी के प्रसंग को एक प्रशासनिक और सांख्यिकीय समस्या मानते हैं। वे उसे मजबूर बर्ग के उस लड़के के माता-पिता की दृष्टि से नहीं देखने जिस स्कुल छोड़ने के बादहू मास परभाव कुछ छोटी-मोटी वृत्तियों में से किसी एक को चुनने के अतिरिक्त और कुछ नहीं सुझता। वे यह समझते हैं कि यदि सेना को पूरी क्षमता पर रक्षता है तो भरती के नियमों की और अधिक संशोधन कर देना चाहिए। लेकिन वे यह नहीं समझने और समझने का विचार भी नहीं करते कि जब तक सेना में प्रतिभाशाली व्यक्तियों को स्थान नहीं मिलता तब तक इस पीढ़ी में केवल कुछ पैसों के कारण मजबूर बर्ग का कोर्न मोय और महत्वाकांक्षी लड़क सेना में नहीं जाना चाहेगा तथा बहू अन्य किसी एमी वृत्ति को जिनमें उसे अपनी प्रतिभा के विकास का पूरा अवसर मिले पसन्द करेगा। विभिन्न वृत्तियों के अधिकारी को स्वयं कमी ऐसा कोर्न अनभव नहीं होता जो भी बास्टर हीनबर्ग की पुस्तक 'लव डॉन दि डॉल' के प्रत्येक पृष्ठ पर अंकित है। उसे स्वयं कमी ऐसा स्कुल नहीं होना जिनमें डॉन वार्नफोर्ड तथा गल्फ फॉक्स को स्वेत में इंग्लैन्डतक विमोड के स्वयं मेडक बन कर मृत्यु का आन्वित करने की प्रेरणा थी।

जो व्यक्ति विम्व पीठि से रहते हैं वे विम्व पीठि से सोचते हैं। जब तक हम सामान्य मनुष्य में किसी तरह काहरी अनुभव अंकित नहीं करत पूर्व्वतय तथ्यात्मक सामग्री पर भी उन अनुभव पीठि से विम्व नहीं किया जा सकता जो कि उस अंकित स्वयं होती है। इस प्रसंग में सरकारी जीवन की "समीक्षा और वठोरता" का अंतर स्पष्ट रूप से सामने आ जाता है। कुछ अपवादों को छोड़ कर विभिन्न विभिन्न के उच्च अधिकारियों को यह नहीं मान्य होता कि बेरोजगारी क्या होती है "मीन्स टेस्ट" का क्या अर्थ होता है। माध्यमिक विद्यालयों में विज्ञान स्वामा में कमी कर देने के निर्णय का एक योग्य लड़के पर क्या

प्रभाव पड़ता है। वस्तुतः वह समझता कि वह आपह कि जिस व्यवस्था का वह संचालन करता है उसमें अपनी सफलता के समान ही असफलता का सामना करने की भी शक्ति होगी चाहिए एक अतिवासी या सक्ती का बिगड़ है और अधिकांशों की दृष्टि में ये दोनों ही घण्ट बड़े भयकर होते हैं। उसके सामने यह सतरा रहता है कि उसे विचार की बुनियादी बातों की समझूदता की दिसा में सम्पूर्ण व्यवस्था का बिगड़ मार सहना पड़ेगा लेकिन उसे यह ज्ञान रहता है कि यदि वह अपने काम में दुस्त तथा चतुर है तो सम्भावना यह है कि उसकी परीक्षा होगी तथा यह व्यवस्था उसके समय तक तो चलेगी ही।

म वह कह रहा है कि सिविल सर्विस का न केवल बोम्ब मैरियक कार्य करने वाला की ही आवश्यकता है, प्रत्युत उसे ऐसे उत्साही व्यक्ति की भी आवश्यकता है जो इन मैरियक कार्य को निष्पन्न कर सके। मेरी संज्ञा यह है कि क्या वह व्यवस्था इस प्रकार के व्यक्तियों को उत्पन्न करती है और यदि नहीं इस प्रकार का व्यक्ति कठ सड़ा हो तो क्या वह उसे सहन कर सकती है? सिविल सर्विस में उत्साह तथा निष्ठा निस्वार्थ भाव तथा सार्वजनिक चेतना का कोई अभाव नहीं है। सिविल सर्विस के अधिकारी सदैव मिल-जुल कर काम करते हैं। चाहे ता वे किसी बड़ी योजना में लगे हों वा छोटे-मोटे मैरियक कार्यों की पूर्ति में। उनकी मिल-जुल कर कार्य करने की यह भावना बिलक्षण है। लेकिन सिविल सर्विस की रचना ही कुछ ऐसी है कि उसमें उस बौद्धिक चरमता का अभाव होता है जो बालस के गुम्बर घण्टों में हमें यह सामर्थ्य दे सके कि 'हम अपने उन दूरस्थ अयस्कृत स्वामियों को जो स्वयं हम ही हैं यह सिखा सकें कि किसी प्रभावशाली विचार को उस छोटे से बनी अल्पमत तक ही जो अनुसरणीय स्वतंत्रता में निबाह करता है सीमित होने से कैसे रोका जाये?' सिविल सर्विस के अधिकारी के लिए 'उन दूरस्थ स्वामियों' को सिखाने का सम्भवतः उपाय यह है कि वे पहले स्वयं को ही सिखा दें। इसका अर्थ एक ऐसा बौद्धिक प्रयत्न तथा अनुभव है जिसको इस समय सिविल स्वयं बहुत कम महत्त्व देनी है।

(१)

सिविल सर्विस एक दृष्टि के रूप में अपने सदस्यों की कुछ छोट साज देती है। यदि अधिकारी का व्यवहार अच्छा हो तथा वह अपने काम में निपुण हो तो उसे पर की सुरक्षा रहती है बुद्धियों सहित अच्छा-भाठा वेतन मिलता है, वतन-सहित उचित छुट्टियाँ मिलती हैं बीमारी की छुट्टी मिलती है तथा अवकाश ग्रहण करने पर पेंशन मिलती है जो उसके आधिकारी वर्गों के वेतन की श्रावः दो-निहाई होती है। सर्विस की निम्न अधिकारियों में उसे बिन्दूने कौशिकों के माध्यम से अपने निबोधन की शक्तों के विवेचन तथा कुछ सीमा तक निर्धारण में भाग मिलता है। वह किसी भी कर्मचारी-सदस्य का सहायक ही सकता है यद्यपि १९२७ के वस्तुतः से यह आवश्यक हो गया है कि इन संज्ञा का बाहर के किन्हीं वर्गों से सम्बन्ध न हो। यदि वह औद्योगिक कर्मचारी नहीं है तो वह राजनीतिक प्रतिनिधियों से संबंधित रहता है।

१९२८ व बाद से यह परम्परा भी बत गई है कि यदि यह चुनाव में संघ की सहमता के लिए कहा जाता है तो उसे सिबिल से त्यागपत्र देना होता। कुछ बिनायो में उद्योग परिस्थितियों के अस्तित्व के अभाव में परिवर्तन की संज्ञा के लिए मतदान की अनुरोध मिल सकती है। यह किसी भी विचारामय मार्गगतिक प्रश्न पर अपने उचित अधिकारियों की अनुमति के बिना आपस कम या पुनः के द्वारा अपने विचार व्यक्त नहीं कर सकते।

समूर्ण दृष्टि से विचार करने पर कोई यह नहीं कह सकता कि सिबिल सर्विस का कर्त्तव्य बहुत है। उसके तीन-चौथाई सम्बन्ध तो बार वीइ प्रति सप्ताह से भी कम बतन पाते हैं। प्रायः कुछ पाँच सौ पर ही एम है जिसके अन्तर् १ वीइ वार्षिक या इससे अधिक है। बिनायो के अनायास तक को बेचक ३ वीइ वार्षिक बतन मिलता है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि सिबिल के मूल में तो मुरझा तथा पतन का आकारण है और समय के बीते में प्रभाव तथा प्रतिष्ठा का। साथ ही पर भीय नविय आयु के कारण ही छोड़ते हैं और किसी कारण से नहीं। उदाहरण के लिए १९२ में २२ ५ व्यक्तिगत न सिबिल छोड़ ही थी। लेकिन इनमें से प्राय १४ न तो पूर्वतन स्वास्थ्य अथवा मृत्यु के कारण छोड़ी थी और केवल २३३ व्यक्तिगत ने ही अयोग्यता अथवा अकारण के कारण। ५२३ और व्यक्तिगत ने सिबिल छोड़ी थी लेकिन उन्होंने सिबिल छोड़ने का कोई कारण नहीं बताया था। यह सम्भावित है कि इनमें से कुछ को सिबिल के बाहर और अधिक अच्छी जगहें मिल गई होंगी।

स्पष्ट है कि इस दृष्टि से देश का उत्पन्न होने विभिन्न सिबिल को बाहर की अन्य युक्तियों की अपेक्षा काफी अच्छा मानता है। स्वाभाविक बतन पर नृत्तियों जब तक कि अधिकतम छह न भा जाये एक यन्त्र से दूसरी यन्त्र में परिवर्तित की सम्भावना अल्प अहित स्थिति और अकारण अज्ञान करने पर पक्ष में यह तब तो सभ्य ह जो केवल कुछ वर्षों के अन्तर्गत प्रतिष्ठानों में ही मिल पाते हैं। देश विचार है कि सिबिल सिबिल की सर्वोच्च यन्त्र को छोड़ कर इसमें ही निर्यात निकलते हैं। पहला तो यह है कि सिबिल की और अधिक एम व्यक्ति प्राप्त होना है जिसमें अन्तरे उत्तम का माध्यम नहीं होता लेकिन आ परिवर्तनीय होने है आदि में केवल अपने अर्थ तक को स्थिति के अनुसार होते हैं और एक सुनिश्चित वैशेष कार्यक्रम को स्वीकार करते हैं। दूसरा यह है कि सिबिल को बहुत ही कम लोग छोड़ते हैं इसलिए इनका अर्थ यह है कि सिबिल के उत्तरदा को उनको नहीं से संतोष है।

अन्त में यदि हम प्रामाणिक यन्त्रों से नीचे की स्थिति पर विचार करें तो सिबिल सिबिल के अन्तर्गत में एक बड़ी पूर्णतया विचार्य है। इन यन्त्रों में सिबिल प्रकाश के अन्तर्गत सिबिल है और एक यन्त्रों के व्यक्तिगत की दूसरी यन्त्रों में बहुत कम परिवर्तित होती है। क्या इसका अर्थ यह है कि सिबिल में परिवर्तित के लिये इनमें संतोषपर है कि जिस यन्त्रों से मनुष्य आकार से पीरे तक पहुँचते हैं इतना व्यय है कि योग्यता का विस्तृत अध्ययन नहीं हो पाता। इसी कारण को दूसरे दृष्ट से भी कहा जा सकता है कि क्या योग्यता को परामर्श के लिये इतने उपयुक्त है कि निम्न

सेवियों की सचिब में ऐसे लोग ही नहीं ह जिन्हें यदि अवसर दिया जाये तो वे सर्वोच्च प्रकार के काम के लिये अपनी योग्यता सिद्ध करेंगे।

स्पष्ट यह अनुपात का प्रश्न है। मैं केवल अपने विद्वानों को व्यक्त कर सकता हूँ जो दो तरह के अनुभव पर आधारित हैं। मैं दस वर्ष तक सिविल सचिब ट्रिब्यूनल का सदस्य रहा हूँ और इस समय मैं मैं प्रत्येक प्रकार की सचिब के कामों के सम्पर्क में आया हूँ। मैंने बीस वर्ष तक विस्किंग्टन में सिविल सचिब के अधिकारियों को सिखा ही है तब जब कि वे पूर्व-स्नातक थे और तब जब कि उन्होंने अपने छाती समय में पदोपना का कार्य किया। मैं उन अपना विचार यह है कि सचिब की प्रत्येक निम्न श्रेणी में कुछ व्यक्ति ऐसे अवश्य होते हैं जो उन्हें वे ऊँचा काम कर सकते हैं लेकिन या तो इन व्यक्तियों की खोज ही नहीं हो पाती और या इनसे काम नहीं किया जाता। मेरे विचार से इस स्थिति के तीन कारण हैं (१) सचिब की श्रेणियाँ बड़ी कठोर हैं (२) प्रशासनिक श्रेणी से शीर्ष की श्रेणियों में पदोन्नति के लिये बहुत याचिकाएँ हैं और (३) योग्य व्यक्तिता को ऐसा उल्लाह नहीं मिलता कि वे अपनी निपुणता को प्रकट कर सकें। इन तीनों विन्दुओं पर अलग-अलग विचार कर से प्रकाश डालने की आवश्यकता है।

सचिब की श्रेणियाँ बड़ी कठोर हैं। यह ठीक है कि इसमें बड़ी सार्वजनिक कामों के विचार से होती है और एक अधिकारी का माध्य बहुत कुछ इन सैलनिक व्यवस्थाओं द्वारा निर्धारित होता है जिनसे कि वह काम उठा सकता है। लेकिन ऊँची अवस्था में अच्छे पदों के लिये प्रयास करने में इस बात पर बहुत अधिक ध्यान दिया जाता है कि प्रशासी न अधिकारिका की कैसी सेवा की है। लेकिन यह प्रतिबोधिता झूठी है क्योंकि प्रशासी विद्या की उन सुविधाओं से वंचित होते हैं जो उनके विद्ये शियों को प्राप्त होती है और प्रायः पञ्चीस वर्ष की अवस्था के पश्चात् परोक्षा वर्ग की अवस्था में हटा होने लगता है। इसलिये यह कुछ की बात है कि सचिब में प्रवेश के लिये प्रतियोगी परोक्षा के अतिरिक्त अन्य किसी उपाय का परीक्षण नहीं किया गया है। मुझे कोई कारण नहीं दिखाई देता कि क्या न प्रायः तीस वर्ष की अवस्था तक किसी ऐसे उच्च अधिकारी को जिसके पास विस्किंग्टन की अच्छी संपाति है, या जिसने बकायात पास की है या कुछ शोध-कार्य किया है किसी ऊँचे पर पर कार्यवाहक समता में नियुक्त किया जाये और देखा जाये कि वह सहायक परोक्षा के योग्य है या नहीं। इससे कदाचित् के ऊपर कम बोझ रहेगा और निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को इस बात का अवसर मिलता रहेगा कि वे अनुभवपूर्ण सैलनिक सुविधा की अवस्था पर लय पा सकें। वर्तमान काल में बस कि सचिब से परिचित प्रत्येक व्यक्ति जानता है उच्चमें काफी शोध ऐसे ही यदि उन्हें यह विश्वास होना कि वे अपने परिष्कार के अनुक्रम का या लगे ह इस प्रकार के प्रकल करने की अवस्था देना करतें।

परोक्षा के लिये बहुत याचिकाएँ हैं। मेरे विचार से यह कहना ठीक ही होगा कि प्रशासनिक श्रेणी से शीर्ष की श्रेणियों में अधिकारियों पदोन्नतियों स्पष्टता के आकार

पर होती है। प्रोमोशन-बोर्ड सामान्य की उमरी ओर नहीं करता जिसकी इस बात की चला करता है कि पदापान न होने देना जाये। स्पष्ट है कि जहाँ अधिकांश कार्य नैतिक कार्य हो चाहे ऐसा नैतिक कार्य हो जिसमें कभी कभी वैयक्तिक उपक्रम की आवश्यकता हो वहाँ इस प्रकार का विचार काफी नहीं हो जाता है। मेरे कहन का अधिग्रहण यह है कि जब तक निश्चित सचिप्त का कोई व्यक्ति अधिपानी यही तक नहीं पहुँचता उसका अधिकांश कार्य पत्रक होना है और वह ऐसी किसी क्षमता की उत्पत्ति नहीं करता जिसकी कि ऊँची धैर्यता में आवश्यकता होती है। इसके परिणामस्वरूप प्रोमोशन-बोर्ड किसी तरह अधिकांश की पूरी योग्यता के बारे में यथार्थता ही जानकारी प्राप्त कर पाता है। अधिकांश नैतिक परीक्षणों के लिए तो जमानत व्यवस्था मनोपत्र है। यह असाधारण व्यक्ति को समझा को जिसकी पैर नहीं बर्बा की है, हक नहीं करती।

तीसरे, यह व्यवस्था असाधारण प्रतिभा की तौर की आवश्यकता पर परीक्षा तक नहीं देती। इसके कई कारण हैं। कुछ तो यह है ऐतिहासिक तथ्य के कारण है कि युद्ध के पूरा विभागा के प्रबन्धन और सँ यही विचार रखते थे कि असाधारण प्रतिभा साँझ-साँझ और बँधित के बाहर मिल ही नहीं सकती। युद्ध के पश्चात् इस परम्परा को अनुत्थाहित कर दिया गया है, लेकिन मेरा विचार है कि यह बनी पूर्वक में स्पष्ट नहीं हो पाई है। इसका कुछ कारण यह भी है कि नैतिक कार्य में लगे हुए लोगों में असाधारण प्रतिभा के लिए स्वयं का प्रकट करना सुगम नहीं होगा। यदि ऐसा हो जाय तो भी इस बात का सम्भव बना रहना है कि सहजमिया की ईर्ष्या किसी असाधारण परीक्षणों को पसन्द नहीं करेगी। इसलिये, तीसरी बठिनाई यह उठ नहीं होती है कि जब कभी असाधारण व्यक्ति उम्मीद के साथ-साथ अपनी असाधारण प्रतिभा का प्रदर्शन करता है यदि उसकी उम्मीद की पनि बहुत तीव्र न हो, तो उस सचिप्त की निम्नी बठिनाई धैर्यता में रखना सुगम नहीं होगा। मैं उम्मीद की प्रतिभा के ऐसे कई तथ्य व्यक्तियों को यादता हूँ जिसमें सचिप्त की स्पर्ध में भी इन लिए स्वीकार कर ली क्योंकि वे उनके धोपान पर ऊँच करने के लिए उत्सुक थे। बी-सीन बने तक नैतिक कार्य करने के पश्चात् वे निरन्तरिता हो जाते हैं क्योंकि उनको करने रहने पर उन्हें अपनी धरणाओं को प्रकट करने का कोई अवसर नहीं मिलता। इस प्रकार के व्यक्ति असाधारण व्यक्ति का अवसर सबकाय में पाता है जो कि बाद में उन्हें सचिप्त में मिलना चाहिए। या वे सचिप्त को छोड़ कर किसी व्यक्तिगत निवृत्त में लगे जाते हैं या अधिक नहीं का संगठन करते हैं या मुझांतर निश्चित सचिप्त की एक प्रमुख विशेषता है।

यह तो स्पष्ट ही है कि संसार में अच्छी से अच्छी दृष्टि के होने हुए भी ऐसा कोई महान् उपक्रम नहीं है जिसमें इस प्रकार की भूल नहीं हो सकती। सचिप्त एक धनीवत् व्यक्तित्व है उसका कार्य सुनिश्चित और सुसंगठित धैर्यता के अनुसार होता है और स्टोइक सुनिश्चित विषयों के परिणामों को बड़ी धीरगा से धार देता है। विभागीय अधिकांश इस बात के लिए उत्सुक रहता है कि परीक्षण में उसके ऊपर पक

पास का आरोप न लगाया जा सके। पदापत में व्यक्ति का सारा संपत्ति बिक्रय जाता है। यही कारण है कि प्रतिवेदनों की एक सांगोपात व्यवस्था की व्यवस्था हुई है। हमने पदापत के बहुत बम बरकर रह जाते हैं। इस सबका मतलब यह भी है अपना कर्तव्य यही विचार प्रकट कर सकता है कि हम बिना में व्यक्ति ने उचित परीक्षण नहीं किए हैं। चुनाव के ऐसे कई तरीके हैं जिनसे यह साबित ठीक सकती है। सिविल सर्विस के कई अधिकारी अपने अधिकार का समय अध्ययन में लगा कर विश्वविद्यालय की उपाधियाँ प्राप्त करते हैं। यह मन्त्रिणा की ऐसी व्यक्ति का प्रमाण है जिनके साथ प्रयोग करना उचित होगा। अन्य कई व्यक्तियों ने अपने से ऊँचे अधिकारियों के साथ बातचीत करने में अपने प्रशासनिक योग्यता का परिचय दिया है। इनमें से कुछ को मैं जानता हूँ और उन्होंने सिविल सर्विस नियुक्त के लिए जो अभियोग तय्यार किए थे वे उनकी प्रतिभा के साक्षी हैं। पुनरुत्थन के कार्य करने वालों में जो योग्यता हैं उसका पूरा उपयोग करने का प्रयास नहीं किया गया है। निम्न योगियों के कुछ अधिकारियों ने सांख्यिक प्रशासन के साहित्य को अपनी कतिपय विधिगत वेदों से समृद्ध किया है लेकिन इसका उनके अफसरों पर कोई असर नहीं पड़ा है।

मेरे इस बात पर हमें यह बल रहता है क्योंकि यह निश्चय है कि यदि निम्न श्रेणी की योग्यता का उच्च श्रेणी की योग्यता के साथ सम्बन्ध हो जाये तो इससे बड़ा लाभ होगा। इससे यह परम्परागत व्यवस्था दूर जायेगी या विभागीय प्रजातियों के ऊपर बल भी इसकी बुरी तरह छाया हुआ है। इससे नूतन विचार सामान्य भावों और आलोचना की नूतन बातों की ओर ध्यान जायेगा। ऊँचे वर्ग के किसी अंग्रेज के लिए यह जानना बड़ा कठिन है कि उससे नीचे के वर्ग क्या मोच रहे हैं और यदि वह व्यावहारिक व्यक्ति नहीं है तो हमारा पता लगाने की भी चेष्टा नहीं करेगा। यदि प्रशासनिक वर्ग अपने से नीचे के वर्गों में अलग रहता है इससे इन वर्गों की आवश्यकताओं के बारे में उसकी जानकारी उबली होती है। इससे सिविल सर्विस के अधिकारियों के इस विचार पर प्रभाव पड़ता है कि समकालीन की क्या सीमाएँ होती चाहिए। उनके मुक्त विचारों पर या आक्रमण होते हैं वे उसे अस्वीकार्य मानकर पछोते हैं क्योंकि उसका स्वयं उस प्रकार के अनुभव से मोच सम्पर्क नहीं होता जो इस प्रकार के आक्रमणों को आम देना है। स्वयं सिविल सर्विस के अन्दर ही एका अनुभव वर्णित मात्रा में है जिसका यदि नीति-निर्माण के समय उपयोग कर लिया जाये तो उससे विभाग की परम्पराओं में मूलाधारों के सम्बन्ध में कुछ ऐसा सबेह अवश्य पैदा हो जायेगा जो आज सिविल सर्विस के अधिकारियों के लिए अत्यंत आवश्यक है। मरा विचार है कि वर्तमान काल में यह इससे अधिक है और नमान की जिस संकुचित श्रेणी से उदया सम्बन्ध होता है, यह इस प्रकार के सबेह की उपलब्धि को प्रोत्साहन नहीं देती।

यह स्पष्ट है कि इन मामलों में कोई भी इस सामान्यतः परिवर्तन नहीं हो सकता। यदि कोई परिवर्तन हुआ तो वह ठीकी हो सकेगा जब कि सिद्धांत-व्यवस्था में भी कुछ आवश्यक परिवर्तन हो। इस समय सिविल सर्विस की एक प्रमुख

विशेषता निरासरीत है। उससे जो भी काम करना को कहा जाता है वह बड़े उत्पादक करती है। इन विमोचकों के होने हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि सिबिल सर्विस नई समाज-व्यवस्था के विद्वानों के सामे सफल परीक्षण कर सकती है। यह कार्य न तो निरामलिन से हो सकता है और न निष्पक्ष उत्पादक में। इसके लिए तो हम कुछ विश्वास की आवश्यकता है कि न केवल ये विद्वान् सच्चे ही हूँ परन्तु उन्हें कार्यान्वित करने की भी प्रबल आवश्यकता है। जिस प्रकार पेंसेटाल्ड मण्ड के प्रसासन की समझौता का कारण यह था कि सिबिल सर्विस के कुछ अधिकारी उसके विद्वानों और प्रयोजकों में घाम्पा नहीं रखते व इसी प्रकार हमारी सिबिल सर्विस भी यदि हमसे एसे परीक्षण को करने के लिए कहा जाये जिसमें उसका विकास न हो सफल हो सकती है। यदि नहीं ऐसा हुआ तो येरे विचार से समझौता वा शीत यह होगा कि के अन्तिम विनके ऊपर उसे कार्यान्वित करने के लिए आवश्यक प्रसासनिक कार्यवाही करने का दायित्व वा उसके बारे में मदेदुर्भवे से और उनकी उससे कोई भी अधिक सहानुभूति नहीं थी। इसका कारण यह है कि सिबिल सर्विस के अधिकार सदन्यों का सामाजिक अनुभव उनकी वर्णगत सीमाओं से विरा हुआ है।

यह मैं बड़े देना है कि यह सिबिल सर्विस क सक्रम की आवश्यकता नहीं होती। यदि किसी व्यक्ति का प्रमुख खासो अधिकारिया स सम्बन्ध रहा है तो उसे हम बात में सबूत नहीं रह सकता कि ये अधिकारी सदस्यता के विद्वान् में कुछ विद्वान् रखते हैं। अन्तिम यह सिद्धान्त एक एसे कक्षाकरण से वर्गीकृत है जो अन्त्यतः सङ्घिन है। व्यावहारिकता की सीमाओं के सम्बन्ध में उनके विचार वर्तमान समाज व्यवस्था क अनुभव डारा बंधे हुए हैं। उन्होंने उनके परिवर्तन की संभावना पर कभी विचार ही नहीं किया है। अन्तर्गत नियमन तथा राष्ट्रीय जीवन के कुछ विविष्ट क्षेत्रों के विमोचन का तो वे कुछ अच्छी तरह समझे हूँ। सामाजिक व्यवस्था का आचार्युन परिवर्तन निम्न सामक है। इन परिवर्तन को समझना विठना कठिन है यह सस्त्रीकरण राजकीय आवास (Royal Commission on Armaments) के मामले की गई मर मॉरिसे हीकी की सहाई में स्पष्ट हो गया था। उद्योग के स्थानीयकरण सम्बन्धी राजकीय आयोग (Royal Commission on Localization of Industry) के मामले बाईं बाउट टुक डारा की गई सहाई में भी यह स्पष्ट हो गया था। इस प्रसंग में विश्वास की साथ यह भी कि व्यापारियों क इन अधिकार का प्रस कि व अपनी औद्योगिक सीमाओं का नियंत्रण स्वयं करें आर्थिक दृष्टि से अधिकार्य है। यह यह-सञ्चालन को वास्तविक-सम्बन्धी पुनारों को करने के लिए तय्यार करने की कठिनाई से भी स्पष्ट सिद्धाईं देता है। नम शोध में मोविष्ट युविमन ने जो अनुभव सफलता प्राप्त की है उसको देखते हुए यह-सञ्चालन की हीनपुनता उचित नहीं लगती। राजनयिक सर्विस वास्तुकर अधिकारी जो जिस हीनता में देखती है उसमें भी यह स्पष्ट है। राजनीतिज्ञों की भाँति अधिकारियों के लिए भी यह बात नहीं है कि के लोग वा निम्न प्रकार से रहते हैं निम्न प्रकार से विचार करना है। अधिकारी प्रमुख अधिकारी जिस वातावरण से आते

हैं यह अपन आप ही उनके हृदय में परिवर्तन के विरुद्ध बौद्धिक धारणाएँ खत्म कर देता है। अब तक कि सिविल सर्विस के ऊँचे पदों तक पहुँचने का रास्ता खूबक सिर्फ वही एकमात्र वर्तमान विधि के मनोवैज्ञानिक परिणामों पर खय पाना अव्यक्त दुस्तर है।

(४)

सिविल सर्विस का मसमज निम्नस्तथा तथा उत्पत्ता है। इसी कारण सुदीर्घ परम्परा के अनुसार सिविल सर्विस के अधिकारी संसदीय निर्वाचनों में जाते नहीं हो सकते और कुछ विभाग उदाहरणार्थ स्वास्थ्य और अन्न विभाग जिनके जनता के साथ विषय सम्बन्ध हैं अपने अधिकारियों को स्थानीय शासन-संस्थाओं के चुनावों में जाते नहीं होने देते। इसी प्रकार यह नियम भी बड़ा कठोर है कि सिविल सर्विस के अधिकारी पुस्तक या लेख के द्वारा सार्वजनिक मामलों पर टीका-टिप्पणी नहीं कर सकते। अभी हाल में स्वास्थ्य-मंत्रालय का एक अधिकारी इसलिये सर्विस से बर्खास्त कर दिया गया क्योंकि उसने इटली-अबीसीनिया युद्ध में सम्मोचनों (sanctions) की नीति की आलोचना की थी। इससे पता चलता है कि इस नियम का पावन किशोरी बढोरता से होता है।

यह मानने का पर्याप्त प्रमाण है कि सर्विस की निम्न श्रेणियाँ इन नियमों की कठोरता को पसन्द नहीं करती और उनका विरोध तक करती है। ये मानती हैं कि ये नियम उच्च श्रेणियों के लिए आवश्यक हैं। लेकिन इनका विचार है कि निम्न श्रेणियों के लिए इन नियमों की कोई आवश्यकता नहीं है। ये नियम स्वयं ही हजारों अधिकारियों को उनके नागरिक अधिकारों से वंचित कर देते हैं। उनके विचार से यदि इस प्रकार का निर्णय नियम द्वारा नहीं प्रत्युत व्यक्तिगत अधिकारी के स्वविवेक द्वारा हो तो कोई हानि नहीं होगी। यह कहना जाता है कि यह सर्विस की परम्पराका पर ध्यान रखते हुए आचरण करेया और इससे प्रभावित होने वाले अधिकारियों की संख्या इतनी बड़ी नहीं हो जाती कि वर्तमान प्रविया की कठोरता प्रभावित हो सके।

यह आवश्यक है कि हम विद्युत् राजनीतिक गतिविधि और सामयिक समस्याओं पर पुस्तक या लेख में की गई टीका-टिप्पणी का खेद समझें। जहाँ तक पहले का सम्बन्ध है यह विषय इस सिद्धान्त पर आधारित साक्ष्य पड़ता है कि सर्विस की तटस्थता में जनता के विश्वास की रक्षा जरूरी चाहिए और राजनीतिक स्वतन्त्रता के नाशक विभागों के प्रशासनिक अनुशासन में कोई बिज्ज नहीं पड़ना चाहिए। ये विचार हैं यह प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्पष्ट है कि सिविल सर्विस के उस अधिकारी को जो नीति-निर्माण के कार्य में संलग्न है, संसदीय चुनावों में जाते होने की अनुमति देना ठीक नहीं होगा। उदाहरणार्थ यदि सर मौरिस हंजी एक ही समय में मंत्रिमंडल के सदस्य और कॉमन-सभा के लिए जनधार-रक्ष के प्रयागी हो तो उनके और अधिक सम्कार के सम्बन्ध बड़ी सीधता से बढ़ ही जायेंगे। यदि सर्विस के प्रमुख अधिकारी राजनीति में प्रयत्न ही जायें तो जनता उनकी तटस्थता में खभावान्नी विश्वास नहीं करेगी।

इसलिए, यह स्पष्ट है कि सिबिल की कुछ भूमिकाओं को राजनीति में भाग लेने की अनुमति नहीं मिलनी चाहिए। इसका विस्तार विवशता होना चाहिए? इस बात को तो सरकार भी स्वीकार करती है कि औद्योगिक कर्मचारियों को राजनीति में भाग लेने का अधिकार है लेकिन यह वास्तविकता है कि इन्फियो को विनका कार्य म्यूताबिक रूप से इसी प्रकार का है, यह अधिकार नहीं दिया गया है। ये यह नहीं समझता कि साधारण निर्वाचन में वहाँ पन्द्रह ही-सोसल ही प्रत्यासी हो, सिबिल सर्विस के घाट पर अधिकारिता की उपस्थिति से हरि ये अधिकारी उच्च सिबिल के सरस्य न हों सिबिल की उत्पत्ति में जनता का विश्वास बंग हो जायेगा। लेकिन ये समझता है कि यदि केना के प्रमुख अधिकारियों को स्वयं प्रत्यासी हुए बिना दसमंश सचिव में भाग लेने की अनुमति दे दी जाय तो स्थिति विस्फुल भिन्न हो जायेगी। यदि अवैम्प्लॉयमेंट बजट स्टैंड बोर्ड का कोई बलक अधिक बल के क्रेटियम पर बोर्ड के नियमों की निष्ठा करने लगे तो उसके बारे में तरह तरह की अवांछनीय बातें होने लगी और मेरा विचार है कि यदि अनुदार बल के नापिक सम्बन्धन में ज्ञान विचार का कोई अधिकारी सानों के राष्ट्रीयकरण की नीति की निष्ठा करण लने तो अधिक बल हीप ही कुछ प्रसन्न करने जायेगा।

मेरी दृष्टि में ऐसा कोई उपाय नहीं है जिसके द्वारा वलगत राजनीति के क्षय में एक प्राची तथा दूसरी धोषी के बीच किसी सुविश्रुत रीति से रेखा खींची जा सके। मुझे इस कठिनाई का परिणाम यह भासता पड़ता है कि यदि इस प्रसन्न का निर्णय व्यक्तिगत विवेक के अन्तर्गत छोड़ दिया जाये तो यदि कहीं अधिकारी से कोई बड़ी गलती हो गई और इसके लिए उन्हें दण्ड दिया गया तो ज़ोय इसे राजनीतिक संघर्ष का फल समझे। इसलिए, मेरा विचार है कि यद्यपि वर्तमान नियम कांश्चि कठोर हैं लेकिन फिर भी वे स्थिति की आवश्यकता के अनुकूल हैं। यदि कोई व्यक्ति उच्च इनाम से परिचित है जो सचिव या स्थायी अधिकार के सदस्यों पर व्यक्तिगत प्रकरकों के सम्बन्ध में ज्ञान लाता है तो वह यह प्रसन्न सेना कि अधिकारियों को इस इनाम से विवशता मुक्त रक्ता जायेगा उत्तम ही जनता का व्यवस्था के स्थान में अधिक विचार होना। यदि सिबिल के सदस्यों ने, किसी विचार के माते पर उत्तम संघर्ष में भाग लेना प्रारम्भ कर दिया, तो सिबिल की उत्तम ऐतिहासिक परम्पराएँ हीनता से गल हो जायेगी।

पुनश्च प्रशासनिक समस्या कुछ और भी कठिनायें लगी कर देती है। यदि सिबिल सर्विस के अधिकारी राजनीति में भाग लेने लगे और वे निर्वाचन में पराजित हो जायें तो बड़ी कठिनायें उठ सकती होंगी। क्या उच्च नियति में उन्हें सिबिल में जीट जाल का अधिकार होगा, क्या यह अधिकार गिरोस है और उस पर इस तथ्य का कोई प्रभाव पड़े पड़ता कि एक अधिकारी कॉमन-सन्ना में कितने समय तक रह सकता है। मेरे विचार से, सिबिल के सम्बन्ध कुछ ऐसे हैं कि वे इस रीति से सिबिल में उच्च प्राप्ति जायेगी अनुमति नहीं देते। यदि विदेश-विभाग का कोई बलक कुछ वर्ष तक इंग्लैण्ड-प्रसा में अपने विभाग के रूप में उत्तम उत्तम रहे तो उच्च सिबिल में

बाविस आन पर अपने विभाग के अनुशासन का सुयमता से न्यस्त नहीं होगा ; यदि वह सक्रिय राजनीति में एक बार फिर प्रवेश करने का विचार करता रहा तो स्थिति और भी कठिन हो जायेगी ।

सिविल सर्विस के अधिकारियों को उस विभाग की नीति की जिसका वह उपस्थित है सार्वजनिक रूप से आलोचना करने की अनुमति नहीं दी जा सकती । यदि विशेष विभाग का कोई छोटा अधिकारी भी ईश्वर की विवेक-नीति की कृपा आलोचना करे, तो इससे देश के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बड़ी न्यस्तता का संकट पैदा हो सकता है । यदि वह अधिकारी अपना नाम प्रकाशित किए बिना आलोचना करे, तो वह भी ठीक नहीं होगा । मंत्री के लिए अपने अधिकारियों में जिस प्रकार की विश्वास-भावना आवश्यक है उसको देखते हुए यह ठीक ही है कि अधिकारियों को बाह्य मीन का बत से रखा जाय ।

केम्ब्रिज में विचार से एक ऐसा मध्यम मार्ग भी है जहाँ आत्माभिभ्यक्ति का अधिकार बिल्कुल ठीक मान्य पड़ता है । उदाहरणार्थ कोई भी व्यक्ति सरकार के एक उच्च अधिकारी की आर.बी.हाउस्टे की रचनाओं पर आक्षेप नहीं करेगा । वे रचनाएँ उन्हीं वर्तमान काल का एक अच्छा नैतिक सिद्धांत करती हैं । अब तक सिविल सर्विस का कोई अधिकारी आन के विस्तार में सहमतता देता है तब तक इस बात का कोई कारण नहीं है कि सरकार उसकी योजना पर लागू करेगी । यदि सिविल सर्विस का अधिकारी विचारशील है तो वह अपने अनुभव के अनुसार जो कुछ लिखना वह काफी महत्वपूर्ण होगा । यदि उस मीन रखने पर विचार कर लिया जायेगा तो यह सबकुछ बड़े दुःख की बात होगी । जिस प्रकार नी सेना तथा बल-सेना के अधिकारियों को युद्धनीति और सेना के संगठन के सम्बन्ध में अपने विचार व्यक्त करने के अवसर मिलने चाहिए उसी प्रकार नैतिक अधिकारियों को भी इस बात की पूरी स्वतंत्रता मिलनी चाहिए कि वह सामाजिक और प्रशासनिक संगठन के सम्बन्ध में अपने सिद्धान्तों का विकास कर सकें । यह ठीक है कि उसे अपने से उच्च अधिकारियों से अपने विचारों को प्रकाशित करने की अनुमति से डेनी चाहिए । उदाहरणार्थ यदि वित्त-विभाग का कोई अधिकारी वित्त-विभाग के नियंत्रण पर या सार्वजनिक के सहायक-विभाग का कोई अधिकारी सरकार तथा औद्योगिक न्यस्त-निर्भर के सम्बन्ध पर कोई पुस्तक लिखे तो वह बहुत उपयोगी इति होगी । मेरा विचार है कि हम सिविल सर्विस के अधिकारियों को उन समस्याओं के बारे में लिखना उन्हें समाधान करना पड़ता है, मौखिक रूप से बिन करने का बहुत कम अवसर देते हैं । इस क्षेत्र में आधिकारिक स्वविवेक सत्य की खोज में साधक नहीं प्रयत्न बाधक होता है । उदाहरणार्थ सिविल सर्विस के किसी अधिकारी को शेर न्यस्त-निर्भर का कोई पुस्तक लिखने की अनुमति दी जाये लेकिन उसे इस न्यस्तता को वह तक जो आलोचनाएँ हुई हैं उन पर विचार करने की अनुमति नहीं दी जाये तो यह उसे पुस्तक लिखने की अनुमति में देने की अपेक्षा कहीं अधिक न्याय है । इस सम्बन्ध में यदि हम सिविल सर्विस के अधिकारियों को पूरी स्वतंत्रता

नहीं देने तो लगन ही उठाने। यत्नरत यह है कि उनके बारे में पसतकहूमिया फेल सचती है। जैसे तो सिबिल सर्विस क अधिकारियों का धूमताम रहना अच्छा है ककिन एव निबिचल सीमा तक ही। इस भीमा का अतिक्रमण होने के परचाए उनका धमताम रहना साबेजनिह सम्भन्धा की दृष्टि म मानप्रद होने की अपेक्षा हानिप्रद ही अधिक होगा है।

विद्युत्त कुछ समय से इन चीज का समझ किया गया है यद्यपि इसके समाधान के लिए जिन उपाय का अचलम्बान किया गया है वह मेरी दृष्टि में उपोपग्रह उपाय नहीं है। उपाय यह है कि उस विभाग के लिए बिद्यका कार्य अपनी प्रतिबिधियाँ जनता की सपभाना है एक "जन सम्पक अधिकाारी" की नियुक्ति की जाये। यह पर बड़ा बिद्युत्त है। इसमें खबरें देने से निरुत समान्धार-पत्रा के साथ इस प्रकार का ब्यवहार तक नाभिक है कि उनम विभाग की कम से कम आलोचना हो सक। मेरा कुछ बिचार है कि यह एक यत्न चीज है। इसने स्वम्भ आलोचना को अच्छा किया है ज्यों को बढ़ाना दिया है और प्रचार की सच्ची लहरों का रूप देने की चेष्टा की है। जहाँ विभाग का अपने किसी कार्य की ब्याख्या करनी पर या किसी आलोचना का उत्तर देना पड़ तो यह कार्य मन्त्री का करना चाहिए जो कि उनमें लिए उत्तरदायी होता है। विभाग के लिए यह किसी भी प्रकार उचित नहीं है कि वह समान्धार-पत्रा को कुछ ऐसे संकेत दे दे जिनसे कि जनता के अन्तर विभाग के पक्ष में लौकमत ठेमार हो सके। यदि कोई बिभाय अपने सम्भन्धों के अन्तर अधिक से अधिक उम्भजनता रखता है, तो इससे उसे कोई हानि नहीं हो सकती। आधुनिक प्रचार नियोजन चाहे वह किसी भी बिधय में विनिय मोब्यता प्राप्त कर के स्पष्ट ब्यवहार में बिद्येपन्न नहीं होगा। बिज्ञापन अधिकता की भांति उनके पास एक नामची अपने विभाग की नीति या ब्यक्तिब्य बचने के लिए होती है और वह इस उद्देश को प्राप्त करने के लिए शीघ्रलम उपायों का आशय करता है। वह सबसे अधिक प्रयास यह प्रमाण उन्म्य करने का करता है कि उसके विभाग की प्रमुक्त बिद्यपता यह है कि वह कभी मसती नहीं कर सकता।

अध्य मानव प्राणियों की भांति सिबिल सर्विस क अधिकारी भी परलियाँ करने हैं और जनता को उनकी सचार्ड क बारे में बिदबाध बिजाने का सर्वधेष्ठ उपाय यह है कि उनकी प्रवृत्तिया के बारे में अधिक से अधिक बिबृति रखनी जाये। यदि किसी अकञ्जापीम पक्षी में इस संकेत में अचपलता हो गई, तो उसके बड़ सम्पीर परिचाम हो मरने हैं। सैबिज प्रकरण में पूबिज के ऊपर जो मरेह हुए थे वे मरी मयान्त नहीं हुए हैं। जनता की जमी बिश्वास नहीं है कि जमाने बर्लमूर बेल के बिज्ञाह के बारे में मारे उन्मों को मुत किया है। मर सेमुजल होर म १९३७ में मार्वेगन में काम करने वाला जिन मिर्शेय मन्त्रुतो को बर्बात कर बिबा का और अपने इस कृत्य के सम्भन्ध में जो लघाई की थी उनम अधिक आन्दात्म के मम में कोई बिश्वास रीदा नहीं हो सका है। इसी प्रकार जब १९३७ में श्री सैक सिबिल ने सेना के ऊपर कुछ बिदिष्ट बोवारीय किए थे उन दोपारीयों से निबटन का उपाय यह नहीं था कि जिन ब्यक्ति ने उनकी बिबा का उसे बर्लमित कर दिया जाये। इससे निबटने का स्पेष्ठ उपाय तो यह

बापिस ज्ञान पर अपने विभाग के अनुशासन का सुदमता से अभ्यस्त नहीं होगा। यदि वह सक्रिय राजनीति में एक बार फिर प्रवेश करने का विचार करता रहा तो स्थिति और भी कठिन हो जायेगी।

लिखित पत्र की समस्या इससे भी अधिक जटिल है। मेरे विचार से यह स्पष्ट है कि सिविल सर्विस के अधिकारी को उस विभाग की नीति की विसफा यह सरस्य है सार्वजनिक रूप से आलोचना करने की अनुमति नहीं दी जा सकती। यदि विदेश विभाग का कोई छोटा अधिकारी भी ईंग्लैंड की विदेश-नीति की कटु आलोचना करे तो इससे देश के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में बड़ी अव्यवस्था आ सकती है। यदि वह अधिकारी अपना नाम प्रकाशित किए बिना आलोचना करे, तो वह भी ठीक नहीं होगा। मंत्री के लिए अपने अधिकारी में जिस प्रकार की विश्वास-भावना आवश्यक है उसको देखते हुए यह ठीक ही है कि अधिकारी को बाह्य मौन का बंध लेना चाहिए।

केवल मेरे विचार से एक ऐसा मध्यम मार्ग भी है जहाँ आत्मनिष्पत्ति का अधिकार किन्तु ठीक मासूम पड़ता है। उदाहरणार्थ कोई भी व्यक्ति सरकार के एक उच्च अधिकारी को आर.बी.हाउस की रचनाओं पर आक्षेप नहीं करेगा। ये रचनाएँ उन्हें वर्तमान काल का एक भ्रष्ट अर्थात्सनी सिद्ध करती हैं। जब एक सिविल सर्विस का कोई अधिकारी ज्ञान के विस्तार में सहामाता होता है तब तक इस बात का कोई कारण नहीं है कि सरकार उसकी योजना पर ठामा लगाए। यदि सिविल सर्विस का अधिकारी विचारशील है तो वह अपने अनुभव के अनुसार जो कुछ सिझागा वह काफी महत्वपूर्ण होगा। यदि उसे मौन रहने पर विवक्ष कर दिया जायेगा तो यह उचित रूप से बुरा ही बात होगी। जिस प्रकार ही सेना तथा नौसेना के अधिकारियों की मुक्तनीति और सेवा के संगठन के सम्बन्ध में अपने विचार विमलित करने के अवसर मिलने चाहिए उसी प्रकार अमैजिक अधिकारी को भी इस बात की पूरी स्वतन्त्रता मिलनी चाहिए कि वह सामाजिक और प्रशासनिक संगठन के सम्बन्ध में अपने सिझान्तों का विकास कर सके। यह ठीक है कि उसे अपने उच्च अधिकारियों से अपने विचारों को प्रकाशित करने की अनुमति ले लनी चाहिए। उदाहरणार्थ यदि जित-विभाग का कोई अधिकारी जित-विभाग के नियन्त्रण पर, वा अम-मंत्रालय के सहायक-विभाग का कोई अधिकारी सरकार तथा औद्योगिक मध्यस्व-नियंत्रण के सम्बन्ध पर कोई पुस्तक लिखे तो वह बहुत उपयोगी इति होगी। मेरा विचार है कि हम सिविल सर्विस के अधिकारियों को उन समस्याओं के बारे में जितना उन्हें समाधान करना पड़ता है, मौलिक रूप से विचार करने का बहुत कम अवसर देते हैं। इस क्षेत्र में अल्पविक स्वविवेक सत्य की धोर में तापक नहीं प्रत्यत बाधक होता है। उदाहरणार्थ सिविल सर्विस के किसी अधिकारी को वैध-व्यवस्था पर कोई पुस्तक लिखने की अनुमति दी जाये केवल तब इस व्यवस्था को यह तक जो आलोचनाएँ हुई हैं उन पर विचार करने की अनुमति न दी जाये तो यह बड़े पुस्तक लिखने की अनुमति न देने की अपेक्षा बड़ी अधिक कठोर है। इस सम्बन्ध में यदि हम सिविल सर्विस के अधिकारियों को पूरी स्वतन्त्रता

जनसाधारण की राय और प्रामाणिक प्रक्रिया के बीच एक मनुसूक्तन पैदा कर देनी है। अधिकारी के सामने एक बड़ा खतरा यह रहता है कि वह जनसाधारण की राय से दूर हो जाता है। वह अपनी समस्याओं को अधिकतर पार्लियों के माध्यम से देखता है और इसका परिणाम यह होता है कि उनके और उचित परिणाम की मांग नहीं रहती एवं वह जनसाधारण की वास्तविक आवश्यकताओं से दूर हो जाता है। यू.एस. संसद के अधिकारियों के लिए शाप अगिस्टेस नियम के प्रतिनिधियों से मिलने शुरू होना कामकायक होया। लेकिन उनकी यह भेंट विद्यमान रूप से रूप में और अधिक रूप से लगी होती चाहिए। इन औपचारिक भेंटों में दो-तीन घण्टे होने हैं और फिर अधिकारियों की ओर से यह आश्वासन दे दिया जाता है कि हम आपकी मांगों पर विचार करेंगे। वह भेंट नियमित रूप से प्रतिमास होती चाहिए और इन भेंटों में दोनों पक्षों को अपनी सामान्य समस्याओं पर वैयक्तिक सम्पर्क द्वारा विचार विनिमय करना चाहिए। यदि स्वास्थ्य यथासंभव में देवी बर्नरों की सहाई के सम्बन्ध में कोई परामर्श समिति हो तो बहुत अच्छा है। इनके विचारों के आदान-प्रदान के द्वारा अधिकारियों को प्रत्येक तात्कालिक महत्व का निरन्तर ज्ञान रहेगा। ये चाहता है कि सेना के उन नियमों में भी बिकला साधारण विचारों पर प्रभाव पड़ता है कुछ परिवर्तन हों। लेकिन ये परिवर्तन उच्च अधिकारी स्वयं न करें। प्रत्युत ये परिवर्तन मृत्युर्भ सिपाहियों की एक समिति के सुझावों के अनुसार होने चाहिए। ये सिपाही हम बात को मधीमार्थि जानते हैं कि सेना के नियमों में क्या दोष हैं और उनमें किन सुधारों की आवश्यकता है। या ज्ञान धक सेना के सम्बन्ध में लगी है वही भी सेना और वायु सेना के सम्बन्ध में भी लगी है। यदि विभिन्न मंत्रालय नियमित रूप से परामर्शीय समितियों में संलग्न करते रहें तो वे बहुत ही कठिनाइयों से बच सकते हैं। मेरे विचार से धर्म मंत्रालय की यह भूल है कि उनमें बेरोजगारों का स्थानीय धर्म-विनिमय-केन्द्रों से और अधिक संपर्क को उनके केन्द्रीय प्रशासन से सम्पर्कित करने की कोई चेष्टा नहीं की है। प्रामाणिक प्रक्रिया से सम्बन्ध ऐसा बहुत सा सामाजिक मनुसूक्त है, जिसका वर्तमान व्यवस्था में हमारे सामक रचना भी उपलब्ध नहीं करने। यह आवश्यक है कि इस मनुसूक्त का उपलब्ध किया जाये। यदि ऐसा हो जाये तो मेरा विचार है कि बीम जन सम्पर्क अधिकारी विभिन्न सविन का काम जगता को समझाने के लिए मिलना कर सकते हैं उनसे अधिक यह कर सिपाह्या।

हम सिविल सविन की चाहे विद्यती प्रशंसा कर लें लेकिन यह एक लक्ष्य है कि सामरिक उनमें बहुत कम काम को समझ पाते हैं। यह हमारी दोषपूर्ण शिक्षा के कारण है। हम अर्थात् एक अरस्तू के घरों में 'निश्चयान की भाषना के प्रसिद्धि का महत्व नहीं समझ पाये हैं। अधिकार जनसंख्या को आधुनिक प्रशासन के प्रयोजनों एवं बड़ निया का कोर काम नहीं जाता। उनका यह विचार होता है (जो किन्कस पल्ल है) कि वे भी अधिकारियों को अच्छा बेतन मिलना है उन्हें निश्चयता रहती है और कम काम करना पड़ता है। वे बहुत ही जाबन में कुछ ऐसे विषय जान है कि उन्हें चाहे

या कि एक छोटी सी समिति के द्वारा जिसकी निष्पक्षता में जनता को पूरा विश्वास होना हम दोषीयों की जाँच करवाई जाती। सर चार्ल्स फ़िस्टर ने पिगोटी-प्रकरण और बुल्डोक-प्रकरण में जो जाँच-पड़ताल की थी वह इस प्रकार के बड़े व्यवहार की जिम्मे जनता में ठीक प्रकार का विश्वास उत्पन्न होता है, स्पष्ट उदाहरण है। मेरा विचार है कि दुर्लभ लेकिन सामान्य महत्त्वपूर्ण प्रकरणों में पूरी जाँच-पड़ताल के इस उपाय का आशय नहीं किया जाता। फलतः ऐसे प्रकरणों में जनता सम्बन्ध विधाय की सीटियों से असंतुष्ट रह जाती है।

उक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस प्रकार सरकारी विचार के लिए अधिक से अधिक प्रकार की जांचमयता है उसी प्रकार जनता और विधिक सचिव के बीच अधिक से अधिक सम्बन्ध वांछनीय है विद्यमान उस समय जब कि विधाय विधी स्वधिकेकी बचवा गोपनीय शक्ति का प्रयोग करता हो। सार्वजनिक प्रशासन और व्यक्तिगत प्रशासन के बीच मुख्य भेद यही है कि पहले में नागरिक को उस प्रत्येक निर्णय के कारण ज्ञात करने का अधिकार है जिसे कि वह प्रभावित होता है। बड़ी कारण है कि मजिस्ट्री की सचिवों पर विचार करने के लिए कोई आवश्यकता की जो समिति नियुक्त हुई थी उसने स्वास्थ्य-मन्त्रालय से इस बात की सिफारिश की थी कि वह गर्वी बरिठियों की सफाई जैसे मामलों के सम्बन्ध में निरीक्षकों की रिपोर्टों को प्रकाशित कर दिया करे। यदि वह-मन्त्री किसी विदेशी को बेघोषकरण का प्रमाण-पत्र देना अस्वीकार कर दें तो उस विदेशी को इस मामले में गृह-मन्त्री के निर्णय के विरुद्ध अपील करने का अधिकार होगा चाहिए। वर्तमान व्यवस्था जिसमें अस्वीकृति के कारण नहीं बताए जाते असंतोषप्रद है क्योंकि ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जिसमें किसी विदेशी के भ्रम पहले गृह-मन्त्री के उत्तराधिकारी से अपील करके निर्णय को बदलना सैठ है। यह तर्क कि संसद् ने इस लेख में पूरी स्वतंत्रता दे रखी है, हमें अधिक दूर तक नहीं ले जाता। संसद् का उद्देश्य तो यह है कि इस स्वतंत्रता का ठीक से प्रयोग हो। कई बचकर ऐसे होते हैं जब कि कुछ अधिकारी अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करते हैं और यह जनता की दृष्टि से छिपा रह जाता है। लेकिन यदि इसका लक्ष्य परीक्षण हो तो यह अस्पष्टता में ही प्रयत्न हो सकता है।

मे एक पूर्व अध्याय में राज्य के प्रत्येक विभाग के सम्बन्ध में संसद् के सदस्यों की परामर्शीय समितियों की वांछनीयता के सम्बन्ध में विवेचन कर चुका है। इन समितियों ने सबसे बड़ा काम यह है कि वे उत्तरदायी व्यवस्थापक तथा प्रशासनिक नियोजन के बीच सम्पर्क बनाए रखेंगी। मेरी दृष्टि में इस सम्पर्क का बहुत महत्त्व है। इसके कारणों का मैं पहले ही उल्लेख कर चुका हूँ। इन समितियों के अतिरिक्त मैं विचारने का विषय में ऐसे मामलों की परामर्शीय समितियों को भी आवश्यक मानता हूँ जिनके द्विज विभागा कु कार्य में प्रभावित होने हैं। इस प्रकार की समितियों को अब भी है और उनमें से कुछ ने विधायक गिद्या-मंडल की परामर्शीय समिति ने अत्यंत उपयोगी कार्य किया है। इस प्रकार की समिति का एक बड़ा काम यह है कि वह

जनसाधारण की राय और प्रशासनिक प्रक्रिया के बीच एक समुक्तन पैदा कर देनी है। अधिकारी के सामने एक बड़ा सवाल यह रहता है कि वह जनसाधारण की राय से पृथक् ही जाता है। वह अपनी समस्याओं को अधिकतर पत्रकारों के माध्यम से देखता है और इसका परिणाम यह होता है कि उसके अंदर उचित परिमाण की मात्रा नहीं रहती एवं वह जनसाधारण की वास्तविक आवश्यकताओं से दूर भा पड़ता है। यह मंत्रालय के अधिकारियों के लिए सारा अधिस्टेण्ड मूविम के प्रतिनिधियों से मिलते जुलते रहना कामकाज होना। लेकिन उसी यह सेंट सिप्लमंडक के रूप में औपचारिक ढंग से नहीं डौनी चाहिए। इन औपचारिक सेंटों में बो-डीन भोग्य होते हैं और फिर अधिकारियों की ओर से यह आस्थापन से विद्या जाता है कि हम आपकी मर्तो पर विचार करेंगे। यह सेंट नियमित रूप से प्रतिमास होनी चाहिए और इन सेंटों में लोगों को अपनी सामान्य समस्याओं पर वैयक्तिक सम्पर्क द्वारा विचार विनिमय करना चाहिए। यदि स्वास्थ्य मंत्रालय में सेंटी बस्त्रियों की सफाई के सम्बन्ध में कोई पंचमसीव समिति हो तो बहुत अच्छा है। इससे विचारों के आदान प्रदान के द्वारा अधिकारियों को प्रश्न के तात्कालिक महत्त्व का निरन्तर भाग रहेगा। मैं चाहता हूँ कि सेवा के इन नियमों में भी जिनका साधारण विदाहियों पर प्रभाव पड़ता है कुछ परिवर्तन हों। लेकिन ये परिवर्तन उचित अधिकारी स्वयं न करें। प्रत्युत ये परिवर्तन पूर्ववर्त विदाहियों की एक समिति के सुझावों के अनुसार होने चाहिए। वे विदाही इस बात को असौमार्थि मानते हैं कि सेवा के नियमों में क्या दोष है और उनमें-किंग सुधारों की आवश्यकता है। जो बात बल सेवा के सम्बन्ध में सही है वही तो सेवा और बाहु सेवा के सम्बन्ध में भी सही है। यदि विभिन्न मंत्रालय नियमित रूप से पंचमसीव समितियों में संस्था करते रहें तो वे बहुत ही कठिनाइयों से बच सकते हैं। मेरे विचार से धर्म मंत्रालय की यह भूल है कि उसने बेरोजगारों को स्थायीय धर्म-विनिमय-केन्द्रों से और धर्मिक संघों को उनके केन्द्रीय प्रशासन से सम्पर्कित कराने की कोई चेष्टा नहीं की है। प्रशासनिक प्रक्रिया से सम्बन्ध ऐसा बहुत सा सामाजिक अनुभव है, जिसका वर्तमान व्यवस्था में हमारे पास एक संभवान भी उपभोग नहीं करते। यह आवश्यक है कि इस अनुभव का उपमाण विद्या जाये। यदि ऐसा हो जाये तो मेरा विचार है कि बीच-बीच सम्पर्क अधिकारी विभिन्न सचिव का काम बनना को समझाने के लिए विद्यता कर सकते हैं उससे अधिक यह कर दिखाएगा।

हम तिबिल सचिव की जाहे बिलनी प्रघसा कर हैं लेकिन यह एक तथ्य है कि नागरिक उनके बहुत कम काम को समझ पाते हैं। यह हमारी सौपपूर्व सिखा के कारण है। हम अभी तक भारत के लोगों में अधिकार की भावना के प्रतियोग का महत्त्व नहीं समझ पाये हैं। अधिकार जनसंख्या को आधुनिक प्रशासन के प्रयोजनों एवं पड़ दिया है। कोई ज्ञान नहीं होता। उनका यह विचार होता है (जो किन्तु गलत है) कि वे भी अधिकारियों को अच्छा वेतन मिलता है। उन्हें निश्चिन्ता रहती है और कम काम करना पड़ता है। वे सेंटरी जीवन में बस दिये बिल जाने हैं कि उन्हें जाहे

या कि एक छोटी सी समिति के द्वारा जिसकी नियुक्तता में जनता को पूरा विश्वास होता है। दोपार्लोमेंटों की जाँच करवाई जाती। सर कारेन फिथर ने सिवोटी-प्रकरण और बुसोक-प्रकरण में जो जाँच-पड़ताल की थी वह इस प्रकार के बारे में व्यवहार की जिनस बातों में ठीक प्रकार का विश्वास उत्पन्न होता है, श्रेष्ठ उदाहरण है। मेण विचार है कि दुर्बल सेकिन सामान्यतः महत्त्वपूर्ण प्रकरणों में पूरी जाँच-पड़ताल के इस उपाय का आशय नहीं किया जाता। फलतः ऐसे प्रकरणों में जनता सम्बद्ध विभाग की सीधियों से असंतुष्ट रह जाती है।

उक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि किस प्रकार सरकारी विचार के लिए अधिक से अधिक प्रकार की जाँच-पड़ताल है उसी प्रकार जनता और सिविल सर्विस के बीच अधिक से अधिक सम्बन्ध वाञ्छनीय है विधायक उस समय जब कि विभाग किसी स्थिति में अथवा गोपनीय सक्ति का प्रयोग करता हो। सार्वजनिक प्रशासन और व्यक्तिगत प्रशासन के बीच मुख्य भेद नहीं है कि पहले में नागरिक को उस प्रत्येक नियम के कारण सात करने का अधिकार है जिसे कि वह प्रभावित होता है। यही कारण है कि मंत्रियों की सक्तियों पर विचार करने के लिए कोई वास्तविक ही जो समिति नियुक्त हुई थी उसने स्वास्थ्य-मन्त्रालय से इस बात की विचारणा की थी कि वह सभी बस्तियों की सक्तियाँ जैसे मामलों के सम्बन्ध में निरीक्षणों की रिपोर्टों को प्रकाशित कर दिया करें। यदि यह-मन्त्री किसी विवेची को देखोकरण का प्रमाण-पत्र देना अस्वीकार कर दें तो उस विवेची को इस मामले में यह-मन्त्री के निर्णय के विरुद्ध अपील करने का अधिकार होना चाहिए। वर्तमान व्यवस्था जिसमें अस्वीकृति के कारण नहीं बचाए जाते असंतोषप्रद है क्योंकि ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जिसमें किसी विवेची के विना पहले यह-मन्त्री के उत्तराधिकारी से अपील करके निर्णय को बदलना सन्देश है। यह ठीक कि संसद् ने इस क्षेत्र में पूरी स्वतन्त्रता दे रखी है, हमें अधिक दूर तक नहीं के जाता। संसद् का उद्देश्य तो यह है कि इस स्वतन्त्रता का ठीक से प्रयोग हो। कई अवसर ऐसे होते हैं जब कि कुछ अधिकारी अपनी स्वतन्त्रता का दुरुपयोग करते हैं और यह जनता की दृष्टि से छिपा रह जाता है। लेकिन यदि इसका सूदम परीक्षण हो तो यह अल्पकाल में ही प्रकट हो सकता है।

यदि एक पूर्व अध्याय में राज्य के प्रत्येक विभाग के सम्बन्ध में संसद् के सक्तियों की परामर्शीय समितियों की वाञ्छनीयता के सम्बन्ध में विवेचन कर चुका है। इन समितियों में सबसे बड़ा काम यह है कि वे जनरलरी स्पेकलाएक तथा प्रशासनिक विधेयों के बीच मुख्य भेद बनाए रखेंगी। मेरी दृष्टि में इस सम्पत्ति का बहुत महत्त्व है। इसके वादों का मैं पहले ही उल्लेख कर चुका है। इन समितियों के सतिरिक्त मैं विभागों के विषय में ऐसे नागरिकों की परामर्शीय समितियों को भी आबन्धक मानता हूँ जिन्होंने कितने विभागों के कार्य में प्रभावित होने हैं। इस प्रकार की समितियों तो अब भी हैं और उनमें से कुछ न विधायक विद्या-संस्कृत की परामर्शीय समिति ने अत्यंत उपयोगी कार्य किया है। इस प्रकार की समिति का एक बड़ा काम यह है कि यह

यै जितना अधिक सामाजिक अनुभव एकीकृत किया जायगा उतनी ही अधिक इस बात की सम्भावना होगी कि मन्त्री का निर्णय अधिक बुद्धिमत्तापूर्ण होगा। वस्तुतः मेरे मुताबक वा अभिप्राय यही है कि हमारे राजनीतिक जीवन में राजकीय भाषोप जो महत्त्व रखते हैं उसको ठीक और बड़ा किया जाये। प्रयासन की नीति और स्पष्टता में राजकीय भाषोप से जो सहजता मिलनी है वह वस्तुतः बर्धनातीत है। मेरे कहने का सार यही है कि सोवतक वस्तुतः उपभोक्तावा की पसर का घासन है और इस उद्देश्य को प्राप्त करन का सर्वश्रेष्ठ उपाय यह है कि उपभोक्तावा को सघटन किया जाये जिससे कि समय-समय पर उनसे भक्षण की जा सके। यदि जनता नीतियों के परिणामों में सक्रिय सक्रि नहीं लती तो इसकी क्षतिपूर्ति किमी भी प्रकार नहीं हो सकती। सिद्धि सचिन् का अधिकाधी बड़ी आसानी से यह मान लेता है कि आलोचना की अनुपस्थिति का अर्थ सन्तोष की उपस्थिति है। लेकिन यह बात सच नहीं है। यह जानने का कि जनता क्या चाहती है सर्वश्रेष्ठ उपाय जनता को इस प्रकार सघटन करना है जिससे कि वह अपनी इच्छा का व्यक्त कर सके। यदि हम जनता को अपनी इच्छा व्यक्त करने के साधन नहीं देते तो यह एक बहुत बड़ी गलती है और हमारा सम्पूर्ण विद्यपक्षान इसकी क्षतिपूर्ति नहीं कर सकता। जनता की इच्छा को जानने का श्रेष्ठ उपाय उसे जो कुछ मिल रहा है उसकी आलोचना से सम्पक्षि करना है। जितना ही अधिक हम इस विद्या में प्रयत्न कर सकते हैं उतने ही अधिक हम नीकर घाही की दुर्बलताओं से सुरक्षित रहेंगे।

(५)

औसत आमेरिक का ईतिक अनुभव यह सिद्ध करता है कि इस देश में अधिमाती घक्ति की बुद्धि हुई है। यह घक्ति-बुद्धि कुछ तो संतर् के मूख्य पर हुई है। प्रयत्न व्यवस्थापन की बुद्धि विज्ञाने तीस बरों के सबसे महत्त्वपूर्ण प्रक्षिप्यपन परिवर्तनों में से एक है। यह घक्ति-बुद्धि कुछ हद तक व्यापारकों के मूख्य पर भी हुई है। मन्त्रियों को अर्थ-व्यापिक और कमी-कमी पुन व्यापिक घक्तिवा दे दी गई है। इसके फलस्वरूप कानून का घासन कुछ सीमा तक बर्धित हो गया है। हमको इन विकास के परिणामों के विरुद्ध गम्भीर वैनाकनिवा मिनी हैं। यह 'नई तालामाड़ी' है यह 'नीकरमाड़ी की विरय' है। इंग्लैण्ड के अधान व्यापारीय जैसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति तक हम क्षत्र में बर पड़े हैं और उन्होंने इस बात को बार देकर कहा है कि यदि हमें जनता की स्वर्णना की रखा करनी है तो वह आवश्यक है कि हम प्राचीन रीति-रिवाजों की ओर लौट चलें।

प्रयत्न व्यवस्थापन के विकास की जा आलोचना की गई है। यदि उतकी गम्भीर परीक्षा की जाये तो वह बिन्दुत निस्तार सी लयती है। यह तो टीक है कि संगर् को कुछ आधानवासीय अपवाजों को छोड़कर विभाग को ऐसे नियम-निर्माण की घक्तिवा नहीं देनी चाहिए जिनका वह कार्यागित होने के पुन परीक्षण न कर सके। यह, जैसा कि कोई आचरुर्न बपेटी ऑन मिभिस्तत वाबर्स' ने कहा है कोई कठिन बात नहीं है। इसके लिए कर्णपन-मावा की एक स्थायी समिति की स्थापना की जा

कोई नाम करना पड़े वे बहुत धीरे-धीरे करते हैं। वेतनों के सम्बन्ध में जो पंक्शन समिति नियुक्त हुई थी उसकी टिप्पणियों से भी यह पता चकटा है कि सिविल सर्विस के कार्य में बड़ा अतिरिक्त है। ऐसी स्थिति में मालीबको के महान का फल यह होता है कि वे महत्त्ववर्गी करने लगे हैं। साधारणतया छोन सिविल सर्विस के गुणों की अपेक्षा उसके दोषों में अधिक रुचि दिखाते हैं। यदि सिविल सर्विस अपने काम करती है, तो हो सकता है कि लोगों का ध्यान उस ओर न जाये लेकिन यदि सिविल सर्विस से कोई गलती हो गई तो जग बड़ी सुममता से उसकी ओर जंगली उठाने लगते हैं।

नागरिक शिक्षा का महत्त्व स्वतः स्पष्ट है। अज्ञानी लोकशासनवादी लोकशासन को रखा नहीं कर सकते क्योंकि वे लोकशासन का ठीक-ठीक समिप्राय ही नहीं जानते। लेकिन मेरा विचार है कि ब्रिटेन ही अधिक हम लोगों को प्रशासनिक प्रक्रिया के विषयगत पक्ष का ज्ञान दे सकते हैं, उतना ही अधिक लोग इस कार्य का महत्त्व समझ सकते हैं। लेकिन की यह एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्दृष्टि थी। उसने यह समझ लिया था कि ब्रिटेन ही अधिक जनता प्रशासनिक प्रक्रिया से सम्बन्ध होगी उतना ही अच्छा प्रशासन का स्वल्प होगा क्योंकि जब स्थिति में प्रशासन को अधिक उत्तरदायी बनाने का सामना करना पड़ता है। मेरा विचार है कि इस प्रश्न पर ब्रिटिश लोकशासन असफल हो गया है। यह यह नहीं समझ सका है कि यदि उसने जनता में रुचि जागृत करने के लिए उपयुक्त संस्थागत युक्तियों का निर्माण कर लिया तो काफी जनता उसकी प्रक्रियाओं में रुचि लेने लगेगी। अपने राष्ट्रीय जीवन के दूसरे क्षणों में हम संकल्पपूर्वक ऐसा कर सके हैं। लेकिन सब सहाकारी आन्दोलन अधिक दल तथा अन्य बहुत ही संस्थाएँ केवल इस कारण जीवित रह सकी हैं क्योंकि वे अपने सदस्यों की ऐच्छिक सेवा प्राप्त करने में सफल हुई हैं। मेरा विचार है कि यदि केन्द्रीय और स्थानीय पञ्चमूर्तीय समितियों का ठीक से समर्थन किया जाये और उनका सही उपयोग किया जाये तो वे सार्वजनिक प्रशासन के क्षेत्र में इसी प्रकार की सेवा कर सकती हैं। समितियों को यह विश्वास दिलाना आवश्यक होगा कि उनकी मजबूती को महत्त्व दिया जायेगा। यदि समितियों को केवल औपचारिक संस्थाएँ ही माना गया तो यह बहुत बुरा होगा। आपुनिक नागरिक को प्रशासनिक प्रक्रिया से विमुख होने से रोक्ने के लिए जो भी किया जाय वह बोज़ा है। नागरिक यह जानता है कि वह कर देता है। उसे इस बात का भी निरन्तर ज्ञान होना चाहिए कि वह किसलिए कर देता है। जब तक उसे इस बात का पूर्ण रूप से ज्ञान नहीं है वह अपने बर्तों में नागरिकता की भावना से अनुप्राणित नहीं माना जा सकता। यदि राजनीति की प्रक्रिया में जनता जंग तीन-चार वर्षों के केवल एक बार मत देने तक ही सीमित है तो पञ्चमीतिक दलों के सक्रिय सदस्यों के अतिरिक्त ऐसे बहुत कम व्यक्ति होते हैं जो यह समझें कि इन वस्तुओं का नागरिक है।

वे यह बात और देकर कहता है कि मरे कबल का यह अभिप्राय बजापि नहीं है कि वे मंत्रीय निर्णय के सिद्धान्त की अपेक्षा या अग्रहणता करता है। निर्णय मंत्री के ही हाथ में रहना चाहिए। लेकिन यह स्पष्ट ही है कि उसके निर्णय के आधार स्प

भी बाबेंबरक है कि जब कार्यपालिका को अर्थव्यापिक उक्ति दे दी जायेगी निर्णय करने की उनही पद्धतियाँ कुछ एसी होंगी कि उनका सचाई के प्रति विश्वास जम सके। पुनरुक्त यह भी महत्त्वपूर्ण है कि इस क्षेत्र में कार्यपालिका के निर्णय का आचार नार्थकनिक होया और इस बात का पूरा आश्वासन मिलता रहेगा कि अधिकारियों न म्यापयुक्त निर्णय के लिए आवश्यक समस्त सामग्री का समुचित परीक्षण कर दिया है।

यदि उक्त आवश्यकताएँ पूरी हो जायें तो फिर हम उक्त मै कि कार्यपालिका को व्यापिक पद्धतियाँ दे दी गई हैं अधिक ऊँचापोह नहीं मचनी चाहिए। सुझावर बयों में हम प्रश्न पर तनिक विचारजना के सार्थ विचार किया गया है। अनुभव की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण बात को कारण नहीं है कि म्यापयुक्त विद्यालयों के प्रबन्धकों तथा स्वाभियोगिक प्राधिकारों के विचार को कोई अर्थ एक्जेशन की अपेक्षा अधिक बर्ती तरह निर्यात मरणा है।^१ लेकिन यह मानते हुए भी कि कोई अर्थ एक्जेशन के पान सारे उक्त हूने हैं आम कारण इसके प्रतिफल मात्रम पड़ती है। महत्त्वपूर्ण बात की कोई कारण नहीं है कि यदि कोई स्वाभियोगिक प्राधिकारों किमी अस्वास्थ्यकर प्रवृत्त का स्वामी है तो उस सन्त का बह करने का आशय देन के लिए म्यापयुक्त स्वास्थ्य-सेवी की अपेक्षा अधिक योग्य है।^२ यहाँ भी अन्तर्गत प्रवृत्त के स्वरूप को मानते हुए भी आम कारण इसके प्रति कम ही मात्रम पड़ती है। इन मधोपन्यायाधिकारण के लक्ष्यविकार में जो कुछ अन्तर्गत है वह उपयुक्त प्रसागनिक मानों का विकास है और इस प्रकार के मानों का मूल म्यापयुक्तों की अपेक्षा कार्यपालिका की अधिक विद्यम-बल है। यदि कार्यपालिका का इस प्रकार का लक्ष्यविकार पिल गया है तो इसका यह अभिप्राय बहापि नहीं हो जाता कि कानून का सामन मण हो गया है क्योंकि इस प्रकार के लक्ष्यविकार का प्रवृत्त करने समय समय इस बात की नियन्त्री रखनी है कि इन म्यापयुक्तियों में छात्र-बान का कार्य इनकी ईमानदारी से हो कि म्याप की विद्यय हा सके। केवी जो बी. ने 'बड बर्सेस बुड'^३ के अभिप्राय में इसकी अच्छी तरह व्याख्या की है। इस प्रकार के म्यापयुक्तियों के सम्बन्ध में उक्तान कहा है "अन्य कार्य-म्यापयुक्त में के इत मूल का पालन करने के लिए बाध्य है कि किमी भी व्यक्ति को केवल आगेपिन बहापल के आचार पर ही बह मनी देना चाहिए। बह देन के पूर्व अधियुक्त की मुनबाई होनी चाहिए और उसे अपन पक्ष-प्रतिपादन का अधिकार मिलना चाहिए। यह नियम केवल विद्यय कानूनी म्यापयुक्तिकरणा तक ही सीमित नहीं है अतुत ऐसे प्रत्येक म्यापयुक्तिकरण के ऊपर लागू होता है किम व्यक्तिपा के व्यवहार-सम्बन्धी मामला पर निर्णय देने का अधिकार हो।"

प्रसागनिक म्यापयुक्तका के इतिहास से यह निदान्त सिद्ध नहीं होना कि व्यवहार में

१ बोर्ड ऑफ एक्जेशन बर्सेस राइस (१ ११) ए मी १७ ।

२ लाहल बर्सेस बोर्ड बर्सेस आनिक (१९५) ए एसी १२ ।

३ (१८७४) एक आट एक्स १९ ।

सकती है। यह समिति समस्त नियमों तथा आवेदों पर उनके कार्यान्वित होने के पूर्व विचार करती। यदि इन नियमों तथा आवेदों में कोई असाधारण बात हुई तो समिति सभा का ध्यान उसकी ओर आकृष्ट कर सकती है। इस परीक्षण और इस आस्थासन के बीच हुए बिलका जमी तक अभाव नहीं रहा है कि किसी समस्त सम्बन्ध द्विती से मोचना किए बिना कोई नियम न बनाएँ प्रकृत व्यवस्थापन के पक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है और उसके विपक्ष में बहुत कम। यदि कोई व्यक्ति प्रकृत व्यवस्थापन की विषय-वस्तु पर विचार करे, तो वह यह बड़ी सुगमता से समझें कि इसकी बजह से संसद का बहुत सा अमूल्य समय बर्बाद जाता है जिसकी बहूँ दूसरे कामों में क्या सकता है। यदि विषयों की सूची में विस्तार करने में टैकनी के विचारों में परिश्रम जैसी नियामक धर्मियों का प्रयोग सभा नहीं प्रत्युत कुछ मंत्री करते हैं तो इससे हमारी स्वतंत्रता बर्तन में नहीं बढ़ जाती। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि संसद की धर्मियों के विचारों का प्रयोग पर जब वह उचित समझ आशय करने का अधिकार होता चाहिए और इस प्रकार उसे जो कुछ उसके नाम में किया जाये उसके परीक्षण का अधिकार होना चाहिए जिससे कि ऐसी कोई वस्तु जिस पर कि वह धर्मिय करे उसके ध्यान से न छूट जाये। यदि यह हो जाती है, तो प्रकृत व्यवस्थापन की पद्धति जो वास्तव में काफी पुगनी है, विध्यात्मक राज्य के लिए आर्थिक एवं प्रारम्भिक प्रक्रिया-मूलक सुविधामान है।

विभागों की जो न्यायिक और अर्द्धन्यायिक धर्मियों से की गई है उससे कुछ और जटिल प्रश्न उठ खड़े होते हैं। प्रोफसर डायरी के सिद्धान्तों में विहित अर्थ यह विचार करते हैं कि जब तक वास्तव के किसी प्रश्न को ऐसा कोई न्यायालय नहीं मुक्तता जो कार्यपालिका के नियन्त्रण से स्वतन्त्र हो तब तक वह नहीं माना जा सकता है कि उस प्रश्न का उचित निर्णय हो गया। आज तक मजिस्ट्रो के क्षेत्राधिकार में जो नृति होती जा रही है और उसके फलस्वरूप न्यायालयों की उचित में भी कमी हो रही है उसे न सबूत की नृति ब देखते हैं। यकीन इस बात का विषय रूप से विचार करते हैं कि किसी न्यायिक मामल पर न्यायालयों के बाहर ठीक से विचार किया जा सकता है। उनका कहना है कि इस प्रकार के क्षेत्राधिकार की नृति इस बात का प्रमाण है कि सिविल सर्विस मजिस्ट्रो की नीति को वास्तविक उचित से अधिक महत्व देने के लिए प्रयत्नशील है। उनका उर्ष है कि यह एक नए क्रिस्म की तादादाही है। म्दुमर्द-काक म वास्तव का शासन अर्थशा की स्वतंत्रता का सबसे बड़ा रजक रहा है। यदि इसमें विधिच्छा कर दी जाती है तो इससे स्वतंत्रता को सतरा पहुँच सकता है।

आधुनिक प्रवृत्तियों के अनुगीकृत को इन समस्त समस्याओं पर कम्प्रीह्यापूर्वक विचार करना चाहिए। कुछ धर्मियों ऐसी हैं जिन्हें कार्यपालिका की रीते से धार्मिक स्वतंत्रता निर्विकलण पक्ष में पर आयेगी। यदि कार्यपालिका को यह विचारित करने की क्षमता दे दी जाये कि अनुक प्रकार का आचरण महत् है और अनुक व्यक्ति का आचरण ऐसी कोटि का है तो वह सिद्धान्त की एक बहुत बड़ी पराजय होगी। यह

कर्मों में नागरिकों को कार्यवाहिका की शक्ति के दुरुपयोग से बचाने की बहुत बख्शी व्यवस्था कर ली है और यह व्यवस्था हमारे देश की व्यवस्था से भी बढ कर है। लेकिन शायदी ने फँस पड़ति के को पुन-व्योप बटाए ह उन्हें अवेज विमान-विचारर और विशेषकर अत्रय न्यायाधीश बधी हाल ठक जाँज मूव कर धिरोधार्स करते थे और वे यह मानते थे कि अधिकारियों को न्यायिक शक्ति दे देने से स्वतन्त्रता बठरे में पड़ जाती है।

यदि समुचित व्यवस्था करली जाये तो यह मानने का कोई कारण नहीं है कि बस्तुस्थिति ऐसी ही है। यह व्यवस्था आवश्यक है कि वे अधिकारी जो इस प्रकार के क्षेत्राधिकार का उपयोग करते हैं अपने से ठीके अफसरों के बखान में न जा जायें और अभियोग के पक्ष-विपक्ष में जो कुछ जातबीन करें वह निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण हो। इस प्रसंग में वैधानिकता और जनेवागिकता का प्रश्न भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विभाग को अपने प्राधिकार की सीमाएँ निश्चित करने का अन्तिम और निरपेक्ष अधिकार नहीं देना चाहिए। आधुनिक राज्य का स्वरूप ही कुछ ऐसा है कि प्रशासनिक कानून की बुधि अवश्यम्भावी है। फलतः जिन समस्याओं को प्रशासनिक कानून ढाँडा करता है हमें उनके संस्थागत समाधानों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिए।

प्रशासनिक कानून की दूसरी समस्या आधान है। सारम से यह प्रतीत होता है कि इसे संतोपपूर्वक हल कर लिया गया है। नागरिक को अपनी बात कहने का पूरा बबसर मिळता है। अभियोग का निर्णय उन समस्त आधारी को प्रबन्ध करता है, जिनके ऊपर उसकी रचना की जाती है। प्रशासनिक न्यायाधिकारम नागरिक को अत्येक बात पर न्यायात्म्य के समान ही ध्यान से विचार करता है। प्रशासनिक न्यायाधिकारमों में निर्णय बड़ी शीघ्रता से हो जाते हैं और नागरिक का व्यय भी कम होता है। समस्या की वास्तविक बठिनाई पहले और तीसरे प्रश्न में निहित है। निश्चित है कि मन्त्री को जो क्षेत्राधिकार दिया जाता है उसका वह स्वयं व्यक्तिगत रूप से प्रयोग नहीं कर सकता। वह केवल अपने अधिकारियों द्वारा की गई जाँच पड़ताल पर स्वीकृति की मुहर लगा देता है। जनता को इन अधिकारियों के बारे में कौन ज्ञान नहीं होता। यह एक खेद विषय है कि न्यायिक कार्य केवल ज्ञान व्यक्तियों का ही सीँपा जाता चाहिए। चूंकि इस प्रकार के कार्य में कानून का भी क्रिये तब समाविष्ट रहता है अतः यह आवश्यक है कि उनका प्रशासनिक ज्ञान कानूनी प्रशिक्षण के साथ समुक्त हो। मेरे विचार से यह भी आवश्यक है कि अधिकारियों को अपने इस कार्य के संपादन में जिसमें कुछ न्यायिक बिलेपताएँ भी ह पश्चबि की सुरक्षा रहनी चाहिए।

इस दृष्टि में यह स्वाभाविक निष्कर्ष प्राप्त होता है कि वे व्यक्ति जो मन्त्री को उनकी न्यायिक शक्तियों के प्रयोग के संबंध में सलाह देते हैं, मन्त्री द्वारा इन कार्य के निष्पक्ष विचार रूप से मनोनीत किए जायें। उन्हें इस धर का प्रत्यय अनुभव जाना चाहिए और उनमें न्यायिक कानूनी योग्यताएँ भी होनी चाहिए। जिस प्रकार जनता को यह ज्ञात होता है कि कौन जिनसे न्यायाधीश बबकाया कावेन न्यायाधीश है, इसी प्रकार जमे यह भी ज्ञात होना चाहिए कि कौन व्यक्ति स्वात्म्य-मन्त्री को मनना देता

इस विद्यालय की अपेक्षा की जाती है। जहाँ तक हमें मामूली है हम यह कह सकते हैं कि यद्यपि उनकी पद्धतियाँ म्यामाकमो की पद्धतियों से भिन्न हो सकती हैं तथापि वे व्यक्तिगत अधिकार की दृष्टि में कम ध्यान नहीं होते। उन्हें अधिकतर टेकनिकल मामलों पर विचार करना पड़ता है। इन मामलों का निर्णय करने में ऐसे विशेष ज्ञान की आवश्यकता होती है जो म्यामाकीयों के पास कम ही पाया जाता है। उनका काम बस्ती का और सत्ता होता है। यदि कोई व्यक्ति इसके परिणामों की उन शीघ्र नीचे निम्नियों से तुलना करे जिनके अनुसार सामान्य म्यामाकमो में प्रतिफल के निर्णय की अपेक्षा जितना परीक्षा की शक्ति हस्तगत कर ली है तो वह मेरे विचार से यह मानने के लिए विवश हो जायेगा कि विधायक राज्य में सामान्य म्यामाकमो "स प्रचार के बावें के लिए उपयुक्त नहीं है।" वैधानिक निर्णयन की उनकी पद्धतियाँ प्राथमिक राज्य के लिए योपपूर्वक हैं। उनके पास उचित प्रशासनिक मानों के निर्णय के लिए आवश्यक ज्ञान का अभाव होता है। यह स्मरणीय है कि इस प्रकार का अधिकार क्षेत्राधिकार नीति के अन्तर् "नीचित्य" के प्रश्नों से सम्बन्ध रखता है और यह समझना जरा कठिन है कि "नीचित्य" के सम्बन्ध में एक म्यामाकीय का दृष्टिकोण एक मनी के दृष्टिकोण से जिसे अपने विचारों के लिए कॉमन-समा के सामने उत्तर देना पड़ता है कबो अधिक सही होना। पुनश्च यदि इस प्रकार के प्रश्नों से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक प्रश्न को म्यामाकमो में प्रस्तुत किया जायेगा तो प्रशासन की प्रक्रिया असंभव हो जायेगी और म्यामाकमो कार्य के भार से सब से जायेगे। इस प्रश्न में एक बहाना पर्यन्त होना। १९२६ के विधायक अन्तर् और बृहत्सत्ता के निर्णय-नेतन विधायक अधिनियम के अन्तर्गत १९२६ के पहले म्यामाकीय महीनों में अधिनियम की प्रक्रिया के अनुसार ४ अपील की गई थी। इन अपीलों को किसी सामान्य म्यामाकमो में भेजना आवश्यक होता है।

सचार्थ यह है प्रोफेसर डब्ल्यू की कानून के शासन की माय्यता और प्रशासनिक कानून के प्रति उनका बहुत विरोध एक ऐसे ऐतिहासिक युग की प्रवृत्तियों के ऊपर आधारित था जो अब बीत चुका है। उनका कानून का शासन एक ऐसे आधुनिक व्यक्तिवाद की अधिभक्ति था जिसमें राज्य तथा व्यक्ति को एक दूसरे का विरोधी माना जाता था और यह समझा जाता था कि एक निष्पक्ष म्यामाकमो जो सामान्य कानून के कुछ कारण विद्यालयों के अनुसार आचरण करता है उनके बीच संतुलन रखना है। लेकिन ये शासन विद्यालय तो बहुत कुछ ऐसे उपाय थे जिनके द्वारा सम्पत्ति के स्वामी को राज्य-व्यक्ति के हस्तक्षेप से बचाया जा सके। इसी कारण उनमें कोई स्वामित्व नहीं था और जैसे जैसे सामाजिक परिस्थिति बदलती गई, उनके स्वयं में भी परिवर्तन होता गया। अर्थात् प्रोफेसर डब्ल्यू ने प्रशासनिक कानून का जो विवरण दिया था वह ठीक नहीं था। उसमें तृतीय पञ्चराज्य की स्थापना के बाद तो प्रशासनिक म्यामा

१ लॉर्ड वासलरम वनेटी ऑन मिनिस्टर्स पावर्स (१९३२) के प्रतिवेदन में मेरे विरोध का स्मृति-युक्त दिये।

सबो ने नागरिकों को कार्यपालिका की छवि के दुरुपयोग से बचाने की बहुत बड़ी व्यवस्था कर ली है और यह व्यवस्था हमारे देश की व्यवस्था से भी बड़ कर है। मैक्सिम गोरकी ने देश पत्रों के जो मूक-बोप बठाए ह उन्हें अंग्रेज विचार-विचारक और विशेषकर अग्रज ग्यायाधीश सभी हाक तक जाँच नूद कर घिरोपार्थ करत थे और वे यह मानते थे कि अधिकारियों को न्यायिक पक्षित दे देने से स्वतन्त्रता सतरे में पड़ जाती है।

यदि समुचित व्यवस्था करनी जाये तो यह मानने का कोई कारण नहीं है कि बस्तुस्थिति एसी ही है। यह व्यवस्था आवश्यक है कि वे अधिकारी जो इस प्रकार के क्षेत्राधिकार का उपयोग करते है, अपने से ऊँचे यत्नों के द्वारा न न जा जायें और अधिकारों के पक्ष-निपल में जो कुछ सामकीन करें, वह निष्पक्ष एवं न्यायपूर्ण हो। इस प्रसंग में वैधानिकता और अवैधानिकता का प्रश्न भी अत्यन्त महत्वपूर्ण है। विभाग को अपने प्राधिकार की सीमाएँ निश्चित करने का अहितम और निरपेक्ष अधिकार नहीं देना चाहिए। आधुनिक राज्य का स्वरूप ही कुछ ऐसा है कि प्रशासनिक कानून की दृष्टि आवश्यकतामयी है। फलतः जिस समस्याओं को प्रशासनिक कानून बढ़ा करता है, उन्हें उनके सत्त्वामत सभासनों पर सम्मील्यतापूर्वक विचार करना चाहिए।

प्रशासनिक कानून की दूसरी समस्या ज्ञानान है। मात्तम से यह प्रनीत होता है कि इसे संतोपपूर्वक हल कर लिया गया है। नागरिक को अपनी बात कहन का पूरा अवसर मिलना है। अधिकारों का निर्णय उन समस्त आचारों को प्रयत् करता है, जिनके ऊपर उनकी रचना की जाती है। प्रशासनिक न्यायाधिकरण नागरिक की प्रत्येक बात पर न्यायानुस्य के समान ही ध्यान से विचार करता है। प्रशासनिक न्यायाधिकरणों में निर्णय बड़ी क्षीणता से हो जाते है और नागरिक का व्यय भी कम होता है। समस्या की साम्बन्धिक कठिनाई पहले और तीसरे प्रश्न में निहित है। निश्चित है कि मन्त्री को या सनाधिकार दिया जाता है उनका वह स्वयं व्यक्तिगत रूप से प्रयोग नहीं कर सकता। वह केवल अपने अधिकारियों द्वारा की गई जाँच पड़ताल पर स्वीकृति की मुहर लगा देता है। अन्तता को इन अधिकारियों के बारे में काँ ज्ञान नहीं होता। यह एक श्रेष्ठ नियम है कि न्यायिक कार्य केवल ज्ञान व्यक्तिगत को ही सीया जाता चाहिए। यदि इन प्रकार के कार्य में कानून का भी निश्चित तत्त्व समाविष्ट रहना है अतः यह आवश्यक है कि उनका प्रमाणिक ज्ञान कानूनी परिस्थल के साथ संयुक्त हो। मेरे विचार से यह भी आवश्यक है कि अधिकारियों को अपने इन कार्य के संपादन में जिसमें कुछ न्यायिक विशेषताएँ भी ह पदावधि की सुरक्षा रहनी चाहिए।

इस दृष्टि में यह स्वाभाविक निष्कर्ष मात्तम पड़ता है कि वे व्यक्ति को मन्त्री को उनकी न्यायिक क्षमताओं व प्रयोग के संबंध में सलाह देने हैं मन्त्री द्वारा इन कार्य के लिए विद्यय रूप से मनोनीत किए जायें। उन्हें इन सब का सतत अनुभव होना चाहिए और उनमें सामान्य कानूनी बोधधार्थ भी होनी चाहिए। जिस प्रकार अन्तता को यह बात होना है कि कौन विशेष ग्यायाधीश अवकाश कालीन ग्यायाधीश है, इसी प्रकार उसे यह भी बात होना चाहिए कि कौन व्यक्ति स्वात्म्य-मन्त्री को यत्नता देता

है। वैधानिकता और अर्बेमानिकता का प्रश्न तनिक अधिक कठिन है। एक बे इन्क्यूटन ने कहा है "सार्वजनिक दृष्टि से यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण है कि सरकारी विभागों के कृत्य की वैधानिकता के परीक्षण के श्रेष्ठ और दृढ़ साधन उपलब्ध हो। उन्होंने सरकारी विभागों की अस्थीबाधी की निन्दा की है और कहा है कि "वे क्या वैधानिक हैं और क्या अर्बेमानिक इस पर पन्नीरदापूर्वक विचार किए बिना ही अस्थी में कार्य बाही कर डालते हैं। यह बात काफ़ी सामारण रूप से कही गई है। यदि उच्च न्यायालय किसी प्रशासनिक कृत्य की निन्दा करते हैं तो वे यह स्वभावध नहीं प्रस्तुत किसी असाधारण अभियोग के आभार पर ही करते हैं। लेकिन यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की निन्दाएँ सखेह को जगम बेठी हैं और उच्च सम्मन्ध में सजयता की आवश्यकता है। स्पष्ट है कि सरकार के विभागों की इस प्रकार की सही या गलत बाओचना बहुत बरी बीज है।

इसलिये, मेरा यह विचार है कि वैधानिकता और अर्बेमानिकता के प्रश्न का ऐसे न्यायाधीश या न्यायाधीशों के हाथों में छोड़ देना चाहिए जिनकी एकतन्त्रता और एकत्वता सन्देहहीन हो। यह आवश्यक है कि वे अपने निर्बल हीम्रता से और मितव्ययता से कर सकें। उच्च न्यायालय इस कार्य को नहीं कर सकता क्योंकि उसकी प्रक्रिया बहुत बीमी और व्ययसाध्य होती है तथा उसमें और भी न्यायालयों में अपील की सम्भावना रहती है। फलतः हमारे सामन केवल तीन रास्ते ही रह जाते हैं (१) वैधानिकता का प्रश्न सीड-समा के पास भेजा जाने और यदि एटॉर्नी-जनरल तात्कालिकता का प्रमाण-पत्र दे दे ता सीड-समा को उस प्रश्न पर सीबू ही निर्णय देने की शक्ति हो (२) इसके विकल्परूप में एक सर्वोच्च प्रशासनिक न्यायाधिकरण की स्थापना की जा सगती है। इस न्यायाधिकरण में दो सदस्य तो कानूनी विदित सचित के होने चाहिये और उरका अन्धध एक ऐसा बकीरु होगा चाहिए जिते प्रशासनिक अनुभव ही और जिसका पर तथा कार्यवास उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान हो या (३) वैधानिकता का प्रश्न उच्च न्यायालय के एक ऐसे न्यायाधीश के पास भेजा जा सगता है जो इस कार्य के लिए विधाय रूप से नियुक्त किया गया हो ठीक जमी प्रकार जैसे कि राजस्व और बाधित न्यायालयों के न्यायाधीश इस प्रकार की समस्याओं का विशेष ज्ञान रखते हैं। मेरा विचार है कि पहले और तीसरे उपाय कानून के शासन की शास्त्रीय आवश्यकताओं को पूरा करते हैं और इस देश में उनसे विधाय लाभ यह है कि वे महाँ की सामान्य न्यायिक परिस्थिति में कोई न्यायाध उपरिबल नहीं करत। मेरा विचार है कि दूसरा उपाय सखेह सन्तोषप्रद होया क्योंकि उसकी बबह से कानूनों का निर्बल तनिक विद्याभता से हो सकेबा और वे सम परम्परागत संबुधित निर्बल से बच जायेंगे जो पिछले कुछ समय से सामान्य कानून के निर्बल की एक विधयता ही गई है। यदि हम उस दोष को देखना चाहें जिते विधान अपने निबलन के आभार के रूप में बूर करना बाहता है तो हमें हीम्रन के अभियोग के सबसे निकरों की ओर बापित लौटना हीया। सामान्य कानून का न्यायाधीश सार्वजनिक आवश्यकता पर केवल जरी समय विचार करने का अन्धध

हीला है जब कि व्यक्तिगत सम्पत्ति के अधिकारों की बख्शी तरह सुरक्षा हो गई हो।

अगर जो कुछ कहा गया है उससे सामाजिक के उन भाषेपी का कोई सम्बन्ध नहीं है जो कोर्ट हीबर्ट न बड़ी व्यापकता से सिबिल सचिव के अन्तर्गत कायेपित किए हैं। उन्होंने जिस प्रकार के दोषारोप किए और उनके सम्बन्ध में जिस प्रकार की साक्ष्य प्रस्तुत की उससे यह प्रकट होता है कि वे आधुनिक प्रशासनिक प्रक्रिया का स्वल्प नहीं समझ सके। यदि कोई व्यक्ति हमारी सामाजिक सेवाओं के सफल और स्वल्प को समझ के तो वह यह मान लेया कि "महत्वात्म्यम् राज्य" के लिए नियत कानून के निबन्ध बाध की स्थिति में काम नहीं वे सकते। हमें अपनी व्यापकता में एक ऐसी अनुवृत्ति की आवश्यकता है जो अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार "बहु व्यक्तिवादी विचार है कि विधान-संरक्ष अपनी बनता की आवश्यकताओं का ठीक से सम्बन्ध है और उन्हें स्वीकार करता है 'तथा उसके निर्णय उचित आधारों पर निर्भर होते हैं।' १" स्थितियों के पुनर्करण के सिद्धांत में जो कुछ कथ्य है, उसकी रक्षा करते समय हम यह नहीं चाहते कि न्यायाधीशों का प्रशासनिक प्रक्रिया का स्वामी बना दें। इसका क्या परिणाम निकलता है, यह अमरीका के सर्वोच्च न्यायालय और विधान-संरक्षों के सम्बन्ध में प्रकट हो गया है। २" कोर्ट हीबर्ट तथा उनके साथियों ने कानून के धारण का जो अर्थ बताया है, उससे ही अधिकतर सामरिक व्यक्त जीवन के उन अवसरों में संबंधित हो जायेंगे जिन्हें मनुष्य न उन्हें प्रदान करना उचित समझा है। हमारे देश में प्रशासनिक कानून के अनुभव से यह रचना भी मिट नहीं होता कि हम मौक्याही शासन के अन्तर्गत हैं। न्यायालय इस प्रवृत्ति के विकास के प्रति जो विरोधमान रखते हैं उससे ही प्रकट होता है कि न्यायिक सिद्धांत भी बहुत राजनीतिक सिद्धांतों से प्रभावित हो जाते हैं और और न्यायाधीशों तक को इसका ज्ञान नहीं होता। ३" इस समस्या पर पुस्तक के अन्तर्गत अध्याय में विचार करूँगा।

१ विद्वान बर्सेट टैकनास फोर्जर का २४२ पृष्ठ १५७।

२ रैडिय, आई केमस्टीन इत दि कोर्ट डिस्ट्रीब्यूट (१९२७)

संसद और न्यायपालिका

(१)

संसद के अधिनियम स्वयं ही प्रभावहीन नहीं होते वे मनुष्यों द्वारा लागू किए जाते हैं। बुकि उग्रे साबू किया जाता है, बतः न्यायालय द्वारा उनकी व्याख्या भी आवश्यक है। ब्रिटिश संविधान का यह एक सिद्धान्त है कि स्पष्ट और बसविव्य परम्परा—धामर वे भी नहीं—नागरिक को इसके इस अधिकार से संबंधित कर सकते हैं कि वह कानून का अर्थ न्यायालय द्वारा निर्णीत करवा सके। फलतः हमने प्रयासन में कार्यपालिका की धनमानी के अंतरो को दूर करने का ही प्रयास नहीं किया है प्रत्युत इस बात की भी व्याख्या की है कि नागरिक के अधिकार ऐसे व्यक्तियों द्वारा निरिचन हों जो अपनी पदावधि के सुरक्षित होने की बजह से राजनीतिन विचारों के परिवर्तनशील प्रवाह से बचे रहे। संविधियों का अर्थ सत्ताक मंत्रालय की इच्छा अनुसार ही नहीं हो सकता। संसद के द्वारा की शोध से स्वतन्त्र व्यक्ति करते हैं जो परिणाम में निरासक्त होते हैं और जम्मे वर्षों के सम्बास द्वारा निर्णय के ऐसे मान बच्चों को अन्तस्य कर केते हैं जिनके द्वारा उन द्वारा की परीक्षा हो सके।

यही वह मुख्यतः कानून का शासन है जिसे पिछले दो सी वर्षों से अवेज अपनी स्वतन्त्रता का रक्षक मानते आए हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि न्यायाधीशों को संसद का स्वामी बना दिया जाए। मेरे विचार से यह प्रसन्नता की ही बात है कि न्यायिक पुनरीक्षण (Judicial review) जिस प्रकार अमरीका में प्रचलित है वह इंग्लैंड में नहीं पाया जाता। संसद संविधि द्वारा ऐसे किसी भी निर्णय को रद्द कर सकती है जिसे कि वह असतोपप्रद या अद्विधमतापूर्ण माने। 'टेफ वैल केस' (Taff Vale case)^१ में जो निर्णय हुआ था उसे १८९६ के 'ट्रेड्स डिस्प्यूटस एक्ट' (Trades Disputes Act of 1906) ने रद्द कर दिया था। 'ओवर टाउन बनाम असेम्बली ऑफ़ रि फ्री चर्च ऑफ़ स्कॉटलैंड' (Overtoun V Assembly of the Free Church of Scotland)^२ के फलस्वरूप जिन कठिनाइयों की समाधान की उन्हें संसद क एव अधिनियम ने दूर कर दिया।

१९८८ की शक्ति के परभाव से ब्रिटिश न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता और निष्पत्ता इस देश में बढ़ेहातीत रही है। देश में कठोर न्यायाधीश भी हुए हैं और पूर्ण न्यायाधीश भी।

१ (१९१) ए सी ४२६।

२ १ एड ७ सी ४७।

३ (१९) ए सी ५१६।

कुछ विद्विष्टे स्वयम्भूत क स्वायत्तिका भी हुए हैं। पता चला थी प्रथम^१ जेसे स्वायत्तिका भी हुए हैं जो राजनीतिक कार्यों क अभिप्राय में इतन पक्षपात में काम करते थे कि वह सम्पूर्ण विपत्ता का कारण बन जाता था। चूंकि हमारे देश में सबका सब करने की कोई व्यवस्था नहीं है अतः कुछ स्वायत्तिका भरनी बुद्धावस्था में उन समय तक अपने पक्ष पर स्थित रहे हैं जब कि अपना यह समझ गई थी कि उनकी सक्रियता उनके कार्य के लक्षण नहीं रही है। लेकिन यह कहना किन्तुल सही है कि कम से कम 'एक मॉडल मटिलमेंट' के परवान् ने आई मकलेसफील्ड (Macclesfield) क एकमात्र भाषा की छाड़ कर किसी भी अग्रम स्वायत्तिका की ईमानदारी पर उनकी विन्युक्ति के परवान् संदिग्ध नहीं किया गया है। यदि किसी पक्षपात का प्रदर्शन हुआ भी है तो वह बहुत साफ़ रहा है क्योंकि इस समय में संसद् में स्वायत्तियों के आचरण पर मुक्तिरस से तीव्र-आर आर विचार हुआ होगा।

फिर भी यह समझना आवश्यक है कि विद्या-संरक्ष और स्वायत्तिका का सम्बन्ध न तो बंध होता है और न ही छूटता है। स्वायत्तिका समय-मात्र-वर्तिन स पुष्क मही होने। वे तिम पीढ़ी में काम लेते हैं उनके एक भाग जाने हैं और उनके प्रभावित होने हैं। अपने दुःख की प्रमुख विचार-वाचकों में उनका भी विश्वास होता है। उनमें से अधिकतर न सिद्धे ही क्यों से देश की राजनीति में प्रमुख भाग लिया है और वे व्यक्ति ने हैं जिन्हें विक्टोरिया युग क बाद में देश के सर्वश्रेष्ठ स्थापित पदों के लिए बना गया है। कानून एक सर्वसम्मत् टैक्नीक हो सकता है लेकिन यह एक ऐसा टैक्नीक है जिसका अधिकतर स्वयम्भूत युग की ऐतिहासिक शक्तियों के अनुसार निर्दिष्ट होता है। स्वायत्तिका ऐसा स्वयम्भूत और उच्च-रहित प्राणी नहीं है जो कानूनों की व्याख्या करने समय उनके कुछ निश्चित और अटक अर्थ पा ले। यदि कानून इतना निर्दिष्ट और अटक होता तो लोग स्वायत्तियों में नहीं जाने। चूंकि उन्हें कानून के अर्थ के सम्बन्ध में संदिग्ध होता है इसीलिए लोग स्वायत्तियों की शरण लेते हैं। इसका अभिप्राय यह होता है कि स्वायत्तिका कानून की बोधना करने के माध्यम-मात्र उसका निर्माण भी करता है। उसका कार्य यह पता लगाना होता है कि कल तत्प्य संसद् के द्वारा वे और इन द्वारा की अनुपस्थिति में उन कल भाग्यवत्त मित्रानों से जो स्वयं ही एक समी ऐतिहासिक प्रक्रिया के परिणाम होते हैं व सामान्य कानून के आचरण मित्रान्त कइलान है किम प्रकार सम्पन्नित हैं।

जब हम इस प्रकार के सम्बन्धों का पता लगाने वाले कार्य का परीक्षण करते हैं और स्वायत्तिका "निष्पत्तिका" की बात करते हैं, तब हमें यह सही मान लेना चाहिए कि स्वायत्तिका आम निष्पत्तियों के प्रभाव की ओर ध्यान नहीं देते। स्वयम्भूति होम्स क शब्दों में अस्वाम्य व्यक्तियों की मानि उनके भी कुछ अस्पष्ट पूर्वाग्रह होते हैं। यद्यपि परम्परा के अनुसार वे सामयिक राजनीतिक आर विचारों में चुनकर भाग नहीं ले

१ देखिए की एस्तिरक का कलम्ब २२ ईसई (५ मिरीज) १ ११ पृ १३६ और देखिए १६ वही (४ मिरीज) १९ १ पृ ३० ।

सकते। लेकिन जूजि इल बाब-निवाहों की समस्याएँ निर्णय के लिए उनके पास ही आती हैं, अतः यह आवश्यक है कि इन निर्णयों पर उनके व्यक्तिगत वर्चस्व का भी थोड़ा बहुत प्रभाव पड़े। जिस प्रकार अमरीका के बहुत से वैधानिक कानून की व्याख्या केवल इसी प्रकार की या सकती है कि सर्वोच्च न्यायालय को वह विचार पसंद नहीं या जिस पर उसे निर्णय देना था और उसने सचिवालय के सम्बन्ध में कांग्रेस अथवा राज्य विधानमण्डल के विचार को न मान कर उसके सम्बन्ध में अपने विचार को प्रधानता दी इसी प्रकार इस देश में भी सचिवालय की बहुत सी व्याख्या केवल इसी आधार पर समझी जा सकती है कि न्यायाधीश को संसद् की गतिविधि पसंद नहीं थी अथवा उसने उसकी गतिविधि के परिणामों को अधिक से अधिक सीमित रखने का प्रयास किया।^१ अधिक संघों से सम्बन्ध रखने वाले कुछ प्रमुख निर्णयों में यह स्पष्ट है। यह मजदूरों के अधिकार से सम्बन्ध रखने वाले बहुत से अधिनियमों के बारे में भी सही है। यह बात इस विधान के पास होने के शुरू के कुछ वर्षों में विशेषरूप से सही थी क्योंकि यह विधान सामान्य कानून के परम्परागत सिद्धान्तों से भिन्न था।^२ अब यह माना जाने लगा है कि 'आर. वॉलस हेलीड (R V Halliday)' में बहुमत का निर्णय न्यायाधीशों की इन इच्छा का परिणाम था कि युद्ध के समय में कार्य-पालिका के कार्य में कोई कठिनाई न आती जाये। वैधानिक व्याख्या और निर्णय के आधार इतने लचीले होते हैं कि न्यायाधीशों को अपनी मनचाही करने के पर्याप्त अवसर मिल जाते हैं। इस मनचाही के पीछे जो प्रेरक शक्ति होती है वह काफी हद तक न्यायाधीशों के राजनीतिक वर्चस्व पर निर्भर होती है।

यह स्मर्य है कि सामान्य कानून की परम्परा कुछ इस प्रकार निर्धारित हुई है कि वह उस व्यापारिक सम्पत्ता की आवश्यकताओं को पूरा कर सके जो सरकार द्वारा किए गए किसी भी विध्वारक कार्य को संदेह की दृष्टि से देखती है। संसद के अधिनियमों का परीक्षण इस परम्परा के अनुसार ही होता है। संसद् का अधिप्राय अथवा आचारण की आघातकार हार्ड अथवा राजकीय आयोगों के प्रतिवेदनो द्वारा नहीं समझा जाता। वह निम्न तीन सिद्धान्तों में से किसी एक पर निर्भर रहता है। विधान के शब्दों का एक व्याकरणसम्मत अर्थ होता है। जब ये सब सम्पूर्ण विधान के संदर्भ में पड़े जाते हैं, तब उनका एक विशिष्ट अर्थ निकलता है। हीडन अधिनियम (Heydon's case)^३ के अनुसार न्यायाधीश को उन शेषों की ओर ध्यान देना आवश्यक

१ देखिए सर एच. पोल्क एसेज इल ज्युरिसप्रूडेंस पृ ८५, और रिपोर्ट ऑन मिनिस्टर्स पावर्स में मेरी टिप्पणी (१९३) अनुपम ५ सर जेम्स हाइम हेरिसन का अनुपम लेख भी देखिए जर्नल ऑफ दि सोसायटी ऑफ पब्लिक टीचर्स ऑफ लॉ (१९३५) पृ ३ और ३५।

२ देखिए, मेरी पुस्तक 'स्टडीज इन लॉ एंड पॉलिटिक्स' अध्याय ९।

३ वही पृ २८९-३ ४ (११७) ए सी २९।

५ कोक रिप ७ बी

हैं जिसे दूर करने के लिए विधान का निर्माण हुआ था। न्यायाधीश अपने निर्णय में इन समस्त उपायों का अथवा इनमें से किसी एक का जैसे चाहें, उपयोग कर सकते हैं। वह इन उपायों को पूर्व अधिनियमों के प्रकार में प्रस्तुत कर सकता है। उनमें है कि पूर्व अधिनियमों के निर्माण में उस अपने अधिनियमों के निर्णय में कष्ट सहायता मिले। न्यायाधीश इन उपायों में से किसी भी उपायों का उपयोग कर सकते हैं लेकिन उनके प्रयोग से वे जो परिणाम निकालेंगे वे सर्वथा भिन्न हो सकते हैं। वे उन लोगों के ऊपर जो उनके सामने आते हैं व्यवहार के मानदंड सामू कर सकते हैं। इन मानदंडों का जोर उनका केवल यह बात होता है कि यदि सच ने इन मानदंडों का मुकाबला नहीं किया तो उनमें अपने कर्तव्य का पालन नहीं किया है।

“टैफ वैल अधिनियम” (Taff Vale case)^१ को यही एकमात्र युक्तिपूर्ण व्याख्या है। लॉर्ड-समा न विधान के स्पष्ट शब्दों का बावजूद भी यह सोचा कि समूह के लिए अधिक मुझा की उनके अधिनियमों के दुखदायी कानों के उत्तरदायित्व से समा कर देना असंभव है। “ओसबोर्न अधिनियम” (Osborne case)^२ का अन्तर्गत “सार्वजनिक नीति” का जो विचार छिदा हुआ है उतने यह स्पष्ट हो जाता है कि न्यायाधीश को समा-समा में अधिक संस्था के वैधानिक प्रतिनिधित्व का पक्ष नहीं करने। उनके इन युक्तिपूर्ण का यह परिणाम हुआ कि मंत्री सदस्यों को वृत्ति मिलन लगा। “रोबर्ट्स व हॉपवुड” अधिनियम (Roberts v Hopwood)^३ यह सिद्ध करता है कि किसी न्यायाधीश सत्ता के श्रेणियों को दिए जाने वाले वेतन ऐसे नहीं होंगे जिन्हें कि विधान के अनुसार वह सत्ता ठीक समझनी हो प्रत्यय के ऐसे हीमें जिन्हें कि लॉर्ड समा के न्यायाधीश अनुसूक्त मानते हैं। एक और तो यह बात है और दूसरी और यह परिणाम यह कि क्या यह ही न्यायाधीश न्यायाधीश के काइंगी कर्तव्य के वेतन में हस्तगत करे जो संयोग से लॉर्ड कोमन्स तथा लॉर्ड चीफ जस्टिस को छोड़कर हम देश में सबसे अधिक वेतन पान बना अधिकारी है।

प्रोटेक्टर बिस्म के मंड से इन प्रयत्न का परिणाम नूनन विधानों को प्राचीन विचारों के अनुसार बालना है। अधिनियम महत्त्वपूर्ण वैधानिक व्याख्याओं के मूल में सिद्धान्त रहता है वह उन समय तक निर्णय है जब तक कि समाका उद्देश्य व्यक्तियों के सामान्य कानून द्वारा स्वीकृत अधिकारों की ऐसे विधानों में जो उन्हें बदलना चाहते हैं रखा करता न हो। न्यायिक सिद्धान्त का अर्थ यह होता है कि स्पष्ट शब्दों के अभाव में विधान-संकेत का उद्देश्य सामान्य कानून द्वारा स्वीकृत अधिकार का अर्थ नहीं हो सकता। “रॉय व लेच” (R. v Leach)^४ में लॉर्ड हेम्बरी और “रोवेल व प्रैट” (Rowell v Pratt)^५ में एक से स्टेवर के निर्णय को अन्य किसी आधार पर नहीं समझाया जा सकता। हमने पिछले कुछ वर्षों में एक

१ (१९१) ए सी ४२६।

२ (१९१) ए सी ८०।

३ (१९२५) ए सी ५७८।

४ (१९१०) ए सी ३५।

५ (१९३६) ए सी २२६।

ऐसी विचार प्रवृत्ति की शीर्ष देखी है जिसमें विधान मंडल के उद्देश्यों को एक ऐसे माध्यम के आधीन कर देने की शक्ति है जिसे कि न्यायाधीशों का अनुमोदन प्राप्त हो। उदाहरणार्थ स्पष्ट धर्मों के प्रभाव में संसद् के बारे में नहीं कहा जा सकता कि उसका उद्देश्य प्रतिष्ठा किए बिना सम्पत्ति को हस्तगत कर केना रहा होगा। इसका परिणाम आवास की विघ्न समस्या^१ को हल करने वाले बहुत से विधान को संसद् कर देना है। हम बताना चाहते हैं कि समस्त विधान की रचना ऐसी होनी चाहिए जिससे कि नागरिकों की न्यायालयों तक पहुँच हो सके। यह इस धर्म के बावजूद भी है कि सामुदायिक विधानों में यह प्रवृत्ति पाई जाती है कि वे विशेष न्यायाधिकारियों को श्रेयाधिकार दे दे तथा सामान्य न्यायालयों को उससे वंचित कर दें। मिनिस्टर ऑफ हेल्थ सर्वेस धार' (Minister of Health V R) अमिगोन में लॉर्ड-समा का 'जाफे' (Jaffe)^२ के पक्ष में निर्णय इस प्रवृत्ति का एक उदाहरण है। इसकी पुष्टि इसी न्यायाधिकारण के इसी निर्णय से भी होती है कि 'व्हीट बोर्ड' (Wheat Board) की एक निर्णायक द्वारा किए गए अतिव्यय निर्णय को नियमित करने की शक्ति बोर्ड को यह अधिकार नहीं देती कि वह कानून के प्रवर्तकों पर इस अतिव्यय निर्णय के विरुद्ध कोई अपील न होने दे। इस विचार्य तक पहुँचने का कारण स्पष्ट धर्मों के प्रभाव में न्यायाधीशों का यह विचार ही था कि इस प्रवृत्ति में संसद् का उद्देश्य १८८९ के 'आर्बिडुस एक्ट'^३ को रद्द करना नहीं है। यहाँ 'अतिव्यय' शब्द का क्या अर्थ प्राय ही सकता है यह समझना तनिक कठिन है।

इस प्रवृत्तियों का पूरा परीक्षण हमें मुझ विषय से बहुत दूर ले जावगा। लेकिन यह दर्शनीय है कि ढींके करारों के इस युग में न्यायालयों ने न्यायाधीशों की एक ऐसी प्रवृत्ति के द्वारा जिसे बाधन कहना बिनमत्ता होनी लगी व्यक्तियों द्वारा कर के अप बचन का समर्पण किया है। स्कूट ऑफ वेस्ट मिनिस्टर के अमिगोन में हाइ में को विवचन हुआ था यह इस बात का जीवन्त उदाहरण है। यदि न्यायालयों को कभी ऐसे किसी अमिगोन पर विचार करना होता है जिसमें अधिवासनिक अधिकार को उल्लंघनी विचारधारा की शीर्ष से चुनी ही निकली है या उसका संभाव्य राज्य नीतिक संकट के आतावरण में होता है तो संभवतः वे अधिवासनिक अधिकार के प्रति सम्मरणा प्रकट करते हैं। 'पासमोर सर्वेस एलियास' (Pasmore V Elias) में न्यायमूर्ति हेरिज ने 'एन्टिक सर्वेस केरिंगटन' (Entick V Carrington) को कुछ ऐसा रूप दे दिया है कि यह उद्देश्यास्पद हो गया है कि क्या अतिव्यय स्वतन्त्रता के इस स्पष्ट प्रतीक का अर्थ कोई महत्व भी रहा है। यद्यपि श्री हेरिज ने

^१ देखिए डब्लू आई वेनिंग का किब ५९ हावर्ड लॉ रिप्यू (१९३५)

^२ १९१।

^३ (१९३) २ के सी १।

^४ आर गीब सर्वेस एलियास (१९३५) ७ सी १३६।

^५ (१९३५) २ के सी १३५।

वह काय प्रत्यक्ष नियम ड्राप नहीं किया लेकिन ठिक भी उनके निर्णय का परिणाम यही रहा है। बाबरकत की सामाजिक और राजनीतिक सम्बन्धिता के पक्षसम्बन्ध जो सामूहिक अभियोगों होत सगे इ न्यायाधीशों ने उनको कम करने का कोई प्रयास नहीं किया है। इन सामूहिक अभियोगों में अभियुक्तों की संख्या इतनी अधिक होती है कि न्यायाधीशों के लिए किसी विषय बासी में सम्बन्ध साध्य हो या उन समस्त प्रमाणों भाति जो जिनके आचार पर उन्हें निर्णय देना होता है सम्बन्धता कठिन हो जाता है।^१ ऐसी स्थिति में वे धन्य-युक्त पुत्रिय में अभियुक्त के विचारों को प्रमाणोक्त करने के लिए कहते हैं यद्यपि यह स्पष्ट है कि यह प्रमाणीकरण इतना भावनिष्ठ होता है कि इससे पक्षपात पैदा होने के सिवाय और कुछ नहीं होता। मेरे विचार से यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि बाबरकत के अधिकांश न्यायाधीश एक साम्यवादी के अभियोग का कुछ इसी प्रकार निर्णय करते हैं जिस प्रकार कि उनके पूर्ववर्ती कनिष्ठ पिता के शासन-काल में राजश्री के विकसित अभियोगों के लिए उत्तरदायी थे। यह सम्बन्ध सर की बात है कि न्यायाधीशों को जिसके साम्यवाद के बारे में कोई हीनरी की भांति विचार हों ऐसे अभियोगों के निर्णय में कोई कठिनाई न हो जिनमें कार्यपालिका में इस विचारवाच के प्रतिपादकों को कर्मकृत करन का निर्णय कर दिया हो।^२

यहाँ पर मैं जो बात कहना चाहता हूँ वह यह है कि सामूहिक राज्य की प्रवृत्तियाँ उन प्रमुख मिश्रणों के विद्यमान हैं जिनके ऊपर सामान्य कानून का निर्माण हुआ है। इसका परिणाम यह है कि न्यायपालिका इन प्रवृत्तियों के निष्कर्षों की इस प्रकार कम से कम करने की कोशिश करती है जिससे प्रमाणक के कार्य में बाध-बुझ कर बाधा पड़ती है। न्यायाधीश संसद् के निर्णयों की आलोचना नहीं करते। वे भी एक ऐसी बस्तु की रचना में मग्न रहते हैं जो बाबरकत कानून से प्राप्त ही कम महत्त्वपूर्ण हो। न्यायाधीशों की यह प्रवृत्ति रहती है कि वे नृपत सभितियों को ऐसी नीतियों के बापरे में ही सीमित रचना चाहते हैं जिनका कि वे अनुमोदन करते हैं। इस प्रक्रिया का फल यह होता है कि सामाजिक परिवर्तन की गति भीमी हो जाती है—जिसका एक उदाहरण आचार्य-सम्बन्धी विमान है—या वह अपनी विस्तृत नहीं हो पाती जिसकी कि उसे तत्त्वों के सर्वेक्षण के अनुसार होनी चाहिए। हमारे न्यायाधीश जिन मिश्रण पर जाने बहते हैं वह यह विचार है कि वे नागरिकों की "नए अधिनायकवाद" से रक्षा कर रहे हैं। नए अधिनायकवाद से उनका बापव से एकित्व है जो संसद् विहित अधिन को दे देती है। वे यह नहीं सोचते कि संसद् ने जो यह विद्या बनाई है, उसके कुछ अर्थ कायम भी हो सकते हैं। वे यह भी विचार नहीं करन कि संसद् के इस निर्णय के कारण स्वयं न्यायाधीशों की

१ देखिये २८ जनवरी १९३७ के मैकेस्टर दायिमन में मेरा लेख।

२ देखिये "सोवियत" ड्राप लिखित "इंग्लिश जस्टिस" (१३२)

प्रकृतियों में ही निहित हो सकते हैं। उनके सम्पूर्ण वृष्टिकोण का धार यह है कि वे आधुनिक प्रशासन की प्रक्रिया के विरुद्ध हैं। वे 'कानून के शासन' की व्याख्या कुछ इस प्रकार करते हैं मानो वे एक प्रमुखसम्पन्न विधान-मंडल से भी 'उत्कृष्टतर कानून' के स्वामी हों तथा यह विधान-मंडल सब प्रकार से उनके अधीनस्थ हो। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि वे आधुनिक राज्य तथा उसकी प्रक्रियाओं की व्याख्या ऐसी रीति से करते हैं जो उन बहुत से प्रयोजनों की वैधता को जिनकी पूर्ति में राज्य की शक्ति निरुद्ध है बर्फीकार करती है।

और वे यह ऐसे वातावरण में करते हैं जो उनकी कार्यवाहियों की आलोचना को एक खतरनाक काम बना देता है। बेंचम का यह कहना ठीक ही था कि जब ग्यायापीठ न एक बार कोई निर्णय कर लिया तब फिर वह आलोचना के क्षेत्र से बाहर हो जाता है। आज यह स्थिति हो गई है कि इसद् के बाहर किसी ग्यायापीठ की आरतों पर लुककर विचार करना एक खतरनाक बात है। 'आर वसेंस न्यू स्टेट्समैन' (R. V. New Statesman)^१ का पाठक यह सोचने के लिए उत्सुक हो जाता है कि यदि बेंचम के समय में सार्वजनिक आलोचना की इतनी मर्यादाएँ होती तो क्या उसका काम पूरा हो सकता था। यह उक्त ग्यायपालिका के बारे में सही है जिसने स्वयं इसकी इस इच्छा के बावजूद भी कि वह कानून में सुधार करे कानून में कभी कोई महत्वपूर्ण सुधार नहीं किया है। वह उस ग्यायिक पद्धति के बारे में सही है जिसमें ग्याय अमरीका को छोड़कर अन्य सब स्थानों की अपेक्षा अधिक होता है तथा जिसमें अनीस की श्रेणियाँ इतनी अधिक हैं व जितना कंगल में केंद्रीकरण इतना प्रचण्ड है कि वह उन समस्या प्रश्नों में जिनमें एक सम्पर्क बमीर हो और दूसरा बरोब बमीर की विषय निश्चितप्राय कर देता है। सब तो यह है कि सामान्य कानून के सिद्धान्तों और आधुनिक विध्यात्मक राज्य के सिद्धान्तों के संघर्ष ने हमारी ग्यायिक संस्थाओं के सम्पूर्ण आचार का पुनर्विचार आवश्यक कर दिया है।

यह स्मरण रखना आवश्यक है कि इस देश में ग्याय-मन्त्रालय कभी कोई बस्तु नहीं है। यहाँ ऐसा कोई विभाग नहीं है जो लगातार अच्छे ढंग से कानूनी प्रक्रियाओं के संचालन का निरीक्षण करता हो और आवश्यक सद्योजनों पर विचार करता हो। इस सम्पूर्ण विभाग के एक अंग का अधिपति लॉर्ड चांसलर है। दूसरे का यह अंगी और तीसरे का बटोर्नी-जनरल। ग्यायापीठ राष्ट्रीय परिवर्तना के प्रति ग्याय आलोचने के अपने अधिकार का प्रयोग नहीं करते। कौमिल ऑफ दार अपने उद्भव से कैदर अब एक वृत्तिक सिद्धान्त और समस्याओं में ही व्यस्त रही है। लेकिन ये समस्याएँ कानून का जनसाधारण पर क्या प्रभाव पड़ता है, इससे कोई सम्बन्ध नहीं रखती। बचम के समय से हमारी कानूनी पद्धति की बुनियादों का कोई परीक्षण नहीं

१ देखिए मेरी पुस्तक स्टडीज़ इन लॉ एंड पॉलिटिकल थिंकिंग १ ।

२ अध्याय रिपोर्ट के लिए देखिए १ न्यू स्टेट्समैन फरवरी १८१९२८, पृष्ठ ७७३ ।

हुआ है। यह भी स्पष्ट है कि उस समय से दूसरा प्रत्येक राज्य सिद्धान्त और संस्थाओं के सम्बन्ध में विस्तृत बहस हुआ है। इस देश में व्यापक रूप से कानून का सुधार करना किसी का कार्य नहीं है। केवल इसके बिना ही कोई कमी नहीं है कि यह व्यापक सुधार काफ़ी पहले से बहुत आवश्यक है।

वही एक उच्च न्यायालय (High Court) का प्रश्न है हमारी न्यायिक प्रणालि के सामने खतरा यह है कि कहीं उसका उन उद्देश्यों में संशय न हो जाने जिन्हें कार्यान्वित करने के लिए विधान-मण्डल इतक उत्सुक है। यह खतरा गम्भीर है। पिछले युग के न्यायाधीशों में न्यायिक संघों के प्रति जो अज्ञान और विरोध था उसके फल-स्वरूप न्यायिक हल का जन्म हुआ। आजकल के न्यायालय का सामाजिक सुधार के प्रति जो अज्ञान और विरोध है उसके फलस्वरूप विटन में ऐसे प्रयासितक न्यायाधिकरणों की आवश्यकता हो सकती है जो न्यायालय को ऐसे न्यायाधीशों द्वारा गठित होने से बचायें जो उन लोगों को अस्वीकार करते हैं जिन्हें वह दूर करना चाहता है। आवश्यकता इस बात की है कि न्यायिक न्यायाधीशों में तनिक उदारता से नाम किया जाने और न्यायाधीश इस बात को खूब अच्छी तरह समझें। न्यायाधीशों के लिए इस बात को भी समझने की आवश्यकता है कि सामान्य कानून का ऐतिहासिक बल अपने अन्तर्गत व्यक्तिवाद के कारण समुदायवादी युग के अनुगम्य हो जाता है। इस तथ्य से कि न्यायाधीश स्वतन्त्र और सच्चे हैं वह संशय शून्य नहीं हो जाता जिसके साथ ही परिवर्तन की व्यापक समस्याओं पर विचार करते हैं। इस देश में सामाजिक सुधार का प्रत्येक बड़ा युग ऐसा रहा है जिसमें न्यायाधीशों की कट्टरता ने सामाजिक उन्नति के मार्ग में रोड़े बटकाये हैं। १८८१ में जैक कैड (Jack Cade) के विरोध के समय में कॉमनवेल्थ के युग में और बेथम के काल में यही स्थिति सामने आई थी। जब विधान-मण्डल के उद्देश्य उन उद्देश्यों से भिन्न हों जिन्हें न्यायिक सिद्धान्त स्वीकार करता हो तब समझ लेना चाहिए कि कोई न्यायिक कार्य युग बात बाला है।

कुछ सीमा तक इस समस्या की वास्तविकता हम नकार नहीं दे सकते हैं क्योंकि पहलामुद्र के पश्चात् किसी भी सरकार ने सामाजिक सुधार के व्यापक कार्यक्रम को अग्रगण्य से क्रियान्वित करने का प्रयास नहीं किया है। केवल इस बात का काफ़ी साक्ष्य है कि उसे अपन इस प्रयास में न्यायाधीशों की सहानुभूति सुगमता से नहीं मिलती। न्यायालयों ने जिस दृष्टि से कैंट्रिय उद्योग पर 'ट्रड बोर्ड्स एक्ट' के प्रयोग को देखा था वह एक ऐसा चिह्न है जो खतरों की सूचना देता है। १९२६ की आम हड़ताल के प्रति न्यायाधीशों का अस्वीकार्य न ही दृष्टिकोण बचनाया था—यद्यपि यह प्रश्न उनके सामने नहीं था लेकिन उन्होंने इस पर टिप्पणी की थी—'वह यह प्रकट करता है कि न्यायाधीशों ने टकराव विवाद से कितनी कम धिरा पहन की है।' 'रॉबर्ट्स व हॉपवुड' (Roberts V Hop wood) का अर्थव्यय यह स्पष्ट

१ बेगिने प्रोटेक्टर गुडहार्ट का 'रिपब्लिकन, रिपब्लिकी आण्ड रि क्लरल स्ट्राइक' (१९२६)।

कर देता है कि सर्वोच्च न्याय के उचित मानकों के सम्बन्ध में प्रवृत्तिहीन स्थायी सत्ता के ऊपर अपने विचार आरोपित करने में नहीं चुकेगी। आचार विधान विरोधक जेफ्री मामला (Jaff'e case)¹ के सम्बन्ध में न्यायालयों की गतिविधियाँ यह स्पष्ट कर देनी हैं कि न्यायाधीश व्यक्तिगत सम्पत्ति के बाधा के विषय में अपने विचार को न केवल विधान-मंडल के विचार से ही प्रत्युत सिविल सुबिस के विचार से भी जिसके सबसे महत्वपूर्ण भाग का इन बाधों के विनाश में कोई स्वार्थ नहीं है अथिष्ठ बचका समझते हैं। जिस प्रकार अमरीका में सर्वोच्च न्यायालय राष्ट्रपति कन्वेस्ट के 'सुप्रीम कार्पोरेशन' के विरोधस्वरूप कानूनी प्रक्रिया के आवरण में एक अधि विधानमंडल (super legislature) बन कर राजनीतिक बंधन का निरूपण करने लगा था आज इस देश में वही स्थिति हाईकोर्ट की हो रही है। यह ठीक है कि यहाँ उसे कम अवसर प्राप्त है। वह संघ के किसी अधिनियम को रद्द नहीं कर सकता। लेकिन फिर भी संसदी यह चेष्टा अवश्य रही है कि इस देश में एक प्रकार का 'बीरहुवा' संघोपन किया जाय और उसके द्वारा उन व्यक्तिगत अधिचारों में संशोधन करनेवाले सामाजिक परिवर्तन को रोकना जाय जिनका वह समर्थन करता हो। इस दृष्टिकोण में यह समाधान छिनी हुई है कि न्यायालयों और संघ के बीच संबंध हो सकता है। इसके परिणाम स्वरूप न्यायाधीश राजनीतिक बाध-बन्धन में अंतर्गत हो सकते हैं। इससे संसदी प्रतिष्ठा को बचका पहुँचिगा।

इस दृष्टिकोण का मूक क्या है? मेरे विचार से इसके तीन कारण हैं

(१) हमारे अधिनायक न्यायाधीश एक व्यक्ति होते हैं जो कि अपने जीवन में सफल बनीक रहे चुके हों। हमारी समाज-व्यवस्था में सफल बनीक यह व्यक्ति होता है जिसने अपने जीवन का प्रमुख भाग अधिनों की सेवा में लगाया हो। फलतः वह वर्तमान सामाजिक व्यवस्था की मान्यताओं को तथा इन मान्यताओं को रक्षा करने वाले कानूनी सिद्धान्तों को बिना पालेबूझे ही स्वीकार कर देता है। जब संघ जगमें परिवर्तन की बोधित करती है, न्यायाधीशों की यह चेष्टा रहती है कि जहाँ हो उनके कानूनी सिद्धान्तों में कम से कम परिवर्तन हो। मजदूरों का अधिकार, अधि संघ कानून और कुरारोप के सिद्धान्त—ये सब इसके उदाहरण हैं। न्यायालयों का इन समस्याओं के प्रति यह जो दृष्टिकोण रहा है इसकी न्याय्यता केवल इस मापदण्ड पर ही की जा सकती है कि संघ के लिए सामान्य कानून में परिवर्तन करना उचित नहीं है और न्यायाधीशों का यह प्राथमिक कर्तव्य है कि वे सामान्य कानून की रक्षा करें।

(२) मेरे विचार से इस दृष्टिकोण का सामाजिक कारण यह भी है कि इस देश में बंरिस्टर की शिक्षा (साकिमिटर की नहीं) में बौद्धिक अनुशासन पर कम बल दिया जाता है। जो लोग न्यायाधीशों का चुनाव करते हैं उन्हें यह कमी नहीं मूला है कि जायसी बोलक बचका केनी बैठा कानून का कोई महान् सिद्धक न्यायाधीश का उचित अधिचारी हो सकता है। कानून के अध्यापकों को ब्रिटिश विद्वानविद्यालयों में यह

सम्मान प्राप्त नहीं है जो उन्हें हार्बर्ड या वेरिस या हिटकर के पूर्व बलिन में प्राप्त था। इस देश में कानूनी प्रशासन तथा कानूनी दर्शन का अध्ययन अमरीका तथा फ्रांस की अपेक्षा एक पाड़ी पीछे है। हमारा कानूनी व्यवसाय इस अर्थ में विद्वत्तापूर्ण नहीं कि वह बनिमाओ के परीक्षण में रुचि लेता हो। आस्टिन के बाद से ब्रिटिश न्यायशास्त्र में कोई महत्वपूर्ण विकास नहीं हुआ है। हमारे देश में कानूनी संस्थाओं के संघासन के सम्बन्ध में विवेधों को मानि मवेयमा करन के कोई प्रयत्न नहीं हो रहे हैं।^१ जिस प्रकार इंडीयियों ने न इंडीयियोंके शासन के विकास की ओर और ब्रिटेनका न ब्रिटेनका-शासन के विकास की ओर ध्यान दिया है, उसी प्रकार कानून-विद्यार्थी न कानून के विकास की ओर ध्यान नहीं दिया है। ऐतिहासिक दृष्टि से कानूनी व्यवसाय सबसे कम सामाजिक रहा है।

(१) मेरे विचार से इन दृष्टिकोण का तीसरा कारण यह सामान्य सा है। न्यायालयों के दृष्टिकोण में इस सामान्य बाधाकरण को "तिथिबिम्बित किया है जिसमें पिछले दो बयों से विद्वित समान्य रहता आया है। नीपोलियन के युद्ध और त्रयोदशक कानून ने बचम के समय में इनमें आसुन परिचर्नन कर दिया था। इस समय राज्य की दक्षिण पर भी मध्यवर्ग का अधिकार हो गया था। इसके बाद इस व्यवस्था को कोई चुनौती नहीं मिली है क्योंकि अपने परिणामों की दृष्टि से यह सफल रही है। मेरे विचार से यही वह कारण है जिसकी वजह से लोग संहिताबधम (Codification) की ओर से इतना उत्साही रहे हैं तथा एक ऐसी न्याय-व्यवस्था को सहते आये हैं जिसमें अपनी नई नई-नई-नई-नई हैं न केन्द्रोन्मुखा व्यवस्था है। यह सब निर्देशकारी के लिए अद्यतन भार है। यही वह कारण है जिसकी वजह से बकीलो और राजनीतिकों दोनों ने व्यवसाय कानूनी प्रक्रियाओं में अभी तक कोई कागिठकारी सघोचन नहीं किया है। यही वह कारण है जिसकी वजह से हमने कानून के अद्यतन अर्थों का अद्यतन-व्यवस्था तथा नैतिक-अपराध अदालतता अनीरपरवार और अपराध न मानसिक रोम के सम्बन्ध-वैज्ञानिक लोगों और सामाजिक विचारवाच के पीछे रह जाता स्वीकार किया है। हमारे देश में कानूनी प्रक्रियाओं के अध्ययन के लिए समुचित स्थायी व्यवस्था नहीं है यह तथ्य ही उन हितों के अन्तर्गत समझ लिया है हमने भाग्य के साथ धर्मिम सीधेबाजी कर की है, दृष्टिकोण को प्रकट करता है। लेकिन जिस प्रकार कि अर्थशास्त्र और राजनीति के क्षेत्रों में इन सीधेबाजी पर पुनर्विचार होता निरिचय है इसी प्रकार कानून का भी जो अंतर्गोपस्था हमने अन्तर निम्न है निद्वान्तन पुनर्गतन अवस्थापनाही है। सबसे रोचक बात तो यह है कि हमने ही ही कि क्या बकील इस कार्य में सहयोग करता है या वह बचम के युग की भांति ही इन कार्य के प्रति उदासीन या विरक्त बना रहा है।

१ लॉर्ड वाइमम एक ही ने एक "इंस्टीट्यूट ऑफ एडवांस्ड लीवल स्टडीज" की स्थापना कर विचार करने के लिए एक समिति नियुक्त की है। "सोसायटी ऑफ पब्लिक टीचिंग ऑफ लॉ" की उनके पत्र (१९१९) में वार्षिक रिपोर्ट देखिए, पृ. ५८।

(२)

सामाजिक कठिनाई के प्रत्येक युग में न्याय-व्यवस्था का युग ही जन-स्वतंत्रता की बसीती है। मनुष्यों को इस बात का विश्वास होना चाहिए कि जिन लोगों के हाथों में वह सौंपी जाती है, व सत्ता का ऐसा दुरुपयोग नहीं होने देंगे जिससे अभिव्यक्ति और समुदाय की स्वतंत्रता पर खतरा पड़े। क्योंकि इनके ऊपर ही संसदीय शासन निर्भर है। इस बात पर जितना जोर दिया जाय कम है कि संसदीय शासन का आधार ही यह है कि सरकार लोकमत की माँगों को जहाँ तक हो सके पूरा करने का प्रयास करे। यदि सत्ता लोकमत को बचाने की कोशिश करती है तो समझना चाहिए कि स्वतंत्रता खतरे में है। हमारे देश में जहाँ अभिव्यक्ति और समुदाय की स्वतंत्रता व्यापकता की प्रवृत्तियों के ऊपर निर्भर है, वह स्थिति विशेष रूप से सत्य है। राजद्रोह तथा राजद्रोहप्रतिक पदपत्र जैसे अपराधों का क्षेत्र इतना व्यापक है कि प्रो. डायरी के अनुसार यदि उसकी उधार व्याख्या की जाये तो उस प्रकार का राजनीतिक शाब्दिकवाद जिसके हम अपने देश में अभ्यस्त हैं असंभव हो जायेगा।^१ एक अष्ट पाठ्य पुस्तक में कहा गया है 'राजद्रोह में वे समस्त प्रकार के सामिक हैं जो उन्हें देशद्रोह से तो कम होती है परन्तु प्रत्यक्षता या परीक्षा असन्तोष पैदा करती है, सम्राट की प्रजा के विभिन्न वर्गों में दुर्भावना फैलाती है, सार्वजनिक कष्टक मा नुहपुत्र कराती है और सम्राट व उनकी उनकी सरकार तथा देश के सचिवालय के कानूनों के प्रति जनता में बुना पैदा करती है। संसदत सार्वजनिक अभ्यवस्था उत्पन्न करत वरके समस्त कार्य राजद्रोह के अन्तर्गत आते हैं।'^२ यदि न्यायाधीश इस प्रकार की अस्पष्ट और व्यापक परिभाषाओं का संभवतापूर्वक प्रयोग न करें तो व किसी भी प्रतिक्रियावादी सरकार के हाथों में पड़कर सार्वजनिक स्वतंत्रता के लिए खतरा सिद्ध हो सकती है।

१९१४—१८ के युद्ध के पश्चात् से इन प्रश्नों ने जिन समस्याओं को खड़ा किया है उन्होंने हार्डकोर को स्पष्ट करने की अपेक्षा पुष्पिष्ठ गृह-विभाग तथा छोटे क्षेत्राधिकार वाले न्यायालयों की ही अधिक स्पष्ट किया है। साम्य से यह सिद्ध हो जाता कि इन क्षेत्रों में प्रचुर असन्तोष विद्यमान है। पुष्पिष्ठ की निष्पक्षता पर कई अभियोगों में शक्येह बठा है। इस शक्येह के विरुद्ध कोई प्रमाण नहीं था। केवल अधिकारियों ने इस आरोप को उस समय तक अस्वीकार किया जब तक कि उनके लिए संकल्पपूर्वक एसा करना असंभव न हो गया। परन्तु अहर्हट अभियोग^३ इसका एक उदाहरण है। पृथ्वी ने हर स्थिति में पुष्पिष्ठ का साथ दिया है और सार्वजनिक जान को अस्वीकार

१ लॉ आफ दि कंस्टीट्यूशन प २४ ।

२ रसेल ऑन ब्राइम्स (नवा संस्करण) पृ ८०

आर्चबिशप क्रिमिनल प्रोटीड्यूर (लेखना संस्करण) पृ १९२८ ।

३ इस अभियोग के विवरण के लिए देखिए डब्लू एच बॉमसन सिविल सिविलिज पृ ९ ।

किया है। उसका निर्माण केवल पुलिस के शासन पर ही आधारित है यही नीति बनवाई। जस्टिस बॉक दि वीन पुलिस क अनुष्ठान का को स्वीकार कर लेते हैं और अपने अधिकारों का स्वा-स्वतन्त्रता म विस्तार कम हो गया है। पुलिस क मजिस्ट्रेट की अनुमति से अपमानजनक घण्टों के प्रयोग या व्यवहार को सामान्य की दृष्टि विचारों का समन करने के लिए जिस सीमा तक बढ़ा दिया है वह सशक्त अनुष्ठान है। पिछले बस-यात्राओं से पुलिस घातियों अनुष्ठान बनना समाज में काफी हल बन करती रही है। जहाँ तक बरोबरारों या साम्यवादियों का प्रश्न है यह कहना कोई अनियोजित नहीं है कि "बीटे बॉन विलबकस" (Beatty V Gill banks)^१ का सुप्रसिद्ध सिद्धान्त विस्तृत सिद्धांत हो गया है।

सुझने में इतना अधिक व्यय होता है कि अधिकतर व्यक्तियों के लिए यह समझ नहीं है कि वे मजिस्ट्रेटों के निर्माण के उपरांत ऊपर के न्यायालयों में मजिस्ट्रेट कर सकें। इसलिए सामान्यतः उच्च न्यायालय इन निर्माणों पर मजिस्ट्रेट क द्वारा विचार नहीं करते। लेकिन जहाँ कहीं उन्हीं ऐसे निर्माणों पर विचार करना ही पडा है यह नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने पूरी सज्जता से यह काम किया है। १९३४ में आस्ट्रेलिया की दृष्टान्तपूर्ण घातित्तमना के बाद जिसमें बहुत से लोगों को उनके संबोधकों की निर्णयों का विचार होगा पडा था वह विचारों की गई थी कि पुलिस ने हस्तगत नहीं किया। यह-संकी ने कहा कानून की व्यवस्था यह है कि जब तक समा क मयाजक पुलिस से समा में उपस्थित होने के लिए न उन्हें पुलिस समा में नहीं जा सकती। हाँ यदि पुलिस को विश्वास हो जाये कि समा में बन्तुन घातित्त मग ही रही है तो पुलिस जहाँ बलवत्ता जा सकती है।" पुलिस की कार्यवाही का वह समर्पण आदर्शजनक है क्योंकि ओपनियन में जो निराह हुई वह पुलिस के अतिरिक्त और सबको जान थी। पुलिस बाहर बाड़ी थी और समन जायतों को निरन्तर भ्रमन से बचा जाते हुए देखा था। इसके तीन महीन बाद साउथवेस्ट में "इन्स्टीट्यूट टु डिसेम्बरन विथ" के विरोध में एक समा हुई। अन्धकार द्वारा विरोध किहू जाने पर भी पुलिस ने समा में प्रवेश करने का आग्रह किया और वह वहाँ से हटने के लिए तय्यार नहीं हुई। पुलिस मार्शल को आक्रमण के लिए प्रार्थ किया गया और उनमें यह किया। जब मजिस्ट्रेट से मजिस्ट्रेट की गई, तो उन्होंने उसे इन आचार पर मजिस्ट्रेट कर दिया कि यदि पुलिस का विश्वास हो कि उसकी अनुपस्थिति में समा में राजद्रोह की शानें बड़ी जायसी या घातित्त मग

१ इस अधिनियम पर मैगनन कॉमिन्स बॉक सिविल लिबरेशन की विमोच रिपोर्टें देखिए।

२ देखिए चार्ज्ड म्योर इत अधिनियम ए डिस्ट्रेट एक्टिवा (१९३३) अध्याय २।

३ (१८८२) * म्यू बी डी-३८।

४ सामान्य ऊपर उद्धृत १४ पुन १९३४ का १४।

होमी तो वह वहाँ प्रवेश कर सकती है। जब उच्च न्यायालय ने अपील की गई प्रदान न्यायाधीश ने मजिस्ट्रेट के निर्णय को कायम रखा^१। इसका अभिप्राय यह हुआ कि अगस्त १९१४ में उच्च न्यायालय ने एक ऐसे नए कानूनी सिद्धान्त का निरूपण किया जो उसी वर्ष के दून मास में यूहर्मबी के कानूनी परामर्शदाताओं को ज्ञात नहीं था। यह स्पष्ट है कि पहली सभा में बण्डा फासिस्ट व और छाउमवेन्स की सभा में अध्यक्ष और प्रधान बण्ड साम्बकारी थे। एक संज्ञक के अन्त में "जॉमस बर्टेस साकिन्स" एक ऐसा उदाहरण हो सकता है जहाँ न्यायालय ने तर्कों के नए सम्मिश्रण के प्रति सुविख्यात सिद्धान्तों का प्रयोग किया हो।^२ यह सम्मर्न जिसमें यह प्रयोग किया गया प्रभावोत्पादक है। पुसिस का 'पुसिससंमत सन्देश' बयनारमक होता है और उच्च न्यायालय सुविख्यात सिद्धान्तों को इन बयनात्मक प्रश्नों के ऊपर जिनका उसे निर्णय करना होता है सुममता से लागू करता है।

मै 'पासमोर बर्टेस इलियास' (Pasmore V Elias) की जिसमें न्यायाधीश होरिज ने "एंटिक बर्टेस कैरिंगटन" की (Entick v Carrington)^३ की फंडोर शाब्दों को उद्धृत कर दिया था पहले ही बर्षा कर चुका है। इस निर्णय के प्रभाव को समझना आवश्यक है। इस मामले में पुसिस के कार्य की बर्षात्मिकता के बारे में कोई सन्देह नहीं है क्योंकि उसके विरुद्ध सतिपुष्टि की गई थी। लेकिन न्यायाधीश होरिज ने यह भी कहा था "प्रमेक्षाँ या निबन्धों का पकड़ा बनाया बयनका व्यक्तियों को निबन्धन में कैना सामान्यतः तो बर्षात्मिक है लेकिन यदि वे किसी व्यक्ति द्वारा किए गए अपराध के साक्ष्य प्रतीत हो तो राज्य के हितों की दृष्टि से यह सब सम्भव है।"^४ बस्तुतः यह तो आम चार्टर की बर्षात्मिक रूप देना हुआ। इससे पुसिस का जहाँ किसी व्यक्ति को विरपहार करने का आभार मिला उस सत्त्वा की ठगारी कैना की शक्ति मिला जायगी जिससे कि उस व्यक्ति का सम्पर्क हो। पुसिस इस ठगारी ऐसे साक्ष्य को भी खोज सकती है जो उस व्यक्ति से सीधी सम्पर्क न रखता हो लेकिन ऐसे अन्य व्यक्तियों को बोनी ट्यूर दे जिनके विरुद्ध यह आरोप लगाने में सन्दर्भ न हो। यह स्पष्ट है कि सार्वजनिक बसेजना के समय इस व्यापक शक्ति के कारण वे व्यक्ति जिनकी प्रतिविधियाँ पुसिस के लिए अनुविधानिक हों पुसिस की बपा के मोहूताय हो जाने ह।

इन निर्णयों में पणित दृष्टिकोण का उच्च दयनमूलक विद्यालय विद्यालय के सम्पर्क में अनुसूचित करना चाहिए जिसका १९१९ के परचात निर्णय हुआ है। यदि यह मान्य पड़े कि कुछ व्यक्ति ऐसा काम कर लें बाले ह जिससे अन्य जब ईबन प्रकास और वागमात के साक्ष्यों की व्यवस्था में दिग्ग पड़ेगा या सभास जीवन की आवश्यकताओं से बधित हो जायेगा तो सरकार १९२६ के एमबेसी पौनर्स एक्ट के अनुसार ससदीय स्वीकृति के अधीनस्व मनोमाहित विधिमय बना सकती है। इन शक्तियों के कारण

१ जॉमस बर्टेस साकिन्स (१९१५) के बी २४९।

२ पूर्बोत्त।

३ पासमोर बर्टेस इलियास पूर्बोत्त।

१९२६ की आम हड़ताल में ऐसे व्यक्तियों तक को विरूपण किया गया था जिन्होंने कहा था कि 'सरकार महजूर को कुचलना चाहती है।' १९२७ के ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट ने किसी भी न्यायक सहानुभूतिपूर्ण हड़ताल को अवैधानिक कर दिया है। इसने अधिनियम की परिभाषा इतनी बढ़ा दी है कि यदि किसी व्यक्ति में किसी हड़ताल प्रोही के लिए भ्रम में डालना हट कर उठना, तो उसे जैसे जैसे दिया गया है।^१ इस अधिनियम का महत्व केवल इनके उपबंधों की विद्यमानता में ही नहीं है। प्रत्युत इस बात में है कि सार्वजनिक उद्योगों के विनों में इनका प्रयोग के न्यायाधीश करते बिनके बारे में सर बाल्टर सिट्टाइन न महजूर है कि "भूतनाशित अनुभवों के फलस्वरूप अधिकांश संघ आंदोलन को संगठित धर्मिका के ऊपर प्रभाव डालने वाले मामलों के सम्बन्ध में न्यायालया की समता या निष्पत्तियां पर कोई विश्वास नहीं है।"^२ यह विचार अनेक सर बाल्टर सिट्टाइन का नहीं है। यी विस्तार बर्लिन ने भी इसी बात को कहा है। स्वर्गिय प्रो गिफ्टार्ट जैसे प्रसिद्ध कानूनी विद्वान् तक में इस बात को बड़ा जोर देकर कहा है।^३ इयर्सन के एक भूतपूर्व महाध्यापकादी तक ने यह स्वीकार किया है कि न्यायालय अधिकांश के विरुद्ध रहे हैं। यह निश्चित है कि यदि १९२७ के ट्रेड डिस्प्यूट्स एक्ट को लागू किया गया तो इनसे जनता में न्यायपालिका की निष्पत्तियों के प्रति बहुत कम विश्वास रह जायेगा।

इन दो भयानक अधिनियमों के अपरिचित हो अधिनियम और है सरकार ने १९३६ के "इन्डस्ट्रियल टिब्रिफेक्शन एक्ट" की आवश्यकता को कभी नहीं बताया है। जिन अधिनियमों के लिए यह बना है, वे पहले से ही वर्तमान विधान के अन्तर्गत आ जाते हैं। इनके बहुत से उपबन्ध तो इनके अस्पष्ट हैं कि इनके बायरे में धानिकारी प्रवृत्ति का ऐसा कोई भी भागन आ सकता है जो किसी सिपाही के मन में लड़ाई की भावना के प्रति सचेत पैदा कर दे। मेरा विचार है कि 'पीछे जेज मूनिपल' के परवा का दीनिकों के बीच में वितरण विवरक को इस विभाग के क्षेत्राधिकार में ले आना है।^४ अब तक इसके तत्कालीन में लाया गया एक महत्वपूर्ण अधिनियम "आर बर्सेन डिप्लिन्ग" का है। इस अधिनियम के अन्तर्गत न्यायाधीश सिविलिटन न १५ वर्ष के एक सत्र के को एक निवाही को अनुसरवादी परामर्श देने के कारण १२ मास का नाराज दिया था। इस संघ में तथा १९१२ के सुप्रसिद्ध "पोपो मव माये" परबे के लिए भी टॉम मंग को छ. मास का जो काठवास दिया गया था (भी मंग

१ बाल्पसन ऊपर उद्धृत पृ १५।

२ वही।

३ इयर्सन पृ ७ १९२७।

४ इयर्सन (५ डिप्लिन्ग १९११) १ २२।

५ दि प्रेसट लॉ सोक डि ट्रेड डिस्प्यूट्स (१९१४) पृ २४

६ इयर्सन आर जेनिन्स दि लैडीघन एक्ट एक्सप्लेन्ड (१९३५)।

७. देखिए, इयर्सन मार्च १७ १९३७ और मार्च १५ १९३७।

सत्ता के कारावास के उपरांत ही छोड़ दिए गए थे) उनमें सम्पूर्ण धेरे हैं। १९३९ का यूनीफॉर्म एक्ट भी इतना ही अतिरिक्त है। अंतरराष्ट्रीय विरोधक यह स्वीकार करते कि इस विधान की वे बाटाएँ जिन्होंने राजनीतिक सत्ताओं के लिए परिवर्तन बर्तित कर दिया था (महाद्वितीय वैद्यो के अनुसार के अनुसार) हितकर थी। लेकिन इस विषय की स्वीकृति से साम उठा कर पुमिस की सभित्तों में अत्यधिक वृद्धि कर दी गई। 'अपमानजनक शर्तों तथा व्यवहार' के अपराध को बहुत व्यापक दर्श दिया जाने लगा है। पुमिस का प्रभाव ऐसे किती भी अमूल्य के मार्ग या अंधाधर को रोक सकता है जिसके बारे में उसे अस्पष्टता का संदेह हो। यह यह-विनाय और स्थानीय घटा की स्वीकृति होने पर अपने सम्पूर्ण क्षेत्राधिकार में या उसके कुछ भाग में गीन महीने के लिए समस्त अमूमि पर प्रतिबंध लगा सकता है। बाद में इस प्रतिबंध को अर्धविकारी भी वा सकता है। फल यह कि अति कम के पूर्ण धोर पर अविष्ट अमूमि में अस्पष्टता हुई है। अतः समाजवादी अमूमि पर भी जो शांतिपूर्ण रहे हैं, प्रतिबंध लगा दिया गया है। कुछ असाधारण परिस्थितियों के कारण सामान्य राजनीतिक प्रचार को भी बंद कर दिया गया है। श्री डब्लू एच बॉम्पटन के शब्दों में "यह नीति कुछ एसी ही है कि यदि कुछ लोग मोर के द्वारा असाधारण रूप से बजाते हैं, अतः उनका बजाता विरुद्ध ही बन्द कर दिया जाये।"

सार्वजनिक स्वतन्त्रता से सम्बन्ध रखने वाले मामलों में सुदोतर बयों की प्रवृत्ति या निपोकियन के मुद्दों की समाप्ति और १८३२ के सुधार विधेयक के बीच के बातावरण से साम्य रखती है। दोनों ही स्थितियों में पम्मीर औद्योगिक व्यवस्था की और इसके फलस्वरूप साक्षर-वर्ष में अंतरक सा पैदा हो गया था। इस अंतरक के फलस्वरूप दोनों ही स्थितियों में दमनमूलक विधान पास हुए जिन्होंने शांतिपूर्ण राजनीतिक प्रतिबन्ध को रोकने की चेष्टा की। दोनों ही स्थितियों में इस अवस्था का प्रभाव स्वायत्तिका के ऊपर भी पड़ा। स्वायत्तिका ने अपराधियों को काष्ठी कठोर बंद दिये और आमपक्षी आरोपण को कुलतन का प्रयास किया। दोनों ही स्थितियों में इसका परिणाम यह हुआ कि जनता का स्वायत्तियों की निष्ठाता में विश्वास बढ़ गया। इस विश्वास का लोकतन्त्रात्मक शासन के लिए कितना महत्व है इस बारे में कुछ कहना आनाकरण्य है। एक अनुसूची लेखक ने लिखा है "स्वाय-व्यवस्था में विश्वास की ठेकी से बनी होगी वा रही है"। यह स्पष्ट ही कि नागरिक स्वतंत्रता की एक राष्ट्रीय परिपक्व स्थापित करने की आवश्यकता हुई और यह संस्था अपने अन्त के समय से निरन्तर व्यस्त रही है, ऐसे समय में एक पम्मीर मामला हो जाता है जब कि मुय की बट्टिनाइबी इन विश्वास को शांति का रक्षक बनाती है। जनता में यह भावना बल पकड़ती जाती है कि कानून का प्रयासन एक बर्ष के हानी में हमारे बर्ष का दमन करने के लिए एक हथियार है। एक अनुसूची लेखक का कहना

१ विहित विधायीय (मरण १९३८) पृ ३७।

२ ईपमिता अस्तिरत, (सुगत संतरण १९३२) हाप "लोकविद्यम" पृ ९।

हे "मजबूर न्यायालय को इस विधान के साथ छोड़ता है कि न्यायालय तो ऐसे मानते हैं जिनके द्वारा साक्षर वर्ग मजबूरों को दुरुपयोग है।" यह ऐसी स्थिति है जिनके बड़े भयावह परिणाम हो सकते हैं। ऐसा नहीं मानकर पढ़ना कि साक्षर-वर्ग इस स्थिति का सामना करने के लिए पूरे तरह तय्यार है।

(३)

आवृत्ति अवरोध के महानुभव न्यायाधीश ने न्यायालयों की इस प्रवृत्ति पर चिन्ता प्रदान की है कि "ये विधानों के अदर पक्षों वर्ग पहले के आर्थिक मित्रान्तों की स्वीकृति तथा ऐसी किसी बात के पूर्ण निर्णय का जिसे कमीनों का एक न्यायाधि करम ठीक मही मानता है खोजने की चेष्टा करते हैं।" यह चेतावनी अवरोध की तरह हमारे लिए भी आवश्यक है। हमारे न्यायाधीशों को अपने कमरीकी चाहों की तरह यह याद रखना चाहिए कि कानूनी न्यायित्व निश्चितता के लिए बीछे फिर कर देखने की धमिल पर जितना निर्भर है उतना ही वह आवश्यक सद्योपनो के लिए जाने बड़े कर बेसम की धमिल पर भी निर्भर है। उन्हें भी इस लक्ष्य से बचे खुने की आवश्यकता है कि नहीं वे संसद की इच्छा के स्थान पर उन सामाजिक और आर्थिक विधानों की प्रतिच्छिन्न न कर दें जिनका वे अनुमोदन करते हैं। उनको इस लक्ष्य से भी बचे रहने की आवश्यकता है कि नहीं वे अपने मन के प्रतिदूक विचारों को सामाजिक इतिहासों के लिए बमकी न मान बैठें। उनको यह सीखना है कि धिमाकों के समाधान का उपाय उनके दृष्टान्तों का समन नहीं प्रयुक्त इनके कारण का निवारण है। उन्हें बीना कि बिरोधी दल के नेता भी संसदी ने गृह-मंत्री से कहा था "इस बात पर विश्वास न करना चाहिए कि वह सरकार जिसे समनमूलक कानूनों को कार्यान्वित करना है इस बात की सर्वश्रेष्ठ नियमित है कि कोन से बीज माल-स्वतन्त्रता के अधिकार तथा वैधानिक मार्ग धमिल करना करने के अधिकार का प्रतिक्षण है।"

इस सामाजिक परिवर्तन के अर्थक मग में यह लक्ष्य रहता है कि नहीं उसकी कानूनी प्रवृत्तियाँ उन राजनीतिक निर्णयों के साथ करम मिता कर न बल सकें जिनकी उन्हें न्याय्य करनी होगी है। हमारी न्यायपालिका के सामने यह लक्ष्य विशेष रूप से निश्चयान है क्योंकि उसकी न्याय-प्रवृत्तियाँ एक ऐसे दर्शन के अन्तर्गत आधारित हैं जिन्हें ये राजनीतिक निर्णय सुगमता से बदलने की चेष्टा कर सकते हैं। यदि न्यायपालिका ने सत्तावादी सरकार के कार्यक्रम में विघ्न उपस्थित करम का प्रयास किया तो उसकी स्वतन्त्र स्थिति को आसानी से लक्ष्य पैदा हो सकता है। उनको सुरक्षा दनी बात पर निर्भर है कि वह न केवल जमीनों को प्रयुक्त करीबों को भी वह विश्वास दिला सके कि उसमें उन अत्यन्त प्रबल दुरुपयोग (injustice-

१ अक्सिस इन ए डिस्ट्रिक्ट एरिया (१९३६) डाय चार्ल्स म्योर, पृ. २०।

२ ओलिवर बरेन होम बलेस्ट सीवेल कपले (१९०१) पृ. २०३।

culate major premisses) को पार करने की सामर्थ्य है जो सामान्य-विवि
की रचना में इतने मजबूत है। इस अतिवचन की सामर्थ्य के लिए उसे न केवल
अपनी सफलताओं के प्रति ही प्रत्युत असफलताओं के प्रति भी सजग होना है। इस
समय वह सजग नहीं है। उसके अधिकांश सदस्य समाज के उच्च वर्ग से प्रोत् हैं।
जैसा उसका जीवन होता है वैसे उसके विचार होने हैं। उसका बुद्धिकोण तथा अनुभव
उस विद्यालय अनुसंधान के अनुभव तथा पुष्टिकोण से भिन्न होता है जिसकी समस्याओं
का वह समाधान करती है। उसके सिद्धान्तों का मुख्य उद्देश्य उन सामाजिक रचना
की रक्षा करना है जिसकी बुनियादों को मात्र चुनौती मिल रही है। यदि वह अतीत
के प्रति अज्ञानता के आवरण में अपनी सत्ता को उन लोगों के पक्ष में करती है जो
इन बुनियादों की रक्षा कर रहे हैं, तो यह मयांक हीमा। उन परिस्थितियों में जिसका
से वर्णन कर चुका है ऐसा करना अकेला के विरुद्ध माकूम पड़ेगा। कोई भी
न्यायवाहिका इस प्रकार की प्रतिकूलता को अधिक समय तक सहन नहीं कर सकती।

यै यह बहराहट पैदा करने के लिए नहीं कह रहा है। जो कोई भी व्यक्ति इस
वेध के अधिक बर्ग को जानता है, यह वह समझ लेगा कि यह हमारे दासक वर्ग की
मति हमारी वामूनी संस्थाओं की उपवृत्तता या निष्पत्ता में नरोसा नहा रहता।
यह वह मशीनमति जानता है कि कानून अमीरों और गरीबों के बीच काफी भेद
रहता है। मजदूर यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि आर्थिक प्रतिरक्षा की उनकी
अपनी संस्थाओं ने न्यायालयों से कितनी बठिनाई के उपरान्त माय्यता प्राप्त की है।
वे यह समझते हैं कि अमीरों के अयोग्य से उनकी कितनी हालि होती है। वे उत
इन्द्रजाल से परिचित हैं जिसकी पटीको के शासन के बारे में बुझाई दी जाती है। वे
अपने नै बड़ों के समान पुष्टि में विरवास नहीं रखते विशेषकर बलिष्ठ क्षेत्रों में।
उनकी स्मृतियां बड़ी बीर होती हैं। हाबर्न अमियागो में जो बन्द किए गए, वे इस
घटावों में बड़ी प्रभाव रखेंगे जो गल घटावों में गलपुष्टि के अधिवयो जा रहा
वा। उनकी बुद्धि में न्यायाधीशों की निर्मित केवल जग्य बरा अथवा राजनीतिक
इस की सेवा के आधार पर होती है। वे बीरकाल से आधारक मुबारों को स्थित
होने बल रहे हैं और जब ये मुबार नार्मी बल भी होने हैं तो केवल अदुरे। वे यह
भी जानते हैं कि मजिस्ट्रेट का न्याय कितना अनुपयुक्त है पुष्टि-न्यायालय के
बातावरण से अलसाचारण कितना अलगपुष्टि रहा है। यह बात विरवासपूर्वक नहीं
सकती है कि यदि कमी इस वेध में न्यायवाहिका प्रगतिशील सरकार के विरोध में
बड़ी हुई, तो सिनायों का एक बन्दर उठ लड़ा होगा।

पुनश्च यह बन्दर स्वयं न्यायवाहिका के ही ऊपर आ पड़ेगा। उसे मुबार के
अवसर अवश्य मिले हैं किन्तु उसने अपनी शक्ति को उस दिशा में कमी नहीं लगाया।
वामूनी विद्या जैसे महत्वहीन विषय तक में अविनाश विचारधीन परिवर्तन लॉर्ड
केम्पटनी ने सगर बर्ष पूर्व प्रस्तुत किये थे।^१ यह ठीक है कि विविध न्यायाधीश

अपनी स्वतन्त्रता और सत्पत्ति के लिए विख्यात है लेकिन हमसे ही सारी आवश्यकताएँ पूरी नहीं हो पाती। श्रेष्ठ न्यायाधीश बकील होने के साथ साथ राजनेता भी होता है। वह अपने सामने प्रस्तुत होने वाली समस्याओं को इस दृष्टि से देखता है कि उनका राजनीतिक परिणाम क्या होगा। वह इस बात को समझता है कि उसे अपने व्यक्तिगत सामाजिक दर्शन को विचार के समित प्रयोग के साथ समीकृत नहीं करना चाहिए। आजकल हमें जिस समस्या का सामना करना पड़ रहा है जिनमें कामूनी टेकनीक बहुत कम सहायता दे पाती है। ऑकस्टोन के शब्दों में न्यायाधीश को 'कानून की सजीव आकाशवाणी (Oracle) नहीं होना चाहिए प्रकृत उठे सजीव कानून की सजीव आवाजवाणी होनी चाहिए।' सजीव कानून को जन वीरों की ओर सर्वत्र ध्यान देना चाहिए जिसका कि परिहार किया जा सकता है। कानून के साफल्य की ओर एक उपयुक्त पूर्वदृष्टान्त से कुछ अधिक है वह उस मार्ग का भी निर्धारक है जिस पर अग्रसर उस पूर्वदृष्टान्त को जाने बढ़ना होता है। न्यायाधीश के हाथे उसे यह साधे बढ़ाना होता है और वह यह एक अच्छी तरह नहीं कर सकता जब तक कि वह ऐसे किसी मार्ग को न चुने जो सामाजिक दृष्टि से उपयुक्त हो। मेरे विचार से न्यायाधीश होम के इस कथन का कि कानून का जीवन ठक नहीं प्रस्तुत अनुभव है यही अभिप्राय है।^१

लेकिन इस विख्यात मूल को स्वीकार करते समय यह जांच करना प्रासंगिक है कि यहाँ किसका अनुभव अभिप्रेत है। कानून सर्वत्र ही ऐसी ऐतिहासिक दृष्टि नहीं होता जिसकी जड़ें मूलभूत में जमी हैं। वह एक प्रयोगपरक दृष्टि भी होता तथा उसकी रचना आन-बुझकर नई आवश्यकताओं की दृष्टि के लिए बदल दी जाती है। ही सकता है कि इन आवश्यकताओं की पूर्ति ऐसे व्यक्ति करें जिसका अनुभव न्यायिक विचारधारा के प्रतिभूत पड़ता हो। हमारी पद्धति पर कथन यह है कि उसने इस विरोध के बीच-बीच में बार-बार टुकटमा है। इस प्रकार की न्यायिक महत्परकता न्यायाधीश के कार्य में क्लेश डालती है। अपनी पीढ़ी की मन-स्थिति को यत्न समझना मनुष्यों के विचारात् को जो देने का कथन मोक सेना है। न्यायाधीश के समीप आरोपित करने के लिए कोई विपक्ष तथा अल्पपरक कानून नहीं होता। मालूम है यह सुप्रसिद्ध कथन कि 'न्याय-विभाग की अपनी कोई इच्छा नहीं होती न्यायिक धर्म न्यायाधीश की इच्छा को कार्यान्वित करने के लिए प्रयुक्त नहीं होती वह तो सर्वत्र विधान-मण्डक की इच्छा को या दूसरे शब्दों में कानून की इच्छा को कार्यान्वित करने के लिए प्रयुक्त होती है'^२ एक श्रेष्ठ मन्त्र है लेकिन फिर भी एक मन्त्र ही है। न्यायाधीश स्वयं चाहने पर भी विधायक हुए बिना नहीं रह सकता। राष्ट्रपति कन्वैन्ट के अनुसार जमे यह स्वरूप रचना चाहिए, 'जब कभी वे (न्यायाधीश) संविधान सम्पत्ति अधिष्ठित अधिकारों, कानून की उपयुक्त प्रक्रिया,

१ दि कर्मिल ना (१८८१) पृ १।

२ ओल्डवॉर्न सर्विस बैंक आड यूनाइटेड स्टेट्स ८ व्हीट, ७१८, ८९९।

culate major premises) को पार करने की सामर्थ्य है जो सामान्य-बिधि की रचना में इतने मूकमूक है। इस अतिव्यय की सामर्थ्य के लिए उसे न केवल अपनी सफलताओं के प्रति ही प्रसूत असफलताओं के प्रति भी सजब होना है। इस समय वह सजब नहीं है। उसने अधिकांश महत्त्व समाज के उच्च वर्ग से प्रोक्त है। जैसा उसका जीवन होता है वैसे उसके विचार होते हैं। उसका दृष्टिकोण तथा अनुभव उस विद्यालय समसमुदाय के अनुभव तथा दृष्टिकोण से भिन्न होता है जिसकी समस्याओं का वह समाधान करती है। उसके सिद्धान्तों का मुख्य उद्देश्य उन सामाजिक रचना को रखा करता है जिसकी बनियावों को आज चुनौती मिल रही है। यदि वह अतीत के प्रति सदाभाव के आचरण में अपनी सत्ता को उन लोगों के पक्ष में करती है जो इन बुनियावों की रक्षा कर रहे हैं, तो यह भयानक होगा। उन परिस्थितियों में जिनका मैं वर्णन कर चुका हूँ ऐसा करना लोकेच्छा के विरुद्ध मान्य पड़ेगा। कोई भी न्यायशास्त्रिका इस प्रकार की प्रतिकूलता को अधिक समय तक सहन नहीं कर सकती।

मैं यह बचकान्ता पैदा करने के लिए नहीं कह रहा हूँ। जो कोई भी व्यक्ति इस देश के अधिक वर्ग को जानता है, यह वह समझ लेगा कि यह हमारे शासक वर्ग की भाँति हमारी कानूनी संस्थाओं की उन्नतता या निष्पक्षता में शंका नहीं रखता। यह यह मसीहावादी जानता है कि कानून जमीरो और मरीबा क बीच काफी भेद रखता है। मजदूर यह भी अच्छी तरह जानते हैं कि आर्थिक प्रतिरक्षा की उनकी अपनी संस्थाओं ने न्यायालयों से किसनी बट्टियाँ के उपरान्त मान्यता प्राप्त की है। वे यह समझते हैं कि अमीरों के खेती-ऊन से उनकी जिदनी क्षति होती है। वे उस दृष्टिकोण से परिचित हैं जिसकी परीचो के शासन के बारे में दुहाई दी जाती है। वे अपने से बड़ों के समान पुसिध में विश्वास नहीं रखते विशेषकर बलिष्ठ क्षेत्रों में। उनकी स्मृतियाँ बड़ी हीर्य होती हैं। हावर्न अधियोमा में जो कुछ बिप पए, वे इस मतावली में बड़ी प्रभाव रखेंगे जो गण सतावली में टाकपुडक के अधियोमा का रहा था। उनकी दृष्टि में न्यायाधीशों की नियुक्ति केवल जम्म बस बसबा राजनीतिक दल की सेवा के आचार पर होती है। वे हीर्यवाप से आकस्यक मुबारों को स्वहित होने देते रहे हैं और जब वे मुबार बामाँवत भी होने हैं तो केवल महुने। वे यह भी जानते हैं कि मरिस्टे का न्याय कितना अनुपयुक्त है पुसिध-न्यायालय के आचारक वे जनसाधारण कितना असम्युष्ट रहता है। यह बात विद्वान्मपूरक कही लगनी है कि यदि कभी इस देश में न्यायशास्त्रिका प्रगतिशील सरकार के विरोध में लड़ी हुई, तो शिक्षापनों का एक बबडर उठ पड़ा होगा।

पुनरुच यह बबडर स्वयं न्यायशास्त्रिका के ही उचार का पड़ेगा। उसे मुबार के बबडर बबडर मिले हूँ किन घसने अपनी सति की उस दिशा में कभी नहीं जाना। कानूनी सिद्धा जैने महत्त्वहीन बिपय तक में अधिकांश विचाराधीन परिवर्तन सर्वे वेस्टनी ने लणर वर्ष पूर्व प्रस्तुत बिपे से। यह ठीक है कि कितना न्यायाधीश

बननी स्वतन्त्रता और सार्वभौमिकता के लिए विख्यात है लेकिन हमसे ही सारी आत्मतन्त्रता
 धारण हुई हो जाती है। यहाँ न्यायाधीश बर्तन होने के साथ साथ राजतन्त्र भी
 होता है। यह अपने अपने प्रस्तुत हुए भागी समस्याओं को इन दृष्टि से देखता है
 कि उनका राजनीतिक परिणाम क्या होगा। यह इन बातों को समझता है कि उसे
 अपने स्वतन्त्रता सामाजिक वर्गों को विधान के गमन प्रयोजन के साथ समीकन नहीं
 करना चाहिए। आदर्शक हमें जिस समस्या का सामना करना पड़ रहा है उनमें
 कानूनी ऐननीक बहुत कम सहायता दे पाती है। अखिलेश्वर के शब्दों में न्यायाधीश
 को 'कानून की समीकन आकाशवाणी (Oracle) नहीं होना चाहिए प्रस्तुत उसे
 समीकन कानून की समीकन आकाशवाणी होनी चाहिए। समीकन कानून को बन दोनों
 की ओर सर्वत्र ध्यान देना चाहिए जिसका कि परिहार किया जा सकता है। कानून
 के साठेव ही जोर एक अननुकूल पूर्वदृष्टान्त से कुछ बहिक है यह उस मार्ग का
 भी निर्धारण है जिस पर चलकर उस पूर्वदृष्टान्त को भाये बचना होता है। न्याया-
 धीश के नाते उसे यह भागे बहना होता है और यह वह एक एक अच्छी तरह नहीं
 कर सकता जब तक कि वह ऐसे किसी मार्ग को न चुने जो सामाजिक दृष्टि से उपयुक्त
 हो। मेरे विचार से न्यायाधीश होम्स के इस कथन का कि कानून का जीवन तर्क नहीं
 मनुष्य मनुष्य है यही अभिप्राय है।"

लेकिन इस विख्यात मूल को स्वीकार करते समय यह जोष करना प्राथमिक
 है कि यहाँ जिसका अनुभव अभिप्रेत है। कानून सर्वत्र ही ऐसी ऐतिहासिक बुद्धि
 नहीं होता जिसकी जड़ें मूलतः में जमी है। यह एक प्रयोजनगत बुद्धि भी होता
 तथा उसकी रचना जान-बूझकर नई आत्मतन्त्रताओं की दृष्टि के लिए करण ही जाती
 है। हो सकता है कि इन आत्मतन्त्रताओं की पुति ऐसे व्यक्ति करें जिसका अनुभव
 न्यायिक विचारधारा के प्रतिफल पड़ता हो। हमारी पद्धति का कठोर यह है कि
 उसने इस विचार के अतिरिक्त को बार-बार दुहराया है। इस प्रकार की न्यायिक
 आत्मतन्त्रता न्यायाधीश के कार्य में उदात्त आती है। बननी पीडी की मर्यादा
 को मनुष्य समझना मनुष्यों के विरवाह को बाँधने का कठोर मोक्ष लेना है। न्याया-
 धीश के समीकन आलोचन करने के लिए कोई निष्पक्ष तथा अनुसरक कानून नहीं
 होता। मार्शल का यह सुप्रसिद्ध कथन कि 'न्याय-विभाग की बननी कोई इच्छा नहीं
 होगी न्यायिक धर्म न्यायाधीश की इच्छा को कायमिष्ठ करने के लिए प्रयुक्त नहीं
 होगी यह तो सर्वत्र विधान-मंडल की इच्छा को या दूसरे शब्दों में कानून की इच्छा
 को कायमिष्ठ करने के लिए प्रयुक्त होगी है' एक घेठ पक्ष है लेकिन ठीर
 भी एक पक्ष ही है। न्यायाधीश स्वयं चाहने पर भी विधायक हुए बिना नहीं रह
 सकता। एल्फिंस्टन के अनुसार उसे यह स्मरण रखना चाहिए, 'जब कभी वे
 (न्यायाधीश) संविधान सम्पत्ति अविच्छिन्न अधिकाधिक, कानून की अनुसरक प्रक्रिया,

१ दि कॉमन लॉ (१८८१) पृ ११

२ बीसबेने वॉलें बेंक ऑफ यूनाइटेड स्टेट्स ८ व्हीट, ७१८८११।

स्वतन्त्रता जादि की व्याख्या करते हैं वे सामाजिक दर्शन के कुछ अंग को कानून का रूप दे देते हैं। जादिक और सामाजिक प्रवृत्तियों पर व्यापारियों के निर्भर उनके जादिक और सामाजिक दर्शन पर निर्भर होते हैं। हमारी जनता ने बीसवीं शताब्दी में जो शान्तिपूर्ण प्रगति की है, उसके लिए हम मुख्यतः उस पुराने दर्शन के नहीं जो स्वयं जादिक परिस्थितियों का परिणाम का प्रत्युत्पन्न अपने उन व्यापारियों के आधी हैं जिनका जादिक और सामाजिक दर्शन बीसवीं शताब्दी का है। १/

हमारे युग की योग्य संभवतः यह कानून पढती है कि प्राचीन कानूनी विचारधारा को नूतन विश्वास और नूतन मिश्रण के अनुसार विस्तृत किया जाये। हमारी नैतिक व्यापारिका के लिए वह कोई सुगम कार्य नहीं है। जिन प्रभावों ने नए विश्वास की रचना की है, वे उन प्रभावों से भिन्न हैं जिनकी व्यापारिका अभ्यस्त है- जिस तरह के ऊपर यह नया विश्वास आधारित है वह उस परम्परागत धर्म से भिन्न है जिसके ऊपर हमारी व्यापारिका निर्भर है। उसकी कठिनाई का समाधान नहीं है कि पुराने का नए के साथ समन्वय हो और यह समन्वय ही है कि विद्योद्वेग इन्वेस्ट का मत का सामाजिक शान्ति की आवश्यक दर्त बन जाये। मत यदि कोई व्यापारिक इस बात को अस्वीकार करता है तो वह उस दर्त को अस्वीकार करता है, जिसके आधार पर उसकी परम्परा की रक्षा की जा सकती है।

राजतंत्र

(१)

सर्पित राजतंत्र का आलोचनात्मक विवेचन करना सुपम कार्य नहीं है। सवि-
 वाग के इस ग्रंथ के सम्बन्ध में हमारा ज्ञान मजबूत कम है। इसके संशालन के विषय
 में प्रसेक जात्र से चाबीस वर्ष पूर्व महारानी विक्टोरिया की मृत्यु के सात समाप्त हो
 जाते हैं। समाप्त तथा उनके मंत्रियों के क्या सम्बन्ध रहते हैं, इस प्रश्न का हमारे पास
 कोई उपयुक्त विवरण नहीं है। हमें राजशासन के अधिकारियों के चुनाव के सम्बन्ध
 में या उनके मंत्रियों के साथ सम्पर्क के विषय में बहुत कम ज्ञान है। राजशासन तथा
 समाचार-पत्रों का क्या सम्बन्ध रहता है, इस विषय में एडवर्ड मट्टम् के सिद्धान्त-
 रण्य के परभाव हमारा ज्ञान और भी कम हो गया है। कोई संशुद्ध हमें राजशासन
 के ईशिक सरकारी कर्मों की ही सूचना देता है लेकिन वह हमें इन चीजों से परि-
 शित नहीं कराता जिससे कि समाज का मन निर्वाणित होता है। समाज की गति-
 विधियों के सम्बन्ध में कितना अधिक मीन रहता जाता है यह इस बात से प्रकट हो
 जाता है कि जगता को भीमपी सिम्पसन और स्याट्ट एडवर्ड के सम्बन्धों का उस
 समय तक कोई ज्ञान नहीं हुआ था जब तक कि सात मामला अपूर्व नरपीक्य पर
 न पहुंच गया। यद्यपि सम्पूर्ण संसार इन सम्बन्धों के विषय में महीनों तक चर्चा करता
 रहा था लेकिन ३ दिसम्बर १९३९ तक किसी भी ब्रिटिश समाचार-पत्र में इसकी चर्चा
 नहीं की थी। इसके आठ दिन परवान् ही एडवर्ड मट्टम् ने सिद्धान्त-रण्य के अधिकारियों
 पर हस्ताक्षर कर दिए।

यह सुनिश्चित है कि पिछले साठ वर्षों में राजतंत्र की संस्था के बारे में लोगों के
 विचार काफी बदल गए हैं। महारानी विक्टोरिया के शासन-काल के पहले चाबीस
 वर्षों में इसकी आलोचना काफी मुजर और तीव्र रहती थी। मोनेक बीम्बरेजेन और
 सर जार्ज डार्ल्ड जैसे प्रतिष्ठित सार्वजनिक व्यक्ति सभ्यतावाद के सम्बन्ध में अपनी
 सम्यक्ता प्रकट करते रहना भी नहीं करते थे। राजतंत्र की बदनामी इसी तरह
 गई थी कि लोग यशियों में प्रिंस जॉफ वेस (एडवर्ड मट्टम्) को देखकर सी-सी करने
 लगते थे। संदीपन सार्वजनिक आलोचना की इस तीव्रता से बहुत भयभीत हो गए
 थे। १८८८ के परवान् ईशिक में कोई गम्भीर सभ्यतावाद नहीं रहा है और
 १९३९ के सिद्धान्त-रण्य के कुछ महातिपूर्व दिनों को छोड़कर राजतंत्र की कोई
 आलोचना नहीं हुई है। ईशिक में राजतंत्र की संस्था को अनिवार्य मान लिया गया
 है। लोगो को उनके प्रति भाव्या कुछ ऐसी यह गई है जैसी कि समझती सतामी में
 उनकी राजा के ईशिक अधिकारों के प्रति थी। ब्रिटिश जनता का राजतंत्र के प्रति जो

भाव है वह बीसवीं शताब्दी के दृष्टिकोण से मेल नहीं खाता। इस शताब्दी में तीन राजवंश समाप्त हो चुके हैं और स्पेन के सम्राट गृहबिहीन मायाबर हो गए हैं। मुझ के परचात् सम्राट् के व्यक्तिगत जो जो अज्ञानसिद्धियाँ समर्पित की गई हैं वे बेब-स्तुसिद्धियाँ ही मान्य पड़ती हैं।

इस परिवर्तन के कारण क्या है ? इस प्रश्न का उत्तर अब कठिन है। इसका कुछ कारण तो महाशक्ति विक्टोरिया का सुवीर्ण और एकमिष्ट शासन-भाव है। १८७० के परचात् बेरा उन्हें राष्ट्रीय प्रतीक के रूप में मानने लगा था और उन पर गर्व करने लगा था। एडवर्ड सप्तम की हृदयमूल प्रकृति ने भी राजतंत्र की प्रतिष्ठा बढ़ाने में बाड़ा योग दिया था। सिद्धासनाब्द होने के परचात् वे जर्मनी के साम्राज्य के सामोरे में लुध्मर भाग लेते थे। फेंचो के प्रति उनकी अनुचित और अर्थात् के प्रति उनकी विरक्ति बहुत कुछ राष्ट्रीय भावनाओं के अनुकूल ही थी। जर्मन पंचम के प्रति राष्ट्र की निष्ठा के कुछ गहरे मनोवैज्ञानिक कारण थे। जब प्रसारण ने उन्हें अपने साम्राज्यवादी के साथ सीमा वैयक्तिक समर्क स्थापित करने का अवसर दे दिया था इसके उपरान्त तो वे "अपने प्रजाजनों के पिता" कहलाने लगे थे। उनकी कर्मठता विख्यात थी। उनके राज्यकाळ में राष्ट्र ने महाबुद्ध में विजय प्राप्त की थी। लोग यह समझते थे कि उन्होंने बड़ी विघ्न राजनीतिक परिस्थितियों में से अपना मार्ग प्रसस्त किया है। उनके उत्तराधिकारी ने जब सिद्दासन पर पीर रक्ता दे पहले से ही विख्यात थे। ऐसी क्याति इतिहास में सायब ही पहले किसी के घाव में रही हो। बाह्यी विश्व के लिए वे "प्रसन्नमूल राजकुमार" के और सिद्दासन-त्याग के समय तक उनकी प्रत्येक भाव-संगीमा पर लीम जम्मत होकर कण्ठ-ध्वनि करते थे।

मेरे विचार से सम्राट् की लोकप्रियता की दृष्टि अधिक ध्यान देने योग्य नहीं है। विशेष महत्त्वपूर्ण बात यह है कि १९१६ में सिद्दासन-त्याग के समय एक व्यक्ति के ऊपर जो ध्यान था बड़ी सुगमता से भंग ही गया। इसका अविशय यह है कि हम पिछले पाँच सम्राट् के वैयक्तिक गुणों के विषय में बाहे कुछ भी कह लें वगैरे १८७८ के बाद के पहले हुए दृष्टिकोण की कोई व्याख्या नहीं होती। डा. जॉर्ज जॉन्स का कहना है कि राजतंत्र के प्रति हमारे भावना का कारण यह है कि हम सम्राट् के व्यक्तिगत में पितृत्व का भाव देखने लगे हैं। यह सिद्दान्त इस युग के बड़े बड़े राजनीतिक नेताओं पर तथा मुसोलिनी हिटलर और स्टालिन जैसे अविनायकों के ऊपर भी लागू होता है। ये अविनायक अपने अनुयायियों में बड़ी सुगमता से उन्साह का संचार करते हैं लेकिन इस सत्साह का अन्त भी बड़ी शीघ्रता से हो जाता है। जहाँ अविनायकों का पतन हुआ जनता उनके प्रति अपना भाव भूल जाती है। अतः राजतंत्र विपरीत हमारे दृष्टिकोण के परिवर्तन के दो कारण मान्य पड़ते हैं। पहला कारण तो यह है कि राज्य के सर्वोच्च पर के प्रति जनता के मन में परम्परागत अविशय रहता है और इस अविशय का केवल कुछ विशेष परिस्थितियाँ ही हटा सकती हैं। सम्राट् का अपने प्रजाजनों के ऊपर बाहु का सा प्रभाव होना है। अविशय व्यक्ति उनके पास बुद्धि देकर नहीं बने हैं। यदि उनका भावनायक व्यक्ति संयत है तो इस बात की

बहुत कम संभावना है कि उनके आचरण की जनसामान्य के आचरण की भाँति पहली छान-बीन होगी।

मेरे विचार से इस परिवर्तन में महत्वपूर्ण बात यह तबित जिस पर यह हुआ तथा यह प्रकार जो इस तबित के बाव से इसके सम्बन्ध में होता रहा है, है। मोटे तौर से महात्माजी विक्टोरिया की लोकप्रियता उस समय से प्रारम्भ होती है, जब कि वे भारत की साम्राज्यी घोषित हुईं। इसका अर्थ यह हुआ कि यह लोकप्रियता विविध जनता में एक साम्राज्यिक भावना के उदय के साथ सम्बन्धित है। जैसे ही प्रभावित सिद्ध हुये हैं। राजतंत्र-सोमीतियनों और जननिवेष्टों की स्वामिमकित का केन्द्र बिन्दु रहा है। अपने राजमकित की एक ऐसी एकता कायम करती है जो किसी निश्चित राष्ट्रपति का व्यक्तित्व कदापि नहीं कर सकता था। मैं उस जसाचारण प्रकार के सम्बन्ध में कुछ नहीं कहना चाहता जो इस उद्देश को लेकर किया गया है। समानोहो बेतार के तार प्रसारण साहित्य और समाचार पत्र—सम्बन्ध संभावना को इसमें प्रयुक्त किया गया है। राजनीतिक दलों में जाहे कितन भी मतभेद हो लेकिन इस प्रसंग पर वे भी एकमत हैं कि साम्राज्य की एकता को बनाए रखने में राजमुकुट एक अनिवार्य तत्व है। यह पहलू अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा है। विविध साम्राज्यवाद में अपने उद्देश्यों को सिद्ध करने के लिए राजमुकुट की प्रतिष्ठा को जान बूझ कर बढ़ाया है।

देश की साम्यन्तरिक राजनीति में भी वही प्रवृत्ति दिखाई देती है। विक्टोरिया के शासन-काल के सम्बन्ध में कोई व्यक्ति यह नहीं कह सकता कि आवास के प्रसंग को छोड़ कर महात्माजी ने जनता की नज़ाई करने वाले अन्य किन्हीं कार्यों में गम्भीर रुचि प्रकट की हो। विदेशी मामलों साम्राज्य जैसे तथा प्रतिरक्षा बलों की सम-स्पर्धे का विषय ही ऐसे वे तबितों में से सबसे अधिक गति मेली थी। एडवर्ड सत्रम् के शासन-काल में कुछ महत्वपूर्ण और जोरों पकम् के शासन-काल में विविध परि-वर्तन हुआ। यह ठीक है कि इसके लिए कुछ सीमा तक युव का बरता हुआ मनो-बैज्ञानिक वातावरण भी उत्तरदायी है। लेकिन यदि कोई व्यक्ति सम्राट् की हम युव की कमिश्नरियों को देख और उनकी विक्टोरिया-युग की कमिश्नरियों से तुलना करे, मेरे विचार से यह बहुत समझ लेना कि इस जाल का जान-बूझकर प्रयास और प्रकार किया गया है कि राजवंश को उन कार्यों के साथ सम्बन्धित रक्ता जाने जिन पर कि अधिक बर्ष के स्वार्थों का केन्द्रित होना आवश्यकता है। कोई राजपुत्र आवास का विरोध है तो कोई औद्योगिक वर्गमान की ओर अपना ध्यान लगाता है। रहने का नार यह है कि राजपरिवार विविधताओं का लक्ष्यो कुछ जानियों के आवास विरोधियों के पुनर्निर्माण का विषय समझाओ की ओर पर्याप्त ध्यान देता है। चूंकि राजपरिवार की प्रत्येक बात-बात का अधिक से अधिक प्रकार किया जाता है, जग जनता के ऊपर हमका जो प्रभाव पड़ता है वह विक्टोरिया-युग के प्रभाव से विस्तृत मात्र होता है। करने का सार यह है कि राजतंत्र को मोतर्तन के द्वारा उसके प्रतीक के रूप में देखा किया गया है और इस विषय के जगमत में इतनी और भी हर्षणित हुई है

कि विरोधकी दो-एक आवाजें सुनाई भी नहीं दी है। यह महत्त्वपूर्ण है कि धार्मिक संघ कंग्रेस का ईसाईक मुसलमान राजपरिवार के समीपारों तथा बिधों को अल्प किसी पत्र की अपेक्षा अधिक छापावा है।

इस सम्बन्ध में एक बात और ध्यान देने योग्य है। विक्टोरिया-युग मुख्य रूप से कलीन तथा वा युग का और उसमें एकमात्र बल ही सामाजिक प्रतिष्ठित पाने का साधन नहीं था। एडवर्ड अष्टम के के निहासमारोहक क साध ही सामाजिक मामलों में कुलीनपन क स्वात पर बलवत्त की दृष्टी बोलने लयी। पीयरी की संस्था में बुद्धि कुलीनपन का व्यापारिक बर्ष और विद्यीय बर्ष के साध यत्नवत्त राजनीतिक बली का नेतृत्व अधिनाधिक पौर-अभिजात बर्ष के इच्छों में पहुँचना—इन सब तत्त्वों ने राजपरिवार की सामाजिक प्रतिष्ठा में अशुभपुन बुद्धि की है। उनका संरक्षण पाने का मातोरक प्रयास क्रिया जाने लया है और इसमें गरीबकारामक कावों के क्षेत्र में उच्छका प्रभाव असाधारण रूप से बढ़ गया है। इस क्षेत्र में राजपरिवार उच्छ का ऐसा प्रतीक बन गया है जिसका कि बहु पचास बर्ष या ठीस बर्ष पूर्व नहीं था। जब बहु सार्वजनिक समारोहों में भी महारानी विक्टोरिया अथवा एडवर्ड अष्टम के समान विलय नहीं रहता। इसका फल यह हुआ है कि जब लोग राजसिंहासन के साथ पहुँच की अपेक्षा अधिक वैयक्तिक सम्पर्क अनुभव करने लगे हैं। मर पीडी में राजमुकुट ने सम्मान के सरल के रूप में पहुँचे की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता और छत्तरता का परिचय दिया है। इससे इसके लोकतंत्रीकरण का मान होता है जो जनता पर सुदूरभ्यापी प्रभाव डालता है। महारानी विक्टोरिया ने जॉन ब्राइट को इस आचार पर विधी कीर्तितरुपिप अस्वीकार कर दी थी क्योंकि उन्हें उनकी ऐसी किसी सार्वजनिक सेवा का ज्ञान नहीं था जो उन्हें इतने बड़े सम्मान का अधिकारी सिद्ध करता। महारानी विक्टोरिया के पीन ने उनकी हीरक जयन्ती के अवसर पर ट्रेड्स युनियन काँग्रेस के मन्त्री को प्रसन्नतापूर्वक "ग्राइडरुड" की उपाधि दी। राजसिंहासन की प्रतिष्ठित का सबसे बड़ा प्रभाव यह है कि मृतकाल की समस्त परम्पराओं के बावजूद पहुँची हो धार्मिक सरकारों के नेताओं की राजदरबार के समारोहों में कुलकर भाग लेने में कोई बठिनाई नहीं हुई। उन्होंने इन समारोहों में बिल प्रसन्नता से योग दिया इससे संभवतः उनके कुछ समर्पक बट्ट ही हुए होंगे।

विधी भी दृष्टि से देखा जाये राजतंत्र की प्रतिष्ठित है विलक्षण। सेविन ह्वै इसके सम्बन्ध में अतिशयोक्ति से साधपात रहना चाहिए। इस प्रतिष्ठित का अर्थ कारण यह है कि बहु राजनीतिक दृष्टि से कम-से-कम सामान्य जनता क लिए उच्छय रहा है। विक्टोरिया ने जब तक जनबाही करने की चेष्टा की थी लेकिन इसके अधियों ने इस सम्बन्ध में जीन ब्राए रूप कर विधि को समझक किया। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि राजतंत्र युद्ध में गिरलर मच्छक ड्रोंग रहा है। महारातीय देशों के अनुभव से यह ज्ञान होता है कि युद्ध में पराजित होने पर कोई राजतंत्र अधिक समय तक नहीं टिक सकता यह भी महत्त्वपूर्ण है कि उसके राजनीतिक दृष्ट्या के सम्मानन ने कबे ऐसी किसी संकटावन स्थिति में बड़ा नहीं किया है जिसमें कि उसके नार्थ की

ईशानिकता के सम्बन्ध में विरोधी एक प्रबन्धकार चार-विचार करें। यदि किसी व्यक्ति ने १९१८ के सिंहासन-स्थापन के सप्ताह में यह निरीक्षण किया हो कि राष्ट्र "जैवे मिजर्ल" और "राउंडहेड्डेड" के बीच में किस प्रकार विभक्त हो गया था वह यह समझ लेना कि राजभङ्ग की प्रतिष्ठित गण्यता की उच्च प्रभृति का परिणाम मात्र है जो जॉर्ज के परवर्ती युग की स्थिति परम्परा है। यदि यह विचार पुनः प्रारम्भ हुआ तो यह निरीक्षण है कि राजर्तव की सत्ता को चोट पहुँचिगी।

महर्षी स्वतन्त्र है कि राजसिंहासन के लोकप्रतिष्ठक सम्पर्क केवल सतही हैं और उनसे अधिक काम नहीं निकलता। नीति-मंडल को छोड़कर सम्राट के समस्त परामर्शदाता बनिवर्ग से सम्बन्ध रखते हैं। उनके निकट के समस्त सामाजिक सम्पर्क भी इसी प्रकार के हैं। उन लोगों के अतिरिक्त जिनके सम्बन्ध में सम्राट को अपने पर के कारण निकटतम ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है, बीच में सभी क्षेत्रों के सम्बन्ध में सम्राट का ज्ञान बीच और दूरस्थ होता है। अमेरिका में राष्ट्रपति को जीवन के विविध क्षेत्रों का अनुभव होता है और वे विभिन्न परिस्थितियों के व्यक्तियों के सामाजिक सम्पर्क में आते हैं। ब्रिटिश सम्राट के साथ यह बात नहीं है। उसे अपने कार्य की किसी उपबन्धन सीटि में शिक्षा नहीं मिलनी। उसे सामान्य शिक्षा मिलनी है। राजपरिवार के सदस्यों का अपने बचपन में ही बड़े हृदय वातावरण में पालन होता है। उनके लिए एक प्रकार के शारीरिक व्यक्तित्व का निर्माण कर दिया जाता है तथा उनके लिए प्रसन्न बचपन एक अत्यन्त दुस्तर कार्य है। वे निरन्तर चाटुकारिता और झूठी प्रसन्नता के वातावरण में रहते हैं। उनके सामान्यतम बचपन को ज्ञान की परकाष्ठ्य बनाया जाता है। यदि कोई व्यक्ति सार्ब एयर की आयतियाँ पड़े तो उसे इस बात पर बड़ा आश्चर्य होता कि उसकी ही पोषणा वाला व्यक्ति किस प्रकार जालीम क्यों तक ऐसी विभक्त बचपन में रह सकता था। यह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि जॉर्ज तृतीय के परधान से सिंहासन का प्रत्येक अधिकारी अपने व्यक्तिगत मर्तो में साम्राज्यवादी और अनुहार रहा है। लेकिन उसके वातावरण को देखते हुए और कुछ माया करना भी तो नशाभव है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि सर्वोच्च राजर्तव की व्यवस्था को अब तक इंग्लैंड में अपूर्व सफलता प्राप्त हुई है। युग की परिवर्तनशील परिस्थितियों के बीच में उसने बड़ी बुद्धिमत्ता से अपना पक्ष प्रकट किया है। उसकी बुद्धिमत्ता का कारण यह है कि उसने सत्ता का प्रभाव से विनियम कर लिया है। नीति विषयक भूला वा दोष मर्तियों के विरुद्ध है जिन्हें पन-स्थापन के द्वारा बंध चुकना पड़ता है। हमारे संविधान के शायद में एक ऐसा सक्रिय सम्राट जिसके मन शारीरिक शिक्षा के विरुद्ध हों अविचार्य है। इस व्यवस्था का सफलता का एक प्रमुख कारण यह है कि आचारभूत महत्त्व के कारणों में राजनीतिक एक एकमत रहे हैं। यदि वह पक्षान्तकों के किसी बड़े संघट के समय कोई राजनीतिक एक अपने प्रतिद्वंद्वी के विरुद्ध में जान-बूझकर राजभङ्ग का आग्रह लेता, तो उस स्थिति में क्या होगा इसकी कल्पना तक बर्धित है। वैसे कि हम देखेंगे ऐसे अवसर आए हैं जब कि हम इस

स्थिति के निकट तक पहुँच गए हैं। १९१०-११ में लॉर्ड-सभा के ऊपर, १९१३-१४ में बस्टर के ऊपर और १९११ में भी (यद्यपि इस सम्बन्ध में हमें कोई निश्चित ज्ञान नहीं है)। यह हर्ष की बात है कि अब तक राजकीय सत्ता से अंतिम रूप से कोई अपील नहीं की गई है। संघटन में दो विरोधी हिस्सों के बीच संघ का सा कार्य करने की कोशिस नहीं की है। उनकी कोशिस तो तो यही रही है कि इन हिस्सों के पारस्परिक विरोध को शांत किया जाये। यदि किसी व्यक्ति ने प्रवेशों का अध्ययन किया है तो वह इस बात को अस्वीकार न कर सकेगा कि संघटन के प्रभाव की बुद्धि का वास्तविक स्रोत यही है। हमारे देश के संसदीय शोचन में एक "वेष्टमन्त संघटन" का चाहे उसके विचार कैसे भी हों निर्वाह नहीं हो सकता।

(२)

संघटन को अपने मंत्रियों के परामर्श पर आश्रय करना चाहिए यह हमारे राजतन्त्रात्मक व्यवस्था का केन्द्रबिन्दु है। लेकिन यह एक ऐसा सिद्धान्त है, जिससे कई विरोधी निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। क्या इसका अभिप्राय यह है जैसा कि बैंगहॉट का मन था कि इसकी सत्ता "परामर्श प्रोत्साहन और वेतावनी" तक सीमित है? क्या वह किसी विचार के लिए अपनी बात कह सकता है; और इसके बाद उसे जो भी परामर्श दिया जाये वह मानने के लिए बाध्य है? क्या उसके लिए ऐसा कुछ परमाधिकार संरक्षित है जिसका वह अपनी इच्छानुसार प्रयोग कर सकता है? यदि हाँ तो इसकी क्या सीमाएँ होंगी और उन्हें कौन निश्चित करेगा? क्या वह मंत्रियों को अपरहस्य कर सकता है? क्या वह विफल अस्वीकार कर सकता है? क्या संघटन के दोनों सदस्यों द्वारा पास किए गए किसी विधेयक पर वह अपने निवेदाधिकार का प्रयोग कर सकता है? क्या संविधान के सामान्य संचालन तथा एक संकटवाली स्थिति में कुछ अन्तर है जिससे कि आवश्यकता पड़ने पर संघटन "संविधान के संरक्षक" के रूप में कार्य कर सके? प्रो. कीब के विचार से ऐसा हो सकता है और वे इसे संघटन के कार्यों का केन्द्रबिन्दु मानते हैं। यदि यह विचार सही है, तो हम संविधान के "सामान्य संचालन की कड़े व्याख्या कर सकते हैं? संघटन की व्याख्या कौन करेगा? इन प्रश्नों की रचना ही यह प्रकट करती है कि हमारे संविधान की बुनियादों में राजतंत्र का विधान बहुत स्थान है। हम इन प्रश्नों का केवल उत्तर देने तथा प्राप्त शासन के आधार पर अपने उत्तरों के महसूस करने की चेष्टा कर सकते हैं।

एक बात आदि से ही निश्चित है। बैंगहॉट ने सत्तर वर्ष पूर्व बिस्डोरिया के राजतंत्र का जो विश्व खोजा था वह महारानी बिस्डोरिया की पत्रावली (Letters of Queen Victoria) के सम्बन्ध अधिक विश्वसनीय नहीं है। बैंगहॉट के विचार से वे अपने मंत्रियों के द्वारा ही एक निष्क्रिय उपकरण मात्र थी जबकि सचार्ड यह है कि वे शासन के संचालन में एक सक्रिय और हठी अभिनेता थी। यह सही है और यह महत्वपूर्ण है कि उन्होंने न तो कभी विफल अस्वीकार किया और न कभी किसी विधेयक पर निवेदाधिकार का ही प्रयोग किया। लेकिन वे अपने मंत्रियों के चुनाव में महत्वपूर्ण भाग लेनी थीं कुछ को नियुक्त करती थीं तथा कुछ को नियुक्ति से

सेती थी। उन्हें बरेकू तथा बिरेय नीति के निमी भी पहलू पर अपने विचार व्यक्त करने कोई कठिनाई न हुनी थी। वे अपने कुतूहल से अपने मंत्रियों के जीवन को विठना मार बना देती थीं यह भी व्हील्टन के पत्र-व्यवहार से बम्भी तरह प्रकट हो जाता है। महारानी विक्टोरिया ने १८७४ के पत्राचार व्हील्टन के विरुद्ध लगातार पर्यन्त किया था और डिब्रेकी सैम्पबरी तथा मॉर्डे बूल्के को लिखे गए उनके पत्र यह स्पष्ट कर देते हैं कि उन्होंने अपनी वैवाहिक स्थिति की प्रारम्भिक भिन्नताओं का उल्लेख करने तक में कोई संकोच नहीं किया था। वे वर्षों की नियुक्तियों में निम्नर हस्तक्षेप करती थी। इसका कारण कुछ ही जनते अपने बदतर विचार से और कुछ उनका उन व्यक्तिगत वैवाहिक परामर्शदाताओं की मंजुरी थी जिन्होंने उन्होंने स्वयं जमा था। बिरेयी मामलों पर उनके अपने विचार से और वे नीति क कठिन प्रयोगों को मजि मंजूर की पीठ के पीछे निबटाने की चेष्टा करती थीं। वे मंत्रियों की व्यक्तिगत तथा जो जानकी सेप्टा करनी थी जिसमें कि मंत्रि-मंडल के एक वर्ग को दूसरे वर्ग के विरुद्ध किया जा सके। इसमें उन्हें बहुधा सफलता भी मिल जाती थी। वे सेना-मुखार के मार्ग में अन्तर्गत बाधा थी। उनके वासन-नाम के दो व्यक्तिम अभिनिन्दन—“राज्य टाइटिल्स एक्ट (Royal Titles Act) और “पब्लिक बशिप रेगुलेशन एक्ट” (Public Worship Regulation Act) जो सर्वम कम महत्त्व हुए वे उनकी व्यक्तिगत उत्प्रेरणा का परिणाम थे। सना तथा जहाजी बड़े दोनों के संशय के लिए वे ही उत्तरदायी हैं। वे अपने मंत्रियों पर यह नियंत्रण रखने की चेष्टा करती थी कि उन्हें भावनों में क्या कहना चाहिए और जब यहाँ उनकी इच्छानुसार भारत नहीं देते थे, तब वे उनकी मर्त्यना करती थीं। उन्होंने पोम्बेन और फोर्स्टर पर इस बात के लिए इबाद डाला कि वे निबरक मुक्तिपनिष्ठ बल के निर्माण में सहायता दें। वीरहॉल ने तिन समारणों की जर्ना की है, जो “राजकीय प्रभाव के विस्तार पर सहमत” से और जो इस मित्राण्य का समर्थन करत थे कि राजमुकुट विना प्रतीय होना है उसका अधिक श्राय करना है उनके पास उन विचार का समर्थन करने के लिए पर्याप्त सामग्री है जिसे वीरहॉल का विरुद्ध मंडित करना चाहता था।

महारानी विक्टोरिया का जो पत्र-व्यवहार प्रकाशित हो गया है उनमें हम उनके विन-वक्ति-विन के कार्यगत स्वरूप को देख सकते हैं। एडवर्ड संसद् के सम्मुख में हमारा पाठ ऐसे प्रलेख नहीं है। यह महत्त्वपूर्ण है कि कोई पदार्थ ने जिन्होंने कथन कोई बोधोय ही जांच तकते थे विक्टोरिया की मुद्रना में उनके प्रभाव के बारे में लिखा कि वह उनसे अधिक था और अधिक स्पष्ट रूप से माध्य था। हमारा पास जो सामग्री है वह भी इसी विधा की ओर संकेत करती है। वे नियुक्तियों को प्रभावित करने में परिश्रमायी थे। सेना और नौ सेना के मुखार के जटिल मामलों में वे एक निरन्तर तत्त्व थे। भारतीय वाहन के सम्मुख में उन्होंने मंत्रि-मंडल पर अपने विचारों का

१ पृष्ठ, जर्नल एंड लेटर्स, iii, पृ १०० लॉर्ड मोनीठ को लिखा गया पत्र
 सितम्बर २ १९५१

बहुत बवान बाबा । वे लॉर्ड एयर के द्वारा १९५ की उदारवादी सरकार के विरोधी दल के नेताओं के सम्पर्क में थे और लॉर्ड रॉबर्ट्स जैसे उन व्यक्तियों के सम्पर्क में भी थे जो उनकी नीति के कुछ बंशों की तीव्र आलोचना करते थे । यह स्पष्ट है कि जब एस्किन के धीरे-हाथेन ने इस उद्देश्य से अपने एक गुट का निर्माण कर लिया था कि वे उस समय तक जब को प्रह्वन नहीं करेंगे जब तक कि सर ईनरी कैम्बेरेक-वीनरनेन लॉर्ड-सभा में न बने जायें और जब उन्हें इसमें सफलता नहीं मिली थी तब उन्होंने सम्राट् एडवर्ड द्वारा अपने नेता पर बवान डलबाने का प्रयास किया था । उदारदल के शासन-काल में सम्राट् को संसदी नीति के सम्बन्ध में विरोधी दल के नेताओं के व्यक्तिगत विचारों से गुप्त रूप से अवगत रखा जाता है । वे सर जर्नेस्ट कैसेक जैसे व्यक्तियों के द्वारा अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रोपनीय रिपोर्ट पाते रहते हैं । वे लॉर्ड एयर के माध्यम से मंत्रिमंडल के अंदर फूट की बातें सुनते हैं । वे भी लॉर्ड जार्ज की अपना आतिथ्य न देकर उनके भावनों के प्रति विरक्ति प्रकट करते हैं । वह अन्य मंत्रियों की तुलना में उनके साथ किया गया ऐसा व्यवहार है जिस पर भाषाओं की दृष्टि बड़ी तेजी से आकर ठहरी है । वे जर्मन सम्राट् को एक अत्यन्त कठोर पत्र लिखना चाहते हैं और उन्हें इस कार्य से बड़ी कठिनाई से विरत किया जाता है ।^१ जब उन्हें विश्वास हो जाता है कि यदि मंत्रियों ने त्यागपत्र दे दिया तो भी वेस्टमिंस्टर पर सम्बन्ध लगे वे यह निश्चय करते हैं कि १९९ के बजट को पास करने के लिए पीयर बनाने को महमत नहीं होंगे । १९१ के साधारण निर्वाचन के पश्चात् इसी विधिपर ब्रह्म पर सरकार को बहुमत मिला था ।^२ वे लॉर्ड एयर से लॉर्ड मॉर्ले को लॉर्ड-सभा के प्रश्न पर उनके सेव साधियों से विरम करने की चेष्टा करते हैं । लॉर्ड एयर ने लॉर्ड मॉर्ले से कहा 'वह राजनीति में लॉर्ड मॉर्ले के लम्बे प्रशिक्षण और अनुभव का सौचनीय परिणाम होगा यदि उन्होंने एक ऐसी नीति का समर्थन किया जो राजमुकुट के सिंगल बतरी की और संसदीय अष्टाचार की है ।'^३ वे आतिथ्य लॉर्ड कैटरबरी को विरोधी दल के साथ बातचीत करने के एक माध्यम के रूप में प्रवृत्त करते हैं और भी वेस्टमिंस्टर से आश्वासन पाते हैं कि 'यदि बीमान ने मंत्र का विघटन करने के सम्बन्ध में अपने वर्तमान मंत्रियों का परामर्श अस्वीकार कर दिया तो मैं बीमान की सहायता करूँगा ।'^४

यदि उस समय की बातें उसके अंदर यह सार्थक आचारित है सावधानी से परीक्षण किया जाये तो उससे कुछ बातें स्पष्ट हो जाती हैं । सम्राट् के कट्टर अनुदारवादी विचारों का स्पष्टता से ज्ञान ही जाता है । वे अतिशक्ति प्रतिक्रमा-नीति के पक्ष में हैं, वे

१ एयर सम्बन्धित पुस्तक ii, पृ २८९ ।

२ वही ii, पृ ४४२ जनवरी २५ १९१० का पत्र । यह पत्र सम्राट् से बातचीत करने के तुरन्त बाद ही लिखा गया है ।

३ वही ii, पृ ४५४-४५५ ।

४ वही ii, पृ ४५९ ।

जर्मनी के कट्टर विरोधी हूँ वे भागत-सचिव की परिषद् में लॉर्ड मॉर्ले को एक मारतीय सभ्य की नियुक्ति से विरक्त करने की प्रस्ताव केपटा करते हैं वे श्री लॉर्ड मॉर्ले के उस भाषणों को पसंद नहीं करते। वे एक ठेका और जल सेना की समस्त महत्त्वपूर्ण नियुक्तियों में हस्तक्षेप करते हैं। यद्यपि उपचारिक हृष्टि से वे अपने मंत्रियों की सहमति के बिना कान् मी मन्त्रणा स्वीकार नहीं करने केदिन वे अपने सम्पूर्ण सामन्त-काल में विरोधी रूप क गताली और उनके विचारों के साथ निरन्तर सम्पर्क बनाए रखने हैं। संसद् में विरोधी रूप के नेता क्या कहस उठाने वाल हूँ, इसका भी ज्ञान उन्हें पहले से ही हो जाता है। यदि मंत्रि-सभ्यस के कुछ सदस्यों के विचार उनके विचारों से गड़ी निकले तो वे लॉर्ड एयर क द्वारा उन पर व्यक्तिगत प्रभाव डक जाने की केपटा करते हैं। यह स्पष्ट ही है कि मंत्रि-सभ्यस बहुधा उनके भाषण को मान लेता है। इस विवेचन से यह स्पष्ट है कि सम्राट् का मंत्रिसभ्यस के ऊपर राष्ट्री नियन्त्रण रहता है। मंत्री उनके सम्मुख ऐसे प्रस्ताव उपस्थित नहीं करते जिन्हें स्वीकार करन में उन्हें कठिनाई हो। यदि वे सम्राट् के साथ विचार-विमर्श करन लगन हैं तो उन्हें सम्राट् की मुक्तियों में काफ़ी बचन मालूम पड़ने सता है। जब वे सम्राट् के सम्मुख कोई प्रस्ताव उपस्थित करते हैं तो वे इस बात का ध्यान रखने हैं कि वह प्रस्ताव चाहे ऐसा न हा जिसे कि वे विष्कल टीक समझे हों केदिन एसा अवश्य होना चाहिए त्रिमसे कि वे सम्राट् को सुगमता से उनके अनुकूल कर सकें। सम्राट् गिप्टाचार के पक्षे पावक हूँ। उनके पास ऐसी रिपोर्टें बराबर जाती रहती हूँ जिन्हें कि वे मंत्रियों के साथ विचार-विनिमय का आधार बनाते हैं। उनकी जप-जप सी बात को गम्भीरता से सुना जाता है और उस पर विचार किया जाता है। सम्राट् त्रिन सम्बन्धों को स्थापित करते हैं उनके सम्बन्ध में कोई व्यक्ति सुगमता का भाव नहीं रखता। लॉर्ड एयर जैसे कृतापात्र ठक सम्राट् के सम्मुख बखरलसी सताली के दरबारी जैसा व्यवहार करते हैं जिसे इस बात का निरन्तर मय बना रहना है कि नहीं भीमान् मुझे स्पष्ट न हो जायें। यदि हूँ उनक सामन्तकाल का भी एसा ही पद-व्यवहार उपलब्ध हो जाये जैसा कि महापनी विन्नेरिया के सामन्त-काल का हा गया है तो सम्भव है कि उनके सम्बन्ध में हमारा यह विचार बरस जाये। केदिन सब ठक ओ मास्य हपारे सम्मुख बापा है उससे यह बात मही होता कि एडवर्ड मन्त्रम् बनने मंत्रियों के हाथों में एक निष्क्रिय उपकरण मात्र बे। उन्होंने महापनी विन्नेरिया की तरह अपनी वैधानिक मर्यादाओं का कमी उल्लंघन नहीं किया। केदिन इस सम्बन्ध में कोई संदेह नहीं है कि जनता प्रभाव त्रिम पक्ष की ओर रहना वा।

निर्मलता, लॉर्ड पंचम के सामन्त-काल के सम्बन्ध में हवाय ज्ञान उनके पूर्ववर्ती की अपेक्षा भी कम है। यह निश्चय है कि कुछ बदलावों को छोड़कर उनके सामन्त काल से सम्बन्धित बावदयक प्रबन्ध वर्तमान पीढी के जीवन-काल में प्रकाशित न हो सकेंगे। केदिन उनके सामन्त की कुछ समस्याएँ ऐसी बरस्य हूँ त्रिमके ऊपर पड़ने से उपलब्ध पीढियों और संस्मरणों ने यत्किचित् प्रकाश डाल दिया है। वे लॉर्ड-समा क संघट के समय सिंहासन पर बाक्य हुए थे। यह संभव है कि १९१ का बूझपा

विद्यमान उनकी इस नीति का परिणाम था कि वे इस बात का प्रमाण पाए बिना कि देश विविधत सरकार के साथ ही संसदीय अधिनियम की अस्वीकृति को रोकने के लिए गए पीयर बनाने को तय्यार नहीं हुए। १९११-१४ के घस्टर संकट के प्रसंग पर उनके सम्बन्ध में कुछ एसी घम्भीर समस्याएँ हैं जिनकी व्याख्या नहीं हो सकी है। यह संभव मान्यता है कि वे राजद्रोहारमक कार्यवाहियों के लिए घर पढ़ाई कासल की संभव विरफ्तारी के प्रसंग पर अनुदारवादी नेताओं के साथ सम्पर्क बनाए हुए थे और घर आस्टिन कैम्बरलेन की आपत्तियों से घात होता है कि १९१४ के कुर्रय विद्रोह के सम्बन्ध में उनके विचारों को प्रकट करने के लिए फरम उठाए गए थे।^१ इस बाद-विवाद में ही सेना के अधिकारियों ने यह विचार विकसित किया था कि वे सत्ताकङ्क सरकार के प्रति नहीं प्रत्युत मन्नाद् के प्रति व्यक्तिगत रूप से निष्ठावान् हैं। इस विचार के नागरिक धरित के लिए कितने घम्भीर परिणाम हो सकते हैं यह स्पष्ट है। इस बाद-विवाद में ही अनुदारक के एक प्रमुख नेता सॉर्ड मिस्तर ने कहा था 'यदि कुछ अधिकारियों ने त्यागपत्र दे दिया तो अनुदारक के सत्ताकङ्क होने पर उन्हें पुनः अपने पक्ष पर प्रतिष्ठित किया जायेगा।'^२ इन घम्भीर परिणामों के सम्बन्ध में मन्नाद् के क्या विचार थे इस सम्बन्ध में हमें बहुत कम ज्ञान है। हमें केवल इतना ही ज्ञात है कि उन्हें 'मिनिमिस्ट' दल की स्थिति का ज्ञान हो गया था और हम यह मान सकते हैं कि उन्होंने सरकार के ऊपर इसके परिणामों को अच्छी तरह प्रकट कर दिया था।

१९११ के संकट के ऊपर बहुत कम प्रकाश है और इसकी प्रगति के समय मन्नाद् की गतिविधि के सम्बन्ध में इतने विचार मेव है कि इस विषय पर निरन्तरपूर्वक कोई राय व्यक्त नहीं की जा सकती। लेकिन कुछ बातें स्पष्ट मान्यता पड़ती हैं। संयुक्त सरकार का विचार मन्नाद् के मन में उसक जन्म के कई महीने पूर्व से विद्यमान था और श्री रैमसे मैकडॉनल्ड को इस विचार के अनुभूत समझा जाता था। श्री मैक डानल्ड ने मार्च १९११ में अपने साक्षियों को यह संकेत दिया था कि उनका विचार सरकार का वास्तविकी दग से पुनर्गठन करने का है। यह निश्चित है कि उन्होंने इस पुनर्गठन का स्वयं अपने उन साक्षियों में से किसी को नहीं बताया था जो १९११ में उनसे जल्ला हो गए थे। वह भी निश्चित है कि जब वे अधिक सरकार के नेता के माने त्यागपत्र देने के लिए अधिकतम राजप्रासाद गए थे उनमें किसी को यह कल्पना नहीं थी कि वे मुरन्ड ही राष्ट्रीय सरकार के गठन के रूप में वापिस लौट जायेंगे और अनुदार दल तथा उदार दल के नेता उनकी प्रबोधिता में कार्य करेंगे। यह नहीं मान्य कि इन घमना में उनका व्यवहार अपनी मन्नाद् को ही नहीं संभवा का था मन्नाद् द्वारा उनको दिए गए सुझाव का परिणाम था। लेकिन उनका दल के अल्पमत को रोकने हुए पहला विचार अर्धमव मान्यता पड़ता है। यह सर्वत स्वीकृत तथ्य मान्यता पड़ता है कि मन्नाद्

१ पॉलिटिक्स ऑफ विर इन।

२ इंग्लैंड और घर हेनरी विस्सन १९२।

ने श्री मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्रित्व के सम्बन्ध में श्री बैस्वकिन और सर हर्बर्ट मैमब्रक की स्वीकृति प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भूमि लिया था। यह स्मर्यव्य है कि सम्राट् ने राष्ट्रीय सरकार के निर्माण के सम्बन्ध में अधिक दृढ़ के उन अधिकारी समर्थकों का मत प्राप्त करने की कोई चेष्टा नहीं की थी जिन्होंने श्री मैकडॉनल्ड के स्वागत पर श्री मार्शल हैडरसन का नेतृत्व स्वीकार कर लिया था। यह निश्चित मामुम पड़ता है कि नए प्रशासन के विद्योय स्वरूप की प्रेरणा पूर्णतः सम्राट् के पाम से आई थी। डॉन पंचम् ने श्री मैकडॉनल्ड को इसी प्रकार व्यक्तिगत रूप में चुना था जिस प्रकार डॉन तुनीय ने डॉन ड्यु को। वही एकमात्र ऐसे आधुनिक प्रधान मंत्री हैं जिन्हें अपन सामन-बाक में एक का कोई समर्थन नहीं मिला था। वे ही केवल नाम का ही प्रधान-मंत्री थे उनको धर्मन और समर्थन देने का कार्य श्री बैस्वकिन ने किया था। हमें इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सम्राट् ने जा कुछ भी किया वह बेच मरिच के विचार से किया। लेकिन चूंकि यह बात सबको माकुम है कि अधिक सरकार के विद्यन की पूर्व राग एक काम चारवा यह थी कि श्री बैस्वकिन प्रधान मंत्री होंगे अतः मेरे विचार से श्री रैमजे मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्री के रूप में अवतरण को प्रमात्-क्रांति (Palace Revolution) कहना अनुचित नहीं है। यह उर्क किया जाता है कि सम्राट् का कार्य दो कारणों से वैधानिक था।^१ "सम्राट् को तो केवल इस बात की चिन्ता थी कि देश को सम्पूर्ण आधिक संकट से किस प्रकार बचाया जाये। बंक बाण्ड इंग्लैंड से धन का निवास संकट की सम्पीरता का एक प्रमाण था। यदि प्रधान मंत्री यह समझते कि वे मंत्रिमंडल पर नियंत्रण नहीं रख सकते तो वे त्यागपत्र दे सकते थे और सम्राट् उसे स्वीकार कर श्री बैस्वकिन को प्रधानमंत्री बना सकते थे। लेकिन इन कार्यवाही में संकट की बड़ी में बड़ी हानि होगी। नए प्रधानमंत्री को कॉलेज समा में नदर विरोध का सामना करना पड़ता और वह विद्यन की मांग के लिए विद्य हो सगता था। लेकिन राष्ट्रीय सरकार के निर्माण की स्थिति में विद्यन की अनिश्चित काक एक टाका जा सगता था क्योंकि वह मानने का कोई कारण नहीं है कि जस्वी विद्यन का कोई विचार था। उस समय यह मानना बहुत लुगम था कि अधिक दृढ़ देश के अधिक मठ बाठाओं का वास्तविक प्रतिनिधि नहीं है और आवश्यकता पडन पर राष्ट्रीय सरकार बहुत से अधिक मठबाठाओं से जलीक कर मन्ती है। यह उच्च स्वीकार करना कठिन था होता कि तीन अधिक नेता केवल मोड़े से अधिक मठबाठाओं का ही प्रतिनिधित्व करने थे। इन परिस्थितियों में यह अपरिहार्य था कि सम्राट् को एक सहायी मंत्रिमंडल आदर्श दिखाई दिया किन्तुपकर उस समय जबकि इन मंत्रिमंडल को चरारबादिया तथा अनुपार बादियों दोनों का समर्थन प्राप्त था और वह इंग्लैंड को उत्कर्ष के पथ पर लान का मुखबर होता था।^२ सम्राट् के कार्य के समर्थनमें प्रोडोखर कीय का यह पत्रका उर्क है।^३

१ कीय दि क्रिय एंड दि इम्पीरियल काउग पृ १३६।

२ सर्वप्रथम मैकडॉनल्ड स्नोडेन और पॉमस।

३ उपर्युक्त पुस्तक पृ १३६।

विद्यमान उनकी इस नीति का परिणाम था कि वे इस बात का प्रमाण पाए बिना कि देश निश्चित सरकार के साथ है संसदीय अधिनियम की बरनीकृति को रोकने के लिए मध्य पीयर बनाने को तय्यार नहीं हुए। १९११-१४ के घास्टर संकट के प्रसंग पर उनके सम्बन्ध में कुछ ऐसी यम्मीर समस्वार्यें हैं जिनकी व्याख्या नहीं हो सकी है। यह संभव मामूम पड़ता है कि वे राजशाहात्मक शर्यतवाहियों के लिए सर एडवर्ड कार्तन की संभव गिरफ्तारी के प्रसंग पर अनुभारवादी नेताओं के साथ सम्पर्क बनाए हुए थे और सर आस्टिन कैम्बरलेन की शायरियों से जात होता है कि १९१४ के कुर्रव बिरोह के सम्बन्ध में उनके विचारों को प्रकट करने लिए क्रम उठाए गए थे।^१ इस बार-बिबाद में ही सेना के अधिकारियों ने यह विचार विकसित किया था कि वे सत्तावह सरकार के प्रति नहीं प्रत्युत गभ्राद् के प्रति व्यक्तिगत रूप से निष्ठावान् हैं। इस विचार के नागरिक धर्मित के लिए कितने गम्भीर परिणाम हो सकते हैं यह स्पष्ट है। इस बार-बिबाद में ही अनुभारवक के एक प्रमुख नेता लॉर्ड मिडलर ने कहा था "यदि कुछ अधिकारियों ने त्यागपत्र दे दिया तो अनुभारवक के सत्तावह होने पर उन्हें पुनः अपने पक्ष पर प्रतिष्ठित किया जायेगा।"^२ इन यम्मीर बटमाओ के सम्बन्ध में गभ्राद् के क्या विचार थे इस सम्बन्ध में हमें बहुत कम ज्ञान है। हमें केवल इतना ही ज्ञान है कि उन्हें युनियनिस्ट्स दल की स्थिति का ज्ञान हो गया था और हम यह मान सकते हैं कि उन्होंने सरकार से ऊपर इसके परिणामों को सम्झी तरह प्रकट का दिया था।

१९११ के संकट के ऊपर बहुत कम प्रलेख हैं और इसकी प्रगति के समय गभ्राद् की यतिधियि के सम्बन्ध में इतने विचार भेद हैं कि इस विषय पर निरन्तरपूर्व कोई राम व्यक्त नहीं की जा सकती। लेकिन कुछ बातें स्पष्ट मामूम पड़ती हैं। एडवर्ड सरकार का विचार गभ्राद् के मन में उसके जन्म के कई महीने पूर्व से विद्यमान था और श्री रैमजे मैकडोमैरड को इस विचार के अनुभूत समझा जाता था। श्री मैक डोमैरड ने मार्च १९११ में अपने छात्रियों को यह संकेत दिया था कि उनका विचार सरकार का अतिशारी बंग से पुनर्गठन करने का है। यह निश्चित है कि उन्होंने इस पुनर्गठन का स्वक्य अपने उन छात्रियों में से किसी को नहीं बताया था जो १९११ में उनसे सम्म ही गए थे। यह भी निश्चित है कि जब वे अगिक सरकार के नेता के नाते त्यागपत्र देने के लिए बकिंजम राजमासाह गए थे उनमें किसी को यह कल्पना नहीं थी कि वे मुख्य ही राष्ट्रीय सरकार के नेता के रूप में वापिस लौट आयेँगे और अनुभार दल तथा उदार दल के नेता उनकी प्रबोधता में कार्य करेंगे। यह नहीं मामूम कि इस समय में उाका अवतरण बननी गभ्राद् को ही कई मंत्रवा का वा सम्मान प्राप्त होकर उनको दिए गए मुसाव का परिणाम था। सोफेन उनके दल के सम्मन को देखने हुए पहला विचार अर्धमव मामूम पड़ता है। यह सर्वत स्वीकृत तथ्य मामूम पड़ता है कि गभ्राद्

१ पॉलिटिक्स फ्री प्रिड इन।

२ शायरीज ऑफ सर हेनरी रिस्सल १९११।

ने श्री मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्रित्व के सम्बन्ध में श्री बीस्वडिन और सर हर्बर्ट मैथ्यूज की स्वीकृति प्राप्त करने में महत्त्वपूर्ण भाग लिया था। यह स्मर्य्य है कि सम्राट् ने राष्ट्रीय सरकार के निर्माण के सम्बन्ध में धार्मिक बल के उन अधिकारी समर्थकों का मत प्राप्त करने की कोई चेष्टा नहीं की थी जिन्होंने श्री मैकडॉनल्ड के स्वागत पर श्री मार्शल हेंडरसन का नेतृत्व स्वीकार कर लिया था। यह निश्चित मामूम पड़ता है कि नए प्रधान के विशेष स्वभाव की प्रेरणा पूर्वक सम्राट् के पास से कोई भी जॉर्ज पंचम ने श्री मैकडॉनल्ड को इसी प्रकार व्यक्तिगत रूप से चुना था जिस प्रकार जॉर्ज तृतीय ने कोई चुन ली। वही एकमात्र ऐसे आधुनिक प्रधान मंत्री हैं जिन्होंने अपने शासन-काल में एक ही कोई समर्थन नहीं मिला था। वे तो केवल नाम का ही प्रधान-मंत्री थे उनको एडविन और समर्थन देने का कार्य श्री बीस्वडिन ने किया था। हमें इनमें कोई संदेह नहीं है कि सम्राट् ने जो कुछ भी किया वह देश-हित के विचार से किया। लेकिन चूंकि यह बात सबको मामूम है कि धार्मिक सरकार के विघटन की पूर्व रात एक माम धारणा यह थी कि श्री बीस्वडिन प्रधान मंत्री होने से मेरे विचार से श्री रैमज् मैकडॉनल्ड के प्रधान-मंत्री के रूप में अवसर को प्रसार शक्ति (Palace Revolution) बहुत अनिश्चित नहीं है। यह ठीक किया जाता है कि सम्राट् का कार्य हो कारणों से धार्मिक था।^१ सम्राट् को तो केवल इस बात की चिन्ता थी कि देश को पम्भीर आधिक संकट से किस प्रकार बचाया जाये। एक आठ हाथों के बल का विकास संकट की सम्भारता का एक प्रमाण था। यदि प्रधान मंत्री यह समझते कि वे मंत्रिमंडल पर नियंत्रण नहीं रख सकते तो वे स्थापना दे सकते थे और सम्राट् उसे स्वीकार कर श्री बीस्वडिन को प्रधानमंत्री बना सकते थे। लेकिन इस कार्यवाही में संकट की बड़ी में बड़ी हाथि होनी। नए प्रधानमंत्री को कॉलेज तथा में नूटल विरोध का सामना करना पड़ता और वह विघटन की मांग के तिर्य विषय ही सचता था। लेकिन राष्ट्रीय सरकार के निर्माण की स्थिति में विघटन को अनिश्चित काल तक टाका जा सकता था क्योंकि वह मानने का कोई कारण नहीं है कि जल्दी विघटन का कोई विचार था। उस समय यह मानना बहुत सुभव था कि धार्मिक बल देश के धार्मिक मत धारणों का वास्तविक प्रतिनिधि नहीं है और आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रीय सरकार बहुत से धार्मिक मतधारणों से अलग कर सकती है। यह तथ्य स्वीकार करना कठिन रहा होगा कि तीन धार्मिक मतों के बल छोड़े से धार्मिक मतधारणों का ही प्रतिनिधित्व करने से। इन परिस्थितियों में यह अपरिहार्य था कि सम्राट् को एक सहाकारी मंत्रिमंडल तैयार किया विरोधकर उन समय जबकि इस मंत्रिमंडल को उदारवादिता तथा अनुदार वादियों दोनों का समर्थन प्राप्त था और वह ईश्वर को उत्कर्ष के पथ पर रखने का मुख्यकारण देना था।^२ सम्राट् के कार्य के समर्थनमें प्रोफेसर कोच का यह पत्रका ठीक है।^३

१ कोच दि किंग एंड दि इम्पीरियल काउंस पृ० १३६।

२ सर्वथी मैकडॉनल्ड स्मोरेन और वॉयस।

३ जर्नल पुस्तक पृ १३६।

यह ठरक कुछ बातों को छोड़ देता है और कुछ पर विशेष बल देता है। यह इस तथ्य को छोड़ देता कि श्री मैकडॉनल्ड ने जो बचम सठाया उस पर उन्होंने अपने मन्त्रिमंडल के सदस्यों से जान बूझकर विचार विमर्श नहीं किया था। यह तो उन्हें स्वयं मालूम ही रहा होगा कि उन्हें बचम समर्पण बहुत कम प्राप्त है क्योंकि अपनी सरकार के कृपितर मंत्रियों की एक बैठक में उन्होंने उनसे अपने साथ शामिल न होने की प्रार्थना की थी और उन्हें आश्वासन दिया था कि संयुक्त सरकार केवल कुछ समय के लिए ही है। श्री मैकडॉनल्ड ने संसदीय बल से भी कमी में नही की जिससे कि अमिड विचारधारा के ऊपर उनके प्रभाव का सम्पाद को बाल हो जाता। यह इस तथ्य को भी उपेक्षित कर देता है कि यदि श्री मैकडॉनल्ड का नई सरकार में ठिया जाना वांछनीय ही वा ठी उन्हें प्रधानमंत्री के स्थान पर अन्य किसी समता में भी ठिया जा सकता था जैसा कि जाये बरकर १९३५ की पुनर्गठित सरकार में किया गया था। यह इस तथ्य को भी छोड़ देता है कि वहाँ तक इस संकट के लिए अमिड सरकार ही उत्तरदायी थी इस उत्तरदायित्व का मुख्य अंश श्री मैकडॉनल्ड और श्री स्नोडेन के ऊपर ही पड़ता है। यह इस तथ्य को भी भूल जाता है कि अनुसार बल और उदार बलों को मिश्रकर समा का बहुमत प्राप्त था और वे अपने मुख्य आर्थिक अस्वाकों के पास होने तक एक दूसरे से अलग नहीं हुए। यह इस तथ्य की भी अवहेलना कर देता है कि अचरि सर हर्बर्ट समुद्रक सरकार में शामिल हो बण वे जगदी इस कार्यवाही की थी समुद्र बार्ज ने ठीक आलोचना की थी। प्रो कीप के विचार में सम्पाद का मुख्य उद्देश्य स्वर्ण-प्रमाण को बनाए रखने के लिए सरकार का निर्माण करना था। यही कारण है कि वे इस बात को छोड़ बाते है कि उसके निर्माण और संयुक्त सरकार बनाने के लिए श्री मैकडॉनल्ड की इच्छा के सम्मुख में जो पूर्वकारिण बलबाहें थी उनमें कोई संघर्ष है या नहीं। यह मानने का भी कोई कारण नहीं है कि यदि श्री बेल्बुडिन इस प्रकार की संयुक्त सरकार के प्रभाव होते तो उन्हें संघट के बीच में ही समा का विघटन करने के लिए विवध होना पड़ता। जब तक उदार बाबो उनका समर्पण करते रहते धनका बहुमत सवेहातीय था और यह मानने का भी कोई कारण नहीं है कि उदारबादी श्री मैकडॉनल्ड को नेता के रूप में अधिक पसंद करते थे।

यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की संयुक्त सरकार के सम्मुख में सम्पाद यह पक्ष से ही समझ सकते थे कि शाखागत निर्वाचनों में उसे ऐसा बहुमत प्राप्त हो जायेगा जो कि श्री बेल्बुडिन के लिए पाना कठिन होया। यदि किसी एक में पूरा पक्ष ही ठी साबा रण निर्वाचनों में उसे बड़ी हानि रहती है। लेकिन यह निश्चित एक भयानक मिश्राप्त है कि सम्पाद बलों के साम्प्रतिक घटना-बच के विषय में इठनी धिन्ता रखने के ठक नेता के लिए जिससे वे सरकार का निर्माण करने के लिए बहें बहुमत प्राप्त करने की चेष्टा करें। यह दृष्टिकोण प्राप्त देता ही है जैसे कि मन्त्रालयी विधेयिका ने कोई संघर्ष से यह जानने की प्रार्थना की थी कि क्या वे आम निर्वाचन के लिए तय्यार है। प्रो कीप के ठरक का बनिबावै निष्कर्ष यह है कि सम्पाद को मानने मनी-

मुक्त राजनीतिक गठबंधन के लिए बहुमत प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिए। यही बोर्न वृत्तीय की नीति है और इसका मूल्य यह है कि सम्राट् सत्त्व नहीं है प्रत्युत वे अपनी नीति माने बढ़ाने के लिए कार्यरत हैं। इस संदर्भ में यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि सम्राट् ने अमिक दण्ड के उस मास की जो प्रो० कीप के मतानुसार बापरी बढ़ा मास है—जिसने भी मैकडॉनल्ड का अनुगमन नहीं किया उस जानने की कोई चेष्टा नहीं की। अक्टूबर-संकट के समय उन्होंने विरोधी दल की उस जानने का प्रयास किया था और १९१४ का बकिंगहम प्रयास सम्मेलन उनकी इच्छा के कारण ही हुआ था कि बर्से भी हो समझीता हो जाये। १९३१ में उन्होंने अमिक दल के ऊपर अपने हृदय के मनोवैज्ञानिक प्रभाव के बारे में कोई ध्यान नहीं किया।

यहाँ प्रो० कीप का इसका ठक महत्वपूर्ण हो जाता है। उनका कहना है कि साधारण निर्वाचनों में राष्ट्रीय सरकार को सर्वत्र बहुमत मिला। इसमें यह निष्कर्ष निकला है कि सम्राट् कर्म का बाद में अधिष्ठित सिद्ध हो गया। लेकिन इसका अभिप्राय तो यह हो गया कि जब कोई सरकार लीबे राजमुकुट के गत्ताबन्धन में बनती है और बाद में उसे बहुमत मिल जाता है, तो उसके निर्वाचन सम्बन्ध में सम्राट् का कार्य वैधानिक हो जाता है। यह निश्चित एक मयातक सिद्धांत है। इसका मत यह हुआ कि जब सम्राट् यह समझे कि मंत्रियों के ऊपर जनता का विश्वास नहीं रहा तो वे उन्हें त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकते हैं और यदि नहीं सरकार को निर्वाचना में बहुमत मिल जाता है, तो समझा जाता है कि सम्राट् का कार्य वैधानिक था। १९१-१२ में लॉर्ड-सम्राट् प्रश्न पर सोलंक्य बहा हो गया था उसमें भी मन्थोर ने इसी स्थिति का ग्रहण किया था और जब अक्टूबर-संकट के समय सम्राट् को यह परामर्श दिया गया था कि वे "होम क्विट" पर अपनी स्वीकृति न दें तो उसमें भी यही प्रतिपाद था। ठक यह है कि सम्राट् अपने मंत्रियों के परामर्श से बहुमत नहीं है ताँ से उन्हें त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकते हैं तथा यदि नहीं सरकार का बहुमत मिल जाता है तो उनका यह कार्य वैधानिक समझा जायेगा।

लेकिन वह ठक इस प्रश्न पर कोई प्रकाश नहीं डालता कि यदि नए गठबंधन को कोई बहुमत नहीं मिला तो सम्राट् को क्या स्थिति होगी। यदि वे मंत्रियों को परामर्श करते हैं, तो इसका अभिप्राय यह है कि वे सटस्वता को ठिकानत देते हैं। अर्थात् इस से मंत्रियों के विपरीत को अस्वीकार करने और अपने विचारों को स्वीकार करने के लिए कहते हैं। इस दृष्टि से सम्राट् सन्धान की संरक्षित धर्म हो जाते हैं और इस प्रकार की धर्म का प्रयाग कठिन ता सर्वत्र ही होगा है, कभी-कभी मयातक भी होगा है। मेरा विचार है कि प्रो० कीप इस बात से सहमत होंगे कि यह एक ऐसा हविष्य है जिसका केवल असाधारण परिस्थितियों में ही प्रयोग करना चाहिये। लेकिन इस बात का विवेक नोन करना कि कौन सी परिस्थिति "असाधारण" है? क्या सम्राट् स्वयं? यदि हाँ तो इसका अभिप्राय यह है कि सम्राट् विलक्षण राजनीतिक प्रतिभा और अन्तर्दृष्टि के व्यक्ति हैं। लेकिन वे ऐसे युग हैं जो नर्यों में सर्वत्र नहीं

यह ठरक कुछ बातों को छोड़ देता है और कुछ पर विशेष बल देता है। यह इस तथ्य को छोड़ देता कि श्री मैकडॉनल्ड ने जो कदम उठाया उस पर उन्होंने अपने मन्त्रिमंडल के छात्रियों से आज बृहत्तर विचार-विमर्श नहीं किया था। यह तो उन्हें स्वयं मान्य ही रहा होगा कि उन्हें बलपूर्वक समर्पण बहुत कम प्राप्त है क्योंकि अपनी सरकार के क्षुभित मंत्रियों की एक बैठक में उन्होंने उनके अपने साध धार्मिक न होने की प्रार्थना की थी और उन्हें आश्वासन दिया था कि संयुक्त सरकार केवल कुछ समय के लिए ही है। श्री मैकडॉनल्ड ने संसदीय बल से भी कभी घेठ नहीं की जिससे कि धार्मिक विचारधारा के ऊपर उनके प्रभाव का सम्राट् को ज्ञान हो जाता। यह इस तथ्य को भी उपेक्षित कर देता है कि यदि श्री मैकडॉनल्ड का नई सरकार में ठिया जाला बांछनीय ही या तो उन्हें प्रधानमंत्री के स्थान पर अन्य किसी क्षमता में भी किया जा सकता था वैसे कि जाने फरवरी १९१५ की पुनर्गठित सरकार में किया गया था। यह इस तथ्य को भी छोड़ देता है कि वहाँ तक इस सफ्ट के लिए धार्मिक सरकार ही उत्तरदायी थी इस उत्तरदायित्व का मुख्य अंग श्री मैकडॉनल्ड और श्री स्लोडेन के ऊपर ही पड़ता है। यह इस तथ्य को भी मूक बाठा है कि अनुसार एक और उधार दलों को निकार समा का बहुमत प्राप्त था और वे अपने मुख्य धार्मिक प्रस्तावों के पास होने तक एक दूसरे से अलग नहीं हुए। यह इस तथ्य को भी अक्षेपण कर देता है कि यद्यपि सर हर्बर्ट एम्ब्रज सरकार में शामिल हो गए थे जगदी इस कार्यवाही की थी डॉमड बार्ने ने तीव्र आलोचना की थी। श्री कीप के विचार में सम्राट् का मुख्य उद्देश्य स्वयं-प्रताप को बनाए रखने के लिए सरकार का निर्माण करना था। यही कारण है कि वे इस बात को छोड़ जाते हैं कि उसके निर्माण और संयुक्त सरकार बनाने के लिए श्री मैकडॉनल्ड की इच्छा के सम्बन्ध में जो पूर्वकालीन अफवाहों की उनमें कोई संपर्क है या नहीं। यह मानने का जो कोई कारण नहीं है कि यदि श्री बैम्ब्रिन इस प्रकार की संयुक्त सरकार के प्रधान होते तो उन्हें संघ के बीच में ही समा का विघटन करने के लिए विवश होना पड़ता। जब तक उधार बायो उनका समर्पण करते रहते उनका बहुमत सदैवातीत था और यह मानने का जो कोई कारण नहीं है कि उधारवादी श्री मैकडॉनल्ड को नेता के रूप में धार्मिक पक्ष करते थे।

यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की संयुक्त सरकार के सम्बन्ध में सम्राट् यह पहलू से ही समझ सकते थे कि साधारण निर्वाचनों में उसे ऐसा बहुमत प्राप्त हो जायेगा जो कि श्री बैम्ब्रिन के लिए पला कठिन होगा। यदि किसी रज में पूरा पही हो तो साधारण निर्वाचनों में उसे बड़ी हानि रहती है। लेकिन यह निश्चित एक भयानक निदान्त है कि सम्राट् दलों के साम्य-तरिक घटना-क्रम के विषय में इतनी चिन्ता रखें कि वे उस नेता के लिए जिससे वे सरकार का निर्माण करने के लिए उन्हें बहुमत प्राप्त करने की चेष्टा करें। यह दृष्टिकोण प्रायः वैसा ही है जैसे कि मराठी विक्टोरिया ने लॉर्ड एम्ब्रज से यह जानने की प्रार्थना की थी कि क्या वे आम निर्वाचन के लिए तय्यार हैं। श्री कीप के ठरके का अधिवाय निष्कर्ष यह है कि सम्राट् को जाने मनी-

मुक्त राजनीतिक गठबन्धन के लिए बहुमत प्राप्त करने का प्रयास करता चाहिए। यही जोर्म तृतीय की नीति है और इसका मन्तव्य यह है कि संघात तटस्थ नहीं है प्रत्युत वे अपनी नीति माने बढ़ाने के लिए कार्यरत हैं। इस संदर्भ में यह सचमुच आश्चर्यजनक है कि संघात ने अमिक्त दल के उस भाग की जो प्रो कीप ने मतानुसार काड़ी बना मांग है—बिसने श्री मैकडॉनल्ड का अनुमनन नहीं किया। राय जानने की कोई चेष्टा नहीं की। अक्टूबर-संकट के समय उन्होंने विरोधी दल की राय जानने का प्रयास किया था और १९१४ का बकिंगहम प्रस्ताव सम्मेलन उनकी इच्छा के कारण ही हुआ था कि बीजे भी हा समझौता ही आवे। १९११ में उन्होंने धार्मिक दल के ऊपर अपने रूप के मनोबैज्ञानिक प्रमाणों के बारे में कोई ध्यान नहीं दिया।

यहाँ प्रो कीप का दूसरा दर्क महत्वपूर्ण हो जाता है। उनका कहना है कि साधारण निर्वाचनों में राष्ट्रीय सरकार को प्रबंध बहुमत मिला। इसके यह निष्कर्ष निकलता है कि संघात के कार्य का दार में अधिरथ्य सिद्ध हो गया। लेकिन इसका अभिप्राय तो यह हो गया कि जब कोई सरकार सीधे राजभूट के गत्वापदान में बनती है और बाद में उसे बहुमत मिल जाता है, तो उसके निर्माण के सम्बन्ध में संघात का कार्य वैधानिक हो जाता है। यह निरिपतक एक भयानक सिद्धान्त है। इसका अर्थ यह हुआ कि जब संघात वह समझ कि मंत्रियों के ऊपर बनता था विश्वास नहीं रहा तो वे उन्हें त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकते हैं और यदि नई सरकार को निर्वाचन में बहुमत मिल जाता है, तो समझा जाता है कि संघात का कार्य वैधानिक था। १९१०-११ में लॉर्ड-सभा के प्रश्न पर जो संकट उठा ही गया था उसमें श्री बल्फोर ने इसी स्थिति को ग्रहण किया था और जब अक्टूबर-संकट के समय संघात को यह परामर्श दिया गया था कि वे "होम रूम बिल" पर अपनी स्वीकृति न दें, तो उद्यम भी यही मथित था। दर्क यह है कि संघात अपन मन्त्रियों के परामर्श से महमत नहीं है तो वे उन्हें त्यागपत्र देने के लिए विवश कर सकते हैं तथा यदि नई सरकार को बहुमत मिल जाता है तो उनका यह कार्य वैधानिक समझा जायेगा।

लेकिन यह दर्क इस प्रश्न पर कोई प्रकाश नहीं डालता कि यदि नए गठबन्धन को कोई बहुमत नहीं मिला तो संघात की क्या स्थिति होगी। यदि वे मंत्रियों को पक्षभूत करते हैं, तो इसका अभिप्राय यह है कि वे तटस्थता को टिकानात्रि देने ह। अर्थात् इस से मन्त्रियों के विचारी को अस्वीकार करने और अपने विचारों को स्वीकार करने के लिए कहते हैं। इस दृष्टि से संघात संविधान की सर्वोच्च शक्ति ही माने हैं और इन प्रकार की शक्ति का प्रयोग कठिन तो सदैव ही होता है। कभी-कभी भयानक भी होता है। येच विचार है कि प्रो कीप इस बात से सहमत होंगे कि यह एक ऐसा हविदा है जिसका केवल असाधारण परिस्थितियों में ही प्रयोग करना चाहिये। लेकिन इस बात का निर्णय कौन करेगा कि कौन सी परिस्थिति "असाधारण" है? क्या संघात स्वतः? यदि हाँ तो इसका अभिप्राय यह है कि संघात विलक्षण राजनीतिक प्रतिभा और अन्तर्दृष्टि के व्यक्ति हैं। लेकिन ये ऐसे युग हैं जो मरघों में सदैव नहीं

पाये जाते। क्या वे परामर्श लेने? यदि हाँ तो वह किसका परामर्श होगा? यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि उन्हें कोई एयर सीटें व्यक्तिगत के उनके परामर्श को वे अपने उत्तरदायी मंत्रियों के परामर्श से अधिक महत्व दें एक "व्यक्तिगत मन्त्रिमंडल" से नहीं मिले रहना चाहिये। कोई भी उत्तरदायी मन्त्रिमण्डल इस स्थिति को स्वीकार नहीं करेगा। यह भी नहीं कहा जा सकता कि उन्हें कमी नो सीटें स्वयं (जैसा कि उन्होंने कई बार किया है) या कमी सीटें एयर जबरबा व्यक्तिगत मन्त्रिमंडल के माध्यम से विरोधी दल के नेताओं के साथ सम्पर्क रखना चाहिए। यदि इस बात का निर्णय कि हम कौन से मंत्री रखेंगे सम्राट् करने का है तो यह निर्णय साधारण निर्वाचनों के परिणामों के अतीतस्थ हो ही यह निर्दिष्ट है कि उस निर्वाचन में सम्राट् के विचारों का विवेचन होगा। उस स्थिति में सम्राट् अपनी एक नीति का और शायद अपने एक दल का निर्माण कर लेंगे और हम कोई तृतीय की टैकनीक के पास वापिस पहुँच जायेंगे। वास्तव में यह सिद्धान्त बोल्डिन्गटोक के 'दिस मक्त सम्राट्' का सिद्धान्त है और मुझे इस बात में संदिग्ध है कि क्या वह बीसवीं सताब्दी के संविधान की अव्यक्त माप्यताओं के अनुरूप है?

(३)

उक्त विवेचन हमें १९३१ के संकट के कापी पोले की ओर से जाता है। लेकिन इस संकट का एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि वह राजनीय धर्म को बलियायों को स्पष्ट करता है। राजमुकुट के कुछ ऐसे परमाधिकार हैं जिनका अब प्रयोग नहीं होता। इन समय जलनी क्या स्थिति है? जशाहरणार्थ क्या सम्राट् संसद् द्वारा अपने पास भेजे गए किसी विधेयक को अस्वीकार कर सकते हैं? यदि प्रधान-मंत्री उस संसद् का विघटन करने के लिए नहीं, तो क्या वे 'न' कर सकते हैं? क्या वे ऐसे किसी मन्त्रिमंडल को त्रिसूत्री नीति से वे महत्व न हो उपरस्थ कर सकते हैं? क्या उन्हें अपने प्रधान-मंत्री को चुनने का और प्रधानमंत्री के साधियों का चुनाव सीमित करने का अधिकार है?

राजमुकुट ने १७७ के पश्चात् से किसी विधेयक पर अपनी सहमति देना अस्वीकार नहीं किया है। यह शक्ति अब केवल किसी व्यक्तिगत संघट की असाधारण परिस्थितियों में मर ही प्रयुक्त ही जाये। इसका परिष्कार यह होगा कि मंत्री स्वयं पर हैं वे ही और उनके उत्तरदायित्वों को जो राजकीय निर्णय के लिए उत्तरदायी होने साधारण निर्वाचन का सामना करना पड़ेगा। इस निर्वाचन में वह प्रश्न कि क्या सम्राट् का निर्णय ठीक या नहीं प्रमुख विधेयक विषय होगा। यदि नहीं सरकार पराजित हो गई, तो या तो सम्राट् को मुक्त होना या वे संविधान की मर्यादाओं के बाहर रह कर सामना करने की चेष्टा करेंगे। पहले विवरण में नए प्रधान-मंत्री पर-ग्रहण करते समय यह शर्त सम्राट् के सामने रखेंगे कि वे पुनः अपनी शक्ति का प्रयोग न करत ही प्रतिज्ञा करें। १९३१ में एक प्रत्यक्ष सीटें वासकर सीटें इस्तेमाल ने यह कहा जा कि राजकीय समर्थन की अस्वीकृति वैधानिक थी।

-संकट के दिनों में सर विलियम एमन और श्री जॉयनी जैसे अधिकारी विद्वानों ने

इस विचार का समर्थन किया था। वास्तव में इपका अभिप्राय यह ही था है कि सम्राट जब कभी अपने मंत्रियों की नीति से अनहमत्त हो वह उन्हें अपहन्त कर सकता है। यदि कोई सम्राट इन परमाधिकार का प्रयोग करता चाहे जिसका पिछले ही सी बपों से कोई प्रयोग नहीं हुआ है, उसका व्यक्तिगत उत्तरदायित्व कितना गंभीर होगा यह बताने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसका प्रयोग राजकीय तटस्थता को त्पावे बिना नहीं हो सकता और यह तटस्थता उस समय तक नहीं त्पावी वा बरकी जब तक कि सम्राट मंत्रि-मन्त्र के सरस्यों की अपनी इच्छानुसार निवृत्त न करें। यदि कभी ऐसा हुआ तो भरे विचार से राजनीतिक संघर्ष का केन्द्र राजकीय शक्ति का नियंत्रण हो जायेगा। यह मार्ग या तो बॉर्न तृतीय की व्यवस्था की ओर से जाता है और या निहासत हराग की ओर। समाजता यह है कि यह मार्ग इससे भी ग्वानक स्थिति की ओर से जा सकता है।

विषटन के परमाधिकार की समस्या हमसे भी अधिक जटिल है। यह माना जाना है कि विषटन करने या न करने के सम्बन्ध में सम्राट की अपने मंत्रियों के परामर्श पर बलना चाहिए। किन्तु समस्या यह है कि क्या सम्राट ऐसे किसी विषटन को अस्वीकार कर सकते हैं जिसकी कि मंत्री मान करें या वे ऐसे किसी विषटन का आग्रह कर सकते हैं जिसे कि उनके मंत्री न चाहते हों। यद्यपि पुस्तकें पढ़ी कहुती हैं कि यह निर्णय सम्राट के हाथों में ही और यह परमाधिकार एक राजीव वस्तु है किन्तु मेरे विचार से इस विचार से सहमत होना कठिन है। प्रथमतः प्रायः ही यह से अधिक ही यह जब कि सम्राट ने इस प्रकार के विषटन को अस्वीकार किया था। इसने पुगने इष्टान्त की फिर से ताजा करना जरा कठिन बात होगी। दूसरे यदि विषटन की मांग करना कभी सरकार बहुमत की सरकार हुई और उसकी मांग को अस्वीकार कर दिया गया तो वह इस आधार पर कि उसका परामर्श नहीं माना गया त्पाय-यत्न दे देगी। उसके बाद जो दूसरी सरकार बनेगी उसे भी अलगमत में होने के कारण बेर सबेर विषटन की मांग करनी पड़ेगी। उस समय सम्राट की स्थिति बड़ा विषम ही जायेगी क्योंकि तब वे बही बात जो उन्होंने एक प्रधानमंत्री के लिए अस्वीकार कर दी थी वे उसके उत्तराधिकारी के लिए स्वीकार कर रहे होंगे। पूर्वदुष्कालों की वजह से यह स्पष्ट ही जाना है कि यदि किसी सरकार को विषटन की प्रार्थना करते समय कॉमन-सभा में बहुमत प्राप्त है, तो उसकी प्रार्थना अक्षय्य मानी जायेगी। यदि उसकी प्रार्थना नहीं मानी जाती तो सम्राट के ऊपर यह बोपाटोप होगा कि वे दोनों के बीच मेरमाव करते हैं।

जब सरकार वा कॉमन-सभा में अल्पमत हो तब क्या स्थिति निम्न होती है ? श्री एस्किन्ग ने १९२३ में यह दृष्टिकोण किया था कि स्थिति निम्न होती है। १९४२ की अधिका सरकार का कॉमन-सभा में बहुत अल्पमत था उसे ११५ वोटों में से केवल ११ स्थान ही प्राप्त थे। यदि वह पराजित हो जाती तो श्री एस्किन्ग सरकारवादी नेता के नाते पद-ग्रहण करने के लिए तय्यार थे। किन्तु जब अधिका सरकार बरामित हो गई और प्रधान-मंत्री श्री रैमने मीरजॉनरड ने विषटन के लिए कहा सम्राट ने

पाये जाते। क्या वे परामर्श देंगे? यदि हाँ तो वह किसका परामर्श होगा? यह कहने की कोई आवश्यकता नहीं है कि उन्हें कोई एयर जैसे व्यक्तियों के जिनके परामर्श को वे अपने उत्तरदायी मंत्रियों के परामर्श से अधिक महत्व हैं एक "व्यक्तिगत मंत्रि मंडल" से नहीं विनये रहना चाहिये। कोई भी उत्तरदायी मन्त्रि-मण्डल इस स्थिति को स्वीकार नहीं करेगा। यह भी नहीं कहा जा सकता कि उन्हें कमी मो चीबे स्वयं (जैसा कि उन्होंने कई बार किया है) या कमी लॉर्ड एयर अपना आर्बिबिभय बॉर्ड कंटरबरी के माध्यम से विरोधी दल के नेताओं के साथ सम्पर्क रखना चाहिए। यदि इस बात का निर्णय कि हम कौन से मंत्री रखेंगे सम्राट् करने लगे चाहे यह निर्णय शासक निर्वाचनों के परिणामों के अतीतम् हो तो यह निश्चित है कि उस निर्वाचन में सम्राट् के विचार का विवेकन होगा। उस स्थिति में सम्राट् अपनी एक मोटि का और धामन अपने एक दल का निर्माण कर सेंगे और हम जॉर्ज तृतीय की टेक्नीक के पास वापिस पहुँच जायेंगे। वास्तव में यह सिद्धान्त बोरिंगब्रोड के "द्विध अन्त सम्राट्" का सिद्धान्त है और मुझे इस बात में संदेह है कि क्या वह बीसवीं शताब्दी के संविधान की अकथित मास्यताओं के अनुरूप है?

(३)

उन विवेकन हूँ १९३१ के संकट क काठी पोछे नी खोर से जाता है। लेकिन इस संकट का एक महत्वपूर्ण पहलु यह है कि वह राजनीय दक्षिण की बुनियातों को स्पर्श करता है। राजमुकुट के कुछ ऐसे परमाधिकार हैं जिनका अब प्रयोग नहीं होता। हम समय उनकी क्या स्थिति है? जवाहरभार्य क्या सम्राट् संसद् द्वारा अपने पास भेजे गए किसी विवेकन को अस्वीकार कर सकते हैं? यदि प्रधान-मंत्री उनसे संसद् का विमटन करने के लिए नहीं, तो क्या वे 'न' कर सकते हैं? क्या वे ऐसे किसी मन्त्रिमंडल का विरुद्धी नीति से वे महमत न हों अपदस्व कर सकते हैं? क्या उन्हें अपने प्रधान-मंत्री को चुनने का और प्रधानमंत्री के साविया का चुनाव सीमित करने का अधिकार है?

राजमुकुट ने १७७ के परचात् से किसी विवेकन पर अपनी सहमति देना अस्वीकार नहीं किया है। यह दक्षिण अथ केवल किसी वास्तुकारों संकट की अजाधारण परिस्थितियों में अथ ही प्रयुक्त की जाने। इसका परिणाम यह हुआ कि मंत्री त्याग-पत्र दें वे और उनके उत्तराधिकारियों को जो राजकीय निर्णय के लिए उत्तरदायी हों शासक निर्वाचन का सामना करना पड़ेगा। इस निर्वाचन में यह प्रकट कि क्या सम्राट् का निर्णय ठीक या नहीं प्रमुख विवेकन विषय होगा। यदि नई सरकार पराजित हो गई तो या तो सम्राट् को मुक्तता होगा या वे संविधान की पर्याप्तता के बाहर रह कर सामन करने की चेष्टा करेंगे। पहले विषय में यह प्रधान-मंत्री वर-ग्रहण करते समय यह धर्म सम्राट् के सामने रखेंगे कि वे पुनः अपनी शक्ति का प्रयोग न करते ही प्रतिज्ञा करें। १९३३ में एक अठपूरे लॉर्ड चांसलर लॉर्ड हेस्टरटी ने यह कहा था कि राजकीय शक्ति की अस्वीकृति वैधानिक थी। अस्टर-नेक्ट के दिनों में सर विलियम एम्न और प्रो डायरी जैसे अधिकारी विद्वानों ने

इन विचार का समर्थन किया था। वास्तव में इनका अर्थ यह ही जाता है कि सम्राट जब कभी अपने मंत्रियों की सलाह से अनहमल हो वह उन्हें अपदस्थ कर सकता है। यदि कोई सम्राट इन परमाधिकार का प्रयोग करना चाहे त्रिसका पिछले ही सी बर्षों से कोई प्रयोग नहीं हुआ है, जसका अविशयत उत्तरदायित्व जितना मंत्रीर हाता यह बनाने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसका प्रयोग राजकीय उत्सवता की व्यापे बिना नहीं हो सकता और यह गटस्वता उन समय तक नहीं व्यापी जा सकती जब तक कि सम्राट मंत्रि-मंडल के सदस्यों को अपनी इच्छानुसार नियुक्त न करें। यदि कभी ऐसा हुआ तो मेरे विचार से राजनीतिक संघर्ष का केन्द्र राजकीय परिषद का नियंत्रण हो जायेगा। यह मार्ग या तो जॉर्ज गुनीन की व्यवस्था की ओर से जाता है और या निहासन हसन की ओर। सम्भवता यह है कि यह मार्ग इनमें भी अमानक स्थिति की ओर से जा सकता है।

विपटन के परमाधिकार की समस्या इनमें भी अधिक जटिल है। यह माना जाता है कि विपटन करने या न करने के सम्बन्ध में सम्राट को अपने मंत्रियों के परामर्श पर अज्ञाना चाहिए। लेकिन समस्या यह है कि क्या सम्राट ऐसे किसी विपटन को अस्वीकार कर सकते हैं जिसकी कि मंत्री मांग करें या वे ऐसे किसी विपटन का आग्रह कर सकते हैं जिसे कि उनका मंत्री न चाहते हों। पद्यपि पुस्तकें यही कहती हैं कि यह विपटन सम्राट के हाथों में है और यह परमाधिकार एक सखीय बस्तु है लेकिन मेरे विचार में इस विचार से सहमत होना कठिन है। प्रथमतः प्रायः ही बर्ष से अधिक ही पर जब कि सम्राट ने इन प्रकार के विपटन को अस्वीकार किया था। इतने पुराने दृष्टान्त को फिर से उठाकर जरा कठिन बात होती। दूसरे यदि विपटन की मांग करने वाली सरकार अल्पकाल की सरकार हुई और उसकी मांग को अस्वीकार कर दिया गया तो वह इन आचार पर कि उसका परामर्श नहीं माना गया व्याप-मंत्र दे देगी। उससे बाद जो दूसरी सरकार बनेगी उसे भी अल्पकाल में हूँगे के कारण देर लंबे विपटन की मांग करनी पड़ेगी। इस समय सम्राट की स्थिति बड़ी विपन्न हो जायेगी क्योंकि वह वे नहीं बात जो उन्होंने एक प्रधानमंत्री के लिए अस्वीकार कर दी थी वे उसके उत्तरदायित्वारी के लिए अस्वीकार कर रहे होंगे। पूर्वदृष्टान्तों की दृष्टि हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि किसी सरकार को विपटन की प्रार्थना करते समय कौन्सिल-सभा में बहुमत प्राप्त है, तो उनकी प्रार्थना अग्रिम भागी जायेगी। यदि उनकी प्रार्थना नहीं जाती जाती तो सम्राट के ऊपर यह बोधारोप होया कि वे राजा के बीच घेराव कर रहे हैं।

जब सरकार का कौन्सिल-सभा में बहुमत ही, तब क्या स्थिति भिन्न होगी ? श्री एस्किन ने १९२३ में यह दृष्टिकोण लिया था कि निर्दिष्ट भिन्न होगी है। १९४२ की अधिक सरकार का कौन्सिल-सभा में बहुमत अल्पकाल था उसे १९५ स्थानी में से केवल ११ स्थान ही प्राप्त थे। यदि वह बराबर ही जाती तो श्री एस्किन उपायवादी नेता के साथ पर-ग्रह करने के लिए तयार थे। लेकिन जब अधिक सरकार परामर्श हो गई और प्रधान-मंत्री श्री रैमंड मैकडोनाल्ड ने विपटन के लिए कहा सम्राट ने

उनकी मांग स्वीकार कर ली। इसके अलावा और कोई बात भी नहीं था। यदि संसद विघटन अस्वीकार कर देने और श्री एस्किनव को सरकार बनाने के लिए नामित करत तो श्री एस्किनव का दम भी नैकरोनॉथ के दम से भी छोटा था अतः उन्हें भी कुछ समय परचाय पराजय भोगना पड़ती और विघटन की मांग करनी पड़ती। उसको स्वीकार करने का अर्थ यह होता है कि संसद के ऊपर पुनः बोधोरोप न्याया जाता कि वे दम के बीच विभेद करते हैं। विघटन को स्वतः ही स्वीकार करने का अर्थ सरकार का उत्तरदायित्व निर्वाचकों के हाथों पर रख देना है और यह ठीक भी है। इस परमाधिकार के स्वतःभाव पर बल देना ही राजकीय तटस्थता को बनाए रखने का सर्वोत्तम उपाय है।

कुछ अधिकारी विद्वानों ने जिनम प्रो ए एक पोर्चर्ड सबसे प्रमुख हैं, इस विचार का विरोध किया है। उनका कहना है कि विघटन के अधिकार को स्वतः-वाकित कर देने से शासन की अविच्छिन्नता को बना पड़वेगा। कोई सरकार विघटनकर अस्पृश्यक सरकार बिना किसी कारण के भी विघटन कर सकती है। हो सक्ता है कि नए कबल राजनीति का ही खेल बने और देश के ऊपर आम निर्वाचन माद देखोकि वह स्थिति को अपने अनुकूल पानी हो या समजती हो कि उसके विरोधी उच्चार नहीं है। इन आलोचकों का मत है कि संसद को अस्वीकृति का भोग नही उद्योग चाहिए। यह कठिनाई इस प्रकार एक ही जा सकती है कि विघटन का अधिकार स्वीकार करण के पहले संसद की स्वीकृति प्राप्त कर लेना आवश्यक मान लिया जाये।

इस बातला को वास्तविक करना कठिन है। यदि कौन विभाग मजबूत कोई निष्ठा बैठा है तो वह यह है कि समय ही कोई संकट अपने विघटन के लिए सहमत हो। शासक निर्वाचिता में लक्ष्य बहून होता है और अविच्छिन्न सभ्य इस बात के लिए उत्पन्न होते हैं कि अपने स्वाना पर मिलने अधिक समय तक रखें रखें। यदि किसी सरकार ने सदा से विघटन की मांग की और सदा ने उसे स्वीकार कर दिया तो इससे सरकार की प्रतिष्ठा को बचका पड़वेगा और यह सरकार के ऊपर अधिकार का प्रस्थाप पाव करने के लक्ष्य होगा। ऐसी स्थिति में वह सत्ताकृत न रख सकेंगी। उसे स्थान-यत्र देना होगा और उसके स्थान-यत्र का परिचाम यह हीया कि उसके उत्तरदायित्वों के लिए देश का समर्थन प्राप्त करना आवश्यक हो जायेगा। चाहे किन दृष्टि से देना चाय यह स्पष्ट हो जाता है कि यदि सरकार ने मजबूत विघटन की मांग की तो देश उन हमला बंद दे देगा है। १९२३ में श्री बैस्किन और १९२४ में श्री बैस्किन के नाम यही हुआ था। प्रत्येक स्थिति में विघटन की मांग करने का निर्णय मजबूत था और प्रत्येक स्थिति में सरकार को पराजय का दण्ड देना पड़ा।

विघटन की बाध्य कर देने का अधिकार तनिक दूसरे प्रकार का होगा है। पिछले तीन वर्षों में ऐसे दो सभ्यर आते हैं जब कि सरकार का संसद की स्पष्ट इच्छा के कारण विघटन कर दिया गया था। १९११ में एडवर्ड सतम की इच्छा के कारण बट के ऊपर और उनी नई जॉर्ज पंचम की इच्छा के कारण मोर्ड-मजरा की सभ्यों

के प्रश्न पर। बोला ही स्थितिपामें मन्त्री पांडी बहुत बाता के परवान् मन्त्र की दृष्टा से मन्मथ हो गए ये जोर इस प्रकार यद्यपि विधान का उद्धारना मन्त्राद की जोर म भाई की केविन मन्त्राने उसे स्वीकार कर दिया। परन्तु विधान मन्त्रीय उद्धारनायिष् के आकरय से आवृत रहा। यदि कमी सम्पाद न विधान की माय की और मन्त्रि-मन्त्रन ने उसे मस्वीकार कर दिया तब क्या विधि होगी? मेरे विचार से यह सम्पाद न आपहू किया ता मन्त्रिमन्त्रन को स्वय-मन्त्रके के विधाय और कुछ बाता नशा रहेगा। एक नई सरकार का निर्माण होना तथा वह तुरन् ही निर्वाचन कर्णाएगी। इस उत्फालीन संसदियों के बाधार पर यह जानने ह कि १९११ १८ के सम्पन्न-मन्त्र के विनों में आर्षे पंचम् पर इस प्रकार से विनयन करने के विन बार-बार दवान शाखा दया था। जहाँने इने नहीं दाना था। तभी महामुख प्रारम्भ हो गया और यह समस्या छिरी थी यह गई कि क्या सम्पाद होमदक विम के परिधानों को स्वीकार कर लेने। यद्यपि इन दृष्टाद न समस्या का कोई समाधान नहीं किया लेकिन फिर भी यह सम्पन्न मन्त्रमूर्त है।

यह स्पष्ट है कि सम्पाद द्वारा संघरक्त विधान (penal dissolution) का ह्म मन्त्री को पद-भ्युन करने का ही एक विधु रूप है। विजयी बार हमका प्रयोग काही पत्रने हुआ था। यह विन तुरन् समस्या का उन्निवण करता है वह यह है कि यदि मन् सरकार निर्वाचनों में रुकना या लेनी है तो क्या संघरक्त विधान का अधिकार विधु हो जाता है। मैं इस विचार को दो शाखा में जम्बीकार करना हूँ। पहली बाउ तो यह है कि सम्पाद की ऐसी कर्मशाही निर्वाचनीय बार-दिवार का विनय हो जायी और इसके पपम्बकप सम्पाद की सम्पन्नता ही निर्वाचन का एक प्रयत्न बन जायेगी। यह जैना कि मैं यह चर्चा हूँ मन्त्र प्रदानक और मन्त्रोन्नेय है। दूसरी बाउ यह है कि संघरक्त विधान केवक बहुत मन्त्रीय परिधिगियों में ही हो सकता है। लेकिन इसने सम्पाद के ऊपर यह निर्णय करने का मन्त्रीय उद्धार बायित्व था पन्ता है कि "मन्त्रीय परिधिगियों" क्या हैं? यहाँ एक प्रश्न यह भी उठ सकता होता है कि क्या इस सम्पन्न में मन्त्र स्वयं अपने विनय पर ही निर्णय रहने या के अपन सरकारी पराममदाताओं के अधिकृत कुछ अन्य ध्यवित्तों से भी परामर्श ले सकता है। बार का माय स्पष्ट मन्त्रोन्नेय है। पहले मन् का मन्त्रिमाय यह है कि सम्पाद का निर्वाचन-मन्त्र से सम्पर्क है जो कि साधारणतया नहीं होता। संघरक्त विधान का एक परिधान यह भी होगा कि संघरक्त मन्त्रिमन्त्रक परवान् जो मया मन्त्रिमन्त्रन बनया यह हम जानें कि उनके विधान मन देना राजमुद्रा के विधान मन् दना है यद्यि प्राप्त करने का प्रयास करेगा। यद्यपि १९११ के निर्वाचन में ऐसा कोई तत्व उपस्थित नहीं था लेकिन फिर भी उन् समय ऐसा ही हुआ था। यदि निर्वाचक सम्पाद के दृष्टिकोन का सम्बन्ध करने है तो यह परम्परा निर्मित हो सकती है कि जब कमी सम्पाद यह समझें कि किसी सरकार को देना का विधाय प्राप्त नहीं रहा तो वे उद्धार विधान कर सकते हैं। मेरे विचार म इन मन्त्र की परिधि का बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग सम्पन्न कर्तव्य है और यदि इन ध्यवित्त

का प्रयोग ऐसी स्थिति में किया गया जबकि सम्पत्त संघर्ष अत्यन्त तीव्र हो ही सम्पत्त की स्थिति बड़ी बिगड़ हो जायेगी। यदि दम्बरक विघटन का परिणाम उस बल की पराजय हुआ जिसके साथ सम्पत्त ने स्वयं को सम्पत्त किया है तो सम्पत्त की स्थिति उस समय तक स्थायी न हो सकेगी जब तक कि वे अधिकार में उत अधिकार के प्रयोग न करने का भय न रहे।

यह विचार इस प्रश्न के साथ जुड़ता है कि क्या सम्पत्त को दम्बरक विघटन के प्रतिरोध अपने अधिकारों को अपहरण करने का अधिकार है। निम्नी बार इस अधिकार का प्रयोग उस समय किया गया था जबकि जॉर्ज तुर्ली ने १७८१ में जॉर्ज तीसरे के संसद में मंत्रिमंडल को अपहरण कर दिया था। यह अब बात है कि सम्पत्त ने १८१४ में मेसबोर्न को अपहरण किया था उन्होंने प्रमाणमंती के परामर्श पर आचरण किया था। यह मानना असंभव है कि अब यह अधिकार पुराना पड़ गया है यद्यपि ऐसा कि प्रो कीय करते हैं, यह स्थिति केवल मन्त्री परिस्थितियों में बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग के लिए है।^१ लेकिन यही समस्या यह है कि "बुद्धिमत्ता" और "मन्त्रीता" दोनों ऐसे मामलों में जिनका निर्णय सम्पत्त को करना चाहिए, लेकिन यह स्पष्ट प्रश्न है कि यदि सम्पत्त बुद्धिमान हुए तो क्या वह इनका निर्णय करने के लिए तैयार होवे। यदि सम्पत्त ऐसा करते हैं, तो वे अपने भाग्य को उस बल के साथ संयुक्त कर लेते हैं जिसे वे पर-गृहण के लिए बुझाते हैं। इन परिस्थितियों में वे चाहे कुछ भी करें, उनके साथे प्रजासत्ता के छद्म रूप का भय बना रहता है। पर-गृहण इससे भी भयानक है क्योंकि यह दक्षिण-पश्चिम की सरकार की अपेक्षा नाममात्र की सरकार के विरुद्ध अधिक प्रयुक्त होगी। इसका अर्थ यह होगा कि दक्षिणपक्ष सम्पत्त के विरोध का बल है। यदि इस बल की पराजय हुई तो यह सम्पत्त की पराजय होगी और इस पराजय के परिणाम निश्चित बड़े मन्त्री होंगे।

इस प्रकार की पर-गृहण की संभावना १९१९ के सिद्धांत-स्थाप के सफट के दिनों में सामने आ गई थी। यह कहा जा सकता है कि यह विचार स्वयं शुरू और विघटन के मन में कभी नहीं आया था। लेकिन उस समय उनके यह बात कई बार आती गयी थी। मुझे यह आ कि विरोधी बल के नेता के जाने की एटकी को यह कह देना चाहिए कि हम बेस्विकि मंत्रिमंडल के सम्पत्त की भीमती सिम्पसन के साथ घाती के विरोध में असहमत हैं। तब सम्पत्त को चाहिए कि वे भी बेस्विकि को अपहरण कर दें; की एटकी को सरकार का निर्माण करने के लिए आमंत्रित करें। तत्पश्चात् वे समा का विघटन कर दें तथा नये नाम निर्माण करायें जिनसे यह मान हो सके कि क्या नये मंत्रिमंडल का अनुमोदन करता है।

यह स्पष्ट है कि शुरू और विघटन के विचार की बुद्धिमत्ता या धूर्तता यहाँ अत्यन्त सिद्धांतों के विवेचन से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। यहाँ दो बलें महत्त्व-

१ मेसबोर्न पेरर्स पृ २२ -१।

२ कीय बही पृ १७८।

पूर्ण है संघट के समय काफ़ी लोगों का यह मत था कि सम्राट् का बनवस्तु करने का अधिकार एक सक्षिप्त अधिकार है और उसकी सहमति वा असहमति निर्वाचकों के निर्णय पर निर्भर है। मेरे विचार से इस दृष्टिकोण का प्रतिपादन करने वालों में यह नहीं समझा कि पद-व्युक्ति का विषय यहाँ बन्दर्बस्तु वैधानिक सिद्धान्त से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। यदि संसदिय पद-व्युक्त कर दिए जाते भी एटर्नी जैरे सरकार का निर्माण कर केते तथा उसके लिए निर्वाचकों की स्वीकृति भी प्राप्त कर केते तो यह परम्परा बन जाती कि यदि सम्राट् अपने मंत्रियों के परामर्श से सहमत नहीं है तो वे उन्हें अपवस्तु करने के अधिकारी हैं। इसके परिणामस्वरुप वे संविधान के अन्तर् एक ऐसे विघास घणित बन जाते जिसे कि पित्रसे ही बनों के वैधानिक विकास में रोकने का प्रयास किया है। यह निश्चित है कि उन्हे इस अभिनव सन्धि के प्रयोग में प्रवृत्त करने के लिए उम पर काफ़ी दबाव डाल घाते। मंत्रियों को सर्वैव इस बात का भय बना रहता कि कहीं सम्राट् हमें अपवस्तु न कर दें। वे इस बात की भरसक चेष्टा करते कि जैसे भी हो सम्राट् को कृपावृष्टि प्राप्त की जावे। कहने का सार यह है कि हम पुनः हीनोवर बून के राजतंत्र के बाठावरण में पहुँच जाते। यह स्पष्ट है कि यदि पदव्युक्ति की सन्धि का एक बार भी प्रवृत्त प्रयोग हुआ तो राजतंत्र की रक्षा कठिन हो जायेगी।

मंत्रियों के चुनाब का प्रश्न तबिक निम्न है। इस बात के स्पष्ट बृहान्त है कि सम्राट् को प्रबाल-मंत्री के मतानयन में थोड़ी-बहुत स्वतंत्रता रखनी है। यदि कर्मी किसी ऐसे प्रबाल-मंत्री का जिसकी मृत्यु हो चुकी हो या जिसने त्यागपत्र दे दिया है कोई स्पष्ट उत्तराधिकारी न हो तो राजभूक्त का यह सदेहावीर्य व्यक्तिगत अधिकार है कि वह जिस व्यक्ति को सर्वाधिक उपयुक्त समझे उसे प्रबाल-मंत्री बना सकता है। इन परिस्थितियों में उसे किसी से परामर्श लेने की आवश्यकता नहीं है वह पूर्णतः स्वविकेक के अनुसार आचरण कर सकता है। १८९४ में श्री ब्लैडस्टन के अवकाश ग्रहण करने पर महाराणी विक्टोरिया ने लॉर्ड रोडबरी को प्रबाल-मंत्री बनाया यद्यपि इस पर के तीन और समाहित प्रत्यासी थे। इनी प्रकार १९२२ में श्री बोमर लॉ के त्यागपत्र देने पर लार्ड पंचम् ने लार्ड कर्जन के स्थान पर श्री (और अब लॉर्ड) वैंस्विन को सरबौह की थी। यह प्रत्यक्ष है कि सम्राट् को ऐसा व्यक्ति प्रबाल-मंत्री चुनना चाहिए जिसे कि अपने हक का पूरा समर्पण प्राप्त हो। १८८ में महाराणी विक्टोरिया ने यह प्रयास किया था कि वे श्री ब्लैडस्टन को प्रबाल-मंत्री न बनायें। सन्धि उनके वे प्रयास कबोमुत्त नहीं हुए। १९०० में सर हेनरी कैम्पबेक वैनरसेन के त्यागपत्र देने पर यह स्पष्ट था कि श्री एस्किव को उनका उत्तराधिकारी होने लिए नामित बिना जाना चाहिए। इसी प्रकार १९१६ में यह स्पष्ट था कि श्री वैंस्विन के परचात् श्री वैंम्बरलेन को प्रबाल मंत्री होना चाहिए। यदि सम्राट् इन ती दृष्टिकोणों के विरुद्ध अपने किसी समवाह्य व्यक्ति को प्रबाल-मंत्री बनाता जाँ तो वे देखेंगे कि उनका मनोरीर्य व्यक्ति सरकार-निर्माण के लिए आवश्यक समर्पण न पा सकेगा। इस प्रकार सम्राट् का स्वविकेक जैना कि बात होना

का प्रयोग ऐसी स्थिति में किया गया जबकि सम्भव संघर्ष उत्पन्न ही हो तो सम्पाद की स्थिति बड़ी विरम हो जायेगी। यदि संघर्षक विपटन का परिणाम उस युद्ध की पराजय हुआ जिसके साथ सम्पाद ने स्वयं को सम्पन्न किया है तो सम्पाद की स्थिति उस समय तक उदासीन न हो सकेगी जब तक कि वे यद्यपि में उस अधिकार के प्रयोग न करने का वचन न दे दें।

यह विचार इस प्रश्न के साथ जुड़ित है कि क्या सम्पाद को सम्घर्षक विपटन के अतिरिक्त अपने अधिकारों को अपव्यक्त करने का अधिकार है। विद्युत् की वार इस अधिकार का प्रयोग उस समय किया गया था जबकि जॉर्ज तृतीय ने १७८१ में जॉर्ज वॉरिस के सम्बन्ध में मन्त्र-मन्त्र को अपव्यक्त कर दिया था। यह सब सात है कि सम्पाद ने १८१४ में मन्त्र-मन्त्र को अपव्यक्त किया था उन्होंने प्रजासत्ताकी के परामर्श पर आश्रय किया था। यह मानना असंभव है कि अब यह अधिकार पुराना पत्र मया है यद्यपि ऐसा कि प्रो कीय कहते हैं यह अतिशय केवल सम्मीर परिस्थितियों में बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग के लिए है।^१ लेकिन यहाँ समस्या यह है कि "बुद्धिमत्ता" और "सम्मीरता" दोनों ऐसे मामलों में जिनका निर्णय सम्पाद को करना चाहिए, लेकिन यह स्पष्ट प्रश्न है कि यदि सम्पाद बुद्धिमान हुए तो क्या वह इनका निर्णय करने के लिए सम्पाद होंगे। यदि सम्पाद ऐसा करते हैं, तो वे अपने मामलों को उस दल के साथ संयुक्त कर लेते हैं जिसे वे पक्ष-ग्रहण के लिए बचाते हैं। इन परिस्थितियों में वे बाह्य कुछ भी करें, उनके धार्मिक प्रभावों के अन्तर्गत होने का भय बना रहता है। यह स्थिति इससे भी मयातक है क्योंकि वह दक्षिण-पक्ष की सरकार की मजबूत धारणा को सरकार के विरुद्ध अधिक प्रयत्न होगी। इसका अर्थ यह होता कि दक्षिणपक्ष सम्पाद के मित्रों का दल है। यदि इस दल की पराजय हुई तो वह सम्पाद की पराजय होगी और इस पराजय के परिणाम निश्चितता बड़े सम्मीर होये।

इन प्रकार की परम्पुति की संभावना १९१६ के विद्रोह-दण्ड के संकट के दिनों में सामने आ गई थी। यह कहा जा सकता है कि यह विचार स्वयं इंग्लैंड और विद्रोह के मन में कभी नहीं आया था। लेकिन उस समय जब यह बात कई शरारतों से गूँही गई थी। मुख्यतः यह था कि विरोधी दल के नेता के माते भी एटली को यह कह देना चाहिए कि हम बैस्वकिन मन्त्र-मन्त्र के सम्पाद की सीमती विम्वतन के साथ धारी के विरोध से असहमत हैं। एक सम्पाद को चाहिए कि वे भी बैस्वकिन को अपव्यक्त कर दें; भी एटली को सरकार का निर्माण करने के लिए आमंत्रित करें। सम्पाद के समा का विपटन कर दें तथा नये आम निर्वाचन कायमें जिससे यह मान हो सके कि क्या देस नये मन्त्र-मन्त्र का अनुमोदन करता है।

यह स्पष्ट है कि इंग्लैंड और विद्रोह के विचार की बुद्धिमत्ता या मूलतः यहाँ सम्पाद विद्रोहों के विरोध से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। यहाँ ही बायें महान

१. मन्त्र-मन्त्र पैपर्स पृ. २२-६।

२. कीय वही पृ. १७८।

महारानी विक्टोरिया को पत्रावली और लॉर्ड एशर के पत्रों के पाठक यह जानते हैं कि वे अधिकार अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं और इनका प्रयोग धार्मिक विप्लवाचार से लेकर बरेलू और विशेष नीति के सम्बन्धित प्रश्नों तक विस्तृत है। यही "परामर्श देने प्रोत्साहन देने और भेदावनी देने" का यह सुप्रसिद्ध अधिकार है जिसकी भाव से प्रायः सघर वर्ष पूर्व बीजहॉट में चर्चा की थी।

प्रत्येक यह स्पष्ट कर देते हैं कि यह मरिचि नाप्ये महत्त्वपूर्ण है। यदि सम्राट् के अपन कुछ बूट विचार हैं तो वे मन्त्रि-मंडल की नीति पर जाना विवृत प्रभाव डाल सकने ह विशेषकर उस स्थिति में जब कि वे महारानी विक्टोरिया की भावि अपनी सरकार के प्रस्तावों के विरुद्ध हों। कारण यह है कि उनके भावनों और मुद्दाओं को सुवमता से मस्योकार नहीं किया जा सकता। उनकी स्थिति की उच्चता और प्रतिष्ठा के कारण उनके साथ ऐसी सुवमता से बातचीत नहीं हो सकती जैसी कि सावित्री के साथ ही सकती है। भाषणिक युग के किसी नो प्रचारमन्त्री को इनका भार बहन नहीं करना पड़ा जिसका कि महारानी विक्टोरिया ने श्री रूइडस्टन के कर्षों पर रख दिया था। यह तब कि सम्राट् का प्रभाव व्यापक और अधिकतर होता है सर्वेहावीत है। इस मन्त्राह मास से कि सम्राट् एडवर्ड अष्टम् भी ईस्टबिन को दक्षिण क्षेत्रों सम्बन्धी नीति से असन्तुष्ट हैं इस नीति पर उनके सन्निहित रायकाम में हेम के एक कोण से लेकर दूसरे कोने तक सम्पूर विचार होने लगा था। सम्राट् जॉर्ज पंचम् का यह निश्चय था कि वे साम्राज्यिक प्रतिष्ठाओं में विचार बन्धि होंगे। उनके इन निश्चय का ही यह फल था कि इन विचार पर आनुकम्बिक सरकारों ने विचार बन्ध दिया। यदि सम्राट् उत्साही ह और उन्हें ठीक परामर्श मिला है तो वे नीति के निर्माण में सब भी महत्त्वपूर्ण भाग ले सकते हैं।

'सम्राट् को ठीक परामर्श मिले' यह बात एक रोचक प्रश्न बढ़ा कर देती है जिस पर हमारी जानकारी बहुत कम है। प्रत्येक यह है कि सम्राट् को अपने परामर्श क लिए दिन व्यक्तियों पर निर्भर रहना चाहिए। सम्राट् क सचिव की स्थिति अत्यन्त महत्त्व की है, यह बात प्रत्येकों से विस्तृत स्पष्ट हो जाती है। चूंकि इस स्थिति का सम्राट् के साथ निरन्तर सम्पर्क रहता है जग यह सम्राट् के मन का समझना है और उनके ऊपर काफी अन्तर रखता है। यह अपनी स्थिति के कारण वहाँ पहुँचना चाहे, पहुँच सकता है। यह अपने स्वामी के लिए जैसी गामभी चाहे, एकत्रित कर सकता है और उनके पास का सकता है। डिप्लोमी और फ्लैडस्टन श्री एल्विन्स और लॉर्ड एशर का पत्र-सम्बन्धित करने से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तिगत सचिव के विचारों का कितना महत्त्व है। यह ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्तिगत सचिव विधिक सर्वेष्ट नहीं होगा। उसकी नियुक्ति सम्राट् अपनी इच्छानुसार करते ह और पिछले की वर्षों से यह प्रायः यदि स्वयं अधिवात नहीं तो अनिवात वर्षों से सम्पन्नित बन्धस्य रहा है। सामान्यतया उनको पीयर बना दिया जाता ह। उसे राजप्रासाद का पुरा अनुभव होगा है तथा वह नृत्यकाल के समस्त दृष्टान्तों को जानता है। मेरे विचार से यह कहना कोई अतिघोषित नहीं है कि सर हेनरी पोल्सेन्धी के समय से सम्राट् की

है जससे कही बहिष्क सीमित है। जब बस का नेतृत्व निरिच्छ न हो तब के बोरे से ब्यक्तिनों में से किसी एक को चुन सकते हैं। हो सकता है कि यह चुनाव सफल न हो। १८८ का वृष्टान्त यह स्पष्ट कर देता है कि यह स्वबिधेक निर्वाचक मही प्रत्युत प्रयोगात्मक ही था। यह स्वबिधेक इस तथ्य से और भी सीमित हो जाता है, जैसा कि १९२२ में श्री ईन्डविन के चुनाव में स्पष्ट कर दिया था कि आबन्तिक परिस्थितियों में प्रधान-मंत्री के लिए कॉमन-समा का सदस्य होना आवश्यक है।

बसपक्षि के स्वकार को देखने पर यह आवश्यक मान्य पड़ता है कि मंत्रिमंडल में बस के प्रमुख सदस्य अवश्य सम्मिलित हों। लेकिन यह स्पष्ट है कि बाबे बजत ब्यक्तिनों को छोड़ कर शेष ब्यक्तिनों के चुनाव में प्रधान-मंत्री का अपने बिधेक के अनुसार कार्य करना चाहिए। यह कहना प्रायः सही है कि किसी भी मंत्रि-मंडल में प्रायः प्राये सदस्य बन्धित आवश्यकताओं के अनुसार चुन चाहिएँ और शेष सदस्य प्रधान-मंत्री की इच्छानुसार हो सकते हैं। इससे सरकार की शक्ति पर कोई बिधेक प्रभाव मही पड़ता। यह सँक है कि इन सब नियमिनों में सम्राट् के प्रसार का ध्यान रखा जाता है और उनके निर्धारण में राजकीय प्रभाव का बोझ बहुत महत्व अवश्य रहता है। बिष्टारिया ने कई अवसरों पर अपने प्रधान-मंत्रियों की बात नहीं मानी थी और उनकी जिर ग्ग भी गई थी। उनके समय के पश्चात् प्रधान-मंत्री नर इस सम्बन्ध में कितना बहाव पड़ता रहा, यह हम नहीं जानते लेकिन इतना हमें अवश्य मान्य है कि श्री एरिकसन ने कोई एकर को इसलिए मुठ-मंत्री बनाना चाहा था जिससे वे एडवर्ड सप्तम को प्रदत्त कर सकें। जॉर्ज पंचम के बारे में यह कहा जाता है कि उन्होंने श्री रैमंड मैकडॉनल्ड की बीनो मंत्रि सरकारों की प्रस्तावित सदस्यता बिना किसी बिधेकन के स्वीकार कर ली थी। यदि सम्राट् प्रधान-मंत्री द्वारा प्रस्तावित नियुक्तिनों का निरन्तर बिरोध करते हैं तो प्रधान-मंत्री पदग्रहण करना बस्वीकार कर अपनी बान मनबा सकता है। बत यह स्पष्ट है कि इस धेन में सम्राट् का वास्तविक कार्य केवल उही सीमा तक रहता है जिस सीमा तक कि प्रधान-मंत्री ने कुछ निश्चय कर लिया हो। यदि यह चान्स हाइस्क बिवाह-बिच्छर के प्रकरण में अन्तर्प्रेत न होते तो मरा बिचार है कि महाराजा बिष्टारिया का बिरोध उन्हें मंत्रि-मंडल से बाहर रणन में सफल न हो सकता था। यह ठीक है कि सम्राट् बिरोध कर सकते हैं और उनके बिरोध को पर्याप्त महत्व दिया जायेगा लेकिन मंत्रियों के चुनाव में अन्तिम निर्णय प्रधान मंत्री का ही रहता है।

(४)

जब मंत्रिमंडल का निर्वाच हो चुकता है राजमुकुट के साथ मंत्रिणा एक ऐसी अनवरण प्रक्रिया रहती है जो उनके अन्त के साथ ही समाप्त होती है। सम्राट् को यह बिबिचार होता है कि वे मंत्रिमंडल के महत्वपूर्ण प्रस्तावों की प्राप्ति पहले से जान लें जिससे कि वे उन पर बिचार बिनिमय के लिए तय्यार हो सकें। उन्हें उनका सारांश पर सम्बन्ध मंत्रियों के साथ बिबेचन करने का बिबिचार है और यदि वे किसी प्रस्ताव पर असहमत हैं तो उसे तत्पूर्य मंत्रि-मंडल के बाध पुनर्बिचार के लिए भेज सकते हैं।

महारानी विक्टोरिया का पचासवीं और सोई एयर के वेपर्स के पाठक यह जानते हैं कि ये अधिकार अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं और इनका प्रयोग ईनिक सिस्टाचार से लेकर परेक और विदेश नीति के गम्भीरतम प्रश्नों तक विस्तृत है। बड़ी 'परामर्श देने प्रस्तावित देने और चेतावनी देने' का यह सुप्रसिद्ध अधिकार है जिसकी भाषा से प्रामाण्य पर्य पूर्व बैजहॉट ने चर्चा की थी।

प्रश्न यह स्पष्ट कर देते हैं कि यह शक्ति वास्तव में महत्वपूर्ण है। यदि सम्राट् के अपने कुछ बृहद विचार हैं तो वे शक्ति महान की नीति पर आना विदुक्त प्रभाव डाल सकते हैं विशेषकर उस स्थिति में जब कि वे महारानी विक्टोरिया की मानि मानी सरकार के प्रस्तावों के विरुद्ध हों। कारण यह है कि उनके भाषणा और सुझावों का सुव्यवस्था में अस्वीकार नहीं किया जा सकता। उनकी स्थिति की सम्भ्रता और प्रसिद्धा के कारण उनके साथ ऐसी सुगमता से बातचीत नदी हो सकती जैसी कि साधारणों के साथ हो सकती है। आधुनिक युग के किसी भी प्रधानमंत्री का इतना भार बहन नहीं करना पड़ा जिनका कि महारानी विक्टोरिया ने भी एडवर्टन के कब्रों पर रण किया था। यह तथ्य कि सम्राट् का प्रभाव व्यापक और अविच्छिन्न होता है सर्वज्ञात है। इस अर्थवादात्मक से कि सम्राट् एडवर्टन अट्टम् भी बैरुवित की दृष्टि से ही सम्राट् की नीति से असम्पुर्ण है इस नीति पर उनके संक्षिप्त राज्यकाल में डेम के एड कोष से लेकर बुनर कोने तक गम्भीर विचार होने लगा था। सम्राट् जॉर्ज पंचम का यह निश्चय था कि वे साम्राज्यिक प्रतिष्ठाओं में विषय शक्ति लय। उनके इस निश्चय का ही यह फल था कि इस विषय पर आधुनिक सरकारों ने विशेष धन दिया। यदि सम्राट् असादी ह और उन्हें ठीक परामर्श मिलना है तो वे नीति के निर्माण में अब भी महत्वपूर्ण भाग ले सकते हैं।

'सम्राट् को डोक परामर्श मिले' यह बात एक रोचक प्रश्न खड़ा कर देती है जिस पर हमारी जानकारी बहुत कम है। प्रश्न यह है कि सम्राट् का अपने परामर्श के लिए किस व्यक्तिओं पर निर्भर रहना चाहिए। सम्राट् के सचिव की स्थिति अत्यन्त महत्व की है, यह बात प्रत्येकी से विदुक्त स्पष्ट हो जाती है। चूंकि इस व्यक्ति का सम्राट् के साथ निरन्तर सम्पर्क रहता है अतः वह सम्राट् के मन का समझता है और उनके ऊपर काफी अन्तर रखता है। वह अपनी स्थिति के कारण जहाँ पहुँचना चाहे, पहुँच सकता है। वह अपने स्वामी के लिए जैसी गामभी चाह, एकत्रित कर सकता है और उनके पास ला सकता है। डिबैरैली और एडवर्टन की दृष्टिकोण और सोई एयर का पत्र-व्यवहार पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तिगत सचिव के विचारों का कितना महत्व है। यह ध्यान रखना चाहिए कि व्यक्तिगत सचिव निश्चित सर्वेष्ट नहीं होता। उसकी नियुक्ति सम्राट् अपनी इच्छानुसार करते हैं और पिछले भी कबों से वह प्रभाव यदि स्वयं अधिमान नहीं तो अधिकांश कबों से सम्पन्न बचस्य रहा है। सामान्यतया उनको पीयर बना दिया जाता है। उनके राज्याचार का पूरा अनुभव होता है तथा वह अनुकूल के समस्त कृष्टान्तों को जानता है। मेरे विचार से यह कहना कोई अविचयनप्रिय नहीं है कि सर हेनरी पोन्टोन्वी के समय से सम्राट् की

मन्त्रपरामा का रसक और उनका सबसे स्थायी एवं प्रभावशाली परामर्शदाता रहा है।
यू कि एक-एक व्यक्तिगत सचिव राजप्रासाद में कई बरों तक रहता है, मग उसको
विपुल अनुभव प्राप्त हो जाता है, एवं मंत्री इस अनुभव को प्रचुर महत्व देते हैं।

लेकिन व्यक्तिगत सचिव ही सभा के एकमात्र परामर्शदाता नहीं है। राजपरिवार
का भी बोझ-बहुत महत्व उठाता है—कितना यह ठीक-ठीक नहीं मालूम। लेकिन
यह मान लेना उचित होगा कि उसके कुछ सरस्वी के पसे विचार और सिद्धान्त होने
हैं जिनका बड़ा प्रभाव होता है। बड़े-बड़े अधिकारी उदाहरणार्थ प्रिन्सी कौन्सिल के
बनर्क और मुद्-सेबाथॉ के प्रधान निरन्तर सभा के सम्पर्क में रहते हैं। फिर सभा के
व्यक्तिगत मित्रों की भी बहुत प्रतिष्ठा रहती है। मॉर्ग एयर और सर जॉर्ज कैपेल
जैसे व्यक्तियों ने सभा की विचारधारा से परिचय के कारण नीति के निर्माण पर
काफी प्रभाव डाला है। मेरे विचार से यह कहना अतिशयोक्ति नहीं है कि उनके और
उन जैसे व्यक्तियों के माध्यम से देश के समस्त प्रतिष्ठित व्यक्तियों की राज सभा के
तक पहुँच जाती है और फिर वह सत्ताशुद्ध सरकार को बता ही जाती है। उदाहरणार्थ
यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि बेंक ऑफ इंग्लैंड के पूर्व निर्देशों की विचार
होगा वह राजप्रासाद तक अवश्य पहुँच जायेगा। आर्थेडिसप ऑफ कटरबरी भी अपनी
विशेष स्थिति के कारण असाधारण महत्व के विचारों के प्रथम के माध्यम बन जाते
हैं। जो कुछ कहा जाता है और सुना जाता है उसको क्या महत्व मिलता है इस
सम्बन्ध में हम कुछ नहीं जानते क्योंकि यही हम एक ऐसे व्यक्तिगत सचिव में निवास
करते हैं जिनमें कोई भी बात सर्वथा स्पष्ट नहीं है। हम तो निश्चय ही मान सकते हैं
कि यद्यपि राजप्रासाद और बाहर के लोकमत के बीच परोक्ष सम्पर्क होने है लेकिन
जन्म अविच्छिन्नता और व्यापकता बनी रहती है। सभा अपने मंत्रियों के परामर्श
पर आश्रय करते हैं। लेकिन वे अपने मंत्रियों को कुछ ऐसे सुझाव संकेत विचार
और सिद्धान्त दे देते हैं जिनमें इंग्लैंड में जो कुछ परम्परागत और धर्मशास्त्री हैं
उत्ते र्भावित स्थान मिला होता है।

यह स्मार्तव्य है कि सभा के सुझावों और संकेतों में इंग्लैंड की परम्परागत और
धर्मशास्त्री विचारधारा को छोड़कर अन्य किसी प्रकार की विचारधारा नहीं होती।
सभा यह प्रत्यक्ष रूप से जान लेते हैं कि बड़े-बड़े धर्मशास्त्री बंकरों अनुसार बल के
नेताओं मुद् सेबाथॉ के प्रधानों और धार्मिक नेताओं के क्या विचार हैं। वे उनके
साथ और उनके बीच रहते हैं। उनका व्यक्तिगत परिचय-अच्छा इन बंकरों के सरस्वी
के ही मिलकर बनता है। इस प्रकार उन्हें न तो राज के सम्य उत्तमों का कोई प्रत्यक्ष
ज्ञान ही होता है और न उनके साथ उनका कोई सम्पर्क ही होता है। जब तक धार्मिक
सरदार सत्ताशुद्ध न हों उन्हें इस बात की कोई विशेष जानकारी नहीं होती कि
धार्मिक बल अपना धार्मिक संघों के क्या विचार हैं। उनका धार्मिक बल की संवेष्टित
अथवा असंगठित विचारधारा से कोई कारण सामाजिक सम्पर्क नहीं होता। यदि
सभा किसी धार्मिक धर्मशास्त्री वीपर के साथ भोजन करें या उसके साथ किसी दिन
पिकनिक करने के लिए चले जायें तो किसी को कोई आश्चर्य नहीं होगा। लेकिन यदि

सम्राट किसी प्रमुख व्यक्ति के साथ भोजन करें अपना सूट्री का कोई दिन किसी सहकारी सबन में व्यतीत करें, तो सबको आश्चर्य होगा। निष्कर्ष यह निरूद्धता है कि सम्राट का सामाजिक सम्पर्क अनुसार बल के पक्ष का है। उदारवादी दल के पठनोरपंड यह बात विशेष रूप से दिखाई देती है। इसमें कोई शंका नहीं कि जब कभी किसी विदेशी सम्राट को भोजन दिया जाता है और उसके स्वागत में समारोह होता है तो उसमें सम्राट की व्यक्तिगत बल के नेता के साथ बैठ हो जाती है। बस यही सब कुछ है। सम्राट ने जिस उत्तरदाता से १९११ में फॉर्ब्स-समा के संकट में या १९१३-१४ में हस्तक्षेप किया उन्होंने १९२६ की आम हड़ताल में या १९३१ में व्यक्तिगत दल के विचारों को जानने में बड़ी उत्तरदाता नहीं दिखाई। संक्षेप सम्राट का सम्पूर्ण वातावरण ही ऐसा है कि उनके विचार एक समाजकी अवस्था के से विचार होते हैं वे निर्णयों की मलाई प्रकट करना चाहते हैं लेकिन उनका विरवास होता है कि परिवर्तन सुनिश्चित परम्पराओं के अनुसार होना चाहिए।

सबसे बड़ेकोष की पुष्टि में हमारे पास प्रचुर साक्ष्य है। सामाजिक परिवर्तन के सम्बन्ध में महात्मा विन्स्टोन चर्चिल का बहुत ही रुढ़िवादी वे। उनके विचार पत्र-व्यवहार से इस बात का कोई संकेत नहीं मिलता कि उन्होंने अपने समय का कोई भी क्रान्तिकारी विचार समझा या उससे सम्बन्धना की बात तो बुर है। उनके मन में स्वामिनी निर्वाण के प्रति स्नेह का यह आभास-परिस्थितियों के सम्बन्ध में उनकी भाषा से स्पष्ट हो जाता है। लेकिन उनका सम्पूर्ण मानसिक संरचना अभिजातवर्गीय था। ब्राइट (उनके प्रिय कौंसिलर बनने के पूर्व) ब्राइट १८८६ के पूर्व नैम्बरसेन के प्रति उनका जो दृष्टिकोण था उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि सोशलिज्म के प्रवर्धनीय विचारों से उनका कोई परिचय नहीं था। एडवर्ड स्पेन्स के अधिष्ठा में भी ऐसी कोई बात नहीं है जिससे कि कुछ भिन्न निष्कर्ष निकले। यह सही है कि उनकी ब्राइट की भी जॉन बर्नर्स जैसे प्रवर्धनीय व्यक्तियों के साथ मित्रता थी। लेकिन यह नहीं मानना पड़ता कि वे व्यक्तिगत दल के मूल में काम करने वाली व्यक्तियों को बोझा-बहुल भी समझते थे। उन्होंने भी फेर हार्डी का जो सामाजिक अपमान किया था उससे यह स्पष्ट बात हो गया था कि वे अपने समय के किसी व्यक्तिगत संसद-सदस्य की किस भाव से देखते थे।

उनके उत्तराधिकारी के समय स्थिति भिन्न है क्योंकि राजनीतिक वातावरण भिन्न है। १९१८ के पश्चात् ब्रिटिश राजपरिवार ने जनहितकारी निर्माण कामों की ओर ध्यान देना प्रारम्भ किया। व्यक्तिगत संसद में बिरोधी दल बन गया तथा उसने दो बार कुछ कामों के लिए सरकार का भी निर्माण किया। इससे भी देश के वातावरण में कुछ परिवर्तन आया। तथापि इस परिवर्तन में ऐसी कोई वस्तु नहीं थी जिसने कि परम्परागत स्थिति को स्थिर किया हो। यह अच्छी तरह बात था कि सम्राट अपने व्यक्तिगत मित्रों के साथ बड़ा अच्छा व्यवहार करते हैं और उनके संबंध में समस्त वैधानिक शिष्टता का पालन करते हैं। व्यक्तिगत जीवन में उनके संबंध की भाँति ही कट्टर अनुदारवादी विचार बने रहे, लेकिन दोनों ही व्यक्तिगत संसदों में

से किसी के कार्यक्रम में ऐसी कोई बात नहीं थी जिससे उन्हें लड़ने की आवश्यकता पड़ती। यह कहा जाता है कि जब भी आर्थर हेबरसन ने विरोध मंत्री के माते सोवियत युनियन के साथ पुरे कूटनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर दिए थे सम्राट् उनसे घट हो गए थे। लेकिन यहाँ यह कह देना स्वामसंगत होगा कि सोवियत युनियन की मान्यता के सम्बन्ध में सम्राट् की जो संकाएँ थी प्रभाव मन्त्री की रैमजे मेन्काओं तक भी उनसे सहमत थे। जॉर्ज पंचम के राज्यकाल की मुख्य रीत्यकता १९३८ के प्रकरण के अतिरिक्त मन्त्रियों के प्रति उनका दृष्टिकोण कम तथा मन्त्रियों का राज प्रासाद के बातावरण से प्रभावित होना अधिक है। यह सुनिश्चित है कि दोनों अधिक सरकारी के कुछ सदस्यों पर राजशाही के बातावरण का समसामयिक अनुराधनीय सरकारी के सदस्यों की अपेक्षा अधिक प्रभाव पड़ा था। कहने का सार यह है कि जब मन्त्रिमन्त्रि-मन्त्रिमन्त्रि सत्ताका या सत्ता सिद्धांत के प्रश्न पर उदाहरणार्थ जॉर्ज-समा के साथ कभी कोई संघर्ष नहीं हुआ।

बस्तुतः जब तक सामान्य परिस्थितियों में प्राथमिक महत्व के मामलों में विभिन्न दलों की सरकारें नीति की अविच्छिन्नता बनाए रखती हैं तब तक सम्राट् के अधिकारों के सम्बन्ध में कोई गम्भीर समस्या नहीं उठती। अधिक से अधिक वे परिवर्तन के ऋ में महारानी विस्कारिया की भाँति बक बचा सकते हैं। लेकिन जब तक युनि यार्थों के सम्बन्ध में राजनीतिक एकता है उनके विचारों एवं व्यक्तित्व का कोई विशेष प्रभाव नहीं होगा। दुर्बलबलित प्रभाव-मन्त्री छोटे-मोटे मामला पर भी मुक्त सचता है। राजमुकुट के प्रभाव को हितकारी समझने में प्रयुक्त किया जा सकता है तथा कि १८८४ के मुबार विषयक के समय किया गया था। छोटे-मोटे अपवादों को छोड़ कर यह बात कही जा सकती है कि जब तक अविच्छिन्नता का सिद्धांत कायम है राजकीय शक्ति के सम्बन्ध में विक्टोरिया के समय का समान्य-सुख संगीपय एवं सामान्य संसदीय आंदोलन की विशेषताओं के पुनर्कल्प से अनुकूल मामल पड़ता है।

सम्राट् की स्थिति के सम्बन्ध में वास्तविक समस्या यह है कि नीति की अविच्छिन्नता टूट सकती है और संकट की सम्भावना भी भी दूर नहीं किया जा सकता। यहाँ कुछ ऐसी समस्याएँ उठ सकती होती हैं जो प्रो शीव के हा सिद्धांत के अन्तर्गत जा जाती हैं कि सम्राट् "संविधान के रक्षक" है। उन्होंने किया है "वास्तविकता यह है कि राजमुकुट का बहु बर्तव्य है कि बहु संविधान के मुक्तत्वों की रक्षा करे। १९११ के संघर्षीय अधिनियम ने बड़ी परिवर्तन के प्रतिरोध के सम्बन्ध में जॉर्ज-समा की शक्ति कम कर दी है इस बात की आवश्यकता बढ़ा दी है कि संकट-काल में सम्राट् कार्यवाही करें।"

"संविधान के संरक्षक" यह एक मुमकुर मुख है। इमें इतरा पूरा अर्थ समझने की श्टा करती जाएँ। ऐसा मान्यता पड़ना है कि यदि कभी मंत्री सम्राट् को ऐसा परामर्श दें जो "संविधान के मुक्तत्वों" की अक्षेत्रता करता हो तो संकट के समय सम्राट् अपने मन्त्रियों के परामर्श पर आधरण करना अस्वीकार कर सकते हैं। प्रो शीव ने इमें विस्कार से यह नहीं बताया कि वे मूलतत्त्व क्या हैं लेकिन हम उनके अन्तिमोय का अन्तिमिज आण उनके इतरा दिए गए उदाहरणों से कर सकते हैं।

उनका कहना है कि यदि धार्मिक दल कुछ ऐसे कान्तिवादी धार्मिक परिवर्तन करना चाहे जिनका कोई-समा प्रतिरोध करे तो निर्वाचकों का "प्रबल" समर्थन हो इस बात का औचित्य सिद्ध कर सकते कि सम्प्रदाय उस "सुविच्छिन्न व्यवस्था की अपेक्षा कर रहे जिसने उच्च सत्ता को विघ्न करने की शक्ति है ही है।" इस दृष्टि से सम्प्रदाय को कार्य कर सकते हैं। वे कोई समा के नियन्त्राधिकार का अतिक्रमण करने के लिए पर्याप्त पीयर बनाना अस्वीकार कर सकते हैं और इस प्रकार धार्मिक सरकार को इस बात के लिए विवश कर सकते हैं कि या तो वह दो वर्षों तक अपने विधान के लिए प्रतीक्षा करे या तुरन्त आम निर्वाचन करवाए। दूसरा कार्य सम्प्रदाय यह कर सकते हैं कि वे उपरपरक विघ्न कर सकते हैं जिससे उन्हें यह विश्वास हो सके कि धार्मिक सरकार निर्वाचकों के बहुमत की इच्छा का प्रतिनिधित्व करती है। यह सिद्धान्त धार्मिकवादी सरकार की भाँति ही अनुदारवादी सरकार के ऊपर भी लागू होता है। प्रो कीप कहते हैं "यदि अनुदारवादी सरकार वेच से राम लिए बिना ही कोई-समा की धर्मि बनाने का प्रयास करती है तो सम्प्रदाय को इस चेष्टा का प्रतिरोध करना होगा। यह तो दोनों सरकारों का ही कर्तव्य है कि वे संसदीय अधिनियम के मूल को उस समय तक बनाए रखें जब तक कि निर्वाचक कुछ और निश्चित न कर लें।" उन्होंने आन बल कर कहा है, "यह संभव है कि राजमुकुट की शक्ति का प्रयोग इस बात पर बल देने के लिए किया जावे कि उक्त समय तक कोई आचारवृत्त परिवर्तन नहीं होना जब तक कि सम्पूर्ण निर्वाचकवर्ग उसकी आवश्यकता को न मान लें।"

उपरोक्त सिद्धान्त का एक विचार यह मालूम पड़ता है कि संसदीय अधिनियम इस अर्थ में विच्छिन्न संविधान का एक मूलतत्त्व है कि कोई-समा के निर्णय को एक विशेष निर्वाचकीय निर्णय ही अतिक्रान्त कर सकता है। यदि धार्मिक सरकार ऐसे किसी विधान को पास करवाया चाहती है जिसे कोई-समा अस्वीकार करती है तो यह आवश्यक है कि वह या तो उस विधान को दो वर्षों के अन्दर ही तीन बार पास करे या विघ्न करे। यह स्पष्ट नहीं है कि क्या प्रो कीप यह मानते हैं कि कोई-समा की शक्तियों का प्रयोग एक पृथक प्रश्न है और इन शक्तियों को बम करने या समाप्त करने के लिए एक पृथक आम निर्वाचन की आवश्यकता है। जब कोई पक्ष ने पी एस्तिवक से १९१ के बुद्धारे आम निर्वाचन के लिए कहा या ठग उनका यही विचार था। उन्होंने कहा था कि यदि पी एस्तिवक कोई-समा की शक्तियों को सीमित करने के प्रश्न पर बहुमत प्राप्त कर लेंगे तो वे आवश्यकता होने पर नए पीयरों के निर्वाचन के लिए तैयार हो पावेंगे। इस प्रकार पहले आम निर्वाचन का यही अर्थ लगाया गया कि निर्वाचक सरकार के इस विचार से सहमत हैं कि कोई-समा को १९९ का बजट संशोधित या सम्बोधित नहीं करना चाहिए।

हमें इस दृष्टिकोण का महत्व कम नहीं समझना चाहिए। इनका तात्पर्य यह है कि कोई-समा धार्मिक (या दूसरे मामलों में) दो वर्षों तक 'स्टेन्स क्वेश्चन्स' को वापस रख सकती है और यदि साम्प्रदायीय सरकार कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन करना चाहे, तो उसके लिए यह आवश्यक है कि वह देश की राय जाँचे। यदि वह पीयर बनाने की

नहीं है। उन्होंने जॉर्ज पंचम को बताया था 'यदि संघीय उत्तरदायित्व के बौद्धान्तिक सिद्धान्त का कोई अर्थ है, तो सम्राट को अपने मृत्यु-आदेश पर भी, यदि यह आदेश हुस्ता धर के लिए एक ऐसे मंत्रो में उपस्थित किया जिसे कि संसद् में बहुमत प्राप्त है, हुस्ताधर करने परम। यदि इस आचारभूत सिद्धान्त का कोई आघात पहुँचता है तो संसद् के अंत तक पुर नहीं है।' संसद् में बहुमत होने का जर्ज कॉमन-समा में बहुमत होना है क्योंकि भौतिक सरकार का लॉर्ड-समा में तो बहुमत हो ही नहीं सकता। लॉर्ड एयर के अनुसार सम्राट के पास केवल प्रतिपादन की ही शक्ति रह जाती है। वे मंत्रियों को उनके निर्बंध की गळतियाँ बता सकते हैं वे सतरे स्पष्ट कर सकते हैं जो मंत्रियों के सामने आ सकते हैं। लेकिन जब मंत्रियों ने उक्त परामर्श के सम्बन्ध में जो वे सम्राट के सम्मुख उपस्थित करते हैं एक बार बृद्ध निश्चय कर लिया तो सम्राट का यह बौद्धान्तिक कर्तव्य हो जाता है कि वे उसे स्वीकार करें। इसका विकल्प वैसे कि मैं कह चुका हूँ मंत्रियों की पर-भ्युति है और इसके परिणाम स्वरूप राजकीय परमाधिकार के ऊपर अनिश्चयता एक ऐसा संपर्क उठ खड़ा होगा जिसका परिणाम चाहे जिस दृष्टि से देखा जाये मुगान्तकारी होगा।

बता जाता है कि इससे सम्राट की स्थिति स्वतः शक्ति यन्त्र (automation) की भाँति रह जायगी। यहाँ कुछ भेद आवश्यक है। मेरी मुक्ति यह है कि सम्राट के सार्वजनिक रूप से स्वतः शक्ति होने चाहिए, सार्वजनिक दृष्टि से उन्हें अपने मंत्रियों का परामर्श स्वीकार कर लेना चाहिए। व्यक्तिगत रूप से वह परामर्श, प्रस्तावना और चेतावनी देने के अपने समस्त अधिकारों का पूरा प्रयोग कर सकते हैं। उनकी सर्वोच्च स्थिति होने के कारण मंत्री उनकी राय पर बड़े ध्यान से विचार करेंगे। यह इससे अधिक कुछ नहीं हो सकता। यदि मंत्रियों ने किसी बात का निश्चय कर लिया है तो सम्राट को उसे मानना होगा। यदि यह कहा जाय कि सम्राट अपनी उदत्कता नहीं त्यागते और उनका कार्य एक विशेष प्रकार की प्रक्रिया को प्रभावी करत तक ही सीमित है तो इसका उत्तर यह है कि इस प्रक्रिया को सम्बन्ध विभाग के धार से बचप नहीं किया जा सकता। लॉर्ड-समा विभाग को केवल यह आश्वासन देने के लिए ही अस्वीकृत नहीं करती कि वेय सरकार की योजनाओं के पक्ष में है। वह कॉमन-समा के संपर्कत दोनों के बीच में उत्सव निर्णायक नहीं है। लॉर्ड बल्फोर के अनुसार वह तो अनुहार दल की एक शाखा है जिसका कर्तव्य इस बात की व्यवस्था करना है कि प्रधान-कार्यवाही का गठन चाहे कुछ भी हो, अनुहार दल ही सर्वत्र सत्ताक्य बना रहे। वरिष्ठ संसदीय अधिनियम ने लॉर्ड-समा की शक्ति को कम कर दिया है लेकिन जब भी उसकी शक्ति शक्ति है कि वह सरकार के ऐसे किसी भी कार्यक्रम को नष्ट कर सकती है जिसे कि स्वयं पसन्द न करती हो। यह कहना कि सम्राट इस प्रकार के विभाग को नष्ट करने में लॉर्ड-समा के साथ सहयोग करें एक ऐसी कार्यवाही के लिए कहना है जो सम्राट की उदत्कता के विचार के विरुद्ध प्रतिकूल है।

सम्राट के परमाधिकार के प्रयोग का कार्य कठिना करिण और बटिल है इस पर कुछ प्रकाश डालने की आवश्यकता नहीं है। उन्हें "अभितकारी" परिवर्तन सेना

है, उन्हें संविधान के "मूलनियमों" की रक्षा करनी है। लेकिन "नाम्तिवादी" परि-
 वर्तन क्या है? क्या इसका निर्णय सम्राट् स्वयं ही करेंगे? क्या वे अपने मंत्रियों
 के अतिरिक्त कुछ और लोगों का परामर्श लेंगे? यदि हाँ तो वे किसका परामर्श
 लेंगे? स्पष्टतः क्षान्तिवादी क्या है, इस सम्बन्ध में हमारा विचार हमारे निर्णय के
 मूलाधारों पर निर्भर रहता है। देश में कुछ व्यक्ति ऐसे हैं जिनकी दृष्टि में "इंग्लैंड
 के बक" का राष्ट्रीयकरण सम्पूर्ण सामाजिक स्वामित्व के अन्त का प्रारम्भ है। वे
 एम. कीन्स जैसे कुछ व्यक्ति ऐसे भी हैं जो इसे ऐसी सामान्य बात समझते हैं
 जिसका कोई विषय महत्व नहीं है। यह कौन सा मापदण्ड है जिससे सम्राट् निर्णय
 करेंगे? क्या कोई विधान इसलिए क्षान्तिवादी है क्योंकि लॉर्ड-सभा ने उसे अस्वीकार
 कर दिया है? यह एक व्यावर्ण्य कर्तव्य नहीं हो सकती क्योंकि लॉर्ड-सभा ने कई
 क्षान्तिवादी विधानों को पास किया है। उदाहरणार्थ उमर १९२८ के रिफॉर्म एक्ट
 को पास किया है जिसने देश में नार्बरीय बयस्क मताधिकार की स्थापना कर दी है।
 और, संविधान के "मूलतत्त्व क्या है? वे सनभ समय पर बरबसे ही नहीं रहते
 प्रत्युत लोगों में एक समय में भी उनकी विषयवस्तु के सम्बन्ध में एकमत नहीं होता।
 सामान्यतया यह संविधान का एक मूलतत्त्व मान लिया गया है कि सम्राट् अपने
 मंत्रियों के परामर्श पर आश्रय करेंगे। १९८८ के पञ्चायत् से वैधानिक विकास की
 सामान्य विद्या इस सिद्धान्त को पूर्ण रूप से स्थापित करने की ओर रही है। यह
 सही है कि संकट के समयों में उन लोगों ने जो मंत्रियों के परामर्श पर आश्रय करते हैं
 यह सिद्धान्त विनियत करने का प्रयास किया है कि यदि सम्राट् देश की सुरक्षा के
 विचार से कार्य कर रहे हों तो वे संकट के समय मंत्रियों के परामर्श की अपेक्षा कर
 सकते हैं। १९९९ में भी लॉर्ड आर्थ ने जो बयस्क प्रस्तुत किया था और उदारवादी बक
 लॉर्ड-सभा की धर्मियां को बम करने की जो बात कहता था यह लॉर्ड बस्सेर और
 उनके बक को पसंद नहीं था। फलतः, यदि सम्राट् अपने मंत्रियों को अपसत्त्व करते
 तो वे पर-प्रद्वन करने के लिए तत्पर होंगे। इसी प्रकार सम्राट् से १९१३ १४ में होय
 बक एक्ट पर विषयाधिकार का प्रयोग करने के लिए कहा गया था। अनुसार बक
 उदारवादी सरकार की आदर्शवत् सम्बन्धी नीति को पसन्द नहीं करता था। यदि
 धनिक सरकार सत्ताकङ्क हो जाये तो वे जीव जीव समाजवादी कार्यक्रम को पसन्द
 नहीं करते "भी मुक्ति का प्रयोग करेंगे। वास्तव में वे एक महत्वपूर्ण वैधानिक
 सिद्धान्त को स्थिति करने की बात कहते हैं क्योंकि यह सिद्धान्त ऐसे परिणामों की
 ओर से जाता है जिनका वे बहुत विरोध करते हैं। इसलिए वैधानिक संकट ऐसी
 स्थिति है जिसमें सम्राट् से यह कहा जाता है कि वे अपनी सरकार से स्वतन्त्र होकर
 कार्य करें क्योंकि विरोधी बक को यह विश्वास है कि सरकार की नीति राष्ट्र के
 मन्त्रियों के लिए विनाशकारी है।

अतः, सिद्धान्त के निष्कर्षों को ध्यान करना निरवरोध उमरवा संबन्ध करना है।
 यह सिद्धान्त सम्राट् के हाथों में प्रचुर सक्रिय और वास्तविक स्थिति सीधे देता है।
 इससे उन्हें उत सरकारों विधान के अन्तर्गत देश में विरोध की भावनाएँ जाग्रत करता

है, पुरा नियंत्रण प्राप्त हो जायेगा और लॉर्ड-सभा अपना अनुदार दल को यह ज्ञान हो जायगा कि यदि वह सरकारी विधेयकों को स्वीकृत करना या उन्हें निर्वाचकों के सम्मूह उपस्थित करना चाहता है तो वह संसदीय अधिनियम के अन्तर्गत बस एक बार नियोजनकार का प्रयोग करे। श्री कीच के मतानुसार यह सिद्धान्त अनवरत राष्ट्रीय सरकार के ऊपर उस समय तक लागू नहीं होगा जब तक कि वह संसदीय अधि-नियम को रद्द करने का प्रस्ताव न करे। यह सिद्धान्त कठिन परिस्थिति में समाजवादी सरकार के स्थान पर सम्राट् को प्रतिष्ठित होने का आमंत्रण है। इस सिद्धान्त का उद्देश्य यह है कि सम्राट् समाजवादी सरकार के कार्यभार को मष्ट करने में लॉर्ड सभा का साथ न ले और इसी बीच में अनुदार दल सामान्य निर्वाचन के लिए बच्ची से अच्छी छप्यारी करे। यह सिद्धान्त नीति की उत्प्रेरणा सरकार के हाथों से निकल जाती जमता ने उसे स्थापित किया था सम्राट् के हाथों में छीप रहा है। इस घटना-क्रम से बाठावरण कुछ ऐसा बदल जाता है कि इस नीति के लोकप्रिय होने के बहुत कम अवसर रह जाते हैं। सम्राट् लॉर्ड पंचम्ल संविधान के समस्त अधिसूचियों का बड़ी उत्प्रेरणा से पाठन करते थे लेकिन क्लॉन भी लॉर्ड एयर से यह कहा था कि यदि वे १९११ में पीयर बनाने के लिए विवश हो जाते, तो फिर वे अपना मस्तक कमी नहीं उठान सकते थे। उद्योग में हमको यह समझ लेना चाहिए कि सम्राट् जिनकी संवत्कारात्मक कार्यवाही की यह उपेक्षा की जा रही है आभारमूल परिवर्तन के निश्चित विरोधी है। यही बात राजप्रसाद के अधिकारियों के बारे में भी छड़ी है। उनका प्रतिपक्ष और बाठावरण उन्हें बहुत कुछ बनने ही नहीं दे सकता। यही बात सम्राट् के समस्त व्यक्तिगत विषयों की है। सम्राट् के अधिनियम विषय अनुवारवादी ही होते हैं। यदि ऐसी परिस्थितियों में सम्राट् अपनी वैयक्तिक शक्ति का प्रयोग करने के लिए हठ करें तो इसका निष्कर्ष यह निकलेगा कि वे अपनी व्यक्तिगत भावनाओं के कारण समाजवादी सरकार को वे कब्य पुरा करने से रोक रहे हैं जिनके लिए कि वह निर्वाचित हुई थी।

यह स्मरण रखना चाहिए कि मैं यह नहीं कर रहा हूँ कि सम्राट् श्री कीच के सिद्धान्त में अन्तर्निहित दुष्टिकोण को ग्रहण नहीं करेंगे मैं केवल यह कह रहा हूँ कि यह एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वैधानिक सिद्धान्त की रचना होना तथा इसके परिणाम महात्मकारी हो सकते हैं। वे परिणाम क्या होंगे इस सम्बन्ध में स्पष्ट रूप में कुछ कहना कठिन है, हाँ इसका केवल कुछ संकेत ही दिया जा सकता है। १९११ के बजट बाद विवाद के सम्बन्ध में लॉर्ड एयर ने लिखा था "मैंने सारी स्थिति १९४ की तरह महानक मान्य पकड़ी है।" लॉर्ड एयर के इस कथन से स्थिति की पर्यवृत्ता का अनुमान लगाया जा सकता है। सम्राट् पर इस दिशा में दबाव डाला जायेगा वह निश्चितप्रणय है। पूर्वदृष्टान्त यही बताते हैं कि यह स्थिति होनी। उस दल के लिए जो आभारमूल परिवर्तन का विरोधी है राजनीतिक संघर्ष में अस्थिर गति के रूप में सम्राट्

को वैयक्तिक यात्राप्रियता का प्रयोग करना एक विरूपितिकन यत्न है। सम्राट् राजनीति के सब गैरों में सम्मिलित रहने के उद्देश्य नीति का स्वीकार करने के पूर्व जैसे गम्भीर चुनौती मिल गयी है। इस में परामर्श करने का अधिकार है। वह सरकार अन्यायपूर्वक है। जिनके उद्देश्य और नीति पर लाकर बहाकर दिया है। उन्हें नीति के परिवर्तन के उद्देश्यार्थिक को कहने करने के लिए १८१४ में मर गेस्टे वीच की भांति उत्तर मधिया की खोज का हक है। परमाधिकार का प्रयोग में करने का अर्थ उनका विनाश नहीं है। ये अपरिबर्तनवादी शक्त के कुछ विरूपितिकन तर्क हैं। इनका अर्थिप्राय यह है। यह दल जिनको महत्त्व कहता है। वह एक गम्भीर प्रक्रिया द्वारा निर्माण होमा या अर्थ उन दल की नीतियाँ के ऊपर जब वह मताधिक्य होमा। सामुन्नी डायी। यह निदान उस सरकार को निर्णय नहीं होगा। जिनको अपने मित्रान्तर कार्यक्रम में परिणत करने का अधिकार मिल गया है।

वास्तव में उक्त समस्या का मूल यह है। कि युवावस्था में वयस के पारस्परिक सम्बन्ध विरुद्ध बरस गए हैं। ये इन विषय का पहले ही विचार कर चुका है। मैंने यह निवेदन किया है कि जब यह दल मताधिक्य के ऊपर एकमत से व सुगमता में महत्त्व महत्त्व कर सकते हैं। १८३२ के पश्चात् में उनके संबंधों में केवल दो ही बातें परिवर्तन के कारण अस्थिरता को स्पष्ट किया है। इन बहसों का दाहक राजतंत्र की शक्ति का प्रयोग करने की कर्म आवश्यकता नहीं पड़ी क्योंकि किसी भी दल का अपनी नीतियाँ वास्तविक करने के लिए उनका महत्त्व तकमें की सम्मिल नहीं हुई। दुर्भाग्यवश अब यह स्थिति नहीं रही है। मृत के पश्चात् की सम्मिल सामाजिक और आर्थिक प्रवृत्तियों में सामाजिक महत्त्व के मूलधारों का बाध-विबाध का विषय बना दिया है। राजनीय शक्ति के सम्बन्ध में व्यापक दृष्टिकोण करने का अर्थ उन्हे एक ऐसी शक्ति की महत्त्व प्रवृत्त करमा होगा जो इन मूलधारों के स्वतन्त्र परिवर्तन को प्रति रक्षित नहीं कर सकता जो कम से कम रोक सकता है। राजनीति के प्रतिष्ठित और अनुसंधी व्यक्तियों की दृष्टि में राजनीय परमाधिकार समाजवाद के आगमन का रोकने का एक साधन है। उनका यह बड़ा विचार है कि समाजवाद राष्ट्रीय विचार का पयोग है। कर्म के लिए को उद्देश्य परिणामों में बचाने के लिए सम्राट् की और तकत है। समाजवाद के विरुद्ध परमाधिकार के विषय में उनके विचार में सहमत नहीं है। इसमें वे अर्थ अपन दृष्टिकोण को बचाने के लिए तय्यार नहीं है। वे लोग इन तथ्य में प्रभावित हुए नहीं मान्य पड़ते कि लॉर्ड एचर जैसे व्यक्ति जो उनकी भांति ही समाजवाद के बड़े विरोधी हैं। राजनीतिक विषयों में सम्राट् का एक सक्रिय अभिवर्तन बनाने को बड़ा जो विरुद्ध की दृष्टि में देखते हैं। आर्थिक शक्ति का संघर्ष में वे राजसुदृष्ट की मता को सारे में डालने के लिए प्रस्तुत है।

दूसरे ऐसे लोग भी हैं जो सम्राट् की शक्ति के प्रयोग को विरुद्ध रूप में खोज मताधिक्य मानते हैं। वह कहते हैं "जब राष्ट्र प्रवृत्त रूप में विकसित हो तो उनमें परामर्श करने से और अधिक लोकनियन्त्रण का ही मतलब है।" लेकिन प्रत्येक सरकार ही ऐसे कई विधानों के लिए उत्तरदायी होती है जो राष्ट्र को प्रवृत्त रूप में विकसित कर

द्वैते ह । लेकिन सरकार उनका ऊपर राष्ट्र से परामर्श करना आवश्यक नहीं समझती । युद्ध की घोषणा राष्ट्र की जीवन के लिए सबसे मायामुक्त बात है लेकिन होघहवाम वाला प्रत्येक व्यक्ति यह जानता है कि युद्ध की घोषणा के पूर्व अनमत् सबह की मान करना लोकतन्त्रात्मक विद्या का दुर्गमोप ही है । या ठीक यह रूप से मता है कि अत्यन्त महत्वपूर्ण मामलों को अतिथि रूप से स्वीकार करने के पूर्व हमें यह निश्चय हो जाना चाहिए कि जनता उनमें सहमत है । यहाँ अत्यन्त महत्वपूर्ण मामले केवल वे मामल है जिन्हें साम्प्रदायिक सरकार प्रस्तुत करती है । यह कोई नहीं कहेगा कि सम्राट् को अतिथिपक्षीय सरकार का विद्यन्त कर देना चाहिए जिससे कि उसके अत्यन्त महत्वपूर्ण मामले पुनर्विचार के लिए जनता के सामने उपस्थित हो सकें । राजमुद्रा को लोक-निर्णय का दायित्व बहन करने के लिए आहुत किया जाता है इसका कारण स्पष्ट है । लॉर्ड-सभा की अंतर्गति का अब कोई समर्थन नहीं करता । यदि उसमें और कॉमन-सभा में संघर्ष हो तो यह निश्चय है कि लोकमत कॉमन-सभा की ओर जावेगा । लेकिन राजमुद्रा के उत्तरावधान में संश्लिष्ट अनुदार दल की युद्धनीति कुछ अन्वयवस्था उत्पन्न कर सकती है । वह राजसिंहासन की लोकप्रियता को साम्प्रदायिक अतिथियों के विरुद्ध प्रयुक्त करेगी । यह अनुदारवादी स्वार्थों के हाथों में एक अतिथिघाठी भस्म है, जिनमें पश्चिमी लोचनिय सम्राट् की उपस्थिति में तो यह एक अचूक धरम बन सकता है । यदि सम्राट् के नेतृत्व में अनुदारवादी शक्तियाँ निर्वाचन भीत होती हैं तो अन्वये से प्रत्या यह होगा कि यह लोकमत के उन्माद की विजय होगी; यदि वे हार जाती हैं तो बुरे से बुरा यह हाथा कि संघर्ष आर्थिक क्षेत्र में न होकर वैधानिक क्षेत्र में होत लगेगा । इस परिवर्तन की भविष्यवादी करना बठिन है क्योंकि राजतन्त्र की उन्हें मानकीय अनुभव में बहुत महुरी ह । उसकी अनिमाधो पर संदेह करना कुछ ऐसे विचारों को उठा देता है जिनका अंत कोई नहीं देख सकता ।

इस प्रसंग में एक अतिथि बात और कही जा सकती है । वह महत्वपूर्ण है कि १३६ के सिंहासन-रथाण के संघट में अनुदारदल के विरुद्ध ही महत्वपूर्ण व्यक्ति ने यह नहीं कहा कि यूक ऑफ विडसर के प्रस्तावित विवाह के विरुद्ध मंत्रिमंडल के निर्णय की अभिपुष्टि एक निर्वाचकीय निर्णय प्राप्त होनी चाहिए यद्यपि मंत्रिमंडल ने जो दृष्टिकोण पहन लिया था उसका पास कोई 'मिडेट' नहीं था । श्री बर्किंग ने कुछ देर करने के लिए कहा था कि किन उनका अधिप्राय केवल यही था कि इस विषय पर मताह-सघटिका भी हो जाये । वह श्री ध्यान देने योग्य है कि किसी की प्रमुख व्यक्ति ने यह प्रसन्न नहीं उठाया कि ऐसे व्यक्तिगत मामले तक में सम्राट् को अपने अधिकारी के परामर्श को अस्वीकार करने का अधिकार ह । यद्यपि दल ने आदि ने अंत तक यही कहा था कि सम्राट् को इस प्रकार अस्वीकार करने का कोई अधिकार नहीं है और उसके इस दृष्टिकोण की अनुदार दल ने कृष्टि प्रसन्नता की थी । सिंहासन-रथाण के संघट की गम्भीरता सर्वथा स्वीकृत है । यदि कभी कोई ऐसा प्रकरण उपस्थित हुआ जिसमें कि सम्राट् अपने मंत्रिमंडल से स्वतन्त्र होकर आचरण कर सकते हैं तो वह उनके विवाह जैसा कोई व्यक्तिगत प्रकरण ही हो सकता

है। लेकिन यह बात महत्त्वपूर्ण है कि इस अवसर पर सफ्टकाल में स्वतंत्र राजकीय परमाधिकार का सिद्धान्त एक ओर तो अघिस्टो और लॉर्ड रोबरमेयर तथा बूसफी ओर साम्यवादी हक के अतिरिक्त अन्य किसी में नहीं उठया था। येरे विचार से इनमें से कोई भी तत्त्व वैधानिक प्रथात्मिका के पालन में उचित नहीं होगा। पहले पत्र वा सत्य सम्राट् को वैल्वरिन सरकार के विरोध में खड़ा करके हक पद्धति को बाट पहुँचाना और इस अवस्था से अपनी स्थिति मजबूत करना था। साम्यवादियों का विचार था कि यदि सम्राट् शक्ति सरकार का निर्माण करने के लिए राजी हो गए तो उनकी लोकप्रियता से समाजवाद के लिए काम निर्वाचन बीता जा सकता है। लेकिन वे सोच यह बात नहीं समझ सके जिसे मनुवारवादियों ने तुरत समझ लिया था कि यदि सम्राट् एक कारण से अपने मंत्रियों को अपवस्थ कर सकते हैं तो वे उन्हें किसी दूसरे कारण से भी अपवस्थ कर सकते हैं। चाहे कुछ भी हो हमें प्रवान्त-मन्त्री का यह आश्वासन प्राप्त है कि सम्राट् ने ऐसा नहीं किया था। वे अपने मंत्रियों के परामर्श का परिचाम स्वीकार नहीं कर सकते थे और उन्होंने उनका विरोध करने की अपेक्षा सिद्धान्त-त्याग करना अधिक अच्छा समझा। इस दृष्टिकोण का उलट की दोनों सम्राट्को ने प्रबंध समर्थन किया था। यह एक ऐसा दृष्टान्त है जिसका अभिप्राय के लिए अत्यन्त महत्त्व है।

(५)

राजतंत्र के संचालन में एक ऐसा ठण्ड का अिसे १९३९ के सिद्धान्त-स्थाप ने सामन साकर खड़ा कर दिया और जिसका सुक्षिप्त विवेचन करने की आवश्यकता है। प्रसेजों से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि सम्राट् का धातुपना और टीका सम्बन्धी कार्य अधिकतर उनके व्यक्तिगत सचिव तथा महायकों की योग्यता पर निर्भर है। यह कार्य कुछ हद तक राजपरिवार के उन सदस्यों के अन्तर् भी निर्भर है जिनके द्वारा सम्राट् के पास काफ़ी सूचनाएँ पहुँचती रहती हैं। यह सुविधागत है कि राजसचिवों ने अब तक बड़े सराहनीय ढंग से कार्य किया है। श्री अर्न्डस्टन ने सर एच टेलर की सेवाओं के प्रति ऊँची आदरजति अर्पित की थी और सर हेनरी पोन्सबी की राजभक्ति का प्रतीक यह ग्रंथ है जो उनके प्रसेजों से तय्यार हुआ है।

जब एडवर्ड अष्टम सिद्धान्त पर आसीन हुए वे उन्होंने सचिवालय और राज परिवार की नियुक्तियों में काफी परिवर्तन किए थे। उन्होंने पुराने कर्मचारियों के स्थान पर जिन नए कर्मचारियों को नियुक्त किया था उनमें से बहुत कम को अपने कार्य का धित्तन मिला था। यह कहा जा सकता है कि उनके शासनकाल की कुछ समयसारे उनके व्यक्तिगत परामर्शदाताओं की अनुभवहीनता से सम्बन्ध थी। येरे विचार से अब यह समय आ गया है जबकि राजपरिवार के समस्त पदों पर सिविल सर्विस के व्यक्तियों को नियुक्त किया जाता चाहिए। येरे विचार से विभिन्न तर नादी विमार्गों में आवश्यक चरित्र और अनुभव के व्यक्तियों को पाला कटित नहीं होना। अपने प्रसिद्धन के कारण वे अपने सामने आने वाली वैधानिक सम्प्राप्ता

का समान के अन्य किसी वर्ग की अपेक्षा अधिक बुद्धिमत्ता से समाधान कर सकेंगे। उनके कार्य में निर्वैयक्तिकता और निरासक्ति का ऐसा मानावरण हो सकता है जिसका महत्त्व स्पष्ट है। वे लागू होने पर जैसे प्रतिष्ठित बुद्धिपुरुषों या वैधानिक समर्थानों का अधिकार्य करने के लिए उत्सुक बैंकन्स-डीप्ट तथा वीसवरी जैसे मृतपूर्व मंत्रियों के अनुचित प्रभाव से सम्पाद की वर्तमान व्यवस्था के अन्तर्गत विमुक्त किए गए व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमत्तापूर्वक रक्षा कर सकेंगे। इन व्यक्तियों का सामान्य सिद्धि सचिस की परम्परा में निष्ठात होना ही इस प्रकार के कार्य के लिए उनकी उपयुक्तता का एक महत्त्वपूर्ण प्रमाण है।

मेरे विचार में यह स्पष्ट है कि सम्पाद से सम्बन्ध रखने वाले समस्त राजनीतिक पक्षों को बड़ा ठक हो गके अराजनीतिक होना चाहिए। सर रोबर्ट पीम को राज परिवार की विद्वान महिलाओं का प्रबल एकर जिस विषय स्थिति का सामना करना पडा था उसकी तो घाबर अब पुनरावृत्ति नहीं होगी लेकिन यह विस्फुल अवाञ्छनीय है कि १९१३ की भाँति सम्पाद के एक सैनिक अधिकारी का अल्स्टर-विद्रोह को बमकी से घाब अनिष्ट सम्बन्ध हो किसेपरर सम समय जब कि यह स्पष्ट हो कि उसके विचार सम्पाद के मन पर प्रभाव रखते हैं।^१ यह ठीक है कि राजमासाद के पास जिसमें सोनी से आतङ्कारी पहुँचे उतना हो उबयोगी है। लेकिन यह समझना आवश्यक है कि सम्पाद के उपयोग के लिए उतका सुम्बाकन करना ऐसा कठिन कार्य है जो उसके कर्मचारी सर्व्व ही ठीक से नहीं कर पाते। १९२९-३१ की अमिड सरकार के महत्त्वा को उन सकेनो में बड़ी परीशानी होगी जो व राजमासाद में तयुक्त सरकार की वाञ्छनीयता के सम्बन्ध में निरन्तर पाठे रहते थे। राजकर्मचारियों का कार्य इस प्रकार के संवित देना नहीं है। विभिन्न मंत्रिम का सूक्ष्मरन यह है कि जगका प्रविष्टन इस प्रकार के बुद्धिकोण के विच्छेद होता है। राजमासाद के पय विधिक लविध को दे देने के इस बात का आस्वाशन मिल जायेगा कि जहाँ तक सम्भव हो सकेगा राजमासाद के कर्मचारियों के सम्पर्क सर्व्वह का कोई कारण उत्पन्न नही करेंगे।

(१)

दो सम्भ डोमीनियनों की परिवर्तित स्थिति में राजमुकुट के स्वाद के बारे में वाञ्छनीय है। कोई सम्फोर जैसे अधिकारी छिपड़ों का विचार है कि इस परिवर्तन में राजमुकुट की सकल उग भू बना या इकाई के रूप में जिसके प्रति साम्राज्य के विभिन्न भाग एषनिष्ठ है वह नहीं है।^२ इस मुक्ति को स्वीकार करना कठिन है। मंत्रि तीर पर यह कहना सही है कि अब डोमीनियन लवन के नियमन से स्वतंत्र ह सम्पाद या पब्लिक अरमक अपने डोमीनियन प्रपाल मंत्री के परामर्श पर इनी प्रकार आचरण करते हैं जिस प्रकार कि महान में वे अपने प्रधान मंत्री के परामर्श पर

१ एडर, मंत्रि टाइम्स जनवरी ३ १९१८।

२ 'ब्रिटिश के वि इंगलिश कन्स्टीट्यूट' (ब्रिड म क्वागिक्स एडीशन) की मुद्रिता बीच वि किय एंड दि इन्वीरियल वाउन बुक, ४३२।

आधारण करते हैं। यदि उनके दो प्रधान मंत्री परस्पर विरोधी परामर्श दें तो क्या होगा यह कहना बड़ा कठिन है। स्पष्ट इस मतभेद को सुझान में सत्ता की सहायता की जायगी। आबलेख के सम्बन्ध में यह समझा जायगा है और दक्षिण अफ्रीका के सम्बन्ध में मुझ के समय इस प्रकार की कई विषय समझाएँ उठ सकी हो सकती हैं। लेकिन यह समय में नहीं आता कि राजमुकुट का यह बहुमुखी व्यक्तित्व सगरी सक्ति को किस प्रकार बढ़ाता है।

मह सही है कि राजर्षि की सत्ता द्वारा निर्मित राजर्षि का बंधन राष्ट्रीय महारा है और उसे अन्य किसी शासन द्वारा मुक्तता से नहीं प्राप्त किया जा सकता। लेकिन कठिन राष्ट्रमंडल की जड़ें और भी गहरी हैं। साम्राज्य का मनोवैज्ञानिक आधार स्पष्ट रूप से भीतिक है। यदि वह अनुपस्थित मानूम पड़ता है वैसे कि १७७६ में अमेरिका के उपनिवेशों को मारूम पड़ा था जो राजर्षि की सत्ता सम्बन्ध विच्छेद को नहीं रोक सकती। राजमुकुट का व्यक्तित्व भी तभी तक उपयोगी है जब तक कि भीतिक आधार सबक है। उनका उन प्राचीन परम्पराओं से सम्बन्ध है जो एक सामान्य दृष्टिकोण का निर्माण करती हैं और मनमर्दों के समाधान को सुझा कर देती हैं। प्रो. क्रोप का कहना सही है कि 'यदि राजमुकुट न हो तो राष्ट्रमंडल के विभिन्न भागों का निश्चित सम्बन्ध निर्धारण तत्काल कठिन कार्य होगा। यह बात बड़ा महत्त्वपूर्ण है कि इन प्रकार के निर्धारण का उचित समय आ गया है। लेकिन यह स्मरण हो कि इन प्रकार के निर्धारण की आवश्यकता को कई उच्च कोटि के विद्वानों ने व्यक्त किया है। इन प्रकार के कठिन प्रश्न कि क्या डोमीनियन को अलग हो जाने का अधिकार है और क्या इन्मेंड और डोमीनियनों के सम्बन्ध अन्तर्गामी विधान के अन्तर्गत आते हैं सम्पूर्ण सत्ता के व्यक्तित्व से विच्छेद स्वतंत्र है। इन प्रकार के प्रश्नों का क्या बात इन्मेंड और डोमीनियनों के स्वतंत्रों की विद्या-प्रतिविद्या में ही समझ है। १७९१ में आयरिश संविधान के समय राजर्षि के अर्थ पर जो बार्ड-विचार हुआ था उसका रत्ने हुए यह धरना की जा सकती है कि सत्ता का व्यक्तित्व एकता की श्रुतता के रूप में कुछ कठिन समस्याओं के समाधान में सहायक होने की अपेक्षा बाधक ही अधिक रहा है। यह भी संभव है कि राजमुकुट के व्यक्तित्व प्रतिनिधि के रूप में डोमीनियन के गवर्नर जनरल की स्थिति अधिक में नए प्रश्न लड़े कर सकती है। जोर्ज पंचम ने सर इसाक इसाक (Sir Isaac Isaacs) की जो आयरलैंड में उपाय होने वाले गवर्नर जनरल व नियुक्ति को आवासी में नहीं माना था। इन संदर्भ में भारत के भविष्य के पक्ष में ऐसी कई विषय समझाएँ छिपी हुई हैं जिनका समाधान समय नहीं होगा।

वे लोग जो राजमुकुट की साम्राज्यिक स्थिति में उनकी अपरिहार्यता का प्रयास करने हैं सम्पूर्ण दो भागों में सम्बद्ध हैं। वे राजकीय प्रतिष्ठा की साम्राज्यिक एकता के विचार को सक्तिघापी बनाने के रूप में विदेशों में बुझि करते हैं। राजमुकुट की सत्ता मानवीय प्रकृति के अन्तर्गत गहरी है। लेकिन वे स्वदेश में भी राजमुकुट की

१. बेलाज जस्टिस एक्ट की अन्तर्गत वि विंग एंड विंग डोमीनियन पक्षधरें।

प्रतिष्ठा को बढ़ाना चाहते हैं। व उद्योगी अपरिहार्यता वर इस उद्देश्य में चल रहे हैं कि वह चरेक मामला में व्यापक परमाधिकार का उपयोग कर सके। इस प्रकार यदि किसी राजकीय मुख्य को आलोचना हो तो उसे साम्राज्यिक एकता पर आघात बताया जा सकता है। सम्राट की स्थिति को धरते में डालने का कार्य साम्राज्य की सुरक्षा को सतरे में डालना है। बिलीमी-बुद्धता से यह बात निर्वाचक के-कानों में डाली जायेगी। उम्मा ही आवश्यक यह मानकर पक्का कि सम्राट के समस्त कार्यों को सार्वजनिक आलोचना से पुनक रक्या जाय। हमसे यह कहा जाता है कि भारत को अपने अधि कर में रकन के लिए राजपुत्र का-निर्वाचक महत्व है। यह मान लिया जाता है कि उनके प्रभाव के बिना भारतीय मस्तिष्क पर हमारा नियन्त्रण कम हो-जायेगा।

यह आवश्यक नहीं है कि हम प्रीचर व के महत्व को अस्वीकार करें। इस प्रसंग में यह स्मरण रखना चाहिए कि राजमुकुट की साम्राज्यिक प्रतिष्ठा उसी समय में प्रारम्भ होती है जब व हमें भारत के व्यापारिक मुख्य का ज्ञान हुआ। हमें उसके इस महत्व का ज्ञान उस समय नहीं हुआ जब कि उपनिवेश हमारे बसा में बने हुए पत्तरी की भाँति व। साम्राज्य का एकता इसी समय तक कायम रखी जायगी जब तक कि उसको कायम रखना उसके नवी भागों के लिए हितकारी है। जब तक हमका मुख्य है, तब तक राजमुकुट भी इस एकता के प्रतीक के रूप में मुख्यवान् रहेगा। साम्राज्य के अन्तर उसको महत्व जन चापिक और राजनीतिक शक्ति की क्रिया प्रतिक्रिया पर निर्भर है या जब उसका (साम्राज्य के) अन्तर्सम्बन्धों पर वेगद्वारमती प्रभाव डालनी है। हम चाहे जितने उद्योग अन्वयों का प्रयोग करें, यह तथ्य नहीं छिपाया जा सकता कि राजमुकुट की न तो अपनी कोई नीति है और न ही मन्तो है। सम्राट पूर्ण का में अपने मन्त्रियों के परामर्श के अन्याय बोध और आचरण करते हैं। साम्राज्य का उन्मान और पतन उन कारणों पर अन्वय है जिन्हें बचाने सम्राट नियन्त्रित करना तो दूर रहा बहुत कम प्रयासित कर सकते हैं। जितनी स्पष्टता में हम इस तथ्य को समझ लेंगे उतनी ही स्पष्टता में हम सम्राट की स्थिति को हृदयम कर पाएंगे।

